इतिहासकार मुहणोत नैणसी
तथा
उसके इतिहास-ग्रन्थ

प्रस्तावना

भारत के विभिन्न भौगोलिक या राजनैतिक तथा ऐतिहासिक प्रदेशो मे राजस्थान का अपना एक विशिष्ट स्थान रहा है। ईसा की १४वी शताब्दी के प्रारम्भ से ही वहाँ अनेकानेक राजवशो का उत्थान हुआ और उन्होने कालान्तर म वहीं अपने राज्य अथवा अधिकार क्षेत्र स्थापित किये। ये ही राजवश आगे चलकर राजपूत कहे जाने लगे जिससे इस क्षेत्र ने कुछ ही युगो मे राजनैतिक महत्त्व प्राप्त कर लिया। १५वी सदी मे राठोड-शक्ति की स्थापना और विस्तार स मरुप्रदश को नयी एकता मिली। अकबर और उसके उत्तराधिकारी मुगल बादशाहो के काल मे राजस्थान के अधिकाश राजपूत राजा और उनके वशज मुगल साम्राज्य के महत्त्वपूर्ण आधार-स्तम्भ बन गये। तब उन शताब्दियो मे राजस्थान का इतिहास केवल प्रादेशिक इतिहास ही न रहकर सम्पूर्ण भारतीय इतिहास का महत्त्वपूर्ण अविभाज्य अग बन गया। अत उस विषय से सम्बन्धित समकालीन या पश्चात्कालीन आधार-ग्रन्थ और महत्त्वपूर्ण जानकारियो के सग्रह भी तत्कालीन भारतीय इतिहास के लिए महत्त्वपूर्ण आधार-सामग्री सग्रह हैं। इसके परिणामस्वरूप भारतीय इतिहासकारो व सशोधको का ध्यान भी उनकी ओर विशेषरूपेण आकर्षित होना स्वाभाविक ही है। मुहणोत नैणसी राजस्थान का प्रथम और महत्त्वपूर्ण इतिहासकार था और उसे 'राजपूताना (राजस्थान) का अबुल फज़ल' भी कहा गया है।

मुहणोत नैणसी मारवाड के शासक राव रायपाल (१४वी शताब्दी) के छोटे पुत्र मोहन का वशज था। जैन कन्या से विवाह होने पर मोहन ने जैन धर्म अगी-कार कर लिया था। तदनन्तर उसके वशज जैन धर्मावलम्बी ओसवाल जाति मे [illegible]म्मिलित हो गये थे और उस कुल के मूल पुरुष के कारण ही उनको मुहणोत कहा [illegible]ने लगा। मुहणोत नैणसी के पूर्वज भी मारवाड राज्य की सेवा करते रहे। [illegible]ो का पिता जयमल भी राजा गजसिंह के शासनकाल मे [illegible] १७७ [illegible] पर [illegible]ा। स्वय नैणसी को भी २७ वर्ष की अवस्था [illegible] [illegible]ज्य की सेवा [illegible]ा अवसर प्राप्त हो गया था। [illegible] के

प्रशासकीय पदो पर सेवारत

इतिहासकार मुहणोत नैणसी
और
उसके इतिहास-ग्रन्थ

डॉ० मनोहरसिंह राणावत
सहायक निदेशक
श्री नटनागर शोध संस्थान
सीतामऊ (मालवा)

राजस्थानी ग्रन्थागार
सोजती गेट के बाहर, जोधपुर

एक मात्र वितरक
राजस्थानी ग्रन्थागार
प्रकाशक व पुस्तक विक्रेता
सोजती गेट के बाहर, पहली मंजिल, जोधपुर

The publication of the thesis was financially supported by the Indian Council of Historical Research, and the responsibility for the facts stated, opinions expressed or conclusions reached, is entirely that of the author and the Indian Council of Historical Research accepts no responsibility for them

संस्करण : १९८५

मूल्य : साठ रुपये

प्रकाशक :
सुखवीरसिंह गहलोत द्वारा राजस्थान साहित्य मन्दिर
सोजती दरवाजा, जोधपुर

मुद्रक : कमल प्रेस, गांधीनगर द्वारा
प्रगति प्रेस, शाहदरा, दिल्ली-११००३२

प्रस्तावना

भारत के विभिन्न भौगोलिक या राजनैतिक तथा ऐतिहासिक प्रदेशो मे राजस्थान का अपना एक विशिष्ट स्थान रहा है। ईसा की १४वी शताब्दी के प्रारम्भ से ही वहाँ अनेकानेक राजवशो का उत्थान हुआ और उन्होने कालान्तर मे वहीं अपने राज्य अथवा अधिकार क्षेत्र स्थापित किये। ये ही राजवश आगे चलकर राजपूत कहे जाने लगे जिससे इस क्षेत्र ने कुछ ही युगो मे राजनैतिक महत्व प्राप्त कर लिया। १५वी सदी मे राठोड-शक्ति की स्थापना और विस्तार से मरुप्रदेश को नयी एकता मिली। अकबर और उसके उत्तराधिकारी मुगल बादशाहो के काल मे राजस्थान के अधिकाश राजपूत राजा और उनके वशज मुगल साम्राज्य के महत्वपूर्ण आधार-स्तम्भ बन गये। तब उन शताब्दियो मे राजस्थान का इतिहास केवल प्रादेशिक इतिहास ही न रहकर सम्पूर्ण भारतीय इतिहास का महत्वपूर्ण अविभाज्य अग बन गया। अत उस विषय से सम्बन्धित समकालीन या पश्चात्कालीन आधार-ग्रन्थ और महत्वपूर्ण जानकारियो के सग्रह भी तत्कालीन भारतीय इतिहास के लिए महत्वपूर्ण आधार-सामग्री सग्रह हैं। इसके परिणामस्वरूप भारतीय इतिहासकारो व सशोधको का ध्यान भी उनकी ओर विशेषरूपेण आकर्षित होना स्वाभाविक ही है। मुहणोत नैणसी राजस्थान का प्रथम और महत्वपूर्ण इतिहासकार था और उसे 'राजपूताना (राजस्थान) का अबुल फज़ल' भी कहा गया है।

मुहणोत नैणसी मारवाड के शासक राव रायपाल (१४वी शताब्दी) के छोटे पुत्र मोहन का वशज था। जैन कन्या से विवाह होने पर मोहन ने जैन धर्म अगीकार कर लिया था। तदनन्तर उसके वशज जैन धर्मावलम्बी ओसवाल जाति मे सम्मिलित हो गये थे और उस कुल के मूल पुरुष के कारण ही उनको मुहणोत कहा जाने लगा। मुहणोत नैणसी के पूर्वज भी मारवाड राज्य की सेवा करते रहे। नैणसी का पिता जयमल भी राजा गजसिंह के शासनकाल मे अनेक उच्च पदो पर रहा था। स्वय नैणसी को भी २७ वर्ष की अवस्था मे ही मारवाड राज्य की सेवा करने का अवसर प्राप्त हो गया था। लगभग १६ वर्ष तक मारवाड राज्य के विभिन्न प्रशासकीय पदो पर सेवारत रहा और अन्त मे मारवाड के सर्वोच्च

गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने रामनारायण दूगड द्वारा हिन्दी मे अनुवादित 'मुहणोत नैणसी की ख्यात' की प्रस्तावना म, 'मुंहता नैणसी री ख्यात' के सम्पादक बदरीप्रसाद साकरिया ने उस ग्रन्थ के चौथे भाग मे और डॉ० कालिकारंजन कानूनगो ने अपनी पुस्तक 'स्टडीज इन राजपूत हिस्ट्री' मे मुहणोत नैणसी की सक्षिप्त जीवनी दी है। परन्तु ये सब ही अतिसंक्षिप्त तथा यत्र-तत्र त्रुटिपूर्ण हैं। अतएव प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ मे नैणसी के जीवन और कार्यों का विस्तृत और प्रामाणिक विवरण दिया जा रहा है। उसके प्रशासकीय कार्यों पर प्रथम बार ही यहां प्रकाश डाला गया है। साथ ही उसके मृत्यु के कारणों आदि का भी निश्चयात्मक विवरण दिया गया है। इसके लिए सद्य खोज निकाले गये अनेको समकालीन और प्राथमिक महत्त्व के ग्रन्थों का प्रथम बार उपयोग किया गया है।

मुहणोत नैणसी की बौद्धिक क्षमता, उसकी इतिहास-विषयक विद्वता, अपने ग्रन्थो की रचना मे उसका मुख्य उद्देश्य, तदर्थ उसके आयोजन, उसका इतिहास-दर्शन, उसकी मुख्य अभिरुचि, मानव और उसकी समस्याओ के प्रति उसका दृष्टिकोण, इतिहास के प्रति उसकी अभिव्यक्ति आदि पहलुओं पर अब तक किसी ने भी लिखने का प्रयास नही किया है। प्रस्तुत शोध ग्रन्थ मे इतिहासकार के रूप मे नैणसी का प्रथम बार ही विवेचन और विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है।

मुहणोत नैणसी के दोना ग्रन्थ 'मारवाड रा परगना री विगत' कुछ अपूर्ण है और 'मुंहता (मुहणोत) नैणसी री ख्यात' अपूर्ण ही नही सर्वथा अव्यवस्थित भी है। अत यह प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि दोनो ग्रन्थो की सम्भावित परि-योजना और प्रस्तावित लक्ष्य क्या थे? साथ ही उनकी प्रामाणिकता का पता लगाने के लिए उनम उल्लेखित तथा अनिर्दिष्ट आधार-स्रोतो की जानकारी भी आवश्यक है। उन दोनो ग्रन्था के हेतु अत्यावश्यक सामग्री सकलन और उनका रचनाकाल, उसके इन दोना ग्रन्था के पुनरुद्धार तथा प्राप्त प्रतियो के बारे मे भी अब तक इतिहासकार मौन ही रहे हैं। प्रस्तुत शोध ग्रन्थ मे इन सब बातो पर सविस्तार विवेचन और प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

नैणसी कृत ख्यात० और विगत०, दोना ही ग्रन्थो मे वर्णित मारवाड के इतिहास के विभिन्न पहलुओ पर भी प्रकाश डालते हुए यह स्पष्ट कर दिया गया है कि मारवाड के इतिहास के सन्दर्भ मे कैसे ये दोनों ग्रन्थ एक दूसरे के पूरक ही हैं। साथ ही दोनो ग्रन्थो मे वर्णित क्रमबद्ध मारवाड के इतिहास और अन्य सम-कालीन तथा प्राथमिक महत्त्व की आधार सामग्री के परिप्रेक्ष्य मे नैणसी द्वारा प्रस्तुत विवरणो आदि की प्रामाणिकता की भी जाँच की गयी है। इसके अतिरिक्त ख्यात० मे मारवाड के अतिरिक्त अन्य राज्यो और राजपूत जातियों के जो इतिहास दिये हैं उनकी भी विस्तृत जानकारी प्रस्तुत करने के साथ ही उसमे प्रस्तुत विवरणो की प्रामाणिकता का परीक्षण तत्सम्बन्धी अन्य विश्वसनीय

आधार-सामग्री के आधार पर किया गया है।

नैणसी के ग्रन्थो मे वर्णित ऐतिहासिक भूगोल और मानव भूगोल का अब तक कोई अध्ययन नही किया गया है। प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ मे नैणसी के ग्रन्थो मे वर्णित विभिन्न राज्यो और मारवाड के परगनों सम्बन्धी भौगोलिक जानकारी तथा राजनैतिक सीमाओं के निर्देश सम्बन्धी चर्चा भी की गयी है। साथ ही नैणसी के ग्रन्थो से ज्ञात सम्बन्धित क्षेत्रों का मानव भूगोल का विवरण दिया गया है। *नैणसी रचित ग्रन्थो सम्बन्धी इन पहलुओं पर इस शोध-ग्रन्थ मे प्रथम बार ही* प्रकाश डाला जा रहा है।

मध्यकालीन राजपूती राजतन्त्र विशेषतया तत्कालीन सामन्ती सगठन और मुगलकालीन पट्टादारी व्यवस्था पर लिखते समय अवश्य ही कुछ लेखकों ने नैणसी के ग्रन्थो का यत्र-तत्र उपयोग किया है, कुछ ने तो उनमें दिये गये विवरणों और आंकडों को लेकर अपने कुछ निष्कर्ष भी निकाले हैं। परन्तु वे उनमे प्रस्तुत समूचे विवरण का पूरा-पूरा उपयोग नही कर पाये है। नैणसी के कथनो के सही मन्तव्य को समझने मे कुछ भ्रान्तियों का आभास मिलता है। साथ ही मध्यकालीन राजपूती राजतन्त्र मे राजपू की विभिन्न खांपो का विशेष महत्त्व था। परन्तु इस ओर भी सही रूप मे समुचित ध्यान नही दिया गया है। प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ मे नैणसी के ग्रन्थो मे प्राप्य विवरणो के आधार पर राजपूतो की विभिन्न खांपो तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है। इसी प्रकार १७वी शताब्दी में उत्तराधिकार विषयक राजपूत सहिता, राजपूतो की सैनिक-व्यवस्था, उनकी युद्ध-प्रणाली और राजपूत समाज के अभिशाप उनमे व्याप्त उत्कट वैर परम्परा से सम्बन्धित विवरण प्रस्तुत किये गये। इनमे से अधिकाश विषयो के बारे मे इस शोध-ग्रन्थ मे प्रथम बार विवेचन किया जा रहा है।

इसी प्रकार कुछ लेखकों ने मारवाड के प्रशासकीय सगठन और उसकी आर्थिक व्यवस्था के वृत्तान्त लिखने मे भी नैणसी के ग्रन्थो का उपयोग किया है। परन्तु वे नैणसी के ग्रन्थों का सही तौर से गहराई तक अध्ययन नही कर पाये अथवा उसके विवरणो को ठीक-ठीक समझकर उनका उपयुक्त उपयोग नही कर पाये, जिससे प्रशासकीय सगठन विषयक उनका विवरण अति सक्षिप्त रह गया और साथ ही शासनतन्त्र और आर्थिक व्यवस्था के सन्दर्भ मे तब प्रयुक्त होने वाली विशिष्ट शब्दावली की भ्रान्तिपूर्ण व्याख्या अथवा परिभाषा दी गयी है। प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ मे नैणसी के ही ग्रन्थो के आधार पर मारवाड के प्रशासकीय सगठन पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है, साथ ही पूर्व के लेखको की भ्रान्तियो अथवा अशुद्धियो को नैणसी के ही ग्रन्थो अथवा समकालीन अन्य प्रामाणिक ग्रन्थो के आधार पर सुधारने का प्रयास प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ मे किया गया है। यो

प्रशासकीय सगठन और आर्थिक व्यवस्था पर भी सयत्न विस्तार से आवश्यक प्रकाश डाला गया है।

मध्यकालीन राजपूत समाज की अनेक विशेषताएँ रही है जिनका प्रतिबिम्ब नैणसी के ग्रन्थो मे मिलता है। नैणसी के ही ग्रन्थो के आधार पर राजपूतो के जीवन-दर्शन, विवाह सम्बन्धी राजपूती अवधारणाएँ, सती प्रथा और साथ ही हिन्दुओ की धार्मिक आस्थाओ व अन्धविश्वासो तथा आमोद-प्रमोद के तत्कालीन साधनो आदि पर भी प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ मे प्रथम बार ही प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ मे न केवल मुहणोत नैणसी के व्यक्तित्व और कृतित्व की विवेचना की गयी है, वरन् उसके ग्रन्थो का समालोचनात्मक अध्ययन भी किया गया है। पुन उसके ग्रन्थो के ही आधार पर मारवाड राज्य के प्रशासकीय सगठन और उसकी आर्थिक व्यवस्था, राजपूती राजतन्त्र, सामाजिक इतिहास आदि मध्यकालीन राजस्थान के जनजीवन के विभिन्न पहलुओ पर सर्वथा नवीन प्रकाश डालने का पूरा प्रयत्न किया गया है। मेरे शोध निर्देशक महाराज कुमार डॉ० रघुबीरसिंह की निरन्तर प्रेरणा और विवेचनात्मक सक्रिय सफल निदेशन के फलस्वरूप ही इस शोध-ग्रन्थ को इसके वर्तमान सर्वव्यापी रूप मे प्रस्तुत करना सम्भव हो पाया है। १९७१ ई० मे जब महाराज कुमार डॉ० रघुबीरसिंह ने अपने शोध-ग्रन्थ के लिये मुझे यह विषय सुझाया था तब कई दिनो तक मैं इसी असमजस मे रहा कि इस विषय पर शोध करूँ अथवा नही। क्योकि इस पर शोध करने के लिए राजस्थान के इतिहास के सब ही विभिन्न पहलुओ का व्यापक गहरा ज्ञान होना अनिवार्य जान पडा। परन्तु अन्त मे राजस्थान इतिहास-लेखन के इस अति महत्त्वपूर्ण तथापि अब तक उपेक्षित विषय पर शोध करना अपना कर्तव्य समझकर ही इस पर अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया और मेरे गुरु महाराज कुमार डॉ० रघुबीरसिंह के सतत् प्रोत्साहन और निदेशात्मक सहयोग से ही उसे पूरा करने मे सफल हुआ हूँ। परन्तु तदर्थ उनके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करने की औपचारिकता के द्वारा उनके अनुग्रह और गुरुआई के गौरव और गरिमा की चर्चा उचित नही जान पडती है, क्योकि जो कुछ भी मैं अब हूँ या इस क्षेत्र मे कर सका हूँ, वह सब उन्ही की देन तथा उनके आशीर्वाद का ही सुफल है। अपने सहकर्मियों डॉ० शिवदत्तदान बारहठ, श्री सुरेशचन्द्र पत्रिया और वयोवृद्ध विद्वान् श्री सौभाग्यसिंह शेखावत का भी आभारी हूँ, जिन्होने समय-समय पर अपने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहयोग के द्वारा इस महत् कार्य मे मुझे बहुत-कुछ सहायता दी है।

सितम्बर ५, १९७८ ई०
रघुबीर निवास, सीतामऊ (मालवा)

—मनोहरसिंह राणावत

संकेत-परिचय

१ अकबरनामा०	—'अकबरनामा', अबुल फजल कृत, बेवरीज कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-३।
२ अनूप०	—'कैटेलॉग ऑफ द राजस्थानी मेन्यूस्क्रिप्ट्स इन द अनूप संस्कृत लायब्रेरी', बीकानेर, १९४७ ई०।
३ अभिलेख०	—'मारवाड के अभिलेख', डॉ० मांगीलाल व्यास कृत।
४ अहिल्या०	—'अहिल्या स्मारिका', १९७७ ई०, खासगी ट्रस्ट, इन्दौर।
५ आसोपा०	—'मारवाड का संक्षिप्त इतिहास', प० रामकरण आसोपा कृत।
६ आईन० (अ० अ०)	—'आईन इ-अकबरी', अबुल फजल कृत, ब्लाकमन और जेरेट कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-३ (द्वितीय संस्करण)।
७ आ० ना०	—मुहम्मद काजिम कृत 'आलमगीरनामा'।
८. उदेभाण० (ग्रन्थ संख्या १००)	—'उदेभाण चापावत री ख्यात', कविराजा संग्रह ग्रन्थ संख्या १००, 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ', में संग्रहीत।
९. ओझा उदयपुर०	—'उदयपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १।
१० ओझा जोधपुर०	—'जोधपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १।
११ ओझा डूंगरपुर०	—'डूंगरपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा।
१२ ओझा निबन्ध०	—'ओझा निबन्ध संग्रह', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १।

१३. ओझा बीकानेर० —'बीकानेर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १।

१४ ओझा सिरोही० —'सिरोही राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा कृत।

१५ ओसवाल० —'ओसवाल जाति का इतिहास', सुखसम्पतराय भण्डारी, चन्द्रराज भण्डारी, कृष्णलाल गुप्त, भ्रमरलाल सोनी, बलराम रतनावत कृत।

१६ कूपावत० —'कूपावत राठोडो का इतिहास', राव शिवनाथसिंह कृत।

१७ कविप्रिया० — कविप्रिया', श्री केशवदास कृत, टीकाकार —सरदारकवीश्वर, लखनऊ, १८८६ ई०।

१८ कविराजा सग्रह —जोधपुर के कविराजा बाँकीदास के वशज श्री तेजदान से प्राप्त सग्रह जो अब 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मालवा, मे सग्रहीत है, का नाम 'कविराजा बाँकीदास मुरारदान सग्रह' रखा गया है।

१९ ख्यात० —'मुहणोत नैणसी की ख्यात'।

२० ख्यात० (प्रतिष्ठान) —'मुंहता नैणसी री ख्यात', स० बदरीप्रसाद साकरिया, भाग १-४, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

२१ ख्यात वशावली० (ग्रन्थ सख्या ७४) —'राठोडाँ री ख्यात व वशावली', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या ७४ (हस्तलिखित) 'श्री रघुवीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

२२ ख्यात० (वणशूर) —'जोधपुर राज्य की ख्यात —वणशूर महादान सग्रह, (हस्तलिखित) 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

२३ गजगुण० —'गजगुण रूपक बन्ध', केसोदास गाडण कृत, स० सीताराम लालस।

२४ गजेटियर (ओरछा) —'ओरछा स्टेट गजेटियर', १९०७ ई०।

२५ गजेटियर बीकानेर० —'गजेटियर ऑफ द बीकानेर स्टेट' केप्टिन पाउलेट कृत।

२६ चूरू मण्डल० —'चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास', श्री गोविन्द अग्रवाल कृत।

२७ चौलुक्य० —'चौलुक्याज ऑफ गुजरात', अशोक मजूमदार कृत।

२८ जर्नल बगाल० —'जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बगाल,' कलकत्ता, (न्यू सिरीज), भाग १२, १९१६ ई०।

२९. जयपुर वशावली० —'जयपुर के कछवाहों की वशावली', (हस्तलिखित) 'श्री रघुवीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

३० जसवन्त० —'महाराजा जसवन्तसिंह और उसका काल', डॉ० निर्मलचन्द्र राय कृत।

३१. जहाँगीर० —'जहाँगीर का आत्मचरित' (जहाँगीरनामा), हिन्दी अनुवादक—श्री ब्रजरत्नदास।

३२ जातियाँ० —'राजस्थान की जातियाँ', प्रस्तुतकर्ता—श्री बजरगलाल लोहिया।

३३ जालोर विगत० (छोटी) —'जालोर परगना री विगत', (छोटी बही), (हस्तलिखित) 'श्री रघुवीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

३४ जालोर विगत० (बडी) —'जालोर परगना री विगत', (बडी बही), (हस्तलिखित) 'श्री रघुवीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

३५ जैन सत्य० —'जैन सत्य प्रकाश', वर्ष ५, अक १२, श्री हजारीमल बाँठिया का लेख।

३६. जोधपुर ख्यात० —'जोधपुर राज्य की ख्यात', भाग १ (हस्तलिखित) 'श्री रघुवीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

३७ तबकात० —'तबकात-इ-अक्बरी' निजामुद्दीन अहमद कृत, अग्रेजी अनुवाद बी० डे० कृत, भाग २।

३८ तैस्सीतोरी जोधपुर० —'डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑफ बार्डिक एण्ड हिस्टारिकल मेन्यूस्क्रिप्ट्स', डॉ० एल० पी० तैस्सीतोरी कृत, भाग १, खण्ड १, (जोधपुर स्टेट), १९१७ ई०।

३९ तैस्सीतोरी बीकानेर० —'डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑफ बार्डिक एण्ड हिस्टारिकल मेन्यूस्क्रिप्ट्स', डॉ० एल० पी० तैस्सीतोरी कृत, भाग २, खण्ड १ (बीकानेर स्टेट), १९१८ ई०।

४० दयाल० —'दयाल री ख्यात', भाग १ (हस्तलिखित) 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

४१ दिग्दर्शन० — श्री यतीन्द्रविहार दिग्दर्शन', श्री यतीन्द्र विजय रचित, भाग १, १९२९ ई०।

४२ दुर्गादास —'दुर्गादास राठोड', डॉ० रघुबीरसिंह कृत।

४३ दूगड० — मुहणोत नैणसी की ख्यात', श्री रामनारायण दूगड कृत हिन्दी अनुवाद, भाग १-२, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

४४ परम्परा० — परम्परा', भाग ३९-४०, राजस्थानी शोध-सस्थान, चौपासनी, जोधपुर।

४५ पृथ्वीराज० —'पृथ्वीराजरासो—इतिहास और काव्य', डॉ० राजमल बोरा कृत।

४६ प्रबन्ध चिन्तामणि —'प्रबन्ध चिन्तामणि', श्री मेरुतुङगाचार्य विरचित, सम्पादक—जिनविजय मुनि, भाग १।

४७ पादशाह० —'पादशाहनामा', अब्दुलहामिद लाहोरी कृत, भाग १-२, (बिब० इण्डिका)।

४८ पॉलिटी० —'राजपूत पॉलिटी', डॉ० जी० डी० शर्मा कृत, १९७७ ई०।

४९ पोथी० (ग्रन्थ स० १११) —'गुरां मोतीचन्दजी री पोथी', (राठोडां री ख्यात), कविराजा सग्रह, ग्रन्थ सख्या १११ (हस्तलिखित) 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ', मे सग्रहीत।

५० फुटकर ख्यात० —'फुटकर ख्यात', (हस्तलिखित), कविराजा

संग्रह, ग्रन्थ संख्या ६, 'श्री रघुवीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ', में संग्रहीत।

५१. फेमिली —'ब्रीफ फेमिली हिस्ट्री ऑफ मुहणोत्स' (टंकित प्रतिलिपि, श्री बदरीप्रसाद साकरिया के सौजन्य से प्राप्त।)

५२. बदायूनी० —'मुन्तखबुत-तवारीख', अब्दुल कादिर इब्न मुलूक शाह (अलबदायूनी) कृत, डब्ल्यू० एच० लो कृत, अंग्रेजी अनुवाद, भाग २।

५३. वही० —'जोधपुर हुकूमत री बही', (मारवाड अण्डर जसवन्तसिंह), सम्पादक—सतीशचन्द्र, रघुबीरसिंह, जी० डी० शर्मा।

५४ बांकी० —'बांकीदास री ख्यात', सम्पादक—नरोत्तम स्वामी।

५५ बाल० —'राठोडाँ री वंशावली', (टंकित प्रति), बालमुकुन्द खीची, जोधपुर, से प्राप्त, 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ', में संग्रहीत।

५६. बाहादर० —'कवि बाहादर और उसकी रचनाएँ, सम्पादक—भूरसिंह राठोड।

५७ बुन्देलखण्ड० —'बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास', गोरेलाल तिवारी कृत, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

५८. भण्डारियाँ री पोथी —'भण्डारियाँ री पोथी', (हस्तलिखित) कविराजा संग्रह, ग्रन्थ संख्या ७८, 'श्री रघुबीर लायब्रेरी' 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ, में संग्रहीत।

५९. भीमसेन तारीख० —'तारीख-इ-दिलकशा', भीमसेन कृत, अंग्रेजी अनुवादक—सर यदुनाथ सरकार आदि, सम्पादक—वी० जी० खोब्रेकर, १९७२।

६०. महाराणा प्रताप —'महाराणा प्रताप', डॉ० रघुबीरसिंह कृत।

६१. मा० उ० —'मआसिरुल उमरा', शाहनवाज खाँ कृत, हिन्दी अनुवादक—ब्रजरत्नदास, भाग १ (१९८८ वि०)।

६२ माहेश्वरी० — राजस्थानी भाषा और साहित्य', डॉ० हीरालाल माहेश्वरी कृत, कलकत्ता, १९६० ई०।

६३ मीरात इ अहमदी (अ०अ०) —'मीरात-इ-अहमदी', अली मुहम्मद खान कृत, अंग्रेजी अनुवादक—एम० एफ० लोखण्डवाला, १९६५ ई०।

६४ मीरात-इ-सिकन्दरी —'मीरात-इ-सिकन्दरी', मजु कृत, अंग्रेजी अनुवादक—फज़लुल्लाह लुत्फुल्लाह फरीदी।

६५ मुंदियाड० —'मुंदियाड री ख्यात', (हस्तलिखित प्रतिलिपि), 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ', मे संग्रहीत।

६६ राजपूत० — लेक्चर्स ऑन राजपूत हिस्ट्री', डॉ० दशरथ शर्मा कृत।

६७ राजपूताना गजेटियर —'राजपूताना गजेटियर', भाग ३-ए, इलाहाबाद, १९०९ ई०।

६८ राठोड़ाँ री ख्यात (ग्रन्थ संग्रह १११) —'राठोड़ाँ री ख्यात', (हस्तलिखित), कविराजा संग्रह, ग्रन्थ संख्या १११, 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ', मे संग्रहीत।

६९. राठोड़ाँ री ख्यात (ग्रन्थ संख्या ७२) —'राठोड़ाँ री ख्यात', (हस्तलिखित), कवि राजा संग्रह, ग्रन्थ संख्या ७२, 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ', मे संग्रहीत।

७० राठोड़ाँ री वंशावली (ग्रन्थ संख्या ३९) —'राठोड़ाँ री वंशावली', (हस्तलिखित), कविराजा संग्रह, ग्रन्थ संख्या ३९, 'श्री रघुबीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ', मे संग्रहीत।

७१ राजस्थान० —'प्रोसिडिंग्स् ऑफ राजस्थान हिस्ट्री कॉंग्रेस'।

७२ राजस्थान (आ० म०) —'एनाल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान', कर्नल जेम्स टाड कृत, भाग १-३ (आक्सफोर्ड संस्करण)।

७३ रु० ॥) —आधा रुपया।

७४ रेउ मारवाड० —'मारवाड का इतिहास', प० विश्वेश्वरनाथ रेऊ कृत, भाग १।

७५. लालस० —'राजस्थानी सबद कोस', डॉ० सीताराम लालस द्वारा सम्पादित।

७६. लैण्ड रेवेन्यू० —'लैंण्ड रेवेन्यू अण्डर द मुगल्स', डॉ० नोमान अहमद सिद्धीकी कृत।

७७. वंशावली० —'बुन्देलों की वंशावली', (टंकित प्रति) 'श्री रघुवीर लायब्रेरी', 'श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ', में संग्रहीत।

७८. वरदा० —'वरदा' राजस्थान साहित्य समिति बीसाऊ, राजस्थान।

७९. विगत० —'मारवाड रा परगना री विगत', सम्पादक—डॉ० नारायणसिंह भाटी, भाग १-३।

८०. वीर विनोद —'वीर विनोद', कविराजा श्यामलदास कृत, भाग १-२।

८१. शाहजहाँ० —'शाहजहाँनामा', सम्पादक—डॉ० रघुवीर-सिंह और मनोहरसिंह राणावत, १९७५ ई०।

८२. सरकार० —'मुगल एडमिनिस्ट्रेशन', सर यदुनाथ सरकार कृत (चौथा संस्करण, १९५२ ई०)।

८३. साधना मारवाड़० —'मारवाड़ का शौर्य युग', डॉ० साधना रस्तोगी कृत।

८४. साहित्य संस्थान —'हिन्दी-राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची', (ए कैंटेलॉग ऑफ हिन्दी-राजस्थानी मेन्यूस्क्रिप्ट्स कलेक्टेड इन द आर० वी० साहित्य संस्थान, रिसर्च लायब्रेरी, उदयपुर) साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर।

८५. हिन्दुस्तानी० —'हिन्दुस्तानी', हिन्दुस्तानी एकेडेमी की तिमाही पत्रिका (जुलाई-सितम्बर, १९४१), इलाहाबाद।

८६. क्षत्रिय० —'क्षत्रिय जाति की सूची', संकलनकर्ता—ठाकुर बहादुरसिंह, बीदासर, १९७४ वि०।

८७. अम्बष्ठ सरवानी —'तारीख-ई-शेरशाही', अब्बास खाँ सरवानी कृत, ब्रह्मदेव प्रसाद अम्बष्ठ कृत अंग्रेजी अनुवाद, १९७४ ई०।

विषय-सूची

प्रस्तावना V-IX

सकेत-परिचय X-XVI

अध्याय १--मारवाड और उसका पूर्वकालीन इतिहास १-१५

१ प्राचीन तथा पूर्व मध्यकाल मे मरुदेश अथवा मारवाड

२ मरुक्षेत्र मे राठोड घराने का प्रवेश और उनके आधिपत्य का क्षेत्रीय प्रभाव

३ क्षेत्रीय राजनैतिक इकाई के रूप मे मारवाड राज्य का उद्भव और विकास

४ मारवाड मे राठोड राजघराने के इतिहास-विषयक प्रारम्भिक आधार-सामग्री

५ अबुल फज़ल का इतिहास-लेखन तथा मारवाड के इतिहास-लेखन पर उसका प्रभाव

अध्याय २ --मुहणोत नैणसी : उसका व्यक्तित्व तथा उसका काल १६ ४६

१ मुहणोत वश और मारवाड राज्य

२ नैणसी के प्रारम्भिक पूर्वज

३ नैणसी का प्रारम्भिक जीवन

४ मारवाड राज्य के सैनिक अधिकारी के रूप मे मुहणोत नैणसी

५ मारवाड राज्य के शासकीय अधिकारी के रूप मे मुहणोत नैणसी

६ उसके जीवन का दु खान्त बन्दी गृह म उसका आत्मघात

अध्याय ३-- नैणसी का इतिहास-लेखन और तदर्थ उसके आयोजन ४७ ६१

१ नैणसी की बौद्धिक क्षमता, शैक्षणिक प्रशिक्षण और इतिहास-विषयक विद्वता

२ अपने इतिहास ग्रन्थो की रचना मे नैणसी का मुख्य उद्देश्य, उसके आयोजनो का तौर-तरीका तथा उसकी सम्भावित रूप रेखा

३ नैणसी का इतिहास-दर्शन और इतिहास-विषयक उसकी अवधारणा

४ उसकी मुख्य अभिरुचि
५ मानव और उसकी समस्याओ आदि के प्रति नैणसी का दृष्टिकोण
६ उसका कालक्रम विज्ञान कालावधि तथा इतिहास के प्रति उसकी अभिव्यक्ति
७ भौगोलिक स्थानीय और जातिवृत्त सम्बन्धी विवेचना म उसकी विशेष सजगता
८ इतिहास लेखन सम्बन्धी उसके उपक्रम का वस्तुस्वरूप और विविध आधार स्रोत तथा उनके उपयोग की रीति

अध्याय ४—नैणसी कृत मारवाड रा परगना री विगत ६२ ८१
१ उसकी सामान्य परियोजना तथा उसका वास्तविक उद्देश्य
२ विगत० की आधार सामग्री, सकलन की कालावधि और उसका रचनाकाल
३ विगत० की प्रमुख विशेषताएँ— आईन इ-अकबरी से उनकी विभिन्नताएँ
४ विगत० की प्राप्य प्रतिलिपियाँ और उनका प्रकाशन
५ विगत०की बहुविध विषयवस्तु उसकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता तथा इस ग्रन्थ का सर्वांगीण प्राथमिक महत्त्व

अध्याय ५—मुहणोत नैणसी री ख्यात ८२ ९६
१ ख्यात० की सम्भावित परियोजना और उसका प्रस्तावित लक्ष्य
२ उल्लिखित तथा अनिर्दिष्ट उसके आधार स्रोत
३ उसके सकलन अथवा रचना का काल
४ ख्यात० का अपूर्ण और अव्यवस्थित स्वरूप उसकी लेखन प्रक्रिया का आकस्मिक अन्त
५. ख्यात० का पुनरुद्धार तथा उसका सुव्यवस्थित पुनर्गठन
६ प्राप्य प्रतिलिपिया तथा उसके प्रकाशित सस्करण

अध्याय ६—नैणसी और मारवाड का इतिहास ९७ १२३
१ प्रत्येक ग्रन्थ मे मारवाड के इतिहास का अपना विशिष्ट विभिन्न पहलू
२ मारवाड क्षेत्र का पूर्वकालीन इतिहास वहाँ राठोड राज्य की स्थापना

३ मारवाड के राठोड और उनके पड़ोसी राज्य
४ मारवाड के राठोड और मुगल सम्राट, मारवाड राज्य की निरन्तर बदलती सीमायें
५ मारवाड के राठोड राजघराने की स्वाधीन प्रशाखाएँ

अध्याय ७—नैणसी और अन्य राजपूत राज्यों अथवा खांपों के इतिहास १२४-१४२
१ मेवाड के गुहिलोत और उनके पड़ोसी अन्य गुहिलोत राज्य
२ बूंदी और सिरोही के चौहान राजवंश अन्य चौहान खांपें
३ इतर अग्निवंशी राजपूत राजघराने
४ कछवाहे और उनकी विभिन्न खांपें
५ जैसलमेर के भाटी और उनके पड़ोसी क्षेत्र
६ अपर राजपूत वंश अथवा राजघराने

अध्याय ८—नैणसी के ग्रन्थों मे ऐतिहासिक भूगोल १४३-१६४
१ परगना री विगत
(क) परगने और उनके अन्तर्विभाग उनका प्राकृतिक भूगोल
(ख) नगर, कस्बे और ग्राम उनके स्थल और वहाँ की जीवन परिस्थितियाँ
(ग) मानव भूगोल और आर्थिक विवरण
२ नैणसी की ख्यात० उसका सीमित क्षेत्र
(क) सम्बन्धित राज्य क्षेत्रो की विस्तृत जानकारी
(ख) विभिन्न राज्यो आदि की राजनैतिक सीमाओ सम्बन्धी निर्देश
(ग) प्राकृतिक रूप-रेखाएँ और आर्थिक परिस्थितियाँ
(घ) मानव भूगोल, राजनैतिक और आर्थिक कारणो से उसके बदलते प्रतिमान

अध्याय ९—नैणसी और राजपूती राजतन्त्र १६५-१८६
१ विभिन्न राजपूत राजवंश और उनकी खांपें, उनके पारस्परिक सम्बन्ध
२ शासकत्व सम्बन्धी राजपूती मान्यताएँ तथा उत्तराधिकार-विषयक राजपूत सहिता
३ राजपूत राज्यो का सामन्ती सगठन और उसमे राजपूतो से इतर जातियों का स्थान

४ राजपूतो की सैनिक-व्यवस्था और उनकी युद्ध प्रणाली
५ राजपूतो की जातियो अथवा खांपो म पारस्परिक विद्वेष, और राजघरानो अथवा कुटुम्बो मे 'वैर' की परम्परा, उनके दुष्परिणाम और हानिकारक प्रभाव
६ राजपूत राज्य तथा मुसलमानी सत्ताएँ उनके आपसी राजनैतिक तथा सामाजिक सम्बन्ध

अध्याय १०—नैणसी के ग्रन्थों मे वर्णित मारवाड का प्रशासकीय सगठन और आर्थिक व्यवस्था — १८७ २१३
१ मारवाड का प्रशासकीय सगठन
२ मारवाड की राजस्व व्यवस्था
३ अन्य राजकीय कर तथा राज्य की आमदनी के अतिरिक्त स्रोत

अध्याय ११—नैणसी के ग्रन्थो मे प्रतिबिम्बित मध्यकालीन राजपूत समाज — २१४-२३१
१ राजपूतो का जीवन दर्शन
२ राजपूत समाज की उल्लेखनीय विशेषताएँ
३ धार्मिक मान्यताएँ अलौकिक म श्रद्धा तथा सार्वजनिक अन्धविश्वास
४ हिन्दुओ के जातीय उत्सव और सार्वजनिक आमोद-प्रमोद के साधन

अध्याय १२—उपसहार — २३२-२४३
१ नैणसी के ग्रन्थो का समालोचनात्मक मूल्याकन
(अ) इतिहास-ग्रन्थो के रूप मे
(ब) प्राथमिक महत्त्व की समकालीन आधार सामग्री-सग्रहो के रूप मे
२ राजस्थान के पश्चात्कालीन इतिहास लेखन पर नैणसी के ग्रन्थो का सम्भावित प्रभाव
३ नैणसी के ग्रन्थो के पुनरुद्धार तथा प्रकाशन का राजस्थान के आधुनिक इतिहास-लेखन मे महत्त्व और उस पर उनका प्रभाव

आधार-ग्रन्थ विवरण — २४४-२५८
१ नवीन राजस्थानी हस्तलिखित आधार-ग्रन्थ-निर्देश
२ आधार-ग्रन्थ सूची

अध्याय : १

मारवाड़ और उसका पूर्वकालीन इतिहास

१. प्राचीन तथा पूर्व मध्यकाल में मरुदेश अथवा मारवाड

मारवाड के प्रचलित नाम के पूर्व अनेक नाम प्रचलित थे। प्राचीन संस्कृत साहित्य में 'मरु' और 'धन्व' नाम का उल्लेख मिलता है, जिसका तात्पर्य मरुस्थली और रेगिस्तान है।[1] मरुमंडल तथा मारव,[2] मरुस्थल या मरुधन्व,[3] मरुस्थली,[4] मरुमेदिनी,[5] मरुकान्तार,[6] मरुधर,[7] और मरुदेश[8] आदि नाम प्रचलित रहे हैं। इन सबका अर्थ रेगिस्तान या निर्जल देश है। इस प्रकार प्राचीन कालीन मरुधर, मरुभूमि अथवा निर्जल देश मध्यकाल में मारवाड नाम से प्रसिद्ध हो गया।

पूर्व मध्यकालीन भारत में पहिले कभी इस मरु भूमि में कोई स्वतन्त्र या अर्ध-स्वतन्त्र राज्य रहा या नहीं, और कभी कोई राज्य रहा हो तो उसकी क्या सीमाएँ थी, आदि के सम्बन्ध में कहीं कोई जानकारी प्राप्त नहीं है जिससे इस मरु-भूमि प्रदेश की सीमाओं आदि के सम्बन्ध में साधिकार सप्रमाण कुछ भी कहा

---

१ ओझा निबन्ध०, १, पृ० २६ (अमरकोश, काड २, भूमिवर्ग, श्लोक ५), श्रीमद्भागवत्, प्रथम स्कंध, अध्याय १०, ओझा जोधपुर०, १, पृ० १।

२ प्रबन्ध चिन्तामणि, पृ० २७५।

३. महाभारत, उद्योग पर्व, उन्नीसवां अध्याय, वन पर्व, दो सौ एक अध्याय; भर्तृहरि कृत नीतिशतक, श्लोक ४६।

४. हितोपदेश, मित्रलाभ, श्लोक ११, छोमुही का शिलालेख जर्नल बंगाल०, जिल्द ५६, भाग १, पृ० ८०।

५ जर्नल बंगाल०, जिल्द ५६, भाग १, पृ० ८०।

६ वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड, सर्ग २२।

७ कवि ऊमरदान कृत ऊमरकाव्य, पृ० ३२२।

८ जयसिंह सूरि रचित नाटक 'हमीर-मद मर्दन', (पृ० ११) के अनुसार मरुदेश की सीमा आबू राज्य तक थी।

जा सके। आगे चलकर मारवाड़ अथवा जोधपुर राज्य की स्थापना और उसके विस्तार के बाद 'नव कोटी मारवाड़' की बात कही जाने लगी, जिसके अनेकानेक अर्थ और सीमाएँ बताये जाते रहे हैं।

परन्तु निरन्तर बदलती राजनैतिक सीमाओं की उपेक्षा करते हुए उस मरुक्षेत्र का मोटे तौर पर इस प्रकार सीमांकन किया जा सकता है, जिसमें मारवाड़ का राजघराना अपने अधिकार-क्षेत्र को विस्तृत करता गया। उसके पश्चिम में सिंध का परपारकर क्षेत्र और जैसलमेर के भाटियों का राज्य पड़ता था। उत्तर में तब इतिहास में सुज्ञात वे बागड़ और जांगलू क्षेत्र पड़ते थे, जिन पर कालान्तर में आधिपत्य कर बीका जोधावत ने एक सर्वथा विभिन्न बीकानेर राज्य की स्थापना की थी। डीडवाणा के पूर्व में होती हुई मरुक्षेत्र की पूर्वी सीमा सांभर झील तक पहुँचती थी। दक्षिण में फैले हुए अरावली पहाड़ श्रेणी से उत्तर में ही मरुक्षेत्र की दक्षिणी सीमा सीमित रही और परबतसर, पाली, जालोर, भीनमाल और सांचोर से दक्षिण में होती हुई यह पराड से कच्छ के रण तक पहुँचती थी। उत्तर मुगल काल में तत्कालीन मारवाड़ अथवा जोधपुर राज्य ने लगभग इस समूची मरु-भूमि पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था।

२. मरु-क्षेत्र में राठोड़ घराने का प्रवेश और उनके आधिपत्य का क्षेत्रीय प्रभाव

राठोड़ वंश की पूर्व परम्परा के सम्बन्ध में युगों से मतमतान्तर चलते रहे हैं। आधुनिक शोधों के फलस्वरूप अब यह तो सुनिश्चित हो गया है कि राठोड़ राजवंश कन्नौज (वाराणसी) के गाहड़वाल राजघराने से सर्वथा विभिन्न था और जयचन्द को राठोड़ कहने की परम्परा लगभग ईसा की १५वीं शती में मारवाड़ में ही प्रारम्भ हुई थी। दक्षिणी राजस्थान में हस्तकुण्डी (हथूण्डी) में भी राठड़ों के शिलालेख मिले हैं, परन्तु उत्तर पूर्वी राजस्थान में चूरू जिले के रतनगढ़ क्षेत्र के हुडेरा-सिदान ग्राम में कुछ वर्ष पूर्व प्राप्त एक देवली पर अंकित लेख में सोमवार, मार्च ३१, १२५३ ई० (वैशाख सुदि १, १३०६ वि०) को राठोड़ नरहरदास की पत्नी पोहड़ (भाटी) किमना के सती होने का उल्लेख है।[1] इससे ज्ञात होता है कि अपने पूर्वी मूल क्षेत्र से चलकर राठोड़ राजस्थान में तब आने लगे थे।

परन्तु मारवाड़ क्षेत्र में सर्वप्रथम उल्लेख सीहा सेतरामोत का ही मिलता है। पाली के निकट बीठू नामक स्थान से प्राप्त देवली-लेख से स्पष्ट पता चलता है कि सीहा पाली क्षेत्र में ही सोमवार, अक्तूबर ६, १२७३ ई० (कार्तिक वदि १२,

---

१. चूरू मंडल०, पृ० १२६।

१३३० वि०) के दिन वीरगति को प्राप्त हुआ था।[1] सम्भवत मेरो के साथ हुए युद्ध मे ही वह खेत रहा होगा। सीहा की मृत्यु के बाद भी ब्राह्मणो की सुरक्षार्थ उसके पुत्र आस्थान, सोनग और अज अपने कुटुम्बो, सैनिक साथियो आदि के साथ पाली मे ही ठहरे रहे। तब ब्राह्मणो ने उनके और उनके साथियो के जीवन-यापन के लिए समुचित आर्थिक व्यवस्था कर दी। आस्थान ने मेरो को शीघ्र ही मार भगाया और पाली मे शान्ति व्यवस्था की। इससे आस्थान का प्रभाव पाली के आस-पास के गाँवो मे भी बढ गया और पास-पडोस के गाँवो के चौधरियों ने भी उनकी सुरक्षा करने का आस्थान से आग्रह किया और अपनी इस सुरक्षा के बदले मे नकद और अनाज देना तय किया।[2] इससे आस्थान की आय मे वृद्धि हो गयी और अपनी सेना मे लगभग ५०० घुडसवार रखकर उसने अपनी सैनिक शक्ति मे वृद्धि की।[3]

आस्थान की सैनिक शक्ति बढ जाने और आस-पास के क्षेत्र पर उसका प्रभाव स्थापित हो जाने के बाद उसकी इच्छा बलवती हुई कि क्यों न अपने स्वतन्त्र शासन की स्थापना की जाय। उस समय खेड पर राजा प्रतापसी गुहिल का शासन था। आस्थान ने सर्वप्रथम उसकी पुत्री के साथ विवाह किया। तदनन्तर गुहिल राजा प्रतापसी के डाभी वशीय प्रधान को अपने पक्ष मे कर उसके ही सहयोग से धोखे से गुहिलो का दमन कर खेड क्षेत्र पर अधिकार जमा लिया।[4]

---

१ ओझा जोधपुर०, १, पृ० १५७, रेऊ मारवाड०, १, पृ० ४०। प्राय सभी ख्याती और विगत० म थोडी बहुत भिन्नता के साथ सीहा का कन्नोज से द्वारका की तीर्थ यात्रा पर जाना, द्वारका से लौटते हुए मार्ग मे लाखा फूलाणी के विरुद्ध पाटण के शासक सोलकी मूलराज की सहायता करते हुए लाखा फूलाणी को मारकर मूलराज को विजय दिलवाना, तथा बाद में उसकी बहिन (कुमारी) राजा से विवाह कर कन्नोज लोट जाने का उल्लेख मिलता है। विगत०, १ पृ० ५ ८, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० २६६ ७५, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १०-१५, उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० ६ क-१० ख, राठोडा री ख्यात (ग्रन्थ स० १११), प० ३८७ ख-३८८ ख, पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४०६ क, ख्यात० (वणशूर), प० १२ ख १३ क। परन्तु वीठू (पाली से १४ मील उ०पू०) में प्राप्त लेख से निश्चितरूपेण यह स्पष्ट है कि सीहा की मृत्यु पाली क्षेत्र मे ही हुई। अत वह कन्नोज तो कदापि नहीं लौटा था। सम्भव है कि द्वारका से लौटते हुए सीहा पाली म ठहरा हो और तब मेरों से युद्ध करता हुआ वह मारा गया। परन्तु तब तक गुजरात के मूल चौलुक्य राजवश का अन्त हो चुका था और उस समय उत्तरकालीन बाघेला राजघराने का अर्जुनदेव गुजरात पर शासन कर रहा था। चौलुक्य०, पृ० १८०-८१।

२ विगत०, १, पृ० ६-११, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १५-१६, ख्यात० (वणशूर), प० १३ क ख।

३ विगत०, १, पृ० १२।

४ विगत०, १, पृ० १२-१४, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १६-१७, उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० १० ख, ख्यात० (वणशूर), प० १३ क, राठोडां री ख्यात (ग्रन्थ स०

इस प्रकार खेड के १४० गाँवों पर आस्थान का अधिकार हो गया। तदनन्तर आस्थान ने कोढ़ाणे के १४० गाँवों पर और इनके अतिरिक्त अन्य और १४० गाँवों पर अधिकार कर लिया, जिन पर ईसा की १७वी शती के मध्य मे देवराजोतो, गोगादेओतो और चाहड़देओतो का अधिकार था। यो कुल ४२० गाँवो पर आधिपत्य जमाकर राठोड राजघराने ने उस सारे क्षेत्र मे अपना प्रभाव स्थापित कर लिया।[1] आस्थान का उत्तराधिकारी धूहड़ हुआ, जिसकी मृत्यु १३०९ ई० (१३६६ वि०) मे हुई थी।[2] आस्थान के बाद दूसरी पीढ़ी मे रायपाल हुआ था। उसने बाहड़मेर पर अधिकार कर वहाँ के ५६० गाँवो का राठोड घराने के आधिपत्य-क्षेत्र मे सम्मिलित कर लिया।[3] रायपाल के बाद क्रमश. कान्हड़राव, जाल्हण, छाडा, तीडा, सलखा और कान्हड़दे महेवा के अधिकारी हुए।[4] माला (मल्लीनाथ) सलखावत जालोर के खान (सम्भवत किसी क्षेत्रीय मुसलमान अधिकारी) की सहायता से कान्हडदे को मरवा कर स्वय खेड-महेवा की गद्दी पर बैठा। उस समय तक महेवा और बाहड़मेर भी उसके अधिकार मे आ गये थे।[5] माला ने सीवाणा पर भी अधिकार कर उसे अपने भाई जैतमाल को दे दिया।[6] मल्लीनाथ प्रभावशाली शासक हुआ था। इसी कारण उसके बाद उसका यह आधिपत्य-क्षेत्र 'मालानी' कहा जाने लगा।[7]

३ क्षेत्रीय राजनैतिक इकाई के रूप मे मारवाड राज्य का उद्भव और विकास

महेवा-बाहड़मेर पर मल्लीनाथ का अधिकार था और अपने छोटे भाई वीरम को जीवन-यापन के लिए मल्लीनाथ ने पाँच-सात गाँव दे दिये थे। परन्तु उसमे

---

१११), प० ३८८ ख, पोथी० (ग्रन्थ स० १११) प० ४०६ ख, नगर (वीरमपुर) मे प्राप्त महारावल जगमाल के मगलवार, फ़रवरी २३, १६३० ई० (चैत्र वदि ७, १६८६ वि०) के अभिलेख के अनुसार सीहा के पुत्र और आस्थान के भाई सोनग ने खेड विजय किया था। अत यह सम्भव है कि आस्थान के आदेश से सोनग ने खेड पर आक्रमण कर उस पर अधिकार किया हो। अभिलेख०, पृ० ६६-६७, रेऊ मारवाड०, १, पृ० ४७ पा० टि०।

१ विगत०, १, पृ० १४, २, पृ० २६६, ख्यात० (वणशूर), पृ० १३ ख।

२ इडियन ऐंटिक्वेरी, ४०, पृ० ३०१, ओझा जोधपुर०, १ पृ० १६७।

३ विगत०, १, पृ० १५, ख्यात० (वणशूर), प० १४ ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २०।

४ विगत०, १, पृ० १५, उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० ११ क ११ ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २१-२४।

५ विगत०, १, पृ० १६, ख्यात० (वणशूर), प० १५ क, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २४ २५

६ विगत०, १, पृ० १६।

७ राजपूताना गजेटियर, भाग ३ अ, पृ० ५४।

वीरम का सन्तोष नही हुआ और उसने महेवा क्षेत्र के बाहर लूट खसोट कर अपनी शक्ति बढा ली। अत मल्लीनाथ के मन मे वीरम के प्रति ईर्ष्या होने लगी, जिसके फलस्वरूप अन्त मे वीरम को महेवा छोडकर जागलू क्षेत्र मे जोइयो के क्षेत्र मे जाना पडा।[१] परन्तु उनके अधिकार-क्षेत्र पर अपना अधिकार करने के प्रयत्नो म जाइयो के साथ हुए युद्ध मे वीरम वीरगति को प्राप्त हो गया।[२]

वीरम के मरने के बाद उसके पुत्र चूडा का प्रारम्भिक जीवन अभावग्रस्त स्थिति मे ही व्यतीत हुआ।[३] वह माला के यहाँ नौकरी करने लगा।[४] परन्तु चूडा भी अपने पिता की ही भाँति महत्वाकाक्षी था। अत. शीघ्र ही माला (मल्लीनाथ) के प्रधान भोपा को अपने पक्ष मे कर उसने अपना स्थानान्तरण सालोडी चौकी पर करवा लिया। तदनन्तर वहीं से चूडा धीरे-धीरे अपनी शक्ति बढाने लगा।[५]

इधर उन्ही दिनो ईंदा पडिहारो ने मडोर पर अधिकार कर लिया था। तब मडोर के एक ओर नागौर, दूसरी ओर दिल्ली, और तीसरी ओर मेवाड की शक्तियाँ थी। इन शक्तियो स मडोर को बचा सकने मे स्वय को असमर्थ समझकर पडिहारो ने नवोदित चूडा के साथ अपनी लडकी का विवाह कर मडोर उसको दे दिया।[६] इस प्रकार वीरम सलखावत के पुत्र चूडा के मडोर पर अधिकार करने के साथ ही क्षेत्रीय राजनैतिक इकाई के रूप मे मारवाड राज्य का उद्भव और विकास प्रारम्भ हुआ।

मडोर पर चूडा का अधिकार होने के साथ ही वहाँ राठोड राज्य का श्रीगणेश हो गया। चूडा ने अपने अधिकार क्षेत्र म शान्ति और व्यवस्था स्थापित की। वह मडोर क्षेत्र स ही पूर्ण सन्तुष्ट नही था। अत वह शीघ्र ही अपन राज्य के विस्तार के प्रयत्न मे लग गया। चूडा न तब नागोर और डोडवाणा पर भी

---

१ विगत०, १, पृ० १६ २०, उदेमाण० (ग्रन्थ स० १००), प० ११ ख, ख्यात० (वणशूर), प० १५ ख १६ क।

२ विगत०, १, पृ० २०, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २७ २८, राठोडा री ख्यात (ग्रन्थ स० १११), प० ३८६ ख ३९० क, ख्यात० (वणशूर), प० १६ ख, बाकी०, बात सं० ५०, पृ० ६।

३ विगत०, १, पृ० २० २१, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २८-२९, ख्यात० (वणशूर), प० १६ ख।

४ विगत०, १, पृ० २१, उदेमाण० (ग्रन्थ स० १००), प० ११ ख, ख्यात० (वणशूर), प० १६ ख, जोधपुर ख्यात०, १ पृ० २९, विगत० मे दी गयी गाँवों की सूचियो में सालोडी नाम के गाँव का कोई उल्लेख नही है।

५ विगत०, १, पृ० २१-२२, उदेमाण० (ग्रन्थ स० १००), प० १६ ख-१७ क, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २९।

६ विगत०, १, पृ० २३ २५, उदेमाण० (ग्रन्थ स० १००), प० ११ ख, १७ क, १७ ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ३०, ख्यात० (वणशूर), प० १७ क।

अधिकार कर लिया था। राज्य-विस्तार के प्रयत्न मे ही चूडा का भाटियो के साथ भी युद्ध हुआ, जिसमे भाटियो ने मुलतान के सलीम खाँ की सहायता प्राप्त की थी। सन् १४२३ ई० मे हुए इसी युद्ध मे चूडा मारा गया।[1]

चूडा के बाद क्रमश राव कान्हा, राव सत्ता और राव रणमल ने मडोर पर शासन किया।[2] चित्तौड मे रणमल की हत्या के बाद उसके पुत्र जोधा को वहाँ से भागना पडा और राणा कुभा ने राठौडो के आधीन मडोर आदि पूरे क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। मडोर पर पुन अधिकार करने के लिए जोधा बारह वर्ष तक निरन्तर अपनी सैन्य शक्ति बढाता रहा और अन्त मे मेवाड के अधिकारियो को पराजित कर उसने १४५३ ई० मे मडोर पर अधिकार कर लिया।[3]

मडोर पर अधिकार करने के बाद चौकडी, कोसाणा आदि पर नियुक्त राणा के थाणो पर आक्रमण कर जोधा ने सोजत और मेडता क्षेत्रो पर भी अधिकार कर लिया।[4] कुछ समय बाद जैतारण पर भी उसका अधिकार हो गया।[5]

इस प्रकार राव जोधा ने राठौड राज्य की पुनर्स्थापना ही नही की अपितु मडोर, मेडता, सोजत, जैतारण और जागलू पर अधिकार कर अपने राज्य क्षेत्र का बहुत विस्तार किया।[6] और मारवाड राज्य को स्थायित्व दिया। मारवाड राज्य के इस विस्तार मे जोधा के अनेको छोटे भाई-बेटो ने उसका पूरा-पूरा साथ दिया था। अत जिन जिन क्षेत्रो मे विशेष रूपेण सक्रिय रहकर, जहाँ उन्होने राठौड आधिपत्य स्थापित किया था, वे क्षेत्र जोधा ने उन्ही के अधिकार मे रहने दिये,[7] जिससे समूचे मारवाड राज्य मे अनेको अर्ध-स्वतन्त्र राठौड राज्यो की तब स्थापना हो गयी, जिसका परिणाम आगे चलकर हानिकारक ही हुआ। तब इस प्रकार स्थापित राठौड इकाइयो मे बीकानेर राज्य इतना शक्तिशाली हो गया था कि शीघ्र ही वह एक स्वतन्त्र स्थायी राज्य बन गया।

राव जोधा के मरने के बाद क्रमश राव सातल, राव सूजा, राव गागा और

---

१ उदैभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० १२ क-१२ ख, जोधपुर ख्यात०, १ पृ० ३१ ३२, ख्यात० (वणशूर), प० १७ ख १८ क।
२ विगत०, १, पृ० २५-२७।
३ विगत०, १, पृ० २६, ३४, उदैभाण० (ग्र य स० १००), प० १३ ख, १५ क, १८ क, १८ ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ३८, बांकी०, बात स० ६६, ७०, पृ० ७, ख्यात० (वणशूर), प० १६ क-ख २१ ख-२२ ख।
४ विगत०, पृ० ३४ ३५, उदैभाण० (ग्रन्थ० स० १००), प० १८ क, बांकी०, बात स० ७२, पृ० ७, ख्यात० (वणशूर), प० २२ ख २३ क।
५ विगत०, १, पृ० ३६, ख्यात० (वणशूर), प० २३ क।
६ विगत०, १, पृ० ३८, ख्यात० (वणशूर), प० २२ ख २३ क, २३ ख।
७ विगत०, १, पृ० ३८-४०, ख्यात० (वणशूर), प० २४ क, २४ ख।

राव मालदेव जोधपुर की गद्दी पर बैठे। राव सूजा ने जैतारण पर अधिकार कर वह क्षेत्र अपने पुत्र ऊदा को दे दिया था। सूजा से पूर्व तथा तत्कालबाद के राठोड शासकों के शासनकाल मे राज्य-विस्तार नही हुआ।[१]

राव मालदेव जब गद्दी पर बैठा तब उसके सीधे अधिकार मे केवल जोधपुर और सोजत ही थे।[२] मालदेव राज्य-विस्तार की नीति मे विश्वास करता था। अत उसने अजमेर, साँचोर, सीवाणा, डीडवाणा, जालोर, फलोधी, पोहकरण, जहाजपुर, बदनोर, भाद्राजण और बीकानेर आदि पर अधिकार कर लिया।[३] परन्तु उसकी इस एकाधिपत्य नीति के कारण उसका जो उत्कट विरोध हुआ, उस कारण कई एक क्षेत्रो पर उसका अधिकार स्थायी नही हो पाया। उसे आन्तरिक विद्रोहो के साथ ही शेरशाह के आक्रमण का भी सामना करना पडा।[४] परन्तु शेरशाह की मृत्यु के बाद तत्परता के साथ शीघ्र ही मालदेव ने स्थिति सँभालकर बहुत कुछ पर पुन अधिकार कर लिया। सन् १५५६ ई० मे दिल्ली पर अकबर का आधिपत्य होने के साथ ही उत्तरी भारत मे मुगल साम्राज्य की पुनर्स्थापना हो गयी। तब मुग़ल सेनाएँ अजमेर क्षेत्र म जा पहुँची और आस-पास के परगनो पर मुगल अधिकार स्थापित करने लगी। तथापि मालदेव के अन्त समय म उसके अधिकार मे जोधपुर, सोजत, पोहकरण, सीवाणा और जालोर परगने रह गये थे।[५] अपने शासनकाल मे मारवाड राज्य की सुरक्षार्थ मालदेव ने अनक दुर्गों की मरम्मत करवाई और कुछ नवीन दुर्गों का निर्माण भी करवाया था।[६]

मालदेव के समय मे मारवाड राज्य अपने विकास और विस्तार की चरम सीमा पर पहुँच गया था। मालदेव के मरने के साथ ही मारवाड राज्य के इतिहास मे एक अवनतिपूर्ण दुखद अध्याय प्रारम्भ हो गया। मालदेव के बाद उसका तीसरा पुत्र और मनोनीत उत्तराधिकारी राव चन्द्रसेन गद्दी पर बैठा और

---

१ विगत०, १, पृ० ४० ४१, ख्यात० (वणशूर), प० २५ ख २७ ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ४७ ४८, ५८ ६६।

२ विगत०, १, पृ० ४३, ख्यात० (वणशूर), प० २८ क।

३ विगत०, १, पृ० ४३ ४५, जोधपुर ख्यात, १, पृ० ७८, उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० २१ क, २३ क, २३ ख, ख्यात० (वणशूर), प० २८ क २८ ख, पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४०७ क ४०७ ख, राठोडा री ख्यात (ग्रन्थ स० १११), प० ३७६ ख ३८० क, बाकी०, बात स० १२०, १२३, १२४, १२५, १३६, १४७, १५२, पृ० १२ १५।

४ ख्यात० (वणशूर), प० २५ ख २७ क, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ६८ ७३, बाकी०, बात स० १२७, १२८, १३६, पृ० १२, १३।

५ विगत०, १, पृ० ६७।

६ विगत०, १, पृ० ४५, उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० २३ ख, ख्यात० (वणशूर), प० २६ क, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ७८-७९।

उसके साथ ही जोधपुर राज्य में आन्तरिक विरोध और विद्रोह बढ़ने लगा, जिससे मारवाड़ में अशान्ति फैल गयी। चन्द्रसेन के भाई राम, उदयसिंह और रायमल ने चन्द्रसेन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया।[1] इससे दिल्ली में पुनर्स्थापित मुगल साम्राज्य ने पूरा लाभ उठाया।

यद्यपि मालदेव के जीवन-काल में ही मुगल सेनाओं ने १५५८ ई० में जैतारण और १५६२ ई० में मेड़ता पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था[2] परन्तु अब चन्द्रसेन के विरोधी भी सहायता की याचना करते हुए मुगल सम्राट या उनके क्षेत्रीय अधिकारियों के पास पहुँचने लगे। राम ने चन्द्रसेन के विरुद्ध मुगल सेना की सहायता प्राप्त की, जिसके फलस्वरूप दिसम्बर २, १५६५ ई० को अकबर की सेना का जोधपुर पर अधिकार हो गया और चन्द्रसेन को सदैव के लिए जोधपुर छोड़कर चला जाना पड़ा।[3] जोधपुर प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहने पर भी चन्द्रसेन को कोई सफलता नहीं मिली। उदयसिंह ने सन् १५७१ ई० में ही शाही मनसब स्वीकार कर लिया था। अतः विद्रोही निष्कासित राव चन्द्रसेन की मृत्यु के बाद अकबर ने सन् १५८३ ई० में जोधपुर परगना उदयसिंह को देकर उसे 'राजा' की पदवी दी।[4] इस प्रकार जोधपुर राज्य की पुनर्स्थापना हुई। परन्तु पुनर्स्थापित यह जोधपुर राज्य स्वतन्त्र राज्य न होकर मुगल साम्राज्य का आश्रित अर्ध-स्वतन्त्र राज्य बन गया, जो तदनन्तर कोई ६५ वर्ष तक निरन्तर विस्तृत और शक्तिशाली ही होता गया।

४. मारवाड़ में राठोड़ राजघराने के इतिहास-विषयक प्रारम्भिक आधार-सामग्री

राव सीहा के साथ ही मारवाड़ में राठोड़ राजघराने का प्रवेश हुआ। इस घराने के इतिहास से सम्बन्धित सर्वप्रथम सीहा का देवली (स्मारक) का लेख मिलता है। तदनन्तर धूहड़, जोधा, सूजा, गांगा, मालदेव और चन्द्रसेन आदि मारवाड़ के विभिन्न शासकों के समय के अभिलेख उपलब्ध हैं,[5] जो मारवाड़ के

१ उदभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० २५ ख २६ ख, २७ ख, बाँकी०, बात स० १९६, २०२, २०३, पृ० २०-२१, ख्यात० (वणशूर), प० ३२ क-ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ८५।

२ अकबरनामा०, २, पृ० १०२-३, २४८, तबकात०, २, पृ० २५८; विगत०, १, पृ० ४९५, ६५, ख्यात० (वणशूर), प० २९ क, ३० क-ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ७६-७७, ७७-७८।

३ उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० २६ क-ख, ख्यात० (वणशूर), प० ३२ ख ३३ क, ३४ क।

४ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ९७, ख्यात० (वणशूर), प० ३७ क।

५ अभिलेख०, पृ० ५४, ६३, ६६ ७०, ७१, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ८२, ८३, ८४।

इन राठोड शासकों के शासनकाल के निर्धारण-विषयक प्रारम्भिक सामग्री के रूप मे उपयोगी हैं। परन्तु इन प्राप्य अभिलेखो से मारवाड के राठोडो की अति सक्षिप्त जानकारी ही मिलती है। इनके अतिरिक्त राठोड शासको द्वारा तब दिये गये ताम्रपत्र भी ऐतिहासिक जानकारी के लिए महत्वपूर्ण हैं, परन्तु उन प्रारम्भिक शासको के ताम्रपत्र अब तक उपलब्ध नही हो सके हैं। नैणसी ने विगत० मे सासण गाँवो के विवरण मे महेवा के राव मल्लीनाथ और जगमाल तथा मडोर के राव चूडा, राव सत्ता, राव रणमल, राव जोधा, राव सातल, राव सूजा, राव गागा, राव मालदेव और चन्द्रसेन द्वारा सासण मे दिये गये गाँवो का उल्लेख अवश्य किया है।[1] अनुमान यही होता है कि यह विवरण लिखते समय नैणसी ने सासण गाँवो सम्बन्धी तब प्राप्य ताम्रपत्रो आदि अभिलेखो का उपयोग किया होगा, जो अब प्राप्य नही हैं। मारवाड के इन पूर्ववर्ती पिछले शासको द्वारा दिये गये जागीर पट्टो का उल्लेख मिलता है। मालदेव द्वारा दिये गये एक पट्टे की प्रतिलिपि नैणसी ने विगत० मे सकलित की है।[2] ऐसे कुछ जागीर पट्टों की १८वी शती की प्रतिलिपियाँ राजस्थान राज्य अभिलेखागार मे सुलभ पट्टा-बहियो मे सग्रहीत है। परन्तु उनसे उन विशिष्ट जागीरो के प्रदान किये जाने के अतिरिक्त मारवाड राज्य के इतिहास सम्बन्धी और कोई उपयोगी ऐतिहासिक जानकारी नही मिलती है।

१६वी शताब्दी तक के मारवाड के राठोडो के इतिहास-विषयक समकालीन कोई ख्यात अथवा क्रमबद्ध ऐतिहासिक विवरण उपलब्ध नही है। रावल मल्लीनाथ (महेवा) के वीरतापूर्ण कार्यों और जीवन पर यत्किचित भी प्रकाश डालने वाला जो काव्यग्रथ 'वीरमायण' उपलब्ध है उसके सम्बन्ध मे यही मान्यता है कि वह १६वी शती के अन्तिम वर्षो में ही लिपिबद्ध किया गया था।[3] स्पष्टतया यह काव्य बहुत समय तक कठ पर ही श्रुतिनिष्ठ काव्य के रूप मे चलता रहा, जिससे *उसका आदिरूप कालान्तर मे बहुत-कुछ बदला होगा, यह तो सुनिश्चित ही है।*[4] इसके अतिरिक्त गाडण पसायत ने राव रणमल और राव जोधा के वीर कृत्यों की प्रशसा मे स्फुट काव्य की रचना की थी।[5] गाडण पसायत की प्रमुख रचनाएँ 'राव रिणमल रो रूपक' और 'गुण जोधायण' हैं। प्रथम रचना मे राव रणमल की कीर्ति और महाराणा कुम्भा द्वारा उसकी हत्या का वर्णन है और दूसरी डॉ० हीरालाल माहेश्वरी के अनुसार 'राव जोधा की प्रशसा मे लिखा गया वीर रस का छोटा-सा

---

१ विगत०, १, पृ० ३६५-६६, २३६-४३।
२ विगत०, २, पृ० ६१ ६२।
३ बाहादर०, पृ० २५-२६।
४. बाहादर०, पृ० २६।
५ माहेश्वरी०, पृ० ८७।

काव्य है।"[1] डॉ० हीरालाल माहेश्वरी ने अनुमान के आधार पर दोनो रचनाओ का रचनाकाल १४२३ से १४७४ ई० के बीच माना है,[2] परन्तु अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर मे उपलब्ध हस्तलिखित प्रति[3] १७वी शताब्दी के मध्य मे ही लिखी गयी होगी।[4] अत स्पष्टतया यह कहा जा सकता है कि ये रचनाएँ भी प्रथम बार कब लिपिबद्ध की गयी होगी यह कहना सम्भव नही है। बारहठ आसा कृत 'गुण चौरासी रूपक बन्ध' की रचना मालदेव के समय मे हुई थी।[5] इसमे कुँवर चन्द्रसेन के गुणो का वर्णन किया गया है। डॉ० हीरालाल माहेश्वरी ने इसे छन्द साहित्य की महत्वपूर्ण कृति माना है।[6] इनके अतिरिक्त कई और स्फुट कवित्त, छन्द आदि हैं, जिनमे शासकों के बारे मे उल्लेख अवश्य मिलते हैं। परन्तु ये सब स्फुट रचनाएँ हैं, जिनमे किन्ही ऐतिहासिक घटनाओ आदि का व्यवस्थित विवरण नही है, इसलिए उनको प्रामाणिक ऐतिहासिक आधार नही बनाया जा सकता है।

मालदेव के समय मे भटयाणी रानी उमादे के साथ ज्योतिषी चडू पुष्करणा मारवाड दरबार मे पहुँचा था, जिसे कुछ युगो बाद मोटा राजा उदयसिंह ने 'मोडी वडी' गाँव जागीर मे दिया था।[7] उसने चडू पचाग ही नही चलाया अपितु उसने मारवाड के राजघराने के साथ ही अनेक सुविख्यात पुरुषो की जन्म-कुडलियाँ भी एकत्र करने की प्रथा प्रारम्भ की थी। सम्भवत मालदेव या उसके बाद की मुख्य एतिहासिक घटनाओ के तिथि-माह-सवतों का ब्यौरा भी ये ज्योतिषी तब से रखने लगे थे, जिनका उपयोग नैणसी ने भी किया है।[8]

परन्तु कालान्तर मे लिखी जाने वाली ख्यातो म उपयोग की गयी इस पूर्व-कालीन इतिहास की आवश्यक जानकारी अथवा कई विशिष्ट घटनाओ के सवतो-माह तिथियो आदि का ब्यौरा कहाँ किसन सग्रहीत किया और मुगल आधिपत्य काल (१५६३-१५८३ ई०) मे उन्हे कैसे सुरक्षित रखा—इसका सही पूरा अनुमान लगा सकना अब सम्भव नही रह गया है। ऐसे कुछ सम्भाव्य स्रोतो की ओर नैणसी ने यत्र-तत्र सकेत अवश्य किया है, जिनका विवेचन आगे यथास्थान किया गया है, परन्तु वे सब बहुत ही सक्षिप्त और सीमित हैं, तथापि इस प्रकार

---

१ माहेश्वरी० पृ० ८८ ८९।
२ माहेश्वरी०, पृ० ८८।
३ अनूप०, ग्रन्थ स० १३६।
४ तैस्सीतोरी बीकानेर० (भाग २, खड १), पृ० ५।
५ विगत०, १, पृ० ५३, माहेश्वरी०, पृ० १२३।
६ माहेश्वरी०, पृ० १२३।
७ गहलोत०, पृ० १३३-३४, विगत०, १, पृ० २३३।
८ विगत०, १, पृ० ६८।

प्राप्त जानकारी या ब्योरो का महत्त्व किसी प्रकार कम नही होता है, क्योकि १७वी शती मे लिखी गयी ख्याते आदि रचनाओं के लेखको ने उसका भरपूर सदुपयोग किया था, तथा उन्ही के आधारपर तब मारवाड आदि क्षेत्रो का प्रामाणिक इतिहास लेखन सम्भव हो सका था।

५ अबुल फजल का इतिहास-लेखन तथा मारवाड के इतिहास-लेखन पर उसका प्रभाव

मारवाड मे राठोड राज्यकी स्थापना से लेकर अकबर के शासनकाल तक के मारवाड राज्य का तब तक कभी कोई क्रमवद्ध इतिहास-ग्रन्थ नही लिखा गया था। जैसा कि पूर्व मे लिखा जा चुका है कि १६वी शताब्दी के अन्तिम दशको मे ही जोधपुर के शासक रावल मल्लीनाथ, राव रणमल और राव जोधा से सम्बन्धित, स्फुट प्रशस्ति काव्य लिखे गये थे, और राव चन्द्रसेन की प्रशसा मे प्रथम काव्य-ग्रन्थ लिखे जाने का उल्लेख मिलता है। इसमे चन्द्रसेन के चरित्र मे पाये जाने वाले गुणो का ही वर्णन है। तदनन्तर ईसा की १७वी शती के प्रारम्भ मे अपने आश्रयदाता मारवाड के राजा गजसिंह की गुणगरिमा के चित्रण हेतु कवि केशवदास गाडण ने इतिहास-काव्य 'गजगुण रूपक बन्ध' की रचना १६२८ ई० मे की थी।[१] यही प्रथम ऐतिहासिक काव्य है जो मारवाड के तत्कालीन शासक गजसिंह के जीवन के पूर्वार्द्ध पर पूरा प्रकाश डालता है। परन्तु १७वी शताब्दी के मध्य से पहिले मारवाड के इतिहास से सम्बन्धित कोई क्रमवद्ध ख्यात अथवा ऐतिहासिक काव्य-ग्रन्थ की रचना किये जाने का कोई उल्लेख या जानकारी भी नही मिलती है।

इस काव्य के प्रारम्भ मे कवि ने सीहा से लेकर गजसिंह के पूर्व तक के सभी राठोड शासको की केवल क्रमवद्ध नामावली दे दी है। तदनन्तर राजा गजसिंह के जन्म से लेकर इस काव्य की समाप्ति तक की ऐतिहासिक घटनाओं का विस्तृत विवरण इसमे दिया गया है। परन्तु गजसिंह के प्रारम्भिक जीवन काल का वर्णन करते हुए उसी सन्दर्भ मे उसके पिता सूरसिंह की गतिविधियो तथा मारवाड राज्य सम्बन्धी अन्य महत्वपूर्ण बातो का भी यथास्थान उल्लेख किया है। इस प्रकार १७वी शती के प्रारम्भ से मारवाड मे इतिहास-ग्रन्थ की लेखन मे नयी परम्परा का प्रारम्भ हुआ था।

राजस्थान मे महाराणा कुम्भा के समय मे अनेक लम्बे-लम्बे शिलालेख अंकित किये गये थे, जिनसे मेवाड के पूर्ववर्ती इतिहास पर प्रकाश अवश्य पडता है, परन्तु उसके शासनकाल मे भी मेवाड के सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक राजघराने या स्वय

---

१ गजगुण०, पृ० २४३, छं० २०।

महाराणा कुम्भा की जीवनी को लेकर लिखे गये किसी भी समकालीन या पश्चात्कालीन इतिहास-ग्रन्थ का कही कोई उल्लेख नही मिलता है। आश्चर्य का विषय यह है कि महाराणा सागा जैसे प्रतापी शासक पर भी ऐतिहासिक काव्य-ग्रन्थ की रचना करने का किसी ने नही सोचा।

ईसा की १३वी शती मे भारत मे मुसलमान सल्तनत की स्थापना के समय से ही फारसी मे ऐतिहासिक ग्रन्थो की रचना की परम्परा दिल्ली मे प्रारम्भ हुई, कालान्तर मे जिसका अनुसरण सुदूरस्थ पश्चात्कालीन क्षेत्रीय सल्तनतो की राजधानियो अथवा विद्या-केन्द्रो मे भी होने लगा। राजस्थान के मेवाड राज्य स लगी हुई गुजरात और मालवा की मुसलमानी सल्तनतो मे ईसा की १५वी शती मे फारसी मे कई इतिहास-ग्रन्थ लिखे गये थे, परन्तु तब भी यह परम्परा मेवाड या मारवाड मे प्रारम्भ हुई नही जान पडती है। क्योकि विद्यामूलक या सांस्कृतिक धरातल पर तब मुसलमानी सल्तनतो के साथ कभी कोई आदान-प्रदान की बात वहाँ नही हुई।

ईसा की १६वी शती के उत्तरार्द्ध मे राजस्थान के क्षेत्रीय राज्यो पर मुगल आधिपत्य हो जाने के बाद वहाँ के शासक, उनके प्रमुख सरदार, अधिकारी या चारण कवि आदि शाही दरबार और मुसलमानी राज्यो की विभिन्न गतिविधियों से परिचित ही नही होने लगे अपितु कालान्तर मे उनसे प्रभावित होकर वे उनका अनुसरण भी करने लगे। ऐतिहासिक काव्य-ग्रथ लेखन की परपरा भी यो तदनतर ही राजस्थान के इन क्षेत्रीय राज्यो मे पुन. प्रारंभ होकर कालातर मे प्रस्फुटित हुई।

मोटा राजा उदयसिंह को १५८३ ई०[1] मे शाही मनसब मे जोधपुर परगने की प्राप्ति के साथ ही मारवाड मे पुन शान्ति स्थापित हो गयी थी और इस प्रकार पुनर्स्थापित मारवाड राज्य का मुगल साम्राज्य से निकट सम्पर्क स्थापित हो गया। सन् १५८७ ई० मे अपनी कन्या मानीबाई का विवाह उदयसिंह ने अकबर के पुत्र सलीम (जहाँगीर) के साथ किया था।[2] राठोड राज्य का मुगल साम्राज्य से तब राजनैतिक के साथ ही सामाजिक और सास्कृतिक सम्बन्ध भी स्थापित हो गया। फलस्वरूप मुगल साम्राज्य का राठोड राज्य पर प्रभाव पडना स्वाभाविक ही था। राजा गजसिंह के शासनकाल मे 'गजगुण रूपक बन्ध' नामक प्रथम ऐतिहासिक काव्य की रचना द्वारा मारवाड मे एक नयी परम्परा तब प्रारम्भ हुई थी।[3] परन्तु १७वी शती मे तदनन्तर उसकी परम्परा मे और किसी ऐतिहासिक काव्य-ग्रन्थ की रचना नही हुई। १८वी शती के प्रारम्भ मे अजीतसिंह के शासनकाल मे ही आगे चलकर वह विशेष रूप से प्रस्फुटित हुई।

---

१ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ६७।
२ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ८८-८९।
३ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १४०।

अकबर के साम्राज्य काल के अन्तिम वर्षों में अबुल फजल ने 'अकबरनामा' की रचना सम्पूर्ण की थी।[1] अपने इस विशद सर्वव्यापी इतिहास-ग्रन्थ की रचना के समय अपने उपयोग के लिए अबुल फज़ल ने विभिन्न राजपूत राजाओं आदि का उनके राजघरानो, राज्यो आदि से सम्बन्धित अत्यावश्यक प्रामाणिक ऐतिहासिक जानकारी एकत्रित कर उसके पास भेजने के निर्देश दिये थे।[2] अत यह अनुमान होता है कि अबुल फज़ल को अपने राजघराने तथा राज्य सम्बन्धी ऐतिहासिक जानकारी उपलब्ध कराने के लिए मारवाड के तत्कालीन शासक उदयसिंह ने भी अपने प्रमुख अधिकारियो को आदेश दिये होगे, जिससे तब राज्य के चारण-भाटो आदि से ऐतिहासिक जानकारी एकत्र की गयी होगी।

प्राय यही माना जाता रहा है कि राजस्थान के अधिकाश राजघरानो की ही तरह मारवाड के राजघराने की पूरी वशावली आदि ऐतिहासिक विवरण सम्भवत इसी समय प्रथम बार विधिवत लेखबद्ध किय गये होंगे। तब तक य सारी वशावलियाँ और अन्य विशिष्ट बातें सम्भवत राजघरान से सम्बद्ध राव, भाटो आदि के कठ पर ही चलती रही होगी। वैसे तो गुर्वावलियो आदि को लेखबद्ध कर उनको सुरक्षित रखने की परम्परा जैन यतियो म अनेक सदियो से चली आ रही थी। जैन यति कुलगुरु मारवाड के राठोड घराने से भी सम्बद्ध रहे हैं, जो उक्त राठोड घराने की पोथियाँ लिखते रह हैं। कुलगुरु का यह घराना सर्वप्रथम कब मारवाड के राठोड राजघरान से सम्बद्ध हुआ, इसकी कोई प्रामाणिक जानकारी सुलभ नहीं है, तथापि अनुमान यही होता है कि जोधा के समय मे तो अवश्य ही वह सम्बद्ध हो गया होगा। परन्तु उनकी पोथियों मे प्राप्य विवरण अति सक्षिप्त ही मिलते हैं।

पूर्व मध्यकालीन मारवाड में भी शासकीय कागज पत्रो या लिखित आदेशो या विवरणों का प्राय अभाव ही रहा होगा। तथापि जो कुछ भी कभी रहे होगे, वे मुगलो के बीस वर्षीय आधिपत्य-काल मे निश्चितरूपेण पूर्णतया नष्ट हो चुके थे। मोटा राजा के आधीन जोधपुर राज्य की पुनर्स्थापना के बाद जब राज्य-प्रबन्ध मे मुगल साम्राज्य के ही तौर-तरीको का अनुसरण किया जाने लगा, तब तो अवश्य ही मारवाड के राजकीय कार्यालयो मे लिखित कार्यवाही की परम्परा स्थापित हो गयी होगी, जिससे आगे चलकर नैणसी ने पूरा लाभ उठाया था। नैणसी ने अपनी ख्यात और विगत० मे १६२० ई० की बहिया[3] का उल्लेख किया है, जो स्पष्टतया मोटा राजा के राज्यारूढ होने के बाद लिखी गयी बहियाँ होंगी, जिनमे तत्कालीन प्रशासनिक विवरण ही विशेष रूप से लिखा हुआ होगा।

१ आईन०, १, पृ० ॥॥।
२ आईन०, ३, पृ० ४७२।
३ विगत०, १, पृ० ४८३।

यह सम्भव है कि तब तक सग्रहीत पूर्ववर्ती काल का ऐतिहासिक वृत्त भी उनमे लिखा गया हो।

अकबर के समय मे साम्राज्य की ही नही भारतीय इतिहास की जानकारी भी एकत्रकर उसके लेखन को जो महत्त्व दिया जा रहा था और राजकीय तौर पर शाही घराने तथा साम्राज्य के इतिहास-लेखन का जो कार्य तब हो रहा था, उससे इस पुनर्स्थापित मारवाड मे तो अवश्य ही वहाँ के राठोड राजघराने के साथ ही क्षेत्रीय इतिहास के प्रति विशेष रुचि जाग्रत हुई होगी। दिल्ली के पूर्ववर्ती सुलतानो के इतिहास तो पहिले भी लिखे जाते रहे थे, परन्तु तत्कालीन मुग़ल सम्राट द्वारा लिखवाये गये राजकीय इतिहास-ग्रन्थ को सर्वोपरि महत्त्व दिया जाना स्वाभाविक ही था। अत. फारसी जानने वालो ने ही नही अपितु उनके द्वारा *फारसी-ग्रन्थो मे सुलभ ज्ञान की जानकारी प्राप्त कर उससे प्रेरणा प्राप्त* करने वाले सुविज्ञो, इतिहास-प्रेमियो आदि के लिए भी अबुल फज़ल कृत 'अकबर-नामा' तथा विशेष रूप से उसका अन्तिम भाग 'आईन-इ-अकबरी' सहज ही मार्ग-निर्देशक कृतियाँ बन गयी। साम्राज्य की इस महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति और अबुल फज़ल की इस विशिष्ट कृति से प्रभावित होकर मारवाड के पूर्ववर्ती इतिहास सम्बन्धी विवरणो को सकलित कर उन्हे कालक्रमानुसार व्यवस्थित करने का आयोजन तब मारवाड मे तो अवश्य ही किया जाने लगा होगा।

परन्तु तब १७वी शती मे मारवाड मे लिखी गयी ख्याते अथवा लिखे गये इतिहास-वृत्त इने-गिने ही आज अपने मूल रूप मे सुलभ हैं। साम्राज्य के शासकीय इतिहास-ग्रन्थ लिखवाने की परम्परा मुगल साम्राज्य मे तब चल पडी थी, अतः उसी का अनुसरण करते हुए तब मारवाड मे भी यदि राज्य द्वारा कोई ख्यातें लिखवायी गयी होगी, तो वे सब मारवाड पर तीस वर्षीय मुगल आधिपत्य काल (१६७८-१७०८ ई०) मे सर्वथा नष्ट हो गयी होगी। मारवाड से सम्बद्ध किन्ही अधिकारियो, पडितो, चारणो आदि के निजी सग्रह मे यदि कही तब लिखी गयी ख्यातो का कोई पूर्व रूप कभी सुलभ रहा होगा तो वह उसी तत्कालीन रूप मे प्राप्य नही रहा, क्योकि उन सबका उपयोग कर कालान्तर मे जब पश्चात्काल की घटनाओ को लेकर तथा तब तक के अन्य सब ही विवरण उनमे सम्मिलित करते हुए, जब उन्हे अधिक विशद रूप मे पुन लिख लिया होगा तब तो उन पूर्ववर्ती ख्यातो का कोई महत्त्व नही रह गया था एव उन्हे सुरक्षित रखने को कौन उत्सुक या प्रयत्नशील होता? अब प्राप्य 'जोधपुर राज्य की ख्यात,' 'मुदियाड की ख्यात,' आदि मे ऐसी ही पूर्ववर्ती ख्यातो का पश्चात्कालीन विस्तारित स्वरूप मिलता है।

राजनैतिक घटनावली और पश्चात्कालीन सशोधन-परिवर्द्धन के आयोजनो के होते हुए भी योगायोग से १७वी शती मे लिखे गये कुछ ग्रन्थ आज भी मूल

रूप मे प्राप्य हैं।[१] 'राव उदेभाण चापावत री ख्यात' की तो सन् १६७०-७५ ई० तक लिखी गयी मूल प्रति ही सुलभ हो गयी है। परन्तु व्यापक महत्त्वपूर्ण इतिहास-ग्रन्थ के रूप मे उससे भी कही अधिक उल्लेखनीय मुहणोत नैणसी के इतिहास-ग्रन्थ हैं जिनकी आज सुलभ प्रतियाँ पश्चात्कालीन प्रतिलिपियाँ होते हुए भी अपने मूल रूप मे ही प्राप्य है। अत. अबुल फज़ल के सन्दर्भ मे १७वी शती मे रचित इन्ही दो इतिहास-ग्रन्थो का विवेचन किया जा सकता है।

पूर्ववर्ती अन्धकारपूर्ण ऐतिहासिक काल के विवरण को प्रस्तुत करने के लिए 'आईन-इ-अकबरी' मे अबुल फजल ने प्राप्य वशावलियो के साथ ही तव प्रचलित काव्य-कथानको का भी सहारा लिया था। अबुल फजल ने उसके ऐतिहासिक महत्त्व को मान्य कर उसका जो उल्लेख किया था, उसी से प्रेरित होकर तब श्रुति-कठ-काव्य 'पृथ्वीराज रासो' को लेखबद्ध किया गया।[२] उसी प्रकार ऐतिहासिक घटनाओ को लेकर तब राजस्थान मे सर्वत्र प्रचलित ऐतिहासिक वार्त्ताओ की ओर भी ध्यान दिया जाने लगा। यो मारवाड के ही प्रमुख शासको सम्बन्धी बातो के सक्षिप्त उल्लेख 'राव उदेभाण चापावत री ख्यात' के प्रारम्भिक ऐतिहासिक 'इतिवृत्त' मे दिये हैं। परन्तु नैणसी ने मारवाड के साथ ही राजस्थान के भी अनेक शासको आदि सम्बन्धी बातो का सयत्न सग्रह कर अपनी ख्यात मे उनका समुचित उपयोग किया है।

अपने ग्रन्थो मे विभिन्न घटनाओ का विवरण देते हुए अबुल फज़ल ने उनके माह, सवतो के साथ ही यथासाध्य उनकी तिथि-तारीखें और यदा-कदा वार भी दे दिये हैं। अपनी विगत० मे दिये गये ऐतिहासिक घटनाओ के उल्लेख मे भी नैणसी ने उसी तरह यथासाध्य वार, तिथि, माह और सवतो आदि का उल्लेख किया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि विगत० की सारी रूपरेखा बनाने मे 'आईन-इ-अकबरी' मे दिये गये विभिन्न सूबो के विवरण का ढाँचा अपनाया ही नही गया था अपितु उसे और भी विशेष ब्योरेवार लिखते समय उसमे नैणसी ने अनेको अतिरिक्त बातो को भी सम्मिलित कर लिया, जो अबुल फजल के लिए कदापि सम्भव न था, क्योकि जहाँ अबुल फज़ल एक-एक सूबे का विस्तृत वृत्त प्रस्तुत कर रहा था, वही नैणसी वैसे ही सूबे की निम्नतम इकाई 'परगने' की ही जानकारी दे रहा था। इसलिए ही नैणसी के लिए यह सम्भव हो सका था कि परगने के हर एक गाँव की ब्योरेवार जानकारी प्रस्तुत कर सका।

---

१ तैस्सीतोरी जोधपुर० (भाग १, खड १), ग्रन्थ स० १८, २०, पृ० ५६-६३, ६६-६६, कविराजा सग्रह ग्रन्थ स० २१६, २१७।

२ पृथ्वीराज० (समाहरणात्मक प्रस्तावना), पृ० १७ १८।

अध्याय : २

मुहणोत नैणसी :
उसका व्यक्तित्व तथा उसका काल

१ मुहणोत वंश और मारवाड़ राज्य

मुहणोत वंश की उत्पत्ति—सर्वमान्य प्रवादो के अनुसार मारवाड के शासक राव रायपाल राठोड (१३०६ ई०?) के क्रमानुधिकारी पुत्र कन्हपाल के भाई मोहन (मुहण) से मुहणोत गोत्र का प्रारम्भ हुआ था। मोहन के हिन्दू पुत्र, भीम के वंशज आज भी मोहनिया राठोड कहलाते हैं।[1] कालान्तर मे मोहन ने जैन धर्म ग्रहण कर लिया था, अत उसके जैन धर्मावलम्बी वंशज मुहणोत कहलाये और उनकी गणना ओसवालो मे की जाने लगी।[2] लेकिन मोहन ने कब और किन परिस्थितियो मे जैन धर्म ग्रहण किया, इस सम्बन्ध मे कोई मतैक्य नही है।

भाटो की ख्यातो के अनुसार एक दिन मोहन जब आखेट पर गया था, तब उसके हाथो एक गर्भवती हिरणी का वध हुआ। उसकी मृत्यु पीडा देखकर मोहन का हृदय पसीज गया और मन अशान्त हो गया। ऐसी मन स्थिति मे जब मोहन गाँव खेड के एक कुँए पर खडा था तब जैन यति शिवसेन अकस्मात वहाँ आ पहुँचे। उनके आग्रह पर मोहन ने शिवसेन को पानी पिलाया और तदनन्तर उन्हे मृत हिरणी को जीवन दान देने की प्रार्थना की। जैन यति शिवसेन ने तदनुसार उसे जीवन-दान दे दिया। तब तो मोहन ने शिवसेन को अपना गुरु मान लिया और १३५१ वि० (१२९४ ई०) मे जैन धर्म अंगीकार कर लिया। इस कारण

---

१ आसोपा०, पृ० ७७, क्षत्रिय०, पृ० २२।

२ दयाल०, १, पृ० ९०, रेऊ, मारवाड०, १, पृ० ४६ पा० टि० २, ओझा जोधपुर०, १, पृ० १६६ पा० टि०, फैमिली०, पृ० १, जैन सत्य०, पृ० ४३७, ओसवाल०, १, पृ० ४६, हिन्दुस्तानी०, पृ० २६७।

मोहन के वशज मुहणोत कहलाये ।[1] किन्तु स्पष्टतया इसमे दिया गया सवत सही नही है, क्योकि राव रायपाल १३०९ ई० के लगभग ही मारवाड का शासक बना था, और मोहन द्वारा जैन धर्म ग्रहण करने की घटना इसके बाद ही घटित हुई होगी । अतएव ख्यातो का यह कथन कल्पित ही जान पडता है ।

'महाजन वश-मुक्तावली' के अनुसार अपने पिता राव रायपाल के समय मे ही मोहनसिंह का अपने भाइयो से आपसी मनमुटाव होने के कारण वह जैसलमेर चला गया था । जैसलमेर के रावल ने उसको आश्रय दिया । श्री जिनमणिक्यसूरि के पट्टधर श्री जिनचन्द्र सूरि तब जैसलमेर मे निवास कर रहे थे । उनके त्याग, वैराग्य और ज्ञानपूर्ण व्याख्यानो से प्रभावित होकर मोहन उनका शिष्य बन गया ।[2] ओझा भी मुहणोत गोत्र का प्रारम्भ-स्थान जैसलमेर ही मानता है ।[3] लेकिन 'महाजन वश-मुक्तावली' मे मोहन के जैसलमेर जाने का जो कारण दिया है, उसका समर्थन अन्य ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थो मे प्राप्य विवरण से नही होता है । तत्कालीन राजनैनिक परिस्थितियो आदि को देखते हुए भी यह कारण विशेष विश्वसनीय नही प्रतीत होता है । अत. मोहन के तब एकाएक जैसलमेर पहुँचने के जो कारण अन्यत्र दिये गये हैं, उन पर भी विचार करना आवश्यक जान पडता है ।

सन् १८९१ ई० की जनगणना सम्बन्धी 'जोधपुर श्री दरबार रिपोर्ट'[4] मे दिये गये मारवाड की जातियो के विवरण म मुहणोतो की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे लिखा है कि मोहनसिंह एक बार जैसलमेर गया और वहाँ के प्रधान की कन्या पर आसक्त हो गया, जो श्रीमाल वैश्य जाति की थी । उक्त प्रधान के तद्विषयक शिकायत करने पर जैसलमेर के रावल ने मोहनसिंह को उलाहना ही नही दिया अपितु उसको समझा बुझाकर उसका दूसरा विवाह कार्तिक बदि १३, स० १३५१ वि०[5] (१३९१ वि०?)[6] को उस कन्या से करवा दिया । तदनन्तर मोहनसिंह जैनी हो गया और उस कन्या से सम्पत नामक जो पुत्र हुआ, वह तथा उसके वशज मुहणोत ओसवाल कहलाये । धर्म परिवर्तन का जो कारण यहाँ बताया गया है, वह भावनापूर्ण अवश्य है, परन्तु तत्सम्बन्धी कुछ अन्य बातों पर भी विचार करना होगा । उक्त विवरण के अनुसार मोहन की प्रथम पत्नी भाटी कन्या थी, एव जैसलमेर के राव का यो स्वय हस्तक्षेप कर मोहनसिंह के दूसरे विवाह तथा उसके

---

१ ओसवाल०, पृ० ४६, हिन्दुस्तानी०, पृ० २६७ ।
२ हिन्दुस्तानी०, पृ० २६७ ।
३ दूगड०, १, वंश-परिचय, पृ० १ ।
४ आनियाँ०, पृ० १३२, गहलोत०, पृ० ९९ १०० ।
५ सोमवार, अक्तूबर १८, १२९७ ई० ।
६ बुधवार, अक्तूबर २६, १३३४ ई० ।

धर्म परिवर्तन के लिए पहल करना तत्कालीन देश-काल की परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य मे मान्य करना कठिन ही जान पडता है।

जोधपुर राज्य की ख्यात[1] के अनुसार मारवाड और जैसलमेर के बीच पूर्व समय से ही वैर चला आ रहा था। मारवाड के शासक (राव रायपाल) ने भाटी मागा[2] अथवा उसके पुत्र भाटी चन्द[3] को चारण बना दिया था। इसी का बदला लेने के लिए जैसलमेर का शासक राव रायपाल के पुत्र मोहन को पकडकर ले गया और अपने यहाँ के जैन कामदारों के यहाँ उसका विवाह कर दिया। इस जैन धर्मावलम्बी पत्नी से उत्पन्न मोहन के जैन धर्मावलम्बी वशज मोहणोत (अथवा मुहणोत) ओसवाल कहलाये। ख्यातो के इस कथन का समर्थन राजस्थान की अधिकतर अन्य प्रामाणिक ख्यातें भी करती हैं। अत यह मान्य किया जा सकता है।

२ नैणसी के प्रारम्भिक पूर्वज

मोहन स लेकर ईसा की १६वी शती के उत्तरार्द्ध मे विद्यमान मुहणोत सूजा तक की कोई क्रमबद्ध वशावली और उनके ऐतिहासिक विवरण के लिए कुछ भी प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध नही है। अत इस काल मे उसके वशजों के सही अनुक्रम आदि के बारे म सुनिश्चित रूप स कुछ भी कह सकना सम्भव नही है।

मुहणोत घराने के प्राप्य विवरणों के अनुसार इस कालातर मे मुहणोत सपटसेन और मुहणोत खेतसिह के मारवाड राज्य की शासकीय सेवा मे होने के

---

१ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २० २१।

२ विगत० (१, पृ० १५) के अनुसार भी मांगा बुध (भाटी) को रोहडिया चारण बनाया गया था। वह कुडल का ठाकुर था।

३ उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००, प० ११ क) तथा कुछ अन्य के अनुसार मागा भाटी के पुत्र भाटी चन्द को ही रोहडिया बारहठ बनाया गया था, जिसे दयाल० (१ पृ० ६०) के अनुसार रायपाल ने युद्ध मे हराया था। इसी आशय का निम्नलिखित प्राचीन डिगल पद्य भी (आसीपा०, पृ० ७६ पा० टि०) प्रचलित है

"महिरेलण रायपाल चन्द भाटी किय चारण,
तरे बीस तुरंग साठ सुझाल दी सासण।
दे धण सामण दत्त राह अखियात उबारे,
रोहड ने राठवड वधेंकी एकण धारे।
मणि सीस माल सिंधुर मदध,
बडा धणी उजवल बट,
ताहर बचक लागे पया,
बुधहूता म्हे बारहठ ॥"

विगत० के अनुसार चन्द बहुत बडा विद्वान था।

उल्लेख मिलते हैं। परन्तु किस शासक-विशेष के समय मे वे क्रमश सेवारत थे, इस बारे मे मतैक्य नही है।[1] मुहणोत मेहराज अवश्य ही राव जोधा का राज्य-कर्मचारी था।[2] परन्तु उसका कोई समकालीन उल्लेख अथवा अन्य कोई वर्णन नही मिलता है, और न बाद की प्रामाणिक ख्यातो मे ही उसकी कही कोई चर्चा है। अचला के पिता के रूप मे मुहणोत सूजा का उल्लेख मिलता है।

मुहणोत अचला सूजावत और उसका पुत्र जेसा—नैणसी का प्रपितामह मुहणोत अचला सूजावत जोधपुर के राव चन्द्रसेन की सेवा मे निरन्तर बना रहा। जोधपुर पर मुगल आधिपत्य हो जाने के कारण राव चन्द्रसेन को जब जोधपुर छोडकर पहाडो और जगलो मे बहुत ही कष्टमय जीवन व्यतीत करना पडा, उस समय भी स्वामी-भक्त सेवक मुहणोत अचला सूजावत ने अपने स्वामी का साथ नही छोडा। मुगल सेना के दबाव के कारण जब राव चन्द्रसेन मारवाड छोडकर डूंगरपुर, बांसवाडा और मेवाड मे भटकता फिरा, तब अपने स्वामी के साथ स्वय भी कष्टप्रद जीवन बिताते हुए अचला सर्वत्र चन्द्रसेन के साथ निरन्तर रहा। सोजत के सरदारो के आमन्त्रण पर जब चन्द्रसेन वहाँ लौटा, और तब सोजत परगने के सवराड गाँव मे स्थित मुगलो के थाने पर उसने आक्रमण कर रविवार, जुलाई १९, १५७९ ई० को उस पर अधिकार कर लिया, उस समय हुई सवराड गाँव की इस लडाई मे यह स्वामी-भक्त सेवक मुहणोत अचला वीरगति को प्राप्त हुआ।[3]

चन्द्रसेन के देहान्त के बाद अचला के वशजो तथा उसके अन्य मुहणोत समर्थको को चन्द्रसेन के बडे भाई मोटा राजा उदयसिंह ने प्रश्रय दिया। अत सन् १५८३ ई० मे जोधपुर पर मोटा राजा का आधिपत्य हो जाने पर वे सब ही वापस जोधपुर लौट आये।[4]

इस मुहणोत घराने से सम्बद्ध शिलालेखों[5] और ख्यातो मे अचला के पुत्र और नैणसी के पितामह, जेसा का नाम अवश्य मिलता है, किन्तु इसके विषय मे कोई

---

१ फैमिली० (पृ० १) के अनुसार राव चूंडा के समय में सपटसेन था। किन्तु हिन्दुस्तानी० (पृ० २६८) और ओसवाल० (पृ० ४६, ४७) के अनुसार राव कन्हपाल के समय मे सपटसेन, और चूडा के समय म खतसिह मारवाड राज्य की शासकीय सेवा में थे।

२ फैमिली०, पृ० १, हिंदुस्तानी०, पृ० २६८, ओसवाल०, पृ० ४७।

३ उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००), प० २६ ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ११६, त्रिगत०, १, पृ० ७३।

४ उदेभाण० (ग्रन्थ० स० १००), प० २६ ख।

५ आमोर दुर्ग में प्रथम चैत्र बदि ५, १६८१ वि० का शिलालेख, आषाढ बदि ४, १६८३ वि० का शिलालेख और गुरुवार, प्रथम चैत्र बदि ५, १६८१ वि० का शिलालेख (दिग्दर्शन०, पृ० १८३, १८४, १८५)।

अतिरिक्त जानकारी उपलब्ध नहीं है।

मुहणोत जयमल जेसावत—मुहणोत नैणसी के पिता जयमल जेसावत का जन्म बुधवार, जनवरी ३१, १५८२ ई० को हुआ था।[1] वह युवावस्था मे ही राजा सूरसिंह की राज्य-सेवा में नियुक्त हो चुका था। गुजरात के उपद्रवकारियों का दमन करने के लिए सन् १६०६ ई० के मध्य में जहाँगीर बादशाह के आदेशानुसार जब राजा सूरसिंह वहाँ गया था, तब उसे गुजरात के कुछ परगने जागीर में मिले, जिनमें वहाँ की पट्टन सरकार का बडनगर परगना भी था। अतः तब राजा सूरसिंह ने मुहणोत जयमल को वहाँ का हाकिम बनाया।[2] १६१५ ई० तक मुहणोत जयमल इस परगने का प्रबन्ध करता रहा। तदनन्तर यह बडनगर परगना २०,००० रुपये में ठेके (मुकाता) पर मुहता रामा को दे दिया गया, जिससे वह मुहणोत जयमल के अधिकार मे नहीं रहा।[3] इसी वर्ष बादशाह जहाँगीर ने राजा सूरसिंह को फलोधी परगना जागीर में प्रदान कर दिया था। अतः तब मुहणोत जयमल को वहाँ का हाकिम बना दिया गया।[4] वहाँ पर उसने अच्छा बन्दोबस्त किया।

शाहजादा खुर्रम ने फरवरी, १६२१ ई० मे अपने अधिकार वाला जालोर परगना राजा गजसिंह को दे दिया था। तब इस परगने का शासन प्रबन्ध गजसिंह ने मुहणोत जयमल को सौंप दिया था। सितम्बर १३, १६२१ ई० को गजसिंह के मनसब मे हजारी जात-हजार सवार की वृद्धि हुई थी, तब उसी के फलस्वरूप यह परगना औपचारिक रूपेण भी गजसिंह के नाम लिख दिया गया होगा।[5] अगस्त, १६२२ ई० मे सांचोर परगना महाराजा गजसिंह को प्राप्त हो गया था और १६८१ वि० (१६२४-२५ ई०) मे मुहणोत जयमल जेसावत वहाँ का हाकिम था। इसी समय पाँच हजार काछियों[6] के दल ने सांचोर पर आक्रमण कर दिया, तब मुहणोत जयमल के सेवकों ने लडाई की और काछियों को पराजित कर भगा दिया। इस युद्ध के बाद शहर कोट की आवश्यकता को जानकर, जहाँ-जहाँ सांचोर का कोट गिर गया था, उसको जयमल ने पुनः बनवाया और सांचोर

---

१ हिन्दुस्तानी०, पृ० २६६।

२ मीराते अहमदी (अंग्रेजी), पृ० १६३ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १२५, विगत०, १, पृ० ६८, ६४।

३ विगत०, १, पृ० ६४।

४ विगत०, २, पृ० ७, जोधपुर ख्यात० (१, पृ० १४३) मे फलोधी पर सूरसिंह का अधिकार सन् १६१३ ई० मे होना लिखा, सो ठीक नही है।

५ विगत०, १, पृ० १०६-७, जालोर विगत० (बडी), प० ६७ ख पोथी० (ग्रन्थ सं० १११), प० ४११ क, जहाँगीर०, पृ० ६१०, ७२७।

६ सम्भवत कच्छ क्षेत्र के उपद्रवकारी।

चे सम्पूर्ण कोट की मरम्मत करवा दी ।[1]

जयमल एक अच्छा प्रशासक ही नही वरन् वीर योद्धा भी था । अत १६२६ ई० मे महाबत खाँ का पीछा करने को मारवाड की जो सेना भेजी गयी थी कुछ समय तक उसका भी सेनापतित्व जयमल ने किया था ।[2] बाद मे सन् १६२६ ई० मे उसने सुराचन्द, पोहकरण, राडधरा और महेवा के विद्रोही सरदारो को दड देकर उनसे पेशकश ली ।[3]

उसकी कार्यकुशलता और कार्यक्षमता से प्रभावित होकर राजा गजसिंह ने १६२६ ई० म सिंघवी सिरमल (सहसमल) के स्थान पर मुहणोत जयमल को मारवाड राज्य के देश दीवान पद पर नियुक्त किया ।[4] इसके कुछ ही समय बाद सोमवार, दिसम्बर १४, १६२६ ई० को राजकुमार अमरसिंह को २,००० जात १,३०० सवार का मनसब मिला, जिसकी जागीर के हिसाब का विवरण देश-दीवान होने के नाते मुहणोत जयमल के पास शुक्रवार, मार्च २६, १६३० ई० का सोजत मे प्राप्त हुआ था ।[5] इस पद पर उसन लगभग ५ वर्ष कार्य किया। १६३३ ई० (स० १६९० वि०) म मुहणोत जयमल के स्थान पर सिंघवी सुखमल को देश-दीवान बनाया गया ।[6]

मुहणोत जयमल मूर्तिपूजक जैन श्वेताम्बर पन्थ का अति धर्मपरायण दानवीर व्यक्ति था। उसने अपने जीवन-काल मे मारवाड, मेवाड, गुजरात आदि क्षेत्रो के अनेक स्थानो मे जैन मन्दिर बनवाकर उनमे जैन देवो की प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा प्राय तपगच्छ के सुविख्यात आचार्य महाराज श्री विजयदेव सूरि अथवा उनके शिष्यो द्वारा ही करवायी थी । राजा गजसिंह के समय म जब वह जालोर परगने का हाकिम था, तब जालोर के किले मे उसने दो मन्दिर बनवाये थे । प्रथम मन्दिर मे गुरुवार, फरवरी १७, १६२५ ई० को महावीर की मूर्ति की प्रतिष्ठा करवायी ।[7] इसी मन्दिर के एक अन्य कमरे मे गुरुवार, मई २४, १६२७ ई० को

---

१ विगत०, १, पृ० १०७, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२७ ।
२ विगत०, १, पृ० ११०, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १६० ।
३ हिन्दुस्तानी०, पृ० २६९-७०, फैमिली०, पृ० २ ।
४ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १७७, बाल०, १, प० स० ७२, पोथी० (ग्र थ स० १११), प० ४११ ख ।
५ पादशाह० १ ब, पृ० २६१, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १७७, १५२, बुधवार, मगसिर शुक्ल १३, १६८९ वि० (बुधवार, नवम्बर १४, १६३२ ई०) का फलोधी का शिलालेख, जनल बगाल०, १२, (१९१६ ई०), पृ० ९७ ।
६ पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४११ ख ।
७ गुरुवार, प्रथम चैत्र बदि ५, स० १६८१ वि० (फरवरी १७, १६२५ ई०) का जालोर का शिलालेख (दिग्दर्शन०, पृ० १८३ ८४) ।

धर्मनाथ की प्रतिमा की स्थापना करवायी।[1] द्वितीय चौमुख का मन्दिर है, उसमे गुरुवार, फरवरी १७, १६२५ ई० को जयमल ने आदिनाथ की मूर्ति प्रस्थापित करायी थी।[2] इसी प्रकार सांचोर में जैन मन्दिर बनवाकर फरवरी १७, १६२५ ई० को भगवान की मूर्ति की प्रतिष्ठा करवायी।[3] १६२५ ई० मे शत्रुजय (पाली-ताणा) मे एक जैन मन्दिर बनवाया।[4] नाडोल नगर मे शुक्रवार, मई २१, १६३० ई० को राय विहार मन्दिर मे पद्मप्रभ और शान्तिनाथ की मूर्तियो की प्रतिष्ठा करायी।[5] फलोधी मे भी १६३२ ई० मे उसने शान्तिनाथ के मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया था।[6] स० १६२६ ई० मे उसने सपरिवार शत्रुजय, गिरनार, आबू आदि तीर्थों की यात्रा की और तदर्थ सघ भी निकाले।[7]

१६३०-३१ ई० (१६८७ वि०) मे जालोर मे अकाल पडा, परन्तु उसके कारण राजस्व आदि करो की वसूली मे मुहणोत जयमल ने कोई रियायत नही की। सख्ती के साथ चौथाई भाग लगान वसूल किया। महेवा पर तब रावल भारमल और महेवा महेशदास का अधिकार था, परन्तु महेवा की पेशकश की पूरी रकम वसूल नही हो रही थी जिससे सन् १६३२ ई० (१६८६ वि०)[8] मे मुहणोत जयमल ने अपने आदमी भेजकर महेशदास के गांव गादहरो[9] (गादसरो) को

---

१. गुरुवार, आषाढ़ बदि ४, स० १६८३ वि० (मई २४, १६२७ ई०) का जालोर में धर्मनाथ की मूर्ति पर शिलालेख (दिग्दर्शन०, पृ० १८४)।

२ गुरुवार, प्रथम चैत्र बदि ५, सं० १६८१ वि० (फ़रवरी १७, १६२५ ई०) का जालोर में आदिनाथ की प्रतिमा पर लेख (दिग्दर्शन०, पृ० १६५)।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२७।

४ हिंदुस्तानी०, पृ० २७३।

५ गुरुवार, प्रथम आषाढ बदि ५, स० १६८६ वि० (मई २१, १६३० ई०) के नाडोल में पद्मप्रभ और शान्तिनाथ प्रतिमाओं के लेख (हिन्दुस्तानी०, पृ० २७३-७४)।

६ बुधवार, मगसिर शुदि १३, १६८६ वि० (नवम्बर १४, १६३२ ई०) का फलोधी का शिलालेख, (जर्नल बगाल०, १२ (१६१६ ई०), पृ० ६७)।

७ हिन्दुस्तानी०, पृ० २७०, ओसवाल०, १, पृ० ४६।

८ यह सवत् उदेभाण० (ग्रन्थ स० १००, प० ४७ ख-४८ क) के आधार पर दिया गया है। जोधपुर ख्यात० (१, पृ० २५०), और पोथी० (ग्रन्थ १११, प० ४१२ क) म घटना का स० १७०० वि० और बाल०(१, प० ७८) मे स० १७०२ वि० दिये हैं, जो ठीक नही है, क्योकि जालोर परगना १६३८ ई० से मारवाड के शासको के आधीन नही था और सितम्बर १, १६४२ ई० (कार्तिक बदि ८, १६६६ वि०) में तो जालोर परगना राठोड महेशदास दलपतोत को दिया जा चुका था। (जालोर विगत० (छोटी), प० ४ ख ५ क, शाहजहाँ०, पृ० १७७)।

९ जोधपुर ख्यात० (१, पृ० २५०), बाल० (१, प० ७८) और पोथी० (ग्रन्थ स० १११, प० ४१२) में महेचा महेशदास के गांव 'राडधरा (परगना जालोर)' के लूटे जाने के उल्लेख हैं, परन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि उनमे गांव का नाम 'राडधरा' लिखने मे भूल हो

लुटवाया। उस पर महेचा महेशदास विद्रोही होकर लूट-मार करने लगा, तब उसका दमन करने के लिए मारवाड़ की जो सेना भेजी गयी उसके सेनानायक के रूप मे मुहणोत नैणसी का उल्लेख[1] मिलता है। उसने महेचा महेशदास के मुख्य स्थान कोट-मकान आदि ढहा दिये।

सम्भवत करो की वसूली मे की गयी मुहणोत जयमल की इस सख्ती के कारण ही सन् १६३३ ई० मे उसे पदच्युत कर दिया गया। और उसके स्थान पर सिंघवी सुखमल को देश-दीवान बना दिया गया।[2] मुहणोत जयमल का अन्तिम शिलालेख फलोधी मे शान्तिनाथ के मन्दिर मे बुधवार, नवम्बर १४, १६३२ ई० का मिलता है, जिसमे उसको 'मन्त्रीश्वर' लिखा है। देश-दीवान पद से हटाये जाने के बाद मुहणोत जयमल का कोई विवरण उपलब्ध नही है। अतः १६३३ ई० के बाद उसकी क्या गतिविधि रही थी और उसकी मृत्यु कब हुई— इस बारे मे निश्चयात्मक रूपेण कुछ भी कह सकना सम्भव नहीं है। परन्तु तब तक अपनी सदियो पुरानी परम्परा को निभाते हुए उसका ज्येष्ठ पुत्र और भावी इतिहासकार नैणसी मारवाड राज्य की शासकीय सेवा मे रत हो गया था। राजकीय सेवक के रूप मे उसका सर्वप्रथम उल्लेख १६३७ ई० का मिलता है।[3]

३ नैणसी का प्रारम्भिक जीवन

नैणसी के पिता जयमल ने दो विवाह किये थे। प्रथम पत्नी बैद मेहता लालचन्द की पुत्री सरूपदे थी। उससे नैणसी, सुन्दरदास, आसकरण, और नरसिंहदास नामक चार पुत्र हुए। द्वितीय पत्नी सुहागदे सिंघवी बिड़दसिंह की लडकी थी, जिसने जगमाल नामक एकमात्र पुत्र को जन्म दिया था।[4]

जयमल के ज्येष्ठ पुत्र नैणसी का जन्म शुक्रवार, नवम्बर ९, १६१० ई० (स० १६६७ वि० मार्गशीर्ष सुदि ४) को हुआ था।[5] नैणसी का प्रथम विवाह मडारी नारायणदास की पुत्री से हुआ था और द्वितीय मेहता भीमराज की लडकी से।[6] नैणसी का एक और विवाह-सम्बन्ध बाड़मेर के कामदार कमा की

गयी है क्योकि राडधरा कभी भी महेचा महेशदास या उसके पूर्वजों के अधिकार में नही रहा। जालोर विगत० (छोटी), प० ६० ख ३८ क, ४५ क।

१ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५० । पोथी (ग्रन्थ स० १११, प० ४१२ क) म मुहणोत सुन्दरदास का भी नाम जोड़ दिया गया है।

२ जालोर विगत० (बड़ी), प० ६७ ख, जोधपुर ख्यात०, पृ० १७७।

३ विगत०, १, पृ०११६।

४. ओसवाल०, पृ० ४८, (प्रथम चैत्र वदि ५, वि० १६८१) गुरुवार, फरवरी १७, १६२५ ई० का जालोर का लेख।

५ नैणसी की जन्मकुडली की प्रतिलिपि बदरीप्रसाद साकरिया से प्राप्त हुई।

६ ओसवाल०, पृ० ४६।

बेटी से भी होना तय हुआ। उस समय तक नैणसी परगना हाकिम पद तक पहुँच गया था। अत विवाह करने के लिए स्वय बाहडमेर न जाकर उसने अपने प्रतिनिधि के रूप मे कुछ व्यक्तियो के साथ अपना खड्ग ही भेज दिया। परन्तु उक्त कामदार कमा ने इस अपना अपमान समझा और अपनी पुत्री का विवाह अन्यत्र कर दिया। इस बात पर नैणसी बिगड गया और उसने बाहडमेर के कई क्षेत्रो मे लूटमार की और वहाँ के मुख्य दरवाजे के किंवाडो को उठवा लाया और उन्हें जालोर के मुख्य दरवाजे पर लगवा दिया।[1]

नैणसी की प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा के बारे म कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। परन्तु वह जोधपुर राज्य के सर्वोच्च पदाधिकारी का पुत्र था और जैन धर्मावलम्बी था। अत तब दी जा सकने वाली सारी आवश्यक शिक्षा-दीक्षा उसे अवश्य ही दी गयी होगी। वह युवावस्था मे राज्य-सेवा मे प्रवृत्त हो गया था। अपने जीवन काल मे कई परगनो का हाकिम रहकर अन्त म वह देश-दीवान के पद पर पहुँच गया था। इन सबसे स्पष्ट अनुमान लगाया जा सकता है कि उसे सैनिक, प्रशासनिक आदि हर प्रकार की उच्च शिक्षा और समुचित प्रशिक्षण अवश्य ही दिये गये थ। आगे सेवा मे रहते हुए अध्ययन और अनुभव से ही उसने बहुत कुछ सीखा था।

नैणसी की योग्यता की परख कर ही राजा गजसिंह ने २७ वर्ष की वय म ही उसे अपनी राज्य-सेवा मे ल लिया था।

४ मारवाड राज्य के सैनिक अधिकारी के रूप मे मुहणोत नैणसी

अपने योग्य पिता की इच्छानुसार पुत्र नैणसी भी निरन्तर योग्यता का परिचय देता रहा। यो मुगल साम्राज्य के अन्तर्गत जोधपुर राज्य-क्षेत्र मे पहिले की अपेक्षा कहीं अधिक शान्ति और सुव्यवस्था थी, तथापि कई एक सुदूरस्थ क्षेत्रो मे या जहाँ के निवासी सम्भवत थोडे-बहुत उच्छृखल होते थ वहाँ यदा-कदा विरोध और उपद्रव उठ खडे होते थे अथवा आस पास या दूर के उपद्रवी आक्रमण कर वहाँ यत्र तत्र लूटमार करते थे, जिनको दबाना भी स्थानीय अधिकारी का कर्तव्य होता था। कई बार राजा उस हेतु किसी विशिष्ट अधिकारी को आवश्यक सैन्य दल देकर उस क्षेत्र मे उपद्रवियो या आक्रमणकारियो का दमन कर वहाँ शान्ति तथा व्यवस्था स्थापित करने का काम सौंप देता था।

फलोधी परगना जोधपुर राज्य के पश्चिमी सीमान्त का क्षेत्र था, अत. वहाँ की भौगोलिक तथा प्राकृतिक परिस्थितियो से लाभ उठाकर उसके दक्षिण-पश्चिम मे स्थित सिंध और उससे आगे बलूचिस्तान आदि क्षेत्रो मे उपद्रवी या लुटेरे

---

१ बांकी०, पृ० १७६, बात स० २१२५।

सहज ही वहाँ पहुँचकर अपना स्वार्थ-साधन करते रहते थे। राजा गजसिंह के शासनकाल के अन्तिम वर्षों मे मुहता जगन्नाथ फलोधी का हाकिम था। उसके समय मे फलोधी क्षेत्र मे बलोचियो की लूटमार बहुत बढ गयी थी। मार्च, १६३४ ई० समय मे बलोच मुगल खाँ और समायल खाँ ने फलोधी के दो गाँवो मे लूटमार की। सितम्बर, १६३६ ई० मे बलोच हैदरअली, मदा और फतेहअली आदि पुनः लूटमार कर वहाँ से धन दौलत व पशु ले गये। मुहता जगन्नाथ उक्त बलोचियो का दमन करने मे असमर्थ रहा। उसके कई व्यक्ति भी मारे गये।[1] पुन गुरुवार, अक्तूबर ५, १६३७ ई० को बलोच मुजफ्फर खाँ फलोधी के गाँव सेनऊ पर चढ आया। उसमे हुई मुठभेड मे कई राजपूत सरदार मारे गये और मुजफ्फर खाँ धन दौलत व पशु लूटकर सुरक्षित लौट गया।[2]

फलोधी पर आक्रमण कर लूटमार के बाद ये बलोची हर बार सुरक्षित चले जाते थे और हाकिम जगन्नाथ उनका दमन नही कर पा रहा था। मुहता जगन्नाथ की अयोग्यता स्पष्ट रूप से सामने आ चुकी थी। अत हाकिम जगन्नाथ को वहाँ से स्थानान्तरित कर उसके स्थान पर अन्य योग्य व्यक्ति को भेजने के अतिरिक्त राजा गजसिंह के लिए कोई चारा नही था। अत तब गुरुवार, अक्तूबर १२, १६३७ ई० मे मुहणोत नैणसी को फलोधी का हाकिम नियुक्त कर बलोचियो के दमन और वहाँ शान्ति स्थापना करने का कार्य उसे सौपा गया। नैणसी के लिए यह महत्त्वपूर्ण मौका था, क्योकि इसके परिणाम पर ही उसका भविष्य निर्भर था। अक्तूबर २०, १६३७ ई० को नैणसी फलोधी पहुँचा।[3] बलोच मुगल खाँ ने सर्वत्र आतंक फैला रखा था। नवनियुक्त हाकिम नैणसी को इसका अन्त करना था। सोमवार, दिसम्बर ११, १६३७ ई० को मुगल खाँ गाँव बाप के राव मोहनदास पर चढ आया। राव मोहनदास उसका सामना करने मे असमर्थ था। अत. उसने शहर-कोट के द्वार बन्द करवा दिये और दो ऊँट सवारो को नैणसी के पास फलोधी भेजा। उन ऊँट सवारो के द्वारा मुगल खाँ के आक्रमण की सूचना पाते ही अपने पास के इने-गिने १० व्यक्तियो को लेकर नैणसी तुरन्त ही राव की सहायतार्थ रवाना हो गया। रवाना होने के पूर्व उसने और सैनिको को भी आगे सम्मिलित होने के निर्देश दिये थे, जिससे कीरडा पहुँचते पहुँचते और २० सैनिक उसमे आ मिले। तब रणभेरी बजवा दी। बलोच मुगल खाँ ने समझा कि सहायतार्थ और भी सेना आ रही है, जिसका मुकाबला करना सम्भव नही होगा, अत वह वहाँ से भाग निकला।[4]

---

१ विगत०, १, पृ० ११८ १६, २, पृ० ८।
२ विगत०, १, पृ० ११६; २, पृ० ८।
३ विगत०, १, पृ० ११६।
४. विगत०, १, पृ० १२०।

वाप पहुंचकर नैणसी ने राव मोहनदाम से मुगल खाँ के बारे मे पूछा। उमके भाग निकलने की खबर पाकर उमन आदेश दिया कि अविलम्ब उसका पीछा किया जाय। परन्तु तब राव मोहनदास ने कहा कि इस समय हमारे पास सैनिक बहुत कम हैं। अत सभी सैनिक एकत्रित होने पर ही आगे वढना चाहिए। उसकी राय को उचित समझकर तब उस दिन बलोच मुगल खाँ का पीछा नही किया गया। दूसरे दिन दिसम्बर १२ १६३७ ई० को प्रात प्रस्थान के समय ही अपशकुन हो जाने के कारण उस दिन भी बलोच मुगल खाँ का पीछा नही किया जा सका। इसी बीच राव मोहनदाम के गुप्तचरो ने आकर खबर दी कि मुगल खाँ बीकुम्पुर म ठहरा हुआ है और उसकी सैनिक शक्ति अधिक है। यह समाचार सुनकर राव मोहनदास भयभीत हो गया और उसन नैणसी के सम्मुख वापस लौट जाने का प्रस्ताव रखा। बलोचो का दमन कर फलोधी मे शान्ति स्थापना का उत्तरदायित्व नैणसी पर था। अत वह उस प्रस्ताव को कैसे स्वीकार कर सकता था ? ऐसी स्थिति म बाध्य होकर राव को भी नैणसी को सहयोग देना पडा। उसी रात को जैसलमेर के रावल मनोहरदास का सन्देश भी मिला कि इधर स बीकुम्पुर पर वह स्वय आक्रमण करेगा और उधर से नैणसी भी उस पर चढाई कर दे। तब तो राव मोहनदास और नैणसी ने बीकुम्पुर पर चढाई कर दी।[1]

बलोच मुगल खाँ को नैणसी और रावल मनोहरदास के इस सयुक्त आक्रमण का पता लग गया था। अत उनके वहाँ पहुंचने के पूर्व ही वह वहाँ से भाग गया। भारमलसर गाँव म रावल मनोहरदास नैणसी से आ मिला। रावल के गुप्तचरो द्वारा तब पता लगा कि बलोच मुगल खाँ ने अहवाची नदी पर मोरचा-बन्दी कर ली थी। अत रावल ने सम्पूर्ण सना को तीन दलो म विभाजित किया, एक दल का सेनापति स्वय बना, दूसरे का राव मोहनदास और तीसरे का नैणसी। इन तीनो दलो ने दिसम्बर १४, १६३७ ई० को प्रात ही मुगल खाँ पर कूच कर दिया। दोनों पक्षो के मध्य घमासान युद्ध हुआ। अन्त म मुगल खाँ रणक्षेत्र मे ही मारा गया।[2] यो नैणसी ने उस आतककारी का अन्त कर फलोधी परगन म शान्ति स्थापित कर दी।

जोधपुर के राजा गजसिंह की मृत्यु के बाद भी फलोधी पर उसके उत्तरा-धिकारी राजा जसवन्तसिंह का अधिकार बना रहा। जसवन्तसिंह के शासक बनने के लगभग आठ महीने के बाद ही गुरुवार जनवरी ३१, १६३६ ई० को बलोच मदा और फतह अली अपने ७५० साथियो के साथ फलोधी आकर पुन उपद्रव करने लगे। तब मुहणोत नैणसी और सुन्दरदास ने ससैन्य उनका पीछा कर उन्हे

---

१ विगत० १ पृ० १ ०२१ २ पृ० ८।
२ विगत० १ पृ० १२१२३ २, पृ० ८।

परगने से निकाल बाहर किया, जिससे तदनन्तर वहाँ स्थायी शान्ति स्थापित हो गयी।[1]

सोजत के उपद्रवियों का दमन—दक्षिण मे स्थित मारवाड के मगरा क्षेत्र मे मेर बसते थे। जो यदा-कदा उपद्रव कर उस क्षेत्र मे अशान्ति और अव्यवस्था उत्पन्न कर देते थे, सन् १६४२ ई० (१६९९ वि०)[2] मे जब उन्होंने उपद्रव किया तब महाराजा जसवन्तसिंह ने सोजत परगने के पहाडी क्षेत्र मे हो रहे मेरो के उपद्रव के दमनार्थ नैणसी को भेजा। उन पर आक्रमण कर नैणसी ने मगरा के मेरो को पराजित किया और उन्हें भयभीत करने के लिए तब उसने उनके अनेक गांव भी जला दिये। नैणसी की इस कार्यवाही से इस क्षेत्र मे तब तत्काल कुछ समय के लिए उपद्रव अवश्य शांत हो गया।

परन्तु १६४५-४६ ई० में मेरो का मुखिया रावत नारायण पहाडो मे रह कर पुन परगना सोजत की शांति भग करने लगा। वह सोजत के आसपास के गाँवो को लूटा करता था। महाराजा जसवन्तसिंह ने उसके दमनार्थ नैणसी और सुन्दरदास को नियुक्त किया। नैणसी और सुन्दरदास ने कूकडा, कराणा, कोट और मातड गांवो को नष्ट कर दिया,[3] जिससे रावत नारायण का उपद्रव समाप्त हो गया और पुन मेरो ने जोधपुर के शासक के विरुद्ध कोई आवाज़ नही उठायी।

पोहकरण पर चढाई—पोहकरण का परगना जोधपुर और जैसलमेर के राज्यो की सीमाओ पर स्थित होने के कारण उस पर अधिकार करने को दोनो ही राज्यो के शासक निरन्तर प्रयत्नशील रहते थे। राव चन्द्रसेन के समय से ही जैसलमेर राज्य का उस पर अधिकार हो गया था। सूरसिंह के समय से ही पोहकरण का परगना मुगल बादशाहों की ओर से जोधपुर राज्य के शासकों के मनसब में लिखा जाता रहा था, परन्तु उस पर उनका अधिकार नहीं हो पाया था। राजा गजसिंह को भी पोहकरण शाही मनसब मे मिला हुआ था, परन्तु उस पर जैसलमेर के भाटियो का ही अधिकार रहा। गजसिंह के मरणोपरान्त जब जसवन्तसिंह जोधपुर राज्य के सिंहासन पर बैठा, तब भी पोहकरण जसवन्तसिंह को मनसब मे मिला था। परन्तु उसने भी पोहकरण पर अधिकार करने का कोई प्रयत्न नही किया। रविवार, नवम्बर ११, १६४६ ई० (मार्गशीर्ष बदि २,

---

१ विगत०, २, पृ० ८।

२ पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४१२ क, जोधपुर ख्यात० (१, पृ० २५०), ख्यात० (बणसूर), (प० ५६ ख) और बाल० (प० ७८) म स० १६८९ (१६३२ ई०) दिया है सो सही नहीं है।

३ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५०, मुदियाड०, पृ० १२५, ओझा जोधपुर०, १, पृ० ४२०।

ने समझौता कर गढ़ खाली कर देने का सन्देश भेजा। रावत सबलसिंह की मध्यस्थता में *बातचीत हुई। अन्त में भाटियों ने दुर्ग खाली कर दिया।* कुछ भाटी जो स्वाभिमानी थे, वे तब दुर्ग से यों निकल जाने को तैयार नहीं हुए और जसवन्तसिंह की सेना का सामना करते हुए काम आये और शुक्रवार, अक्तूबर ४, १६५० ई० को पोहकरण पर जसवन्तसिंह की सेना का अधिकार हो गया।[1] जोधपुर राज्य की ख्यात[2] के अनुसार पोहकरण पर अधिकार करने के बाद जसवन्तसिंह की सेना जैसलमेर गयी। सेना का आगमन सुनकर रावल रामचन्द्र भाग गया। रावल सबलसिंह वहाँ की गद्दी पर बैठा। तब सेना वापस पोहकरण लौट आयी।

पोहकरण जैसलमेर पर मुहणोत नैणसी की दूसरी चढ़ाई (१६५६ ई०)—सितम्बर ७, १६५७ ई० को शाहजहाँ बीमार पड़ा और तब मुगल साम्राज्य के सिंहासन के लिए शाहजहाँ के पुत्रों में उत्तराधिकार-युद्ध प्रारम्भ हुआ। दक्षिण *में औरंगजेब और गुजरात से मुराद का सामना करने को महाराजा जसवन्तसिंह* को भेजा गया। परन्तु शुक्रवार, अप्रैल १६, १६५८ ई० को हुए धरमाट के युद्ध में महाराजा जसवन्तसिंह पराजित हुआ था। अतः जब औरंगजेब मुगल सिंहासन पर बैठा तब जसवन्तसिंह को भी उसकी आधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी। परन्तु शुजा के साथ होने वाले खजवा के युद्ध से पहिले ही रात में वह पुनः औरंगजेब का पक्ष छोड़कर जोधपुर लौट आया था। अतः महाराजा जसवन्तसिंह के प्रति औरंगजेब का मनमुटाव और बढ़ गया। इसी अवसर का लाभ उठाकर जैसलमेर के रावल सबलसिंह ने फरवरी २४, १६५६ ई० को औरंगजेब से पोहकरण का फरमान प्राप्त कर लिया और मार्च, १६५६ ई० को अपने पुत्र कुँवर अमरसिंह के नेतृत्व में पोहकरण पर अधिकार करने के लिए सेना भेज दी, जिसने मार्च १६, १६५६ ई० को पोहकरण को जा घेरा और मार्च २६, १६५६ ई० को पोहकरण पर अधिकार कर लिया।[3]

परन्तु जब गुजरात की राह दारा ने पुनः राजस्थान में होकर औरंगजेब पर चढ़ाई की, तब जसवन्तसिंह को दारा के पक्ष में नहीं होने देने के उद्देश्य से

---

१ विगत०, २, पृ० २०३-५, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १०८। जोधपुर ख्यात०, (१, पृ० २०१) ख्यात वंशावली० (ग्रन्थ ७४, प० ५५ ख) और उदेभाण० (ग्रन्थ सं० १००, प० ३६ क) के अनुसार शनिवार, अक्तूबर ५, १६५० ई० को दुर्ग पर अधिकार हुआ, परन्तु वह मान्य नहीं है। बांकी० (पृ० ३०, बात सं० ३२३) के अनुसार आश्विन शुदि १५, १७०६ वि० (सितम्बर २६, १६५० ई०) को अधिकार हो गया था। यह भी मान्य नहीं किया जा सकता क्योंकि इस दिन तो दुर्ग घेरा गया था।

२ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २०३।

३ विगत०, २, पृ० ३२३, १, पृ० ११७, १३६, वही०, पृ० ३६।

औरंगजेब को जसवन्तसिंह के साथ समझौता करना पड़ा था। महाराजा जसवन्तसिंह को जोधपुर राज्य आदि के साथ उसका मनसब पूर्ववत् प्रदान कर दिया गया जिससे पोहकरण परगना भी उसे पुन मिल गया। यही नहीं, तब बुधवार, मार्च १६, १६५६ ई० को औरंगजेब ने जसवन्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी प्रदान कर उसे वहाँ जाने का आदेश दिया।[१] मार्च १८, १६५६ ई० को जसवन्तसिंह जोधपुर से गुजरात रवाना हुआ, तब देश-दीवान के रूप मे मुहणोत नैणसी भी जसवन्तसिंह के साथ था। उस समय दारा का पीछा कर रही शाही सेना मे मिर्जा जयसिंह और बहादुर खां थे। बुधवार, मार्च ३०, १६५६ ई० को जालोर के गाँव सैणा मे जसवन्तसिंह भी उनसे मिला।[२] मार्च ३१, १६५६ ई० को सिरोही के गाँव ऊड (सिरोही के ८ मील उत्तर-पश्चिम मे) डेरे पर जसवन्तसिंह को मुहणोत करमसी नैणसिंहोत द्वारा भेजे गये ऊँट सवारो ने पोहकरण पर भाटियो के आक्रमण की सूचना दी। जसवन्तसिंह की सारी सेना तब उसके साथ थी और वह स्वय युद्ध के पक्ष मे भी नही था। अत जसवन्तसिंह के आग्रह पर जयसिंह ने चौधरी रतनसिंह के साथ रावल सबलसिंह के पास इस आशय का पत्र भेजा कि पहिले पोहकरण तुमको दी थी, परन्तु अब जसवन्तसिंह को ही पुन प्रदान कर दी गयी है।[३] साथ ही पोहकरण पर अधिकार करने के लिए ही जसवन्तसिंह ने इसी दिन अपने सबसे अधिक विश्वासपात्र देश-दीवान मुहणोत नैणसी के नेतृत्व मे सेना देकर विदा किया।[४]

उस समय नैणसी के पास २,०७१ सवार, ८११ ऊँट और २,६२२ पैदल सैनिक थे। नैणसी स्वय प्रधान सेनापति नही बनना चाहता था। अत उसने जसवन्तसिंह से कहा कि प्रधान सेनापति किसी अन्य को बनाया जाय। तब जसवन्तसिंह ने राठोड लखधीर और राठोड भीम के नाम परवाने लिख दिये, परन्तु वे सेना मे सम्मिलित नहीं हो सके और प्रधान सेनापतित्व का कार्य-भार अन्त मे नैणसी को ही सँभालना पड़ा।[५] नैणसी सिरोही से सेणा आया, जालोर पहुँचा, वहाँ से बाला दुनाडा और साल्हावास होता हुआ वह जोधपुर पहुँचा और चार दिन तक वहाँ रहा। सेना का सामान एकत्रित किया और आवश्यक अन्य व्यय के लिए २०,००० रुपये खजाने से लिए। इस अभियान मे सम्मिलित

---

१ विगत०, १, पृ० १३६, वही०, पृ० ३७ ३८।
२ विगत०, १, पृ० १३७, वही०, पृ० ३८।
३ विगत०, १, पृ० १३७ वही०, पृ० ३६ ४०।
४ नैणसी की अधीनता मे की गयी इस चढाई का विशेष विवरण जोधपुर राज्य की ख्यातों मे नहीं मिलता है। पुन इस चढ़ाई मे नैणसी के चातुर्य और युद्ध-कौशल का पूरा पता लगता है। अत इस चढ़ाई का सविस्तार वर्णन दिया जा रहा है।
५ विगत०, १, पृ० १३८, वही०, पृ० ४०।

होने के लिए सभी परगनों को सन्देश भेजे गये कि आवश्यक सैनिक भेजें। समुचित व्यवस्था करने के बाद शनिवार, अप्रैल ९, १६५६ ई० को प्रात काल ही जोधपुर से रवाना होकर नैणसी ने चैनपुर डेरा किया।[1] यहाँ पर राठोड बिहारीदास ४० सवारों के साथ आकर सम्मिलित हो गया। आगे देवीभर और बालहरवा डेरा किया। यहाँ पर भारी वर्षा हुई लेकिन इस कारण नैणसी इस अभियान मे जरा भी ढील देना नही चाहता था, क्योंकि निरन्तर समाचार प्राप्त हो रहे थे कि भाटियो ने पोहकरण को घेर रखा है और फलोधी मे भी लूटमार करने वाले हैं। अत नैणसी निरन्तर ससैन्य आगे बढ़ता ही रहा। बुधवार, अप्रैल १३, १६५६ ई० को चेराई मे डेरा किया। यहाँ पर परगना जैतारण से भाटी आसकरण के नेतृत्व मे १०० सवार और ३०० पैदल सैनिक आकर सम्मिलित हुए। चेराई से शुक्रवार, अप्रैल १५, १६५६ ई० को कूच किया। और इसी दिन सांवडाऊ डेरा किया। यही पर फोढाणा से उहड जगन्नाथ कुछ सैनिकों के साथ आकर सम्मिलित हुआ। अप्रैल १६, १६५६ ई० को नैणसी वहाँ से रवाना हुआ और इसी दिन लाखन कोहर डेरा किया। यहाँ पर सीवाणा के ८०० सैनिक साथ लेकर भाटी लालचन्द आ मिला। वहाँ से रवाना होकर सम्पूर्ण सेना ने फलोधी के गाँव जालीवाडा और वहाँ के तालाब पर डेरा किया। यहाँ पर फलोधी के ४०० सैनिकों को लेकर सो० जैतमल और सा० जगन्नाथ उपस्थित हुए। सोमवार, अप्रैल १८, १६५६ ई० को यहाँ से कूच कर पोहकरण के गाँव ढेढ की तलाई पर डेरा किया। यही राठोड जगमाल के व्यक्तियो ने आकर सूचना दी कि भाटियों ने पोहकरण को खाली कर दिया है। नैणसी अप्रैल १९, १६५६ ई० को वहाँ से कूच कर पोहकरण पहुँचा।[2] तब भाटियों का पता लगाने के लिए दो ऊँट-सवारों को भेजा। साथ ही दूसरे दिन अप्रैल २०, १६५६ ई० पोहकरण पर पुन आधिपत्य की सूचना देने के लिए कासीद भेजे। यहीं पर सोजत के हाकिम मुहणोत आसकरण के द्वारा सा० जगमाल चोवेडिया के साथ भेजे गये १२४ सवार और १०० पैदल सैनिक आ मिले। अप्रैल २३, १६५६ ई० तक पोहकरण ही मुकाम रहा। यही पर महवा के रावल महेशदास और रावल भारमल भी सहायतार्थ उपस्थित हो गये। नैणसी ने यही पर सम्पूर्ण सेना की गिनती करवायी। इस समय उसके पास कुल चार हजार सैनिक थे। लडाई से सम्बन्धित सेना के सारे सामान की व्यवस्था की। तब शनिवार, अप्रैल २३, १६५६ ई० को सम्पूर्ण सेना ने कूच किया। गोली-बारूद सना मे बाँट दिया गया और सेना को आवश्यक निर्देश दे दिये।[3]

१ विगत०, १, पृ० १३८ वही०, पृ० ४१ ४२।
२ विगत० १, पृ० १३८ ३९, वही० पृ० ४१ ४२।
३ विगत०, १, पृ० १३९ वही०, पृ० ४२-४३।

पोहकरण से मारवाड की सेना भाटियो का पीछा करती हुई रविवार, अप्रैल २४, १६५६ ई० को रूपा की तलाई पहुँची। इसी समय चौधरी रतनसी और कछवाहा फतेहसिह इनसे मिले। ये जयसिह का पत्र लेकर जैसलमेर गये थे। नैणसी ने इनसे भाटियो की सेना के बारे मे जानकारी चाही। तब उनसे पता चला कि यहाँ से ६ कोस पर बचीहाय पर उनका डेरा है। नैणसी ने भाटी भीम, राठोड किसना, भाटी किशनचन्द और भाटी जोगीदास को भाटियो को सतर्क करने भेजा कि 'राजा की सेना आ रही है सो सतर्क रहना।' तब कुँवर अमरसिह और अन्य कई भाटियो ने तो वहाँ से कूच कर दिया, परन्तु स्वाभिमानी भाटी रामसिह ने वही डटे रहकर मारवाड की सेना का सामना करने की चुनौती दी।[1] नैणसी ने सेना को कूच का आदेश दिया। तब सेना ने अप्रैल २६, १६५६ ई० को जैसलमेर की सीमा मे प्रवेश कर कोभा की तलाई डेरा किया। नैणसी ने सेना को लूटमार का आदेश दे दिया। अत सेना ने डेलासर, घायसर, जीवन्द, और कोभव का गाँव जेसुरणा आदि गाँवो मे लूटमार की।[2]

जसवन्तसिह की सेना ने अप्रैल २७, १६५६ ई० को वहीं डेरा किया। दूसरे दिन अप्रैल २८ को कूच कर चाघण डेरा किया। तीन दिन तक यहाँ ही सेना का मुकाम रहा। नैणसी के आदेश से सेना ने पाँच सात कोस के क्षेत्र मे पडने वाले गाँवो मे भारी लूटमार की। सोमवार, मई २, १६५६ ई० को चाघण से कूच कर बामणपी डेरा किया। यहाँ पर बासणपी, लोहर का गाँव, धनवा, मॅसडेच का गाँव आदि गाँवो मे लूटमार कर आग लगा दी। मगलवार, मई ३, १६५६ ई० को अहप डेरा किया और आसपास के गाँवो को लूटा। मई ४, १६५६ ई० को आसणीकोट डेरा किया और आसणीकोट, देवडा का छोडा, धोला, नाथ का वास, सगवणी, नेडाणा, और कोटडी आदि गाँवों मे लूटमार की। गुरुवार, मई ५, १६५६ ई० को देग डेरा किया। यहाँ पर कणद पढीयो का वास, रायसल का वास, अचला जसहड का वास, वीरदास जसहड का वास, केराडा, सावत का वास और मुलडा गाँव लूटे।[3] पुन मई ११, १६५६ ई० को यहाँ से पोहकरण को लौट गय।[4]

नैणसी तीन दिन तक पोहकरण रहा। वहाँ शान्ति और सुरक्षा की सुव्यवस्था की। तब शनिवार, मई १४, १६५६ ई० को पोहकरण से जोधपुर के लिए रवाना हुआ। लोहवा गाँव मे उसने कुछ समय के लिये विश्राम किया और सिवाणा, फलोधी और महवा के जो सैनिक दल चढाई मे नैणसी की सहायतार्थ आये थे,

---

१ विगत०, १, पृ० १३६, बही०, पृ० ४३ ४४।
२ विगत०, १, पृ० १३६ ४०, बही० पृ० ४४।
३ विगत०, १, पृ० १४०, १४१, बही०, पृ० ४५ ४७।
४ विगत०, १, पृ० १४१, बही०, पृ० ४७ ४८।

उन्हे विदाई दी। तब उसी दिन वहाँ से रवाना होकर लोलटा, जेलू के तालाव, वाल्हरवा होता हुआ मगलवार, मई १७, १६५६ ई० को वह जोधपुर पहुँचा।[1]

नैणसी को जोधपुर पहुँचे अभी पूरे १० दिन भी नहीं हुए थे कि गुरुवार, मई २६, १६५६ ई० को पोहकरण से और, मई २७, १६५६ ई० को फलोधी से सन्देश आया कि भाटियो ने पुन पोहकरण और फलोधी में लूटमार मचा दी है।[2] अत नैणसी के लिए आवश्यक हो गया कि भाटियो के दमनार्थ पुन कूच कर, परन्तु बिना पूर्ण सैनिक साज-बाज के एकाएक कूच करना कठिन था, अत सभी परगनो से सहायता प्राप्त करने के लिए आदमी भेजे। तब शनिवार, जून ४, १६५६ ई० को जोधपुर से रवाना होकर चेनपुरा, देवीभर, वाल्हरवा, बिराई, भलेलाई, जालीवाडा होता हुआ शुक्रवार, जून १०, १६५६ ई० को फलोधी पहुँचा। नैणसी स्वय ने जैसलमेर कूच करना उचित नही समझा। वह स्वय फलोधी ही रहा और सैनिको को जैसलमेर मे लूट-खसोट करने की खुली छूट दे दी। दोनो ओर आक्रमण प्रत्याक्रमण होते रहते थे।[3]

इसी समय बीकानेर का राजा करण विवाह के लिए जैसलमेर जा रहा था। उसने इस भगडे को समाप्त करने के लिए मध्यस्थ बनना चाहा। अत. मार्ग मे जाते हुए सेवासर मे उसने नैणसी को अपने पास बुलाया। जुलाई ११, १६५६ ई० को नैणसी उससे मिला। बातचीत और विचार-विमर्श करके पुन लौट आया।[4] नैणसी भी शान्ति का इच्छुक था, परन्तु भाटी इस हेतु उत्सुक नही थे। भाटी पोहकरण के एक या दो गाँव लूटते तो नैणसी जैसलमेर क दस गाँव लूटता। राजा करण के जैसलमेर से पुन लौटने तक यही चलता रहा।[5] अत जैसलमेर मे राजा करण ने रावल सबलसिह को समझाया और शान्ति स्थापित करने के लिए उसे सहमत कर वह रावल सबलसिह के प्रतिनिधि भाटी रामसिह और रघुनाथ को अपने साथ लेता आया। इधर नैणसी को भी रामदेहरा पर आमन्त्रित किया गया। नैणसी कई राजपूत सरदारो को भी अपने साथ लेता आया। राजा करण ने दोनों पक्षो मे विचार विमर्श कर लिखित आपसी समझौता करवा दिया। यो जुलाई ३१, १६५६ ई० को समझौता होने पर अगस्त १, १६५६ ई० को भाटी राजपूत जैसलमेर के लिए रवाना हो गये और अगस्त २, १६५६ ई० को नैणसी और उसके साथ के सरदारो और सेना ने भी फलोधी से कूच किया और अगस्त ४, १६५६ ई० को वह जोधपुर पहुँच गया।[6]

---

१ विगत०, १, पृ० १४१ १४२, वही०, पृ० ४७ ४६।
२ विगत०, १, पृ० १४२, १४३ वही० पृ० ४६।
३ विगत०, १ पृ० १४३, वही०, पृ० ४६ ५०।
४ विगत० १ पृ० १४३ ४४, वही०, पृ० ५० ५३।
५ विगत०, १ पृ० १४४, वही०, पृ० ५३ ५५।
६ विगत०, १, पृ० १४४, वही०, पृ० ५३।

५ मारवाड राज्य के शासकीय अधिकारी के रूप मे मुहणोत नैणसी

मुहणोत नैणसी की प्रशासकीय योग्यता उसकी अपनी वश-परम्परागत थी। जसवन्तसिह की सैनिक सेवा मे रहकर उसने अपने सामरिक कौशल का भी पूरा परिचय जसवन्तसिह को दिया था। अत जसवन्तसिह ने उसे परगना हाकिम बना दिया था। सर्वप्रथम नैणसी को परगना फलोधी का हाकिम बनाया गया। अक्तूबर, १६३७ ई० मे उसने फलोधी के हाकिम-पद का कार्यभार संभाल लिया, और जनवरी, १६३६ ई० तक वह इस परगने मे कार्यरत था ही।[1] परन्तु सम्भव है पोहकरण का हाकिम नियुक्त होने के पूर्व तक नैणसी फलोधी का ही हाकिम बना रहा हो, क्योकि मई, १६४२ ई० और १६४५-४६ ई० मे सोजत क्षेत्र के मेरो के विरुद्ध आक्रमण के अतिरिक्त १६३६ ई० से अक्तूबर, १६५० ई० के पूर्व उसके कार्यों का विवरण उपलब्ध नही है।

मुहणोत नैणसी को शनिवार, अक्तूबर १६, १६५० ई० म पोहकरण का हाकिम बनाकर जोधपुर से पोहकरण रवाना किया। वह तब गुरुवार, अक्तूबर ३१, १६५० ई० को पोहकरण पहुँचा और लगभग ४० दिन तक वहाँ का हाकिम रहा था।[2] इसके बाद आगरा सूबा मे हिंडोन सरकार के अन्तर्गत उदेही पचवार परगना का वह हाकिम बना और सम्भवत दिसम्बर, १६५० ई० से अगस्त, १६५२ ई० तक नैणसी इसी परगने का हाकिम रहा।[3]

मुहणोत नैणसी अगस्त, १६५२ ई० से जून, १६५६ ई० तक परगना मलारणा[4] का हाकिम रहा।[5] १६५६ ई० से १६५८ ई० मे देश दीवान बनने के पूर्व तक नैणसी सम्भवत परगना बदनोर का हाकिम रहा होगा, क्योकि मई, १६५८ ई० म वही से लौटकर नैणसी जसवन्तसिह की सेवा मे पहुँचा था।[6]

इस प्रकार मुहणोत नैणसी लगभग २० वर्ष तक विभिन्न परगनो का हाकिम रहा था। अपने आधीन परगनो मे उसने शान्ति और सुव्यवस्था बनाये रखी थी। राजा जसवन्तसिह उसके कार्यों से बहुत प्रभावित हुआ था। १६५८ ई० म उसे

---

१ विगत०, २ पृ० ८।

२ विगत०, २, पृ० १०५६, ३२३।

३ विगत०, १ पृ० १२६-२७, माईन०, २ पृ० १६१। परगना उदेही सितम्बर, १६४८ ई० से सितम्बर, १६५७ ई० तक जसवन्तसिह के अधिकार में रहा था।

४ मलारणा—परगना मलारणा तब सूबा अजमेर के अन्तर्गत सरकार रणथम्भोर में था। विगत०, १ पृ० १२७ माईन०, २, पृ० २८०।

५ विगत०, १, पृ० १२७। जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २२४ के अनुसार वह १६५८ ई० तक मलारणा का ही हाकिम रहा था। जो ठीक नहीं है, क्योंकि १६५६ ई० में मलारणा परगना खालसा हो गया था। विगत०, १, पृ० १२७, १२६।

६ वही०, पृ० २३।

एक ऐसे योग्य व्यक्ति की आवश्यकता हुई, जो राज्य-शासन में सैनिक और कूट-नीति का भी सहारा ले सके। पिछले लगभग २० वर्षों के निरन्तर अनुभव पर गहराई से विचार करने के बाद वह इसी निर्णय पर पहुँचा कि ऐसा व्यक्ति नैणसी ही था। अतः मई १८, १६५८ ई० के दिन महाराजा जसवन्तसिंह ने नैणसी को जोधपुर राज्य के देश-दीवान के पद पर नियुक्त किया।[1]

मुहणोत नैणसी से पूर्व जोधपुर राज्य का देश-दीवान मियाँ फरासत था, जिसे बुधवार, जून २५, १६४५ ई० को आगरा में पहिली बार देश-दीवान के पद पर नियुक्त कर जोधपुर भेजा था। तीन वर्ष तक फरासत जोधपुर का देश-दीवान रहा, तदनन्तर जुलाई १२, १६४८ ई० को राजा जसवन्तसिंह ने फरासत को अपने पास वापस बुला लिया। भाटी सुरताण मानावत को देश-दीवान का कार्य सौंपा, परन्तु वह विशेष सफल नहीं हो पाया। अतः बुधवार, जनवरी १६, १६५० ई० को फरासत को देश-दीवान बनाकर पुनः जोधपुर भेज दिया। तब मई १८, १६५८ ई० तक वह इस पद पर कार्य करता रहा।[2] तदनन्तर उसे परगना जालोर का हाकिम बना दिया गया।[3]

धरमाट के युद्ध से लौटकर जब गुरुवार, अप्रैल २९, १६५८ ई० को जसवन्तसिंह जोधपुर पहुँचा,[4] उस समय मुहणोत नैणसी बदनोर था, सो वापस बुलाये जाने पर वह रविवार, मई ९, १६५८ ई० को जोधपुर पहुँचा।[5] राजा जसवन्तसिंह ने मियाँ फरासत को देश दीवान के पद से अलग कर मंगलवार, मई १८, १६५८ ई० को मेड़ता में मुहणोत नैणसी को देश-दीवान पद का महत्त्वपूर्ण कार्यभार सौंपा।[6] इस पद के वेतन के रूप में नैणसी को रु० ६,००० वार्षिक तथा इसके अतिरिक्त जागीर का पट्टा[7] अलग से दिया। इस पद पर नैणसी दिसम्बर, १६६६

---

१ विगत०, १, पृ० १३२, बही० पृ० २७, पोथी० (ग्रन्थ सं० १११) प० ४१२ ख।
२. जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २२५।
३. बही०, पृ० २७, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५५।
४. विगत०, १, पृ० १३२, बही०, पृ० २६।
५ बही०, पृ० २७।
६ बही०, पृ० २७, विगत०, १, पृ० १३२, २, पृ० ६२। जोधपुर ख्यात० (१, पृ० २२८) के अनुसार महाराजा जसवन्तसिंह जब जन, १६५८ ई० में अजमेर आया था, तब वहीं पर मियाँ फरासत को देश दीवान पद से हटाया और वहीं नैणसी को यह पद प्रदान किया। परन्तु ख्यात० का यह कथन मान्य नहीं किया जा सकता। बही० और विगत० जैसे दोनों समकालीन प्रामाणिक ग्रन्थों में मेड़ता में ही उसे यह पद प्रदान करने के उल्लेख हैं।
७. बही० की मूल हस्तलिखित प्रति (प० ३७ ब) में रु० ६,००० ही है, परन्तु छापे की भूल से बही०, पृ० २७ पर रु० ८००० छप गया है। नैणसी को कहाँ का और कितनी आय का पट्टा दिया, इस सम्बन्ध में कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

ई० तक कार्य करता रहा।

अपनी देश-दीवानी के कार्य-काल मे नैणसी ने अनेक प्रशासनिक सुधार किये। देश-दीवान बनने के तुरन्त बाद उसने मेडता की ओर ध्यान दिया था। बुधवार, मई २६, १६५८ ई० तक जसवन्तसिह मेडता मे ही रहा। मई २६ को वहाँ से रवाना होकर उसने रविवार, मई ३०, १६५८ ई० को थाँवला मे डेरा किया। तब नैणसी भी महाराजा के साथ था। दूसरे दिन मई ३१, १६५८ ई० को मुहणोत नैणसी को एक ईराकी घोडा प्रदान कर मेडता लौटने के लिए विदाई दी।[1] देश-दीवान के पद पर रहते हुए भी तब मेडता का प्रशासन भी वही स्वय देखता था। मेडता पहुँचकर उसने वहाँ के करो आदि की जाँच-पडताल की और यह अनुभव किया कि कुछ कर वास्तव मे प्रजा पर भार हैं। कुछ समय मेडता रहने के बाद जब वह जसवन्तसिह की सेवा मे पहुँचा, तब वहाँ उसने महाराजा से निवेदन कर बल कर मे, जो प्रति बडे गाँव २० रु० अथवा २५ रु० लिया जाता था, और उसके साथ ही अन्य कर भी खर्च भोग के रूप मे वसूल होते थे, उनम भी कमी करायी। जून, १६५८ ई० मे यह राशि घटाकर बडे गाँव पर १० रु० और छोटे गाँव पर ५ रु० मात्र कर दी गयी।[2]

जोधपुर से लौटकर नैणसी (माह सुदि ४, १७१५ वि०) रविवार, जनवरी १६, १६५९ ई० को मेडता पहुँचा ही था कि उसे जसवन्तसिह ने बुला लिया, जो तब खजवा के युद्ध-क्षेत्र से वापस जोधपुर लौट रहा था। अत दो दिन मेडना ठहरकर नैणसी लपोलाई मे जसवन्तसिह के पास पहुँचा। यही पर आवश्यक विचार-विमर्श करन के बाद नैणसी को मेडता रवाना किया और जसवन्तसिह जोधपुर के लिए रवाना हुआ।[3] फरवरी, १६५९ ई० मे जब मुहणोत नैणसी मेडता मे ही था, तब गुजरात मे होकर अजमेर की ओर बढते हुए दाराशिकोह ने अपने पुत्र सिपरशिकोह को जसवन्तसिह के पास जोधपुर भेजा, और वह स्वयं ससैन्य गुरुवार, फरवरी १८, १६५९ ई० को मेडता पहुँचा। तब अन्य राजपूत सरदारो को साथ लेकर मुहणोत नैणसी उससे मिला। फूल महल के पास मालकोट के डेरे पर तीन दिन ठहरकर दाराशिकोह अजमेर की ओर बढा। परन्तु जसवन्तसिह टाल-मटोल करता रहा और दारा के पक्ष मे लडने नही गया। सिपरशिकोह अकेला ही वापस लौटकर दाराशिकोह से जा मिला।[4]

मार्च के प्रथम सप्ताह मे जसवन्तसिह का डेरा राबडियावास मे था।

---

१ वही०, पृ० २७।

२ वही०, पृ० ३३, विगत०, २, पृ० ८९, ९०, ९१ भंडारियों री पोथी (ग्रन्थ स० ७८), प० ३८ ख ३९ क।

३ वही०, पृ० ३३-३५।

४ वही०, पृ० ३७, विगत०, १, पृ० १३६।

मुहणोत नैणसी भी मेडता से रवाना होकर सोमवार, मार्च ७, १६५६ ई० को राबडियावास पहुँचा, जो अजमेर से ३५ मील पश्चिम में है, वहाँ जसवन्तसिंह को मिर्जा राजा जयसिंह के द्वारा औरंगजेब का तसल्ली देने वाला फरमान मिला। अतः जयसिंह के लिखे अनुसार राबडियावास से ही जसवन्तसिंह बुधवार, मार्च ९, १६५६ ई० को वापस जोधपुर की ओर लौट गया। तब देश-दीवान मुहणोत नैणसी भी जसवन्तसिंह के साथ बना रहा। बालसमन्द के डेरे पर मार्च १७, १६५६ ई० को जसवन्तसिंह को गुजरात की सूबेदारी का शाही फरमान मिला एवं वह तत्काल ही जोधपुर की राह गुजरात के लिए चल पड़ा। सोमवार, मार्च २१, १६५६ ई० को जसवन्तसिंह सायलाणा था। तब समाचार आये कि दोराई के युद्ध में पराजित और गुजरात की ओर भागे दाराशिकोह का पीछा करते हुए राजा जयसिंह और बहादुर खाँ शीघ्र ही उधर आ रहे हैं। अत: सायलाणा से कूच कर वह स्वयं तो भीनमाल चला गया और राठोड़ महेशदास और देश-दीवान नैणसी मिर्जा राजा जयसिंह (आम्बेर) की पेशवाई के लिये भेजे। बुधवार, मार्च २३, १६५६ को पाल्हावासणी में राजा जयसिंह कछवाहा और बहादुर खाँ से वे मिले और अपनी सेना सहित उनके साथ हो गये।[1] मार्च ३०, १६५६ ई० को जालोर के सेणे गाँव में जसवन्तसिंह भी शाही सेना के साथ आ मिला। मार्च ३१, १६५६ ई० को सिरोही परगना के गाँव ऊड में डेरा हुआ। यहीं पर जसवन्तसिंह को भाटियों द्वारा पोहकरण पर आक्रमण के समाचार मिले, जिस पर उसने नैणसी को भाटियों के विरुद्ध भेजा।[2]

१६६१ ई० में परगना मेडता का हाकिम बनाकर भाटी राजसी सूजावत को भेजा गया। प्रजा उससे असन्तुष्ट हो गयी, और दिसम्बर, १६६१ ई० में जब शिकायत के लिए जाटों का एक शिष्ट मण्डल बादशाह औरंगजेब के पास जाने लगा तब नैणसी ने उन लोगों को समझाने का प्रयत्न किया, साथ ही कुछ करों में और कमी कर दी जिसके सम्बन्ध में उपयुक्त आदेश नैणसी ने बाद में शनिवार, जनवरी २५, १६६२ ई० को जारी किया था। इस पर भी जब जाट वे दिसम्बर, १६६२ ई० में बादशाह के पास पहुँचे तब राजा जसवन्तसिंह और नैणसी ने सयत्न मुगल साम्राज्य के दीवान राजा रघनाथ के द्वारा औरंगजेब को अवगत कराया कि राजा जसवन्तसिंह के समय में करों में कोई वृद्धि नहीं की गयी है। औरंगजेब ने आदेश दिया कि राजा गजसिंह के समय जो कर लिये जाते थे वे ही लिये जाते रहे। अत सन् १६६१ ई० में नैणसी द्वारा दी गयी छूट भी निरस्त हो गयी और उनके ही कर्मों से किसानों पर कर-भार पुन. बढ़ गया।[3]

१ वही०, पृ० ३७-३८, विगत०, १, पृ० १३६-३७।
२ वही०, पृ० ३६ ५३। इस चढ़ाई का विस्तृत विवरण पहले दिया जा चुका है।
३ विगत०, २, पृ० ६३-६६।

देश-दीवान के रूप में नैणसी के कर्तव्य और कार्य—देश दीवान की नियुक्ति राजा स्वय करता था। ईमानदार, प्रशासनिक कार्य मे अनुभवी, सैनिक योग्यता वाले व्यक्ति को ही इस पद पर नियुक्त किया जाता था। देश-दीवान राज्य का मुख्य प्रशासनिक अधिकारी और राजस्व का प्रधान कार्याध्यक्ष होता था। राज्य का प्रत्येक परगना कुल कितने तफो मे विभाजित था, इसकी उसे जानकारी होती थी, और प्रशासनिक दृष्टि मे आवश्यकतानुसार उन तफो की सख्या कम या ज्यादा कर सकता था।[1] देश दीवान के कार्यालय मे सभी परगनो, तफो व गाँवो का सारा आवश्यक विवरण रहता था। जब कभी मुगल बादशाह से राजा को कोई नया परगना मिलता तो राज्य का वकील मुगल दरबार से उसका विवरण प्राप्त कर उसे अपने राज्य के देश दीवान के पास भेज देता था।

साधारणतया किसी भी व्यक्ति को पट्टा देने का अधिकार केवल शासक को ही था, परन्तु विशेष परिस्थितियो मे राज्य-हित मे उपयोगी व्यक्ति को देश-दीवान भी पट्टा दे देता था। उसी की सिफारिश पर शासक पट्टादार (जागीर) का पट्टा खालसा भी कर लेता था।[2] साधारणतया राजा के आदेश पर जब देश-दीवान किन्ही व्यक्तियों को पट्टा देता था, तब देश-दीवान पहिले पट्टा-जागीर का अध्ययन करता था, और तब ही उस पर ली जाने वाली पेशकश निश्चित करता था।[3] किसी भी पट्टादार का पट्टा खालसे करने का अधिकार देश-दीवान को भी था। परन्तु तदनन्तर यथासम्भव शीघ्र ही इसकी सूचना अनिवार्य रूपेण उसे राजा को देनी पडती थी।[4] कौन पट्टादार कब मरा या किसी ने कोई पट्टा छोडा आदि का पूरा ब्योरा भी देश-दीवान के कार्यालय मे रखा जाता था और उसकी सूचना तुरन्त महाराजा को भेजी जाती थी।[5] जब कभी देश-दीवान किसी सेवक पर नाराज हो जाता था तो वे आपस मे लड मरें इस उद्देश्य से एक ही क्षेत्र का

---

१ विगत०, १, पृ० १६४ ६५। मुगल कार्यालय के कागज पत्रो में जोधपुर परगना मुगल आधिपत्यकाल में निर्धारित १४ तफों में विभाजित था। जोधपुर परगने की तफा हवेली के गाँवों की सख्या ५०५ थी। अतएव मुहणोत नैणसी ने प्रशासनिक सुविधा के लिए तफा हवेली को हवेली के अतिरिक्त पाँच और तफो में विभक्त कर दिया था, जिससे ही विगत०, १, म जोधपुर परगना के विवरण में कुल बीस तफों का अलग अलग विवरण दिया गया है।

२ वही०, पृ० १३०, १३१ ३२, १३४, १४५।

३ वही०, पृ० १५२ ५४।

४ वही०, पृ० १५१ १७८। मियाँ फरासत ने रविवार, जून १७, १६६६ ई० को राठोड़ सुन्दरदास के ३५०० रु० के आसोर के पाँच गाँव खालसे करके तत्सम्बन्धी सूचना महाराजा को भेज दी थी। तब फरासत देश दीवान नहीं था। इस वर्णन से स्पष्ट है कि परगना-हाकिम होने पर भी वह देश-दीवान के अधिकारों का उपयोग करता था।

५ वही०, पृ० १८३।

दो व्यक्तियो को पट्टा देता था।[1] यदि कोई पट्टादार अपने वर्तमान पट्टे से सन्तुष्ट नही होता तो वह अपना पट्टा बदलने के लिए महाराजा से निवेदन करता था। उचित समझने पर उस पट्टे के बदले मे नया पट्टा देने के लिए शासक अपने देश-दीवान को आदेश देता था। उस आदेशानुसार देश दीवान पट्टादार को नया पट्टा प्रदान करता था और उसका पिछला पट्टा खालसे कर लिया जाता था।[2] देश-दीवान की सिफारिश पर भी पट्टा दिया जाता था।[3] कभी-कभी देश दीवान अपने शासक की पूर्व स्वीकृति के बिना भी पट्टा दे दिया करता था।[4] देश-दीवान को थानेदार नियुक्त करने का भी अधिकार था।[5]

मुहणोत नैणसी महाराजा जसवन्तसिह के समय फलोधी, पोहकरण, मलारणा, बदनोर आदि विभिन्न परगनो का हाकिम रहा था, उसने परगनों के प्रशासन मे और भू-राजस्व मे सुधार किया था और अपनी योग्यता से देश-दीवान के पद पर पहुँच गया था। वहाँ तब महाराजा जसवन्तसिह का अति विश्वसनीय अधिकारी था। परन्तु विधि की विडम्बना है कि ऐसे सुयोग्य और महत्त्वपूर्ण व्यक्ति को, जिसकी स्वय जसवन्तसिह को ही नही, तत्कालीन समाज और देश को भी आवश्यकता थी, जसवन्तसिह का कोपभाजन बनकर आत्महत्या करनी पडी।

६ उसके जीवन का दु खान्त वन्दी-गृह मे उसका आत्मघात

महाराजा जसवन्तसिह गुरुवार, नवम्बर १, १६६६ ई० मे लाहोर पहुँचा था।[1] यही पर उसने जोधपुर राज्य के केन्द्रीय प्रशासन मे एकाएक फेरबदल किये। सर्वप्रथम उसने रविवार, दिसम्बर ६, १६६६ ई० (पौष बदि ८, १७२३ वि०) को प्रधान के पद पर राठोड आसकरण की नियुक्ति की[7] और उसे तत्काल जोधपुर जाने का आदेश दिया। वह जनवरी, १६६७ ई० मे जोधपुर पहुँचा था।[8] इसी बीच सोमवार, दिसम्बर २४, १६६६ ई० को देश-दीवान मुहणोत

१ वही०, पृ० १४७। मियाँ फरासत ने शनिवार, नवम्बर २२ १६५१ ई० को फलोधी मे राठोड केशरीसिह से ऊँट पेशकशा का कर ४०० रु० म तफा मोइसाँ का जतमी पाना को दे दिया जबकि जान बूझकर उसने रा० आसकरण का इसका पट्टा भी बहाल रखा।
२ वही०, पृ० १८५।
३ वही०, पृ० १६२।
४ वही०, पृ० २०७। रविवार, मई २२, १६५६ ई० को जब नैणसी पोहकरण मे था, तब वहाँ नैणसी ने राठोड रघुनाथ को ४,००० रु० का पट्टा दिया था और तदर्थ जसवन्तसिह की पूर्व स्वीकृति नही ली थी।
५ वही०, पृ० १६६।
६ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २३६।
७ बाँकी०, बात स० ३३६, पृ० ३२, दुर्गादास०, पृ० ३१।
८ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ३२४।

नैणसी और तन-दीवान मुहणोत सुन्दरसी को पदच्युत कर दिया गया।[१] मुहणोत नैणसी तब जोधपुर था एव उसके सम्बन्ध मे आदेश जोधपुर भेजे गये और उसके स्थान पर वही लाहोर मे पचोली केशरीसिंह रामचन्दौत को नैणसी के स्थान पर देश-दीवान नियुक्त कर[२] जोधपुर भेजा, जो उससे पहले बख्शी के पद पर कार्य कर रहा था।[३] तलाशी लेने पर मुहणोत सुन्दरदास का धन राठोड श्यामसिंह गोविन्ददासोत के पास निकला था अत श्यामसिंह का पट्टा जब्त कर उसे सेवा-मुक्त कर दिया गया।[४]

अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि मुहणोत नैणसी जैसे विश्वस्त उच्च पदाधिकारी को महाराजा जसवन्तसिंह ने यो एकाएक क्यो पदच्युत किया और बाद म क्यो बन्दी बनाया ? सुनिश्चित् कारण का तो अब तक कही कोई प्रामाणिक उल्लेख नही मिलता है। अत उसके सम्भावित कारण स्वरूप जो कुछ बातें हो सकती थी, उन्हीं का उल्लेख किया जा रहा है।

परगना मेडता के राजस्व के आंकडे देखने से पता चलता है कि परगना मेडता मे १६६१ ई० (सम्वत् १७१८ वि०) मे नैणसी ने राजस्व की वसूली मे सख्ती बरती थी।[५] अत वहाँ के पाँच दस गाँवो के जाटो का एक शिष्ट-मडल बादशाह के पास फरियाद लेकर पहुँचा। उस समय वकील मनोहरदास ने करो मे कुछ कमी करवा दी।[६] १६६२ ई० (सम्वत् १७१६ वि०) मे परगना मेडता के आकेली, बावलले, चादारण और लवेरा के जाट पुन बादशाह के पास फरियाद लेकर पहुँच गये थ।[७] उस समय महाराजा जसवन्तसिंह ने शाही दीवान राजा रघुनाथ को लिखा कि करो मे कोई वृद्धि नहीं की गयी है। पूर्व के अनुसार ही लिया जा रहा है। जाट तो उच्छृखलतावश फरियाद लेकर आ रहे हैं।[८]

गुजरात सूबा तागोर (जब्त) कर दक्षिण जाने का औरगजेब का आदेश जसवन्तसिंह को नवम्बर ४, १६६१ ई० मे प्राप्त हुआ था और शाही मनसब मे गुजरात के परगना के स्थान पर हाँसी हिसार के परगने प्रदान कर दिये थे।[९] तब

---

१ जोधपुर ख्यात०, १, प० २५४, २५५, राठोडां री ख्यात (ग्रन्थ स० ७२), प० ८६ ख।

२ पचोली केशरीसिंह को लाहोर मे पोष बदि ८, १७२३ वि० (दिसम्बर ६, १६६६ ई०) को देश-दीवान बनाकर जोधपुर भेजा। राठोडां री ख्यात (ग्रन्थ स० ७२), प० ५६ क।

३. जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ३२८।

४ वही०, पृ० १६१।

५ विगत०, २, पृ० ७८ ८०, ११३-२१३।

६ विगत०, २, पृ० १३, १४।

७ विगत०, २, पृ० १४, महाराजां री पोथी (ग्रन्थ स० ७८), प० ३८ ख।

८ विगत०, २, पृ० ६४ ६५।

९ विगत०, १, पृ० १४६-५२, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २३१। दक्षिण जाने का आदेश

उन परगनो का परगना-हाकिम बनाकर नैणसी के पुत्र मुहणोत कर्मसी और पंचोली बछराज को वहाँ भेजा गया था।[1] परन्तु वहाँ के उनके अत्यल्प समय के प्रशासन मे ही हाँसी-हिसार की प्रजा नैणसी से नाराज हो गयी।[2] अत १६६६ ई० (१७२३ वि०) को वहाँ की प्रजा के कुछ प्रमुख व्यक्ति बादशाह औरंगजेब के पास फरियाद (शिकायत) लेकर पहुँचे, तब औरंगजेब ने एक लाख की राशि छुड़वायी थी[3] तो जसवन्तसिह ने इस पर अविलम्ब कार्यवाही करना आवश्यक समझा। सर्वप्रथम उसने हाँसी-हिसार पर व्यास पद्मनाभ[4] को हाकिम बनाकर भेजा। बाद मे इसी वर्ष दिसम्बर २४, १६६६ ई० को मुहणोत नैणसी को पद-च्युत कर बाद मे कैद किया गया था।

मुहणोत नैणसी को पदच्युत कर बन्दी बनाये जाने के बाद मुहणोत नैणसी के सेवको की तलाशी ली गयी, और जिन सेवको ने डर के कारण अपना सामान अन्य व्यक्तियो के पास रख दिया था, जसवन्तसिह को पता चलने पर उन लोगो के पट्टे भी जसवन्तसिह ने खालसे कर लिये।[5] इससे यह बात तो स्पष्ट लगती है कि नैणसी पर मुख्यतया कडाई कर पैसे वसूल करने और प्रजा पर अत्याचार करने का ही दोषारोपण था। 'मारवाड परगना री विगत' मे स० १७१५ से १७१९ वि० तक परगनो व गाँवो की आय के वास्तविक आँकडे दिये गय हैं। उनको देखने मे ज्ञात होता है कि नैणसी के पूर्व प्रत्येक परगना या गाँवो से जो राजस्व वसूल होता था, उससे कहीं अधिक बल्कि कही-कही तो दुगुना राजस्व वसूल किया गया था।[6] अतः देश-दीवान मुहणोत नैणसी ने अपने स्वामी राजा जसवन्तसिह की आय मे वृद्धि करना चाहा और इस दृष्टि से उसने राजस्व वसूली में सख्ती बरती। इसी सख्ती के कारण ही मेडता के जाट और बाद मे हाँसी-हिसार के प्रमुख व्यक्तियो ने नैणसी की शिकायत तब मुगल बादशाह से की। सम्भव है इस स्थिति का लाभ उठाकर मुहणोत नैणसी के विरोधियो ने महाराजा के मन मे नैणसी के प्रति शका उत्पन्न कर दी। महाराजा जसवन्तसिह को यह शका हो गयी थी कि

जसवन्तसिह को मा० ना० (पृ० ६४७) के अनुसार दिसम्वर २८, १६६० ई० मे और मीरात० (अ० अ० पृ० २२४-२५) के अनुसार अगस्त, १६६१ ई० में दिया गया था। किन्तु जून १५, १६६१ ई० तक तो जसवन्तसिह निश्चित ही अहमदाबाद मे था (वही०, पृ० १६३)।

१ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २३१, पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४१४ क।
२ पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४१४ ख ४१५ क।
३ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५५, पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४१४ ख-४१५ क।
४ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५५, पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४१४ ख-४१५ क।
५ वही०, पृ० १६१, १६६।
६ विगत०, २, पृ० ७८-८०।

नैणसी ने प्रजा पर अत्याचार किये हैं और अनैतिक रूप से धन एकत्रित कर लिया है। अत: नैणसी को बन्दी बना लिया गया और उस पर एक लाख रुपये कबूलात के देने का दबाव डाला गया था। ओझा०[1] और हजारीमल बाँठिया[2] के अनुसार श्रुति से यह पाया जाता है कि नैणसी ने अपने रिश्तेदारों को बड़े-बड़े पदों पर नियत कर दिया था और वे लोग अपने स्वार्थ के लिए प्रजा पर अत्याचार किया करते थे। इसी बात को जानने पर महाराजा उससे अप्रसन्न हो गये थे, परन्तु यह आरोप सही नहीं है। 'जोधपुर हुकूमत री बही' में सं० १७१४ से १७२६ वि० तक दिये गये सारे पट्टों की सूचियाँ और कार्य-विवरण हैं। उसमें स्पष्ट पता चलता है कि नैणसी ने अपने किसी भी रिश्तेदार को कोई पट्टा नहीं दिया।[3] साथ ही नैणसी ने अपने किसी रिश्तेदार को किसी बड़े पद पर नियुक्त किया हो, उसका भी किसी समकालीन या बाद के प्रामाणिक आधार-ग्रन्थ[4] में उल्लेख तो क्या सकेत भी नहीं है। मुहणोत नैणसी के भाई सुन्दरदास और आसकरण नैणसी के देश दीवान बनने के पूर्व ही परगना-हाकिम थे, और बाद में नैणसी का पुत्र कर्मसी भी हाकिम बना। परन्तु परगना-हाकिम की नियुक्ति राजा स्वय करता था।

अगरचन्द नाहटा के लेख 'अपूर्व स्वामी-भक्त राजसिंह खीवावत की बात' में 'अथ राजसिंघ खीवावत आसोप रे धणी री बात' के अनुसार मुहणोत नैणसी ने मेड़ता में भूमि-कर में वृद्धि कर दी, जिससे वहाँ की प्रजा गाँव छोड़कर जाने लग गयी और गाँव सूने होने लग गये और जिसके कारण सात वर्षों में राज्य को अठारह लाख की हानि हो गयी। राजा जसवन्तसिंह को पता चलने के बाद उसने नैणसी पर क्षति पूर्ति का दबाव डाला। बाद में प्रधान राजसिंह के आग्रह पर जसवन्तसिंह ने नैणसी को क्षमा कर दिया, परन्तु साथ ही पदच्युत कर दिया, और आगे कभी मुहणोत वंश के लोगों को राजकीय सेवा में न रखने की शपथ ली।[5] उक्त बात अस्पष्टत प्रचलित प्रवादों के आधार पर सम्भवत १६वीं शताब्दी के लगभग ही लिखी होगी, क्योंकि इसमें कालक्रमानुसार सही घटना-क्रम का अभाव है और अनैतिहासिकता का पूर्ण बाहुल्य भी है। प्रथम तो यह वृत्तान्त नैणसी के देश-दीवान पद पर नियुक्त होने के बाद का, अर्थात् १६५८ ई०

---

१. दूगड़०, १ वंश-परिचय, पृ० ३४।
२ हिंदुस्तानी०, पृ० २७५।
३ बही०, पृ० २११-१२ (मुहतां रा पट्टा)।
४ विगत०, (विगत० में प्रमपथक अनेक पदाधिकारियों के नाम आते हैं, परन्तु नैणसी के किसी रिश्तेदार का नाम उनमें नहीं मिलता है।), जोधपुर ख्यात०, १, बातें, और बही०।
५. वरदा०, वर्ष ३, अंक १, पृ० ३२-३३, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ४, पृ० २८-२९।

के बाद का था और प्रधान राजसिंह की मृत्यु इसके १८ वर्ष पूर्व १६४० ई०[1] में हो गयी थी। अतः नैणसी को प्रधान राजसिंह के समकालीन बताना किस प्रकार मान्य हो सकता है ? इसी बात में यह भी लिखा है कि नैणसी को पदच्युत करने के बाद भंडारी मन्ना को देश-दीवान बनाया, किन्तु भंडारी मन्ना तो नैणसी के बाल्यकाल में ही प्रधान के पद पर था।[2] दूसरे, नैणसी ने मेड़ता में कोई भूमि-कर में वृद्धि नहीं की थी और नैणसी के देश दीवानी के काल में मेड़ता के कुल राजस्व में वृद्धि ही हुई है, न कि किसी प्रकार की कोई हानि।[3]

रामनारायण मुहणोत[4] ने दो घटनाओं का उल्लेख किया है—

१ महाराजा जसवन्तसिंह का उत्तराधिकारी पुत्र पृथ्वीसिंह वीरता के लिए प्रसिद्ध था। बादशाह औरंगजेब के समक्ष पृथ्वीसिंह ने जंगली सिंह से लड़ाई कर निःशस्त्र होते हुए भी उस सिंह को चीर डाला था। इससे औरंगजेब को पृथ्वीसिंह से ईर्ष्या हो गयी और उसके साथ ही उसके गुरु नैणसी से भी। अतः औरंगजेब ने दोनों के विरुद्ध जाल बिछाना प्रारम्भ कर दिया।

२ एक बार नैणसी ने अपने स्वामी जसवन्तसिंह को दावत दी। दावत की तैयारी और अद्भुतता देखकर जसवन्तसिंह और औरंगजेब के दरबारी दंग रह गये। औरंगजेब के दरबारियों ने यह उपयुक्त अवसर पाकर महाराजा जसवन्तसिंह के कान भरे। तब जसवन्तसिंह ने नैणसी से कबूलात के रूप में एक लाख रुपये की माँग की। नैणसी ने उक्त राशि देना अपनी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझा। लेखक ने आगे लिखा है कि इससे नैणसी ने जोधपुर में रहना उचित नहीं समझा और गुजरात की ओर चला गया तथा मार्ग में ही उसकी मृत्यु हो गयी। उसी समय औरंगजेब ने महाराजा को सूबेदार नियुक्त करके काबुल भेज दिया और पृथ्वीसिंह को युवराज बना दिया। युवराज के पद के उत्सव के समय औरंगजेब ने पृथ्वीसिंह को विशेष प्रकार की ऐसी पोशाकें पहनायीं जिनके पहिनते ही पृथ्वीसिंह का काम तमाम हो गया। पृथ्वीसिंह की मृत्यु के समाचार से दुःखी होने के कारण जसवन्तसिंह की भी काबुल में मृत्यु हो गयी।[5] लेखक के उपर्युक्त कथनों में सर्वत्र अनैतिहासिकता ही है। नैणसी को औरंगाबाद में ही बन्दी बनाया था और औरंगाबाद से जोधपुर की ओर अग्रसर होते समय रास्ते में नैणसी और

---

१ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २४३, कूंपावत०, पृ० २२४।
२ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १४४।
३ विगत०, २, पृ० ७८-७६, ८८-८६।
४ विश्वमित्र' दीपावली विशेषांक, १६६३ ई० ख्यात० (प्रतिष्ठान), ४, पृ० २६-३० से उद्धृत।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ४, पृ० २६-३०।

सुन्दरदास ने आत्मघात किया था, न कि जोधपुर से गुजरात जाते समय।[1] साथ ही पृथ्वीसिंह की मृत्यु चेचक की बीमारी के कारण बुधवार, मई ८, १६६७ ई० को हुई थी।[2] राजा जसवन्तसिंह इसके लगभग ११ वर्ष बाद तक जीवित रहा था। अतः रामनारायण मुहणोत द्वारा लिखित सब ही कथन सर्वथा असगत, अप्रामाणिक और अविश्वसनीय हैं।

यों उपर्युक्त कारणवश ही महाराजा जसवन्तसिंह ने सोमवार, दिसम्बर २४, १६६६ ई० को[3] मुहणोत नैणसी और सुन्दरदास को लाहोर के मुकाम पर पदच्युत किया। इस समय तत-दीवान मुहणोत सुन्दरदास महाराजा जसवन्तसिंह के साथ लाहौर मे ही था।[4] मार्च १०, १६६७ ई० को जसवन्तसिंह वापस दिल्ली लौट आया था और मार्च ११, १६६७ ई० को उसने बादशाह औरगजेब से भेंट की।[5] इसी समय महाराजा जसवन्तसिंह को दक्षिण जाने का आदेश हुआ था। इसी समय जसवन्तसिंह ने पदच्युत देश दीवान नैणसी को भी अपने पास बुला लिया था। तब दक्षिण जाते समय मुहणोत नैणसी और सुन्दरदास भी जसवन्तसिंह के साथ ही थे। ५७-वर्षीय पदच्युत देश-दीवान मुहणोत नैणसी और उसके भाई मुहणोत सुन्दरदास को औरगाबाद के मुकाम पर शुक्रवार, नवम्बर २९, १६६७ ई० (पौष बदि ६, १७२४ वि०) को बन्दी बना लिया गया।[6] एक वर्ष तक बन्दी रखाकर महाराजा जसवन्तसिंह ने उससे एक लाख रुपये की माँग की तथा यह आदेश देकर कि उक्त राशि कबूलात के रूप मे राजकीय खजाने मे जमा करा दे, १६६८ ई० (१७२५ वि०) मे उसको छोड दिया गया।[7] परन्तु नैणसी जैसा

---

१ देखिये पृ० ४१-४२।

२ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २४०, मुदियाड०, पृ० १५७, वही०, पृ० १५४।

३ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २३८ ३९, २५४ ५५, वही० पृ० १६१।

४ वही०, पृ० १६१।

५ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २३६।

६ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५१, ख्यात० (वणसूर), प० ६६ क। परन्तु जोधपुर ख्यात० और ख्यात० (वणसूर) मे सम्वत् १७२३ वि० (१६६६ ई०) दिया है, जो सही नहीं है एव मान्य नहीं किया जा सकता, क्योंकि महाराजा जसवन्तसिंह आषाढ़ बदि १३, १७२३ वि० (रविवार, जून ९, १६६७ ई०) को ही औरगाबाद पहुँचा था (जय० प्रश्न० जुनूमी मन् १०, खं० १, पृ० ३०७, ३१३)। अत उसे ठीक कर सम्वत् १७२४ कर दिया है। मुदियाड० (पृ० १७०) और बात० ख्यात (१, पृ० ५०) में भी सम्वत् १७२४ ही दिया है। ओझा० जोधपुर०, (१, पृ० ४६२) ने माघ बदि ६, १७२४ वि० (रविवार, दिसम्बर २६, १६६७ ई०) लिखा है जिसका आधार भी जोधपुर राज्य की ख्यात दिया है जिसमें 'पोष' माह दिया है। स्पष्टतया भ्रान्तिवश ही ओझा० में माह 'पोष' के स्थान पर 'माघ' दे दिया जान पड़ता है।

७ जोधपुर ख्यात०, १ पृ० २५१, पोथी० (ग्रन्थ स० १११), प० ४१५ क।

स्वामी-भक्त, ईमानदार और स्वाभिमानी व्यक्ति लाख रुपये तो क्या एक पैसा भी देने को तैयार नहीं था।[1] अतः मंगलवार, दिसम्बर २८, १६६६ ई० (माह वदि १, १७२६ वि०) को जसवन्तसिंह ने मुहणोत नैणसी को पुनः बन्दी बना लिया। तब नैणसी को अनेक प्रकार की यातनायें दी जाने लगीं, जिससे नैणसी को बहुत आत्मग्लानि हुई। जो लोग उसके आधीन थे, अब वे ही उस पर अत्याचार कर रहे थे। अतः ऐसे जीवन से तो मर जाना ही उसने अच्छा समझा। यही सोचकर फूलमरी गाँव[2] में (भाद्रपद वदि १३, १७२७ वि०) बुधवार, अगस्त ३, १६७० ई० को[3] नैणसी और उसके भाई सुन्दरदास दोनों ने आत्महत्या कर ली।[4]

---

१ बाकी० (क्र० सं० २१०६, पृ० १७४) के अनुसार नागोर निवासी सहदेव मुहकमणोत सुराणा ने स्वयं एक लाख रुपये राज्य में जमा करवा कर मुहणोत नैणसी और सुन्दरदास के परिवार को कैद से मुक्त करवाया था।

२ फूलमरी—(२० ५° उ०, ७५ २५° पू०) फोरताबाद से १४ मील उ० पू० उ० में स्थित।

३ पोथी० (ग्रन्थ सं० १११), प० ४१२ क, ख्यात० (बणसूर), प० ६६ ख, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५१; मुदियाड़०, पृ० १७१, दूगड़, २, वंश-परिचय, पृ० ३।

४. ख्यात० (१, प० सं० ६३) के अनुसार मुहणोत नैणसी ने मरने के पूर्व कबूलात के कागज पर निम्न दोहे लिखे थे—

१ राजा मांगे लाख, (सो) लाख सवारा लाभसी।
ताम्बो देण तलाक, नटियो सुदर नैणसी ॥ एक ॥

२. लाख लखारा नीपजे, (के) वड पीपड़ री साख।
नटियों सुदर नैणसी, ताम्बो देण तलाक ॥ दो ॥

जोधपुर ख्यात० (१, पृ० २५१) के अनुसार—

लेसो पीपल लाख लाख लखारां लावसी।
ताम्बो देण तलाक नटिया सुदर नैणसी ॥ एक ॥

अध्याय : ३

नैणसी का इतिहासलेखन और तदर्थ उसके आयोजन

१. नैणसी की बौद्धिक क्षमता, शैक्षणिक प्रशिक्षण और इतिहास विषयक विद्वता

पूर्व मे ही यह लिखा जा चुका है कि मुहणोत नैणसी की प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा के बारे मे कोई प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नही है। परन्तु युवावस्था मे ही नैणसी की नियुक्ति सेनानायक और परगना प्रशासनिक जैसे उत्तरदायित्व-पूर्ण पदो पर हुई थी तथा उनमे सफलता प्राप्त करते रहने पर ही अन्त मे मारवाड राज्य की प्रशासन व्यवस्था मे सर्वोच्च पद, देश-दीवान, तक पहुँच गया था। अत यह सब इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि ऐसी सब ही सेवाओ के लिए अत्यावश्यक तब दी जाने वाली सारी शिक्षा-दीक्षा अवश्य ही उसे दी गयी होगी।

यह तो स्पष्ट ही है कि मारवाड मे जन्मा और वही पाला-पोसा गया तथा प्रशिक्षित हुआ नैणसी राजस्थानी-हिन्दी के साथ ही डिंगल भाषा मे पूरी तरह से पारगत था। नैणसी के जीवनकाल मे मारवाड के राजदरबार मे कवियो का विशेष समादर होता रहता था। अनेक चारणो को लाख-पसाव दिये गये थे। महाराजा जसवन्तसिंह स्वय भी सुकवि तथा साहित्यशास्त्र का पूर्ण विद्वान था। नैणसी ने अपनी ख्यात० मे यत्र-तत्र सन्दर्भों के उपयुक्त छन्द उद्धृत किये हैं। उसके स्वरचित कुछ दोहे तो आज भी सुज्ञात हैं।[1] उसकी काव्य-रचना पर्याप्त सख्या में सुलभ नहीं होने के कारण यदि तत्काल कवियो मे उसकी गणना नही भी की जावे, परन्तु यह नही कहा जा सकता है कि वह राजस्थानी या ब्रजसाहित्य

---

१. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ४, पृ० ३१। "जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम के दीवान प्रसिद्ध ख्यात-लेखक—मुहता नैणसी।"

राज्यों अथवा राजवंशों के इतिहास से सम्बन्धित सामग्री संकलन की योजना बनायी और यह निश्चय किया कि सामग्री संग्रह के बाद ही उन सभी राज्यों अथवा राजघरानों का व्यवस्थित और क्रमबद्ध इतिहास लिखा जावे। अतः उसने लगभग १६४३ ई० से ही सामग्री संकलन कार्य प्रारम्भ किया। जिन जिन स्थानों पर भी वह गया, वहाँ की जानकारी प्राप्त करने के लिए उसने सारे सम्भावित सूत्रों की टोह लेकर उनसे सम्पर्क साधा और अपेक्षित सारी ऐतिहासिक बातें लेखबद्ध कीं। उसका भाई नरसिंहदास जब कभी किसी अन्य राज्य में गया, तब उस राज्य की जानकारी उसने वहाँ से प्राप्त की। चारण और भाटों से भी जानकारी प्राप्त कर एकत्रित की जाती रही। प्राचीन ग्रन्थों का अध्ययन कर उपयोगी सामग्री को संकलित किया। प्रचलित प्रवादों और पद्यों का भी संकलन किया गया। हर सम्भव प्रयत्न कर यों राजवंशों के इतिहास विषयक सारी प्राप्य आधार-सामग्री और उपयोगी जानकारी संगृहीत की गयी।

नैणसी का दूसरा ऐतिहासिक ग्रन्थ 'मारवाड रा परगनां री विगत' है। सभी राजपूत राजवंशों का इतिहास लिखने के अपने आयोजन के अन्तर्गत मारवाड राज्य के राठोड राजघराने का इतिहास भी नैणसी लिखने वाला था, परन्तु इसी समयान्तर में १६५८ ई० में वह मारवाड राज्य का दस दीवान बना दिया गया। अतः उसने सर्वप्रथम अपने वतन क्षेत्र मारवाड राज्य के इतिहास की ओर विशेष ध्यान दिया। ख्यात० के हेतु मारवाड के राजघराने विषयक पूर्वकालिक विभिन्न वार्ताओं आदि का संकलन तो करवाया ही था। परन्तु मारवाड राज्य का ब्योरेवार प्रामाणिक इतिहास और उसके आधीन सब परगनों का भी सूत्रबद्ध ऐतिहासिक इतिवृत्त प्रस्तुत कर विभिन्न विषयक उनकी जानकारी सुलभ कर सकने के हेतु एक सर्वथा विभिन्न ग्रन्थ तैयार करवाने की उसने ऐसी योजना बनायी, जिसके द्वारा जनसाधारण के समक्ष मारवाड की सर्व विषयक विस्तृत और निष्पक्षीय जानकारी प्रस्तुत की जा सके।

मुहणोत नैणसी जसवन्तसिंह कालीन मारवाड के सभी परगनों का ऐसा क्रमबद्ध विस्तृत ब्यौरा लिखना चाहता था। अतः १६६२ ई० (१७१६ वि०) में उसने सभी परगना-हाकिम अथवा कानूनगो को निर्देश दिए कि वे अपने-अपने परगने का पंचवर्षीय (१६५८-१६६२ ई०) सर्वेक्षण तैयार करवाकर उसके पास भेजें। यों कुछ ही समय में सात परगनों का विवरण तो उसको प्राप्त हो गया। जिनका वह अपनी उक्त विगत० में उपयोग कर सका। जोधपुर परगने के ऐसे इतिवृत्त में उसने परगने के साथ ही मारवाड राज्य और वहाँ के शासक राठोड घराने का इतिहास तैयार करवाया। इस ऐतिहासिक विवरण को लिखने के लिए अपनी ख्यात० के हेतु संकलित मारवाड के प्रारम्भिक शासकों सम्बन्धी अधिकांश बातों का भी उसने समुचित उपयोग किया है। इसके अतिरिक्त नैणसी ने प्राचीन

स्तम्भ लेख, देवली लेख, पुरानी वंशावलियो, प्राचीन पुराणादि ग्रन्थ, राज्य के कारोबार सम्बन्धी विभिन्न बहियो और राज्य ज्योतिषी घराने द्वारा तैयार किये गये पचागो अथवा तिथि-वार महत्त्वपूर्ण घटनाओ के ब्यौरो आदि का भरपूर उपयोग किया। ब्राह्मणो, चारणो आदि को दी गयी सासण भूमि का विवरण लिखने के लिए उसने उनको दिये गये ताम्रपत्रो और पट्टो का भी उपयोग किया।

इस प्रकार अपने इन दोनो ग्रन्थो को तैयार करने के लिये नैणसी ने विभिन्न प्रकार की यथासाध्य सारी प्रामाणिक आधार-सामग्री तथा अन्य विश्वसनीय सूत्रों से जानकारी प्राप्त की। उनमे सुलभ विवरण की सत्यता या प्रामाणिकता आदि की जाँच के लिए उसने अलग-अलग सूत्रो द्वारा प्राप्त प्रमाणो का समुचित उपयोग किया था" सारी छान-बीन के बाद जब उसे यह विश्वास हो गया कि कोई बात सही है, तब ही उसने उसे मान्य किया है।

३. नैणसी का इतिहास-दर्शन और इतिहास विषयक उसकी अवधारणा

मुहणोत नैणसी एक सुविज्ञ चिन्तनशील इतिहासकार था। इतिहास को उसने अत्यावश्यक वैज्ञानिक दृष्टि से देखा-भाला और परखा था। जहाँ तक सम्भव हो सका सही प्रामाणिक विवरण ही प्रस्तुत करना, उसका एकमात्र इतिहास-दर्शन था। मानवीय जीवन के घटना-क्रम या राष्ट्रीय अथवा राजकीय विकास व ह्रास के कारणो या राजघरानो के उद्गम और उत्थान आदि विषयक किन्ही विशेष सिद्धान्तो की स्थापना तथा प्रतिपादन करने मे उसे कोई भी रुचि नही थी। ऐतिहासिक घटना क्रम सम्बन्धी बारम्बार उठने वाले क्यो और कैसे विषयक प्रश्नों की ओर भी नैणसी ने अपने इन इतिहास-ग्रन्थो मे कोई विशेष ध्यान नही दिया। उस प्रकार के विवेचन के लिए अत्यावश्यक पृष्ठभूमि की सही जानकारी अथवा अधिक व्यापक क्षेत्र के लिए समुचित अध्ययन आदि का तब अभाव ही था। पुन तब तक विगत क्षेत्रीय इतिहासो की राजनैतिक रूपरेखा भी निश्चित नही हो पायी थी कि उसके आधार पर सम्बन्धित अध्ययन को व्यापक अथवा समीक्षात्मक बनाया जा सके।

ऐतिहासिक सत्य के सम्बन्ध मे उसका दृष्टिकोण स्पष्ट और बहुत ही सुलझा हुआ था। अत 'मारवाड रा परगना री विगत' की रचना मे उसने पूर्ण सत्यता का निर्वाह किया है। इसी कारण कही-कही पर किसी घटना या विवरण की आधार-सामग्री[1] का उल्लेख भी कर दिया है। उसने प्रत्येक घटना को तात्विक दृष्टि से देखा। इतिहासलेखन मे उसका दृष्टिकोण समीक्षात्मक ही था। प्रत्येक

---

1 विगत०, १ पृ० २ (नाहड़राव पड़िहार री पीढ़ीयां थांरे भाट लिखाई) १, ९८, १५३, १५७, ३६१, २, पृ० ४१, ६१।

घटना का विवरण लिखने से पूर्व उससे सम्बन्धित उपलब्ध सभी सामग्री का गहन अध्ययन कर लेता था और जहाँ प्राप्य विभिन्न विवरणों में अन्तर्विरोध पाता, या उसे किसी भी प्रकार की कोई शंका होती जिससे उस पर अपना निर्णय नहीं कर पाता था, तब वह वहाँ स्पष्ट उल्लेख कर देता है कि 'एक बात ऐसी सुनी है'[1], अथवा 'ऐसा कहते हैं'[2] (लोक मान्यता है), 'कोई कहता है'[3], 'सभी ऐसा कहते हैं'[4] आदि। इसी प्रकार कोई विवरण लिखते समय जब उसके बारे में प्रामाणिक जानकारी नहीं मिल पायी, तब वहाँ उसने स्पष्ट उल्लेख कर दिया है कि सत्यता का 'पता लगाना है।'[5] अथवा 'पता नहीं है।'[6] इसी प्रकार यदि नैणसी को किसी घटना के बारे में निश्चित प्रमाण नहीं मिला तो यदा कदा उसने निजी अनुमान के आधार पर ही उस ऐतिहासिक कड़ी को जोड़ने का भी प्रयास किया है।[7] अगर किसी गाँव आदि के प्रचलित नाम और दफ्तर के कागज-पत्रों के उल्लेखों में अन्तर पाया तो उस भी उसने स्पष्ट लिख दिया है।[8] यों उसने प्रत्येक गाँव के संगृहीत विवरण तक की प्रामाणिकता की जाँच कर, उस सम्बन्धी पूरी-पूरी जानकारी नैणसी ने अपनी विगत० में लिखी है।

४ उसकी मुख्य अभिरुचि

इतिहासलेखन में नैणसी की मुख्य अभिरुचि राजनैतिक इतिहास लिखने की ही रही है। इस राजनैतिक इतिहास को स्पष्ट करने तथा उसमें आये हुए इतिवृत्तों को खुलासा करने अथवा उन्हीं सन्दर्भों में प्रयुक्त भौगोलिक या अन्य नामों आदि की जानकारी देना आवश्यक प्रतीत हुआ, उन्हें भी उसमें यथास्थान जोड़कर राजनैतिक वृत्तान्तों को ही परिपूर्ण करने का उपयुक्त प्रयत्न नैणसी ने अवश्य ही यथास्थान किया है। उसके द्वारा रचित विगत० और ख्यात० के अध्ययन से उसकी यह अभिरुचि हो जाती है। विगत० में प्रत्येक परगने की अलग अलग विगत लिखते समय सर्वप्रथम उस परगने का पूर्वकाल से जसवन्तसिंह तक का ब्यौरेवार यथासाध्य प्रामाणिक इतिहास दिया गया है। ख्यात० का संकलन भी

---

१ विगत०, १, पृ० ३८, २ पृ० ६६।
२ विगत०, १ पृ० ५६, ४८४ (कहै छै राव मालदे रो दीयो छै), २, पृ० ५, ६८।
३ विगत०, १, पृ० ८३।
४ विगत०, २, पृ० ३७।
५ विगत० १, पृ० १८१।
६ विगत०, १ पृ० २६८, २८४, ३१८ ३२५ ४२०, ४७४ ५५४, २, पृ० २४।
७ विगत०, १, पृ० ३८३।
८ गाँव पालड़ी के बारे में लिखा है 'फरसता माहे गाँव पाडली मांडे छै, सु छै, विगत०, १, पृ० ४६८।

राजनैतिक इतिहास विषयक सारी सम्बन्धित जानकारी प्रस्तुत करने के उद्देश्य से ही किया गया है। इसीलिए उसने राजस्थान के राजघरानो, उनके पास-पडोस के सगे-सम्बन्धियो आदि सब ही प्रमुख राजपूत राजवशो विषयक सामग्री एकत्रित की थी। उसने सब ही महत्त्वपूर्ण सामरिक घटनाओ आदि का भी विस्तृत विवेचन किया है। इन युद्धो का विवरण लिखते हुए उनके कारणो तथा परिणामो की जानकारी देते हुए उन युद्धो की सही तिथि और प्रत्येक युद्ध मे मरने वाले विभिन्न वीरो की सूचियाँ भी दी गयी हैं।

नैणसी द्वारा लिखे गये इसी प्रकार के विवरणो मे कई अन्य बातो का अनायास ही समावेश हो गया है, जिनसे तत्कालीन प्रशासन और समाज की बहुत-कुछ जानकारी प्राप्त हो जाती है।[1] उसके राजनैतिक एव सामरिक विवरणो मे राजपूत विवाह और सती-प्रथा आदि के बारे मे प्रासगिक उल्लेख मिलते हैं, जिनसे तत्कालीन राजपूतों मे विवाह सम्बन्धी परम्पराओ और सती प्रथा पर प्रकाश पडता है। इसी प्रकार उत्तराधिकार सम्बन्धी राजपूत सहिता,[2] हिन्दुओ की धार्मिक मान्यताओ और हिन्दुओ के विभिन्न जातीय उत्सवो और आमोद प्रमोद के तत्कालीन साधनो आदि के कई प्रासगिक उल्लेख मिलते हैं।[3] नैणसी ने सब ही सम्बन्धित राज्यो की राजधानियो की भौगोलिक स्थिति स्पष्ट करने हेतु उन नगरो से अन्य प्रमुख नगरो की दूरी का भी यथास्थान उल्लेख कर दिया है जिससे नैणसी की ही नहीं तत्कालीन प्रबुद्ध शासक वर्ग मे सुलभ भौगोलिक जानकारी के स्पष्ट सकेत मिल जाते हैं।

५ मानव और उसकी समस्याओ आदि के प्रति नैणसी का दृष्टिकोण

प्रत्येक युग मे हरेक क्षेत्र और समाज के साथ उनके वर्गों आदि की अपनी-अपनी मानवीय समस्याएँ रही हैं, जिनका तत्कालीन राजनीति पर ही नही समाज तथा शासन पर सीधे या परोक्ष रूपेण पर्याप्त प्रभाव पडता रहा है, और जिनकी ओर सब ही प्रबुद्ध शासको तथा अधिकारियो का ध्यान जाता रहा है। नैणसी भी ऐसी मानव समस्याओ के प्रति बहुत ही सजग था।

सब ही कालो मे जनसाधारण की विशिष्ट समस्या मूलत आर्थिक ही रही है, क्योकि उसकी सारी गतिविधियो तथा जीवन-यापन पर भी उसका अनिवार्य प्रभाव पडता है। पुन व्यक्ति-विशेष, कुटुम्ब और वर्ग या क्षेत्रीय इकाई पर सीधे या परोक्ष रूपण लगन वाले शासकीय करो की समस्या सदैव शासितो के साथ ही

---

१ देखिये अध्याय १० और ११।
२ देखिये अध्याय ६।
३ देखिये अध्याय ११।

शासकों के सामने रही है। इन दोनो मे व्यवहारिक मध्यवर्ती उचित हल निकालना राज्य के उच्चाधिकारियों का कर्तव्य होता था, और उसमें ही उसकी मानवीयता तथा चतुराई स्पष्ट होती थी।

नैणसी ने अनेकों परगनो के हाकिम पद पर कार्य करते हुए मारवाड राज्य की आर्थिक व्यवस्था को अच्छी तरह जाना-बूझा था और उसने जनसाधारण पर लगने वाले करो के भार को कम करने के लिए कदम उठाये थे। जब वह देश-दीवान बना उस समय 'हुजदार री बल' के रूप मे प्रति बडे गाँव से रु० २० अथवा २५ लिए जाते थे। नैणसी ने उक्त राशि का सामान्य प्रजा पर अत्यधिक भार मानकर राजा जसवन्तसिंह से निवेदन कर उपर्युक्त कर मे कमी करवायी और तब उक्त राशि के स्थान पर प्रति बडे गाँव रु० १० और छोटे गाँव रु० ५ लिया जाने लगा।[1] इसी प्रकार नवम्बर दिसम्बर, १६६१ ई० म मेडता परगने मे शासकीय करो के भार को कम कर देने के लिए भी नैणसी ने पूरी पहल की थी, यद्यपि वहाँ के जाटो के हठ के कारण ही अन्तत वहाँ की प्रजा को इसका लाभ नही मिल पाया था।[2]

नैणसी ने अपने ग्रन्थो म प्रासगिक रूप म स्त्रियो की तत्कालीन दशा पर भी यत्र तत्र प्रकाश डाला है। मध्यकाल मे सामान्यत सब ही वर्गों की स्त्रियो की दशा अच्छी नही थी। उनको घर या समाज म कोई उपयुक्त सम्मान नही दिया जाता था। अपने पति की आज्ञाकारिणी होकर स्त्रियो को घर की दासी के रूप में रहना पडता था, अन्यथा पति द्वारा उसकी दुर्दशा की जाती थी।[3] पति द्वारा उसका बहुत अधिक अपमान और दुर्दशा किये जाने पर स्त्री अपने पति को छोड-कर चली जाती थी।[4] बहुविवाह प्रथा के कारण जब अपनी किसी पत्नी के प्रति विरोध बहुत उत्कट हो जाता था तब वह उस पत्नी को हर तरह से अपमानित और दु खी करने मे हद कर देता था, यहाँ तक कि उसके समक्ष ही उसकी सौत के साथ सहवास करता था। साधारणतया पत्नी अपने पति द्वारा हर यातना को सहने के लिए तैयार थी, परन्तु ऐसे दुर्व्यवहार वह कदापि सहन नही कर सकती थी।[5] पूर्व-मध्यकाल मे कई एक क्षत्रों म तब वहाँ प्रचलित परम्पराओ क अनुसार वहाँ के जागीरदार अपने आधीन प्रजा के स्त्री वर्ग स मनमानी करते थ। वहाँ की नवविवाहिता कन्याओ को विवाह के तत्काल बाद ही प्रथम तीन रातें वहाँ के ठाकुर के साथ बितानी पडती थी। अत ऐस क्षेत्रो म अनेक लोग अपनी कन्याओ

---

१ विगत०, २, पृ० ६२ ६३, ६७ ६८।
२ विगत०, २ पृ० ६४ ६५।
३ विगत०, २, पृ० ४६३ ६४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १४१ ४८, २८१।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १४८।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १४४।

का विवाह भी नही करते थे।[1] तब मदिरापान का सर्वत्र बहुतायत मे प्रचलन था। अतः अधिकतर व्यक्ति, विशेषतया जिन्हे सहज सुलभ हो जाता, शराब पीकर अपनी विवेक-बुद्धि खो बैठते थे और उसी नशे मे अपनी स्त्रियो से दुर्व्यवहार करते थे।[2] अपने जीवन के लिए परिस्थितिवश स्त्रियों को मजदूरी भी करनी पडती थी।[3]

६. उसका कालक्रम-विज्ञान : कालावधि तथा इतिहास के प्रति उसकी अभिव्यक्ति

विगत० के अध्ययन से हमे पता चलता है कि नैणसी ने इतिहासलेखन के सन्दर्भ मे कालक्रम-विज्ञान के महत्त्व को पूरी तरह से समझा ही नहीं था बल्कि पूरी तरह से उसकी विधि को अपनाया भी था। विगत० मे प्रत्येक परगने के विवरण को प्रस्तुत करने मे उसने उसमे वर्णित घटनाओ के सही कालक्रम का पूरा ध्यान रखा था। प्रत्येक शासक सम्बन्धी विवरण तथा तत्कालीन घटनाओ का तिथि-क्रमानुसार ही क्रमबद्ध विवरण लिखा है।[4] अपवाद स्वरूप कही-कही तिथि-क्रम का निर्वाह नही हो पाया है इसमे नैणसी का ही दोष था यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है, क्योंकि सम्भव है कि प्रतिलिपिकर्ताओ की असावधानी से ही ऐसा हुआ हो। जोधपुर परगने के इतिहास मे राव मालदेव का विवरण पूरी तरह व्यवस्थित नहीं है। उदाहरणार्थ—राव मालदेव की पुत्रियो का विवरण देने के बाद चारणो, राव की मृत्यु, मालदेव की फुटकर बातें और तदनन्तर मालदेव की रानियो का विवरण दिया है।[5] इसी प्रकार शेरशाह के साथ हुए मालदेव के युद्ध की कुछेक घटनाओ की पुनरावृत्ति है।[6]

विगत० मे गाँवो के विवरण प्रस्तुत करने मे भी नैणसी ने एक सुव्यवस्थित क्रमबद्ध पद्धति का अनुसरण किया है। सर्वप्रथम परगने के विभिन्न तफों और उनके गाँवो की सख्याएँ दी है। तदनन्तर आबाद बस्तियो तथा निर्जन गाँवो की सख्याएँ, उनमे विशेष रूपेण बसने वाली जातियो के आधार पर प्रत्येक जाति के गाँवो की अलग-अलग सूचियां दी हैं। गाँवो की ऐसी अनेक प्रकार की अलग-अलग सूचियाँ देने के बाद नैणसी ने परगने के प्रत्येक गाँव का अलग-अलग क्रमबद्ध विवरण लिखा है, जिसमे गाँव की रेख, गाँव की भौगोलिक स्थिति, गाँव मे बसने

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २७६-७७।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १३, १४।
३ विगत०, १, पृ० ४६४।
४ विगत०, १, पृ० १५०, १३०-८६, ३८३-६०, ४६३ ६६।
५ विगत०, १, पृ० ५२-५५।
६ विगत०, १, पृ० ५६, ६३, ६५।

वाली जातियो सम्बन्धी स्पष्ट जानकारी, उस गाँव मे सिंचाई अथवा पीने के पानी के साधनो आदि का विवरण दिया गया है। उस गाँव सम्बन्धी विशेष जानकारी तथा उसके बारे में कई ऐतिहासिक बातो को भी दे दिया गया है। अन्त मे उस गाँव की वार्षिक आय के स० १७१५ से १७१६ वि० तक के आँकडे दिये गये हैं।

नैणसी ने प्रत्येक परगने का इतिहास तो लिखा है, परन्तु विभिन्न गाँवो के जो विवरण दिये हैं, उनमे भी मारवाड के विगत इतिहास सम्बन्धी इतनी जानकारी खण्डश मिलती है कि उसको सकलित कर राठोड राजघराने, वहाँ के *शासको अथवा मारवाड क्षेत्र के इतिहास की अनेको लुप्त कडियाँ जोडी जा* सक्ती है तथा वहाँ के इतिहास के कुछ उपक्षित पहलुओ पर बहुत कुछ प्रकाश पड सकता है। जैसे परगना सिवाणा के गाँवो के विवरणो स सिवाणा और जालोर के शासको म हुए सीमा-क्षेत्र सम्बन्धी झगडो की जानकारी मिलती है।[1] सिवाणा से पहिले समदडी ही इस परगने का मुख्य केन्द्र था।[2] मुसलमान आक्रमणकारियो के साथ रावल माला के युद्ध तथा सकट के वर्षों मे राव मालदेव के आश्रय स्थान आदि के उल्लख हैं।[3] किसी गाँव म तब विद्यमान पुरातत्त्व का भी उल्लेख कर दिया गया है।[4] सिवाणा क्षेत्र मे अनेको गाँव ऐसे है जिनम उस क्षेत्र के मूल निवासी नही रहते हैं। बाद मे राजपूत अपनी बसी लेकर वहाँ जा पहुँचे और ये गाँव बसते गये।[5] पूर्वकाल म किस प्रकार राजपूत घरानो ने अपने कुटुम्बो और अपनी बसी के अन्य जातीय अनुचरों को साथ लाकर इन क्षेत्रो म गाँव बसाये थ इसकी कुछ झलक सिवाणा आदि परगनो के गाँवो मे इन विवरणो स मिलती है। कई एक गाँवो की बसाहट मे समय-समय पर हुए हरफेरो की भी जानकारी[6] यत्र-तत्र गाँवो सम्बन्धी इन विवरणो म मिलती है। किन्ही गाँवो सम्बन्धी पुराण-कालीन घटनाओ विषयक जो भी किंवदन्तियाँ तब वहाँ प्रचलित थीं उन्हे भी इन विवरणो मे सम्मिलित कर लिया गया था।[7] सासण म दिये गये कई विवरणो म उस क्षत्र के पुरातन इतिहास पर नया प्रकाश पडता है।[8] इस प्रकार नैणसी द्वारा सकलित और प्रस्तुत बहुविध एतिहासिक अथवा तदर्थ उपयोगी आधारी सामग्री से नैणसी के विस्तृत गहन इतिहास बोध की पूर्ण अभिव्यक्ति होती है।

---

१ विगत०, २, पृ० २४६, २५१ २६५।
२ विगत०, २ पृ० २३४।
३ विगत०, २, पृ० २५३, २५१ ५२, २५५।
४ विगत०, २, पृ० २४१।
५ विगत०, २, पृ० २४६, २५०, २५१ ५५।
६ विगत०, २, पृ० २५५।
७ विगत०, २, पृ० २५०।
८ विगत०, २, पृ० २६६ ६७, २६८।

७. भौगोलिक, स्थानीय और जातिवृत्त-सम्बन्धी विवेचन में उसकी विशेष सजगता

राजनैतिक इतिहास के साथ सदैव से तत्कालीन राजनैतिक भूगोल का सर्वथा अकाट्य सम्बन्ध रहा है। विभिन्न पडोसी राज्यो के बीच उनके बीच के सीमाङ्कन को लेकर चिरकाल से पारस्परिक विवाद, झगड़े और युद्ध होते रहे हैं एव यह अत्यावश्यक ही नहीं अनिवार्य भी होता है कि प्रत्येक राज्य की बाह्य सीमाओ का सही निर्धारण और स्पष्ट सीमाकन हो, एव नैणसी ने अपनी ख्यात० मे सतत प्रयत्न किया है कि विभिन्न राज्यो की राजनैतिक सीमाओ का सही भौगोलिक विवरण भी दे देवें। पुन: राज्य के निवासियों का चरित्र, जन-जीवन की गतिविधियो, कृषि और उद्योगों आदि पर उस क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों, आबोहवा, नदी-नालो और सिंचाई के साधन, आवागमन के मार्गों आदि का पूर्ण प्रभाव पडता है। अत: नैणसी ने तत्सम्बन्धी सारी जानकारी एकत्र कर उसे भी उस राज्य का विवरण लिखते समय यथास्थान लिख दिया है। स्पष्टतया नैणसी भौगोलिक विवेचन को आवश्यकता और उसके महत्त्व से पूर्णतया परिचित था, एव उसने इस ओर विशेष ध्यान दिया है, जिसकी सविस्तार चर्चा अन्यत्र की जावेगी।

पुन विभिन्न राज्यो के विस्तार के साथ शासको की पास-पडोस के क्षेत्रो के पूर्ववर्ती जमीदार आदि के साथ उन राज्यो के शासको की मुठभेड होना अवश्यंभावी थी। यही नही, एक बार उन्हे आधीन कर लेने के बाद उनका बारम्बार विद्रोह और तब उनसे सघर्ष होना उस काल मे कोई अनहोनी बातें नही थी। अत ऐसे स्थानीय क्षेत्रो की भी यत्र-तत्र पर्याप्त जानकारी देते हुए नैणसी ने वहाँ की समस्याओं को स्पष्ट किया है। मेवाड के पश्चिमी क्षेत्र के छप्पन क्षेत्र, मेरो के मेवल क्षेत्र, नाहेसर के भील, जालोर मे सैणा का इलाका आदि के सम्बन्ध मे भी नैणसी ने थोडा-बहुत लिख दिया है,[1] *क्योंकि वहाँ के निवासियो का भी क्षेत्रीय* इतिहास मे कुछ योगदान रहा है। इसी प्रकार विगत० मे भी विभिन्न गाँवो की जानकारी देते हुए जैतारण परगने म राज्य-शासन के सम्मुख तब भी विद्यमान मेरो की समस्या को स्पष्ट किया था कि जहाँ कई गाँवो के मुख्य निवासी मेर राज्याधिकार को मानते थे वहीं कोई ८ गाँव के मेर न तो राज्याधिकारी के आधिपत्य को स्वीकार करते थे और न कोई शासकीय राजस्व आदि कर चुकाते थे।[2] यो नैणसी ने इन गावो सम्बन्धी राजस्व के सन्दर्भ मे वस्तुस्थिति स्पष्ट की थी और साथ ही व्यवस्था सम्बन्धी शासकीय समस्या की ओर भावी शासकीय

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३६, ४५ ४६, २४५ ४६।
२ विगत०, १, पृ० ५०४ ५, ५०६, ५३२-३७, ५५२-५४।

अधिकारियो का ध्यान आकर्षित किया था।

किसी प्रदेश क्षत्र या नगर गाँव के सामाजिक, आर्थिक या सास्कृतिक इतिहास को कोई भी स्वरूप या दिशा देने म प्राकृतिक परिस्थितियो, राजनैतिक समस्याओ के साथ ही मानवीय जनसाधारण का बहुत बडा हाथ रहता है। अतएव मारवाड के विभिन्न नगरो, कसबो के साथ ही गावा म बसन वाला सब ही जातियो के महत्त्व को समझकर ही अपने इतिहासलेखन म मुहणोत नैणसी ने जातियो के उल्लेख की ओर विशेष ध्यान दिया है। विगत० म जोधपुर क अतिरिक्त अन्य परगना केन्द्र नगर म निवास करने वाली जातियो का विवरण दिया है। यह जानकारी यथासम्भव प्रामाणिक हो इस बात की ओर नैणसी का विशेष ध्यान था। अत सोजत मे निवास करने वाली विभिन्न जातियो की जानकारी उसन पचोली रामदास स मगवायी थी। जैतारण फलोधी मेडता सिवाणा और पोहकरण नगर की जनसख्या के बारे म स्वय ने लिखा है।[1] नैणसी ने विगत० मे प्रत्येक गाँव म निवास करने वाली प्रमुख जातियो का उल्लेख किया है। जिससे उस गाव के जनसाधारण के बारे म शासन को समुचित जानकारी सुलभ हो क्योकि बस्ती सम्बन्धी शासकीय अथवा आर्थिक या सामाजिक समस्याओ का स्वरूप मूलत वहा के निवासियो पर ही निर्भर रहता था। गावो म बसने वाली जातियो सम्बन्धी इन उल्लेखो से जहाँ परगनो के अनको पूववर्ती निर्जन क्षत्रो म तब समय समय पर हुए नय बसावो की जानकारी मिलती है वहाँ यह बात भी सामने आती है कि कई एक गाँव ऐस थ जहाँ नैणसी के शब्दो म देसी लोक कोई नही। बसी रा राजपूत बसै।[2] पुन यह भी बात स्पष्ट हो जाती है कि कई एक गाँव ऐस भी थ जिनकी पूरी की पूरी बस्ती समय समय पर बदल जाती थी क्योंकि नैणसी ने स्पष्ट लिख दिया है कि जिण नु पटे हुवै तिण री बसी रा रजपूत बाभण वसै।[3] तत्सम्बन्धी नैणसी क कथनो स यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि इस प्रकार की बस्ती म पट्टायतो के केवल सजातीय ही नही होते थ परन्तु बसी रा राजपूत जाट वाणीया कुभार रेबारी बसे।[4] एस कई एक उल्लखो स यह स्पष्ट हो जाता है कि उन जातियों म जब भी कोई राजपूत पट्टदार या उसी स्तर का प्रमुख सरदार परिस्थितिवश स्थानान्तरित होता था तब उसकी बसी म उस घरान सम्बन्धित और उसके आश्रित सब ही जातियो क घरान होत थ, उसी आश्रयदाता के घराने के साथ ही वे सब भी स्थानान्तरित होत थ।

---

१ विगत० १ पृ० ३६१ ४६६ ६७ २ प० ६ ८३ ८६ २०३ २४ ३१०।
२ विगत० २ प० २५५।
३ विगत० १ पृ० ५३०।
४ विगत० १ पृ० ५२८।

पुन मारवाड राज्य के विभिन्न परगनो मे निवास करने वाली अनेकानेक जातियो की जानकारी, तथा बडे नगरों या कसबो मे बसने वालो की अलग-अलग जातिगत व्यक्तियो या उनकी दुकानो की सख्याएँ आदि भी सगृहीत कर विगत० मे यथास्थान यत्र-तत्र दे दी है।[1]

अन्तत विभिन्न युद्धो मे काम आये हुओ की जो सूचियाँ नैणसी ने अपने ग्रन्थो मे दी हैं, उनमे राजपूत सरदारो अथवा राजपूत योद्धाओं के साथ ही कई एक अन्य जातियो के व्यक्तियो के नाम भी मिलते हैं, जैसे चारण,[2] ब्राह्मण-पुरोहित,[3] कायस्थ और ओसवाल जातीय अधिकारी,[4] गुजर धायभाई,[5] नाई, ढोली।[6] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इन युद्धो मे राजपूतो के साथ ही अन्य जातीय योद्धा भी भाग लेते थे और मारे जाते थे। राजपूत सरदारो और योद्धाओ की नामावली देते हुए उनकी खाँपो का भी अनिवार्य रूपेण उल्लेख कर दिया है। इस प्रकार नैणसी ने अपने इस जाति बोध की अभिव्यक्ति के द्वारा उस काल मे राजपूतो की अलग-अलग खाँपो या उपखाँपों और विभिन्न जातियो के साथ दामन के सम्बन्धो और उनके सहयोग आदि पर विशेष प्रकाश डाला है, और साथ ही तत्कालीन सामाजिक इतिहास सम्बन्धी जानकारी के कुछ सूत्र मिल जाते हैं।

८ इतिहासलेखन सम्बन्धी उसके उपक्रम का वस्तुस्वरूप और विविध आधार-स्रोत तथा उनके उपयोग की रीति

नैणसी ने अपने इतिहास-ग्रन्थो की रचना करने के लिए तदर्थ आवश्यक तर्क-सगत उपयुक्त उपक्रम का अपनाया। सर्वप्रथम उसने सम्बन्धित विषय की सभी प्रकार की विश्वसनीय या प्रामाणिक आधार-सामग्री का सकलन किया। तब उसकी पूरी जाँच पडताल करने के बाद समुचित रूपेण व्यौरेवार क्रमबद्ध किया। तदनन्तर ही उसके आधार पर उसने अपने ग्रन्थो को क्रमश लिखने का कार्य प्रारम्भ किया। ख्यात० और विगत० के लिए जिन विविध आधार स्रोतो का उपयोग किया उनका विवरण सम्बन्धित अध्याय मे पहिले द दिया गया है।

उन आधार स्रोतो का उपयोग करने मे उसने वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया। ख्यात० मे तो उसने अधिकाश आधार-स्रोतो का उल्लेख कर दिया जिससे उसके

१ विगत०, १, पृ० १८६ ८८, ४९६ ९७, २, पृ० ९, १०, २२३ २४।
२ विगत०, १, पृ० ९२ ९३, १०५, १८४।
३ विगत०, १, पृ० १८४।
४ विगत०, १ पृ० ७३, ८१, ९९, ११४, १८५।
५ विगत०, १ पृ० ७६, ८३, १४५।
६ विगत०, १, पृ० ७२, १८५।

द्वारा दिये गये विवरण की प्रामाणिकता के बारे मे बाद के सशोधकों को सन्देह नही रह, तथा यदि कोई चाहे तो उस जानकारी के आधार पर अपनी राय बना सके और अधिक खोज कर पाये। विगत० विशुद्ध रूप से एक ब्योरेवार घटनापूर्ण इतिहास-ग्रन्थ है। उसमें उसने जोधपुर परगने के विवरण मे राठोडों के प्रारम्भिक इतिहास मे ख्यात० में सगृहीत विभिन्न बातो का भी उपयोग किया। एक ही शासक के बारे मे जहाँ अनेक बातें ज्ञात हुई, वहाँ उसने उन सबका अध्ययन कर अपने निश्चय के अनुसार प्रामाणिक विवरण देने का प्रयत्न किया। ऐसा विवरण देते समय यदि किसी घटना सम्बन्धी विवरणो मे भिन्नताएँ होती थी और वह कोई निर्णय नही ले पाया, तब वहाँ उसने स्पष्ट रूप से लिख दिया कि ऐसी बात भी प्रचलित है अथवा ऐसा भी सुना जाता है। साथ ही जहाँ किसी के बारे मे उसे शका थी तो उसके लिए उसने लिख दिया कि तत्सम्बन्धी जाँच करनी है अथवा इसके बारे म कोई पता नही चलता है। इसके अतिरिक्त नैणसी ने अनेक शासकों सम्बन्धी प्रस्तुत इतिवृत्तो की प्रामाणिकता का समर्थन करने के लिए सर्व-साधारण मे प्रचलित तत्कालीन पद्यो को भी उद्धृत किया है। उदाहरणार्थ—

"सावत मडोवर भोगवीयो छै। तिण री साप रो कवत्त—

'मडोवर सावत हुवो, अजमेर सिध सु।
गढ पुगल गजमल हुवो, लद्रवै भाग भु॥
जोगराज घर धाट हुवो, हासु पारकर।
अल्ह पाल्ह अरबद, भोजराज जालाघर॥
नवकोटि किराडू सु जुगत, थिर पवाराहर थापिया।
घरणीवाराह घर भाईया, कोट वाट जु जु किया॥'[1]

अथवा रा पतो दुरजणसालोत चरडो अरडकमल चूडा रो साख—

'पातल लग पातसाह, बात हुई बढवा तणी।
गढ माडू गजगाह, रहियो दुरजणसाल रो॥'[2]

इसी प्रकार आगे एक स्थान पर लिखा है—

'राम जोरावर ठाकुर थो, जिण आपरै परधान जगहथ दीवावत विस दे मारीयो, तिण री साप रो दूहो—

जगहथ वानु नाल जु न, राव माल रै रतन।
दुनी राम मरता गई, रह गई भाग ठकुराई॥'[3]

इसी प्रकार ख्यात० मे भी यत्र-तत्र कई वीरो सम्बन्धी कई एक प्राचीन गीत,

---

१ विगत०, १, पृ० १।
२ विगत०, १, पृ० ५८।
३ विगत०, २, पृ० ३।

कवित्त आदि उद्‌धृत कर दिये हैं[1] और साथ ही उनके रचयिता के नामों को भी दे दिया है।[2] इस प्रकार तब प्रचलित पुरातन काव्य भी संगृहीत और सुरक्षित रह सका है।[3]

१. ख्यात० (प्रतिष्ठान), पृ० ४-५, १८-१६, २२६, २३१, २४४-४५, २५३, २६०-६१, ३५४, १८४ ६२, ५२-५४, ५८-५६, २२३।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५-६, १३०-७१, २७७-७८; २, पृ० १४-१५, ५६-५६, ६०, ६२-६५, ३२६, १०१-२, ८२-८३, ७४-७५, ४८-५०, ५१-५३, २०७-८, २४१-४३ २२४-२५, २१५-१६, २७४, २६७-६८।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४-५, १७०-७१।

अध्याय : ४

नैणसी कृत मारवाड़ रा परगनां री विगत

१. उसकी सामान्य परियोजना तथा उसका वास्तविक उद्देश्य

प्रमुख राजपूत राजघरानों की वंशावलियाँ और उनका क्रमबद्ध इतिहा लिखने की अपनी योजना में नैणसी ने सर्वप्रथम अपने वतन क्षेत्र मारवाड प लिखने का निश्चय किया। परन्तु मारवाड राज्य और वहाँ के राठोड राजघरा का इतिहास लिखने की सोचना उसे पर्याप्त और समीचीन नहीं ज्ञात हुआ, ए उसने मारवाड की राजधानी जोधपुर के अतिरिक्त जसवन्तसिंह कालीन मारवा के बाकी रहे अन्य छ ही परगनों का भी अलग-अलग क्रमबद्ध प्रामाणिक इतिहा लिखने की योजना बनायी। उसके अन्तर्गत जोधपुर समेत कुल छ परगनों क पूरा विवरण लगभग १६६४ ई० तक लिखा जा चुका था।[1] सातवें परगने पोहकरण, का विवरण तब भी बाकी रह गया था और सन १६६६ ई० में तैया करवाया जा रहा था। तब ही उसको एकाएक पदच्युत कर कैद किये जाने के कारण उसका विवरण अपूर्ण ही रह गया।[2] पोहकरण परगने के २५ गाँवों के विवरण तब तक लिखे नहीं गये थे, एवं सब ही ८६ गाँवों के विवरणों को तद नन्तर समुचित क्रम में व्यवस्थित करने का आवश्यक काम भी रह गया था। य इस सातवें परगने का विवरण पूरा नहीं किया जा सका।

जनसाधारण के समक्ष समूचे मारवाड के परगनों का ब्योरेवार पूरा-पूर विवरण और एक निष्पक्ष इतिहास प्रस्तुत करना ही नैणसी का प्रमुख उद्देश्य रह होगा। नैणसी स्वयं देश दीवान (प्रमुख प्रशासकीय) पद पर कार्यरत था। अत

---

१ विगत०, १, पृ० १८६, ४०२, ५००, २, पृ० १०, ८०, २२३। परन्तु जोधपुर परग का एतिहासिक विवरण उसके बाद भी अप्रैल १६, १६६६ ई० तक जोड़ा जाता रह था। विगत०, १, पृ० १५०।

२ विगत०, २, पृ० ३५५, ३५६।

उसकी यह इच्छा होनी स्वाभाविक ही थी कि सम्पूर्ण मारवाड की सारी उपयोगी प्रामाणिक जानकारी एकत्रित कर ली जावे जिससे उसे स्वय और आगे के प्रशासकों को वह एकत्र व्यवस्थित रूप मे उपलब्ध हो सकेगी। इसी कारण उसने गांवों का विवरण सविस्तार लिखा था। विगत० के उपलब्ध हो जाने पर सब ही गांवों की रेख के पुन निर्धारण मे शासकों को सुविधा हो सकेगी। गांवों के सीमा सम्बन्धी होने वाले झगडो मे भी यह ग्रन्थ निर्णायक भूमिका निभा सकेगा।

अबुल फ़ज़ल की भांति नैंणसी को उसके शासक ने इतिहास लिखने का कोई आदेश नही दिया था और न महाराजा जसवन्तसिंह की प्रेरणा से ही उसने अपना कोई भी ग्रन्थ लिखा था।[1] नैंणसी ने तो अपनी अन्त प्रेरणा से ही अपना यह ग्रन्थ लिखा था। हो सकता है विगत० को उसका वर्तमान प्राप्य स्वरूप देने मे उसे अबुल फजल कृत आईन-इ-अकबरी के द्वितीय भाग से प्रेरणा और निर्देशन मिले हों, क्योंकि दोनों के ग्रन्थो की योजनाओं के स्वरूप मे पर्याप्त समानता दीख पडती है। यद्यपि दोनों ग्रन्थो मे वर्ण्य और विवेच्य विषयो के विस्तार-क्षेत्र बहुत ही भिन्न थे, क्योंकि जहाँ आईन० मे निम्नतर स्तर पर परगनों और उच्चतम स्तर पर समूचे सूबे को लेकर सारी जानकारी प्रस्तुत की, वहाँ विगत० मे परगना ही उसकी उच्चतम इकाई और प्रत्येक गांव उसकी निम्नतर इकाई था। इस सम्बन्ध मे आगे अधिक विस्तार के साथ विवचन किया जावेगा।

२ विगत० की आधार-सामग्री, सकलन की कालावधि और उसका रचनाकाल

मुहणोत नैंणसी ने 'मारवाड रा परगना री विगत' की सामग्री के सकलन का कार्य मई, १६५८ ई० मे देश-दीवान बनने के कुछ समय बाद से ही प्रारम्भ कर दिया होगा, यद्यपि उसके तत्काल बाद के वर्षों का स्पष्ट उल्लेख विगत० मे नही मिलता है।[2] उसने परगनों का प्राचीन इतिहास लिखने के लिए प्राचीन स्तम्भ-लेख,[3] पट्टो,[4] प्राचीन वशावलियां,[5] प्राचीन पुराणादि ग्रन्थ,[6] वहियो,[7] और

१ नैंणसी के ग्रन्थो मे और समकालीन तथा बाद के किसी भी उपलब्ध प्रामाणिक ग्रन्थ मे यह उल्लेख नहीं मिलता है कि ग्रन्थ लिखने के लिए नैंणसी को किसी न आदेश दिया हो। यदि ऐसा होता तो नैंणसी उसका उल्लेख अवश्य ही अपने ग्रन्थो म कर देता।

२ विगत०, १ पृ० ३६१। विगत० की सामग्री सकलन सम्बन्धी सबसे पहिला काल उल्लेख सोजत परगने के विवरण मे मार्च, १६६० ई० का मिलता है।

३ विगत०, २, पृ० ५४१।

४ विगत०, २, पृ० ६१।

५ विगत०, १ पृ० २।

६ विगत०, १, पृ० १, ३८३।

७ विगत०, १, पृ० ४८३।

पचागो,[1] का उपयोग किया था। दान मे दी गयी भूमि का वर्णन करने के लिए ताम्र-पत्रो, पट्टो आदि का उपयोग किया।[2] फरवरी, १६७४ ई० में महाराजकुमार डॉ० रघुबीरसिंह, सीतामऊ, ने जालोर परगने के वश-परम्परागत कानूनगो मुहता कानराज से दो हस्तलिखित ग्रन्थो की प्रतिलिपियाँ प्राप्त की थीं। उक्त दोनो ही बहियाँ उनके पूर्वज तत्कालीन कानूनगो दफ्तरियो की थी।[3] जिनमे सम्मिलित उस परगने के गाँवो की सूचियाँ तब जालोर के परगना-हाकिम मियाँ फरासत के समय में सन् १६६२-६३ ई० मे तैयार की गयी थी।[4] उन बहियो में उन ग्रन्थो का कोई शीर्षक नहीं होने के कारण, विषय और विवेचन की समानता के आधार पर ही, उनका नाम 'जालोर परगना री विगत' रखा गया है। यद्यपि अपनी विगत० मे नैणसी ने जालोर परगने सम्बन्धी यह विवरण सम्मिलित नही किया था, तथापि इन दोनो की बहियो को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि नैणसी ने विभिन्न परगनो के कानूनगो को आदेश देकर उनके आधीन परगनो सम्बन्धी पिछले पाँच सालो (१६५८ ई० से १६६२ ई० तक) का सर्वेक्षण तैयार करवाकर मँगवाया था और यो कुल सात परगनो—जोधपुर, जैतारण, मेडता, फलोधी, साजन, सिवाणा और पोहकरण से सम्बन्धित अधिकाश सामग्री प्राप्त हुई। उन प्राप्त सूचियो और विवरणो के आधार पर तदनन्तर नैणसी ने ही विभिन्न आधारो पर प्रत्येक परगने के गाँवो का वर्गीकरण करवाकर उनकी अलग-अलग सूचियाँ आदि बाद में ही बनवायी थीं।[5]

विगत० का ऐतिहासिक विवरण तैयार करने के लिए ख्यात० के लिए एकत्र सामग्री का भी उपयोग किया है।[6] जोधपुर के शासको के मनसबो व जागीरो का विवरण उसने शासकीय कागज पत्रो के आधार पर लिखा है और उसके समय मे मुगल दरबार मे नियुक्त वकीलो[7] द्वारा भेजे गये तालिका विवरणो का भी उसने

---

१ विगत०, १, पृ० ६८।
२. विगत०, १, पृ० ७७, ४८६।
३ "कानुगा री बहीयां—२ दफतरी मुा मोतीचन्द तुलसीदास री बहीया नग २, १ दफतरी मुा नरसीघ पुरचन्द री" विगत जालोर० (छोटी), प० १ क, (बडी), प० २ क।
४ विगत जालोर० (छोटी), प० ७ क, (बडी), प० १६ क।
५. विगत०, १ पृ० १८९।
६ राव प्रासथान के विवरण के लिए 'राव प्रासथान जी री बात' (ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २७८ ७६) का उपयोग किया गया (विगत०, १, पृ० १२-१४)। इसी प्रकार ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३४-३५ पर दिये गये वृतान्त का उपयोग विगत० (१, पृ० १४-१५) में किया गया। राव चूडा के विवरण को (विगत०, १, पृ० २१-२२) ख्यात० (प्रतिष्ठान), (२, पृ० ३०६ ७) से लिखा गया।
७ विगत०, १, पृ० १५८, १५७, १५३।

समुचित उपयोग किया है, जिन-जिन परगनो मे वह स्वय गया, उन परगनो का स्वय उसने अवलोकन किया तथा उसके आधार पर परगना शहर की तत्कालीन दशा और वहाँ निवास करने वाली जातियो आदि का वर्णन उसने लिखा।[१] प्रत्येक परगने के राजस्व तथा अन्य करो की जानकारी अपनी निजी जानकारी की राजकीय कागज-पत्रो से पुष्टि कर वहाँ के 'दस्तूर अमलो' के आधार पर दी गयी।[२] अपने लम्बे राजकीय सेवा काल मे नैणसी स्वय भी ऐसी सारी शासकीय जानकारी अथवा कानून-कायदो आदि का चलता-फिरता जीवित कोश बन गया था।[३] विगत के लेखन काल के मध्य कुछ परगनो की जनसख्या आदि का विवरण देने के लिए उन परगनो से सम्बन्धित व्यक्तियो से तद्‌विषयक सामग्री का सकलन करवाया था।[४]

परगनो का राजनैतिक इतिहास लिखते समय उसने यत्र तत्र तब सुविज्ञ जनो मे प्रचलित तद्‌विषयक समकालीन पद्यो का भी आधार-सामग्री के रूप मे उपयोग किया।[५] इन सबके अतिरिक्त प्राचीन व अपने समय से पूर्व का इतिहास लिखने के लिए जहाँ उसे कोई प्रामाणिक आधार सामग्री उपलब्ध नही हो सकी वहाँ उसने तब प्रचलित विभिन्न बातो (प्रवादो) का समावेश कर दिया है,[६] अथवा लोकमान्यता का समर्थन किया है। गाँवो की रेख का उल्लेख करते समय भी जहाँ पर उसे शासकीय आधार नही मिला वहाँ कहीं-कही पर अनुमान का सहारा भी लिया है।[७] इस प्रकार वि० स० १७१६ (१६६२-६३ ई०) तक वह विभिन्न परगनो की आधार सामग्री का सकलन करता रहा था[८] और तदनन्तर ही नैणसी ने लेखन कार्य प्रारम्भ किया। एक बार लेखन-कार्य प्रारम्भ हो जाने के बाद तब दीख पड़ने वाली कमियो को पूरी करने के लिए बाद मे भी वह विषय-विशेष सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने का आदेश देता रहा। सिवाणा कसबे की जन-सख्या स० १७२१ वि० (१६६४-६५ ई०) मे लिखी गयी थी। जोधपुर नगर के हाटो का विवरण और नगर के माप की जानकारी भी इसी साल मे लिखी गयी थी।[९]

१ विगत०, २, पृ० १, ३ (एक कोट माहे कोहर करायो थो, वूरीयो पड़ीयो छै), ८३।
२ विगत०, २, पृ० ८८ ९०।
३ विगत०, २, पृ० ९४।
४ विगत०, १, पृ० ३६१।
५ विगत०, २, पृ० ४२, ४५।
६ विगत०, १, पृ० ३७, २ पृ० ४२, ४७।
७ विगत०, १, पृ० ५०२।
८ सामग्री-सकलन काल सम्बन्धी अन्तिम उल्लेख स० १७१६ (१६६२-६३ ई०) का है। विगत०, १, पृ० ४९६।
९ विगत०, २, पृ० २२३, १, पृ० १८८।

इस प्रकार ही नैणसी ने भरसक प्रयत्न कर अपनी विगत० को इसका वर्तमान वास्तविकतापूर्ण प्रामाणिक रूप दिया।

३ विगत० की प्रमुख विशेषताऐं—'आईन-इ-अकबरी' से उनकी विभिन्नताएँ

विगत अपनी विशिष्ट विशेषताएँ लिए हुए है। नैणसी ने कुल सात परगनों का वर्णन किया है। सर्वप्रथम प्रत्येक परगना का राजनैतिक इतिहास प्रारम्भ से लेकर जसवन्तसिंह के शासनकाल के पूर्वार्द्ध (लगभग १७२२ वि०) तक का लिखा है। तदनन्तर प्रत्येक परगना के कुल गाँवों की संख्या, तफों की संख्या और प्रत्येक तफा के गाँवों की संख्या की जानकारी दी है। इसके बाद तत्कालीन मारवाड में पायी जाने वाली प्रमुख जातियों के निवास के अनुसार गाँवों की सूची, कई जातियाँ साथ निवास करने वाली जातियों के गाँवों की सूचियाँ दी गयी हैं और तदनन्तर प्रत्येक गाँव का सं० १७१५ से १७१६ तक का पाँच-वर्षीय सर्वेक्षण विवरण दिया है।

सन् १६५५ ई० मे महाराजा जसवन्तसिंह के आधीन मारवाड प्रदेश के सातो ही परगनों का एक एक कर क्रमश विस्तृत विवरण इस विगत० में इस प्रकार दिया है कि उसे पढ़कर पाठक का उक्त परगनो के सम्बन्ध मे हर प्रकार की ऐसी जानकारी हो सके, जिससे वहाँ के शासकीय प्रबन्धक को किसी प्रकार की कठिनाई और उलझन का सामना नही करना पडे। प्रत्येक परगने का वर्णन करते समय उसने परगना केन्द्र कसबे से सम्बन्धित आवश्यक जानकारी दी है, जैसे उस कसबे की स्थापना कब कैसे हुई थी, उसका नामकरण कैसे हुआ और उसका पूर्ववर्ती कोई नाम रहा है तो वह भी दे दिया गया है।[1] उन परगना-केन्द्र कसबो की स्थापना से पहिले उस परगना या क्षेत्र का व्यवस्था केन्द्र कहीं अन्यत्र रहा होगा तो उसका उल्लेख भी कर दिया गया है, जिससे उस परगना केन्द्र के साथ उस क्षेत्र के प्रारम्भिक प्राचीन इतिहास से लेकर महाराजा जसवन्तसिंह के शासनकाल में लगभग सन् १६६४-६५ ई० (सं० १७२१ वि०) तक के इतिहास का विवरण दे दिया है।[2]

विभिन्न परगनो के ऐतिहासिक विवरणो मे परगना जोधपुर का विवरण बहुत ही विस्तृत होने के साथ विशेष महत्त्वपूर्ण भी है। मारवाड राज्य की स्थापना के समय से ही मंडोवर नगर उसकी राजधानी रहा। अत मंडोवर

---

१ विगत०, १, पृ० १ ३८३, ४९३, २, पृ० १, ३७, २१५ २१६, २८९ ९०।
२ विगत०, १, पृ० १-१८९, ३८३ ९०, ४९३ ९६, २, पृ० १ ८, ३७ ७७, २१५ २०, २८९-३०९।

शहर का प्राचीन इतिहास देखते हुए नैणसी ने मारवाड क्षेत्र मे राठोडो से पूर्ववर्ती (प्रतिहार) शासकों का विवरण दे दिया है। मडोवर पर राठोडो का कब-कैसे आधिपत्य हुआ और जोधपुर शहर की स्थापना कब हुई आदि जानकारी दी है। उस नगर की स्थापना के बाद जोधपुर परगना-केन्द्र के साथ ही राठोडों के मारवाड राज्य का भी प्रमुख शासन-केन्द्र बन गया था। जोधपुर परगने के ऐतिहासिक विवरण के अन्तर्गत वस्तुत. मारवाड राज्य और वहाँ के राठोड राजघराने का *यथासम्भव प्रामाणिक इतिहास सविस्तार दिया गया है।*[1] *यो विगत०* मे जोधपुर परगने के इतिहास के अन्तर्गत दिया गया मारवाड के राठोड राजघराने का इतिवृत्त उसी की ख्यात० मे दिये गये ऐतिहासिक विवरण का हर तरह से पूरक हो गया है। ख्यात० की ही तरह विगत० मे दिया गया प्रारम्भिक कालीन इतिवृत्त मूलत प्राचीन प्रवादो, प्रचलित कथानको या दन्तकथाओपूर्ण ख्यातो पर ही आधारित है, परन्तु जोधपुर की स्थापना और विशेषकर मालदेव के बाद के विवरणो की घटनाओ मे अधिकतर तिथि, माह और सवत् भी दिये गये हैं, जो अन्य प्रमाणो के आधार पर जाँचे जाने पर सही प्रमाणित होते हैं।[2]

जोधपुर परगना के विवरण में ही राठोड-मुग़ल सम्बन्धों विषयक पूरी प्रामाणिक जानकारी दी गयी है। अकबर के समय मे कोई १८ वर्ष (१५६५-१५८३ ई०) तक जोधपुर नगर पर मुगल आधिपत्य रहा। राव मालदेव के द्वितीय पुत्र उदयसिह ने पहिले से ही अकबर की आधीनता स्वीकार कर ली थी। अतः उसका मारवाड का राज्य मिलने के बाद जोधपुर के शासक मुगल आधीनता मे ही रहे। तब से समय समय पर मुगल शासकों की ओर से जोधपुर के शासकों को मिलने वाले मनसब तथा उसमें वृद्धि का ब्योरेवार वर्णन सन्-सवतो सहित पूरा मिलता है। साथ ही मनसब के वेतन के बदले जागीर मे दिये जाने वाले सारे परगनो के नाम, उनकी सम्भावित आय आदि के आँकडो सहित उनका भी पूरा वर्णन है।[3] उक्त विवरणो से मनसबदारी प्रथा के नियमो मे १७वी सदी मे जो परिवर्तन हुए थे उन पर भी विशेष प्रकाश पडता है। नैणसी द्वारा दी गयी जानकारी से यह स्पष्ट हो जाता है कि अकबर के शासनकाल मे निश्चित नियमो मे उल्लेखनीय हेरफेर शाहजहाँ के ही शासनकाल मे हुए थे। पुनः शाही आदेशानुसार स्वीकृत सवारो की सख्या मे बराबर्दी और दो अस्पा से-अस्पा सवारो में अपेक्षित अनुपात के बारे मे भी कोई सही निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त जान-

---

१ विगत०, १, पृ० ११५८।

२ विगत०, १, पृ० ४२।

३ विगत०, १ पृ० ८३, ६३, ६४, ६७, १०५, १०६ १०८ १२४, १२५, १२६, १२७, १२६, १३०, १३१, १३२, १३३, १३४, १४५ १४६, १४७, १४८, १४६ १५१, १५६।

कारी विगत मे सुलभ है।[1]

अन्य परगनो के ऐतिहासिक विवरणो में वहाँ का क्षेत्रीय इतिहास देते समय मारवाड राठाड राजघराने के साथ उस परगने के सम्बन्धो आदि का विशेष रूपेण उल्लेख किया गया है। पूर्व मे ये क्षेत्र अन्य किस-किस शासक के आधीन रहे थे, और उन पर राठोड़ राजघराने का अधिकार हो जाने के बाद मारवाड के महाराजाओ ने वहाँ किन उल्लेखनीय अधिकारियो को भेजा था, इसकी भी जानकारी दे दी गयी है। उन परगनो के विभिन्न शासको या वहाँ के राजकीय अधिकारियों के विशेष कार्यों का उल्लेख कर उन परगनो के इन वृत्तान्तों म वहाँ का तत्कालीन महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय इतिहास प्रस्तुत किया गया है।[2]

कुछ परगनो मे विवरणो के प्रारम्भ मे ही जोधपुर परगने के सन्दर्भ मे उनकी भौगोलिक स्थिति भी स्पष्टतया दे दी गयी है।[3] परन्तु आगे चलकर तो हरेक परगने की भौगोलिक सीमाओ का स्पष्टतया निर्धारित करने का पूरा प्रयत्न किया है। तदर्थ उससे लगे हुए प्रत्येक परगने अथवा साथ लगे पडोसी राज्य के सीमान्त गाँवों की पूरी-पूरी सूचियाँ दी गयी है,[4] जिससे उस क्षेत्र के किसी भी बडे मानचित्र पर उस परगने का सीमांकन करना सर्वथा सरल हो गया है। यही नहीं विगत से मारवाड के परगनों और गाँवो का बहुत ही स्पष्ट निश्चित भूगोल ज्ञात हो जाता है। राजधानी नगर जोधपुर के सन्दर्भ म प्रत्येक परगना-केन्द्र की भौगोलिक स्थिति और दूरियो का उल्लेख उसमे किया गया है। जोधपुर परगने के अतिरिक्त अन्य सब ही परगनो के परगना-केन्द्र कसबे के सन्दर्भ म उस परगने के हर गाँव की भौगोलिक स्थिति का भी स्पष्ट उल्लेख करते हुए उनके बीच की दूरी और दिशा भी दे दी गयी है।[5]

विगत० म सब ही परगना-केन्द्रो के कसबो की बस्तियो के बहुत-कुछ सविस्तार विवरण दिये है, जिनसे उन सब ही कसबों की आबादी, वहाँ के जन जीवन तथा सामाजिक अथवा आर्थिक व्यवस्था पर पर्याप्त प्रकाश पडता है। जोधपुर कसबा समूचे मारवाड राज्य की राजधानी था एव उसकी आबादी और विस्तार अन्य परगना-केन्द्रो की अपेक्षा बहुत अधिक थे। अत जोधपुर नगर के विभिन्न पहलुओ

---

१ राजस्थान०, १६७०, पृ० ४४-४७।

२ दृष्टव्य—विगत० (१ और २ भाग) के परगना सोजत, जैतारण, फलोधी, मेडता, सीवाणा और पोहकरण का ऐतिहासिक विवरण।

३ विगत० १, जैतारण, पृ० ४६३, २, सीवाणा, पृ० २१५।

४ विगत०, १, पृ० ३७२-८२, ५५५-५७, २, पृ० ६, ३२-३४, ६८-१०६, २७८-८०, ३२० २२।

५ विगत०, १ पृ० ४२४ ८६, ५०६ ५४, २, पृ० १२-३१, ११७ २१२, २३२ ७७, ३२७ ५५।

की पारस्परिक दूरियो के नाप दिये हैं, और तब वहां की आबादी की गणना नही देकर केवल उसके अलग-अलग भागो के हाटो की गणना देते हुए उनमें किन धन्धो के लोग बैठते थे, इसका भी यत्र-तत्र उल्लेख किया है।[1] अन्य सभी परगनो के केन्द्र कसबो, सोजत, जैतारण, फलोधी, मेडता, सीवाणा और पोहकरण मे बसने वाली विभिन्न जातियो और पायी जाने वाली प्रत्येक जाति के व्यक्तियों की तब की गणना दी है।[2] उनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उस समय उन कसबो की आबादी बहुत अधिक नही थी, परन्तु प्रत्येक कसबे मे प्राय. सब ही विभिन्न जातियो के लोग वहाँ पाये जाने से आवश्यक सेवाओ के लिए प्रत्येक कसबा-केन्द्र बहुत-कुछ आत्मनिर्भर था। विगत० लिखे जाते समय जोधपुर शहर तथा अन्य परगनो के केन्द्र-कसबो, सोजत, फलोधी, सीवाणा और पोहकरण की जो भी स्थिति थी इसका वृत्तान्त नैणसी ने उसमे लिख दिया है।[3]

जोधपुर परगने के विवरण मे ही परगना जोधपुर, परगना सोजत, जैतारण, सीवाणा और फलोधी परगनो में सवत् १७१५ से १७१६ या १७२० तक विभिन्न साधनो से प्राप्त वार्षिक आय की सारणी दे दी गयी है।[4] इससे मारवाड राज्य की आय के तत्कालीन अधिकाश साधनों पर प्रकाश पडता है। परगना जोधपुर के सवत् १७११ से १७२० तक के दस वर्षों मे हुई वार्षिक आय के साधनो की भी पर्याप्त जानकारी दी गयी है।[5] साथ ही परगना सोजत के वर्णन मे भू-राजस्व और राज्य की आय के अन्य साधनो का विवरण है।[6] इसी प्रकार मेडता परगना मे 'परगनै मेडता रो अमल दस्तूर' मे राजा गजसिह के समय मे परगना मेडता मे जो विभिन्न कर लिये जाते थे, उनका विस्तृत वर्णन दिया गया है; साथ ही जसवन्तसिह के समय तक उसमें क्या कुछ घटा-बढ़ी हुई, उसका भी सुस्पष्ट उल्लेख किया गया है।[7] पोहकरण परगना मे भी 'परगनै पोहकरण रो अमल दस्तूर' मे राज्य की आय के विभिन्न साधनो का विवरण है।[8] उक्त दिये गये विवरणो से तत्कालीन राजस्व व्यवस्था और साधनो पर पूरा प्रकाश पडता है। मुगलकाल मे जोधपुर राज्य के इन सब ही परगनो की सीमाओ में यत्किंचित् भी छोटे मोटे जो परिवर्तन हुए थे, विशेषतया जब कोई गाँव उनमे से निकालकर अजमेर जैसे

---

१ विगत०, १, पृ० १८८-८६, १८६-८८।
२ विगत०, १, पृ० ३६१, ४६६ ६७, २, पृ० ६, ८३-८६, २२३-२४, ३१०-११।
३. विगत०, १, पृ० ३६०-६१, २, पृ० ८, २१५, ३०६।
४ विगत०, १, पृ० १५८-६०।
५ विगत०, १, पृ० १६६-६८।
६ विगत०, १, पृ० ३६५-४००।
७ विगत०, २, पृ० ८८ ६८।
८ विगत०, २, पृ० ३१२-३२७।

ाही खालसा के परगने मे सम्मिलित कर लिए गये थे, तो उनकी भी स्पष्ट जान-
ारी दी गयी है।[1] इसी प्रकार किसी परगने के कोई गाँव किसी पड़ोसी राज्य के
धिकार में चले गये या किसी अन्य क्षेत्र में सम्मिलित हो गये थे तो उसका भी
गत० में उल्लेख है।[2]

परगनो मे ऐतिहासिक वर्णन के अन्तर्गत दिये गये विवरणो से वहाँ के
माजिक, धार्मिक और सास्कृतिक इतिहास पर भी प्रकाश पडता है। उदाहरण
वरूप जाति-प्रथा, विवाह, दहेज प्रथा, सती प्रथा, खान-पान और पहिनावा,
विभिन्न देवी-देवताओ की पूजा, लोक-देवताओं मे आस्था और अन्धविश्वास,
ोली, दीपावली, रक्षाबन्धन और दशहरा आदि प्रमुख त्योहारो आदि के बारे मे
र्याप्त जानकारी मिलती है।[3]

राठोड राजवश का राजनैतिक इतिहास लिखते समय विगत० मे भी प्रसगा-
सार अन्य राजपूत शाखाओं पडिहार,[4] चौहान,[5] सोलकी,[6] सोनगरा,[7] ईंदा,[8]
ोधल,[9] साखला,[10] कोटेचा,[11] आसायच,[12] सीसोदिया,[13] भाटी,[14] झाला[15]
ाडा,[16] सोढा,[17] बाघेला,[18] कछवाहा,[19] आहडा,[20] पँवार,[21] देवडा,[22] खीचो,[23]

---

१ विगत०, १, पृ० ५०५, ५०८ ६ ।
२ विगत०, २, पृ० ३१६ ।
३ विगत०, १, पृ० १, ४, ५, ६ ७, ८, १२, १३, ३३, ६४, ८२, १०१, १२०, १५०, १५७, १७५, ३८५, ३८६, ३८७, ३८८, ३६०, ३६३, ४६३, २, पृ० १, ४, ५, १२, ४१, ४७, ५५, ७१, २१६, २४१, २८६, २६०, २६३, ३०५, ३०६, ३११ ।
४ विगत०, १, पृ० १-२, ३, ४, ३८, १४२ ।
५ विगत०, १ पृ० २, ३, ४१, १७५ ।
६ विगत०, १, पृ० ५, ६, ७, ८, ६, १५ ।
७ विगत०, १, पृ० १५, १०४ ।
८ विगत०, १, पृ० २३, २४, १४१ ।
६ विगत०, १, पृ० २३, १०४, १४१ ।
१० विगत०, १, पृ० २३, ११७ ।
११ विगत०, १, पृ० २३ ।
१२ विगत०, १ पृ० २३ ।
१३ विगत०, १, पृ० २७, ३१, १०४, १७३ ।
१४ विगत०, १ पृ० ३०, ४७, ६६, ८५, ८६, ८७, ६३, ६६, १०३ ।
१५ विगत०, १, पृ० ४७, ४८, ५५ ।
१६ विगत०, १, पृ० ५१, ५३, ५५ ६६ ११५, १७३ ।
१७ विगत०, १, पृ० ५२ ।
१८ विगत०, १, पृ० ५३ ।
१६ विगत०, १, पृ० ५५ ।
२० विगत०, १ पृ० ५५ ।

गौड़,[1] बुन्देला[2] आदि शाखाओ के सम्बन्ध मे प्रसगसगत वर्णन भी यथास्थान दिया गया है।

अप्रैल १६, १६५८ ई० को लडे गये धरमाट के इतिहास-प्रसिद्ध युद्ध मे जसवन्तसिंह के साथ भेजी गयी शाही सेना और उसमे नियुक्त मनसबदारो, उनके सहायक सेनानायको के नामो और प्रत्येक के आधीन सैनिको की ब्यौरेवार परन्तु अधूरी सूची विगत० मे मिलती है। उस युद्ध का समकालीन विस्तृत विवरण और उस युद्ध मे काम आये सेनानायको और महत्त्वपूर्ण सैनिको की विस्तृत सूचियाँ दी गयी हैं।[3]

विगत० मे गाँवो का विवरण भी विस्तृत और समुचित दिया गया है। प्राय: सभी गाँवो की रेख, परगना केन्द्र से प्रत्येक गाँव की दूरी, गाँव मे निवास करने वाली प्रमुख जातियों के नाम, खेती योग्य भूमि का माप, सिंचाई के साधन और उनकी सख्या, पानी का बाहुल्य या कमी, मुख्य फसलें, खेतो की किस्म, गाँव की तत्कालीन दशा, और गाँव मे निवास करने वाले लोगो के पीने के पानी के साधन और अन्त मे प्रत्येक गाँव की पचवर्षीय (१७१५ वि० से १७१९ वि० तक) वास्तविक आय आदि के आँकडे दिये हैं।[4] गाँव का वर्णन करते समय गाँव मे कोई विशेष पेड थे[5] अथवा नदी-नाले[6] होकर निकलते थे तो उनका विवरण लिख दिया है। गाँव के मन्दिर[7] आदि का भी उल्लेख कर दिया गया है। यदि किसी गाँव मे नमक बनाया जाता था तो यह बात भी दर्ज कर दी गयी है।[8] विपत्ति आदि के

---

२१ विगत०, १, पृ० ६६, ८७, ११५।
२२ विगत०, १, पृ० १०४, ११३।
२३. विगत०, १, पृ० ११६।
१ विगत०, १, प० १७३।
२ विगत०, १, पृ० १७३।
३ विगत०, १, पृ० १७६, १८६। विगत० की प्राप्य प्रतियों मे यह सूची अधूरी ही मिलती है। स्पष्टतया पश्चात्कालीन प्रतिलिपिकारों की असावधानी से यह सूची पूरी नक़ल नहीं की गयी थी, अथवा सम्भवत जिस प्रति से ये प्रतिलिपियाँ नकल की गयी थीं, उसके बाकी रही सूची वाले पत्र त्रुटित या लुप्त हो गये थे, जिससे उसकी पूरी नक़ल नहीं हो सकी थी। इस पूरी सूची के लिए देखो 'जोधपुर हुकूमत री बही', पृ० ७-१५, विगत०, ३, पृ० ६०-६३।
४. विगत०, १, गाँवों का विवरण, पृ० २०४-३५३, ४२५-८६, ५०६ ५२, २, पृ० १२-३१, ११६-२१३, २२२-७७, ३२७ ५५।
५. विगत०, १, पृ० ५३८।
६. विगत०, १, पृ० ५३८, ५३६, २, पृ० १६१, २३४, २३५, ३१५, ३४६।
७ विगत०, १, पृ० ५३६, ५४१, २, पृ० २५४, ३०६, ३११।
८. विगत०, १, पृ० ४४४, ४४७, ४४८, ४५७, ४७४, ४७८, २, पृ० २१, ३६।

समय यदि कभी कोई शासक आकर किसी गाँव मे रहा था तो उसका भी उल्लेख है जिससे इतिहास की अनेको विलुप्त साधारण परन्तु उपयोगी कडियाँ मिल जाती हैं।[1] उदाहरणार्थ—'काणुजो'' विषा माँहे राव चन्द्रसेण अठे रह्यो छै'''विषै रहाण सारीषो।'[2]

इसी प्रकार यदि किसी गाँव की जमीन मुकाते[3] पर दी हुई है तो उसका उल्लेख कर दिया गया है। कही-कही पर पट्टाधार का नाम और नैणसी के समय मे तब उसका उपभोग कर रहे जागीरदार का नाम भी दे दिया है।[4]

ब्राह्मणो, चारणो, भाटो, भोपो, जोगियो आदि को सासण (दान) मे दिये गये गाँवो की जानकारी विस्तार से दी गयी है। प्रत्येक परगना मे कुल कितने और कौन कौन से गाँव सासण के थे और किस-किस शासक ने किसको वह गाँव सासण मे दिया था और उस समय (नैणसी के समय) कौन व्यक्ति उसका उपभोग कर रहा था, आदि का पूरा विवरण दिया गया है।[5] साथ ही अनेक गाँवो मे सासण भूमि किसको कब और क्यों दी गयी थी इसका भी उल्लेख किया गया है।[6] किसी सासण गाँव के स्वामित्व मे यदाकदा जो भी परिवर्तन हुए उनका भी उल्लेख कर दिया गया है।[7] यदि किसी गाँव का कोई प्राचीन नाम था और बाद मे उसका नाम बदला गया तो उसका भी उल्लेख कर दिया गया है।[8] यदि किसी व्यक्ति विशेष ने किसी गाँव को बसाया तो उसकी भी जानकारी दे दी गयी है।[9]

तत्कालीन जैतारण परगने की दक्षिणी सीमा पर मेरो की बस्ती को, जिसे कालान्तर मे 'मेरवाडा' मे सम्मिलित कर लिया गया, इस क्षेत्र मे मेरो ने कई नये गाँव बसाये थे, उनकी जानकारी विगत० मे दी गयी है। यही नही, जिन ८ गाँवो के मेर तब राज्याधिकार नही मानते थे उनका भी स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है।[10]

नैणसी के इस विगत० को तैयार करने से कोई ७५-८० वर्ष पहिले अबुल

---

१ विगत०, २, पृ० २५१, २५५।
२ विगत०, १, पृ० ५३६ (सकट के समय मे राव चन्द्रसेन यहाँ रहा था विपत्ति काल में रहने योग्य स्थान।)
३ विगत०, २, पृ० ३३०, ३३४, ३३५, ३३६, ३३८।
४ विगत०, २, पृ० ३३१ ३२, ३३३, ३३७, ३३८।
५ विगत०, २, पृ० ४८७।
६ विगत०, १, पृ० ३७, ७६, ८२।
७ विगत०, १, पृ० ५४४, ५४६, ५४८।
८ विगत०, १ पृ० ५४३।
९ विगत०, १, पृ० ५४६, ५४९, ५५०, ५५१।
१० विगत०, १, पृ० ५०५, ५०६, ५५२-५३।

फजल ने अपने सुविख्यात ग्रन्थ 'अकबरनामा' के अन्तिम भाग मे मुगल साम्राज्य सम्बन्धी एकमात्र विवरणात्मक ग्रन्थ सर्वमान्य 'आईन-इ-अकबरी' की रचना की थी। उसमे उसने अकबर कालीन मुगल साम्राज्य, शाही दरबार, साम्राज्य-व्यवस्था, शाही सेना और उसका सगठन आदि अनेको विस्तृत विवरण तथा विवेचनो मे तत्कालीन दरबारी जीवन और संस्कृति का विस्तृत विवरण लिखा है। अतएव तत्कालीन मुगल साम्राज्य सम्बन्धी सब ही प्रकार की जानकारी का यह सर्व-सग्रह बन गया है। ईसा की १७वी सदी के प्रारम्भिक युगो मे ही सब ही शाही कामकाज मे प्रमाणित सन्दर्भ-ग्रन्थ के रूप मे उसका उपयोग किया जाने लगा था। पुन: फारसी भाषाविज्ञ विद्वत समाज को तो उसकी प्रतियाँ अवश्य ही सुलभ हो गयी थी। यदि कही नैणसी फारसी भाषा मे पारगत नही रहा हो तथापि आइन० ग्रन्थ, उसमे वर्णित विषय, उसकी लेखन-शैली आदि से नैणसी जैसा इतिहास का ज्ञाता सुविज्ञ अवश्य ही पूर्णतया परिचित होगा इस सम्बन्ध मे कोई शका नही होनी है। अत. यह प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है कि उसी तरह के अपने इस ग्रन्थ विगत० की रूपरेखा बनाने और बाद मे उसको तैयार करते समय नैणसी आइन० से कहाँ तक प्रभावित हुआ था।

आईन-इ-अकबरी के प्रथम भाग मे शाही राजमहल, शाही दरबार, मुगल सैनिक तथा व्यवस्था सम्बन्धी विस्तृत विवरण दिया गया है। आइन० के तृतीय भाग मे हिन्दुस्तान का भौगोलिक वर्णन, हिन्दू धर्म, दर्शन, समाज और सस्कृति सम्बन्धी वृत्तान्त प्रस्तुत किया गया है। विगत० मे इस प्रकार के कोई विस्तृत क्रमबद्ध विवरण नही हैं; यत्र-तत्र केवल कुछ प्रासगिक उल्लेख ही मिलते हैं। विगत० का स्वरूप आइन० के द्वितीय भाग की ही तरह का है। परन्तु आइन० के भाग २ मे विवेच्य विषय का क्षेत्र बहुत अधिक विस्तृत है। अकबर के सम्पूर्ण साम्राज्य के विभिन्न सूबो, सरकारो और परगनो (महलो) का वर्णन इसमे सम्मिलित किया गया है। क्षेत्र अतीव विस्तृत होने के कारण अबुल फजल के लिए अपने इस ग्रन्थ मे वहाँ की निम्नस्तरीय उन सब ही विभिन्न छोटी-छोटी बातो का समावेश कर सकना सम्भव नही था, जिनका समावेश नैणसी ने अपनी विगत० मे किया है।

अबुल फजल ने आइन० के इस द्वितीय भाग मे प्रान्तीय शासन-व्यवस्था की जानकारी देने के बाद सर्वप्रथम विभिन्न राजस्व अधिकारियो का विवरण दिया है। उसके बाद इलाही गज, बीघा, बिस्वा और जमीन तथा उसका वर्गीकरण आदि का विस्तृत विवेचन किया है। इसमे उपज के आधार पर अलग-अलग प्रकार की भूमि का पोलज, पड़ती, चचर और बजर मे वर्गीकरण किया है। साथ ही इन विभिन्न प्रकार की जमीनो से कितना और किस प्रकार लगान वसूल किया जाता था इसका वर्णन है। इलाहाबाद, अवध, आगरा, अजमेर, दिल्ली,

लाहोर, मुलतान और मालवा सूबों की दस वर्षीय भू व्यवस्था का विस्तृत विवरण, वहाँ के राजस्व और सरकार की जानकारी देने के बाद वहाँ की दोनो फसलो मे पैदा होने वाली वस्तुओ के नाम और उनका भाव (मूल्य) दाम और जीतल म दिया गया है। आगे चलकर अबुल फजल ने तत्कालीन मुगल साम्राज्य के १२ सूबो का अलग-अलग ब्योरेवार विस्तृत विवरण दिया, जो आइन० के द्वितीय भाग का सबसे महत्त्वपूर्ण जानकारीप्रद अश है। प्रत्येक सूब की भौगोलिक स्थिति वहाँ का प्राकृतिक भूगोल तथा सीमाएँ, उस सूबे मे मापी जा चुकी भूमि का क्षेत्रफल, उल्लेखनीय वृक्षो और फलो सम्बन्धी आदि बहुविध विवरण दिया गया है। सूबा केन्द्र अथवा मुख्य सरकारो अथवा विशिष्ट नगरो का सक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण और उनकी प्रमुख विशेषताओ का उल्लेख किया गया है। उदाहरणार्थ—उडीसा के विवरण मे पुरी के जगन्नाथ मन्दिर और कोणार्क के सूर्य मन्दिर का विवरण तथा वहाँ क खान पान, रहन सहन का विवरण आइन० म पढने को मिलता है, प्रत्येक सूब को कुल सरकारो तथा प्रत्येक सरकार के अन्तर्गत सब ही परगनो की मापी गयी भूमि का क्षेत्रफल बीघा बिस्वा मे, प्रत्येक का राजस्व, सुयूरगल और वही नियुक्त घुडसवारो और पैदल सैनिकों की सख्याएँ दी हैं। यो सूबा सरकार और परगनो या महलो का आर्थिक विवरण ही सर्वाधिक दिया गया है। वहाँ की राजस्व व्यवस्था की जानकारी दी गयी और विभिन्न परगना या महल केन्द्र स्थान की विशिष्टता भी अति सक्षेप में दे दी गयी है। जैसे अजमर और चित्तौड़ के पहाड पर पत्थर के सुदृढ किलो का उल्लेख उसमे है। मारवाड क विभिन्न स्थानो के किलो की स्पष्ट जानकारी है। विभिन्न परगनो मे बसने वाली अथवा वहाँ शासन कर रही प्रमुख जातियो की जानकारी सक्षेप मे दे दी है। अत आइन० मे शासन व्यवस्था के साथ ही वहाँ के समकालीन जन जीवन का प्रतिबिम्ब भी देखने को मिलता है।

इस प्रकार उपर्युक्त वर्णन से आइन० से विगत० की विभिन्नता स्पष्ट हो जाती है। अबुल फजल ने प्रत्येक सूबे का सक्षिप्त इतिहास और भौगोलिक वर्णन दिया है जबकि नैणसी ने परगनो का विस्तृत इतिहास और भौगोलिक वणन दिया है। विशेषकर जोधपुर परगना का तो १७२२ वि० स० (१६६५ ई०) तक का सम्पूर्ण इतिहास लिख दिया है।

आइन० मे सूबा, सरकार और महलो की राजस्व के आँकडे दिय हैं, विगत० मे परगना, तफा और गाँवो के राजस्व के आँकडे दिये गये हैं। साथ ही विगत० मे १७१५ स १७१९ वि० स० तक प्रत्येक गाँव की वास्तविक आय के आँकडे भी दिये हैं।

आइन० मे प्रत्येक सरकार की सैनिक सख्या और क्षेत्रफल का उल्लेख किया है। विगत० मे तत्सम्बन्धी विवरण नही है। विगत० में कुछेक परगनो के गाँवो

का क्षेत्रफल अवश्य दिया गया है।

विगत० मे प्रत्येक गाँव का विस्तृत वर्णन दिया है, उसमे गाँव मे निवास करने वाली मुख्य जातियो, सिचाई के साधन, पीने के पानी के साधन, परगना से गाँव की दूरी और दिशा का वर्णन है। आइन० मे गाँवो के विवरण का अभाव है।

४ विगत० की प्राप्य प्रतिलिपियाँ और उनका प्रकाशन

'मारवाड रा परगना री विगत' की प्रतिलिपि की सूचना और विस्तृत जानकारी सर्वप्रथम तैस्सीतोरी ने ही अपने 'डिस्क्रिप्टिव केटेलाग ऑफ बार्डिक एड हिस्टारिकल मैनुस्क्रिप्ट्स' विभाग १, खड १, जोधपुर राज्य' मे (ग्र० १२, पृ० ४८-५१) दी थी और उसके प्रशासनिक और आर्थिक महत्त्व की ओर ध्यानाकर्षण किया था। उक्त प्रतिलिपि तब जोधपुर राज्य के चारण वणसूर महादान के सग्रह मे थी। तैस्सीतोरी ने विगत० की विषय-सूची और कई एक सक्षिप्त उद्धरण भी उसमे दिये जिससे उस ग्रन्थ के महत्त्व को समझने मे आसानी हो गयी।[1] इसके बाद डॉ० गौरीशकर हीराचन्द ओझा ने विगत० पर प्रकाश डाला,[2] परन्तु उन्होने कौन और किस हस्तलिखित प्रति को देखा इसका उल्लेख नही किया है। स्पष्टतया उन्होंने यह सारा उल्लेख तैस्सीतोरी के उक्त केटेलाग मे दिये गये विवरण के ही आधार पर किया होगा। निश्चित रूपण यह कहा जा सकता है कि उनके सग्रह मे तो उक्त ग्रन्थ की कोई प्रति नही थी, क्योकि यदि उनके पास तब विगत० की प्रति उपलब्ध होती तो वह अपने ग्रन्थ 'जोधपुर राज्य का इतिहास' मे उसका उपयोग अवश्य करते।

अब तक विगत० की दो ही प्रतियाँ उपलब्ध हो पायी हैं और दोनो ही प्रतियाँ अब 'राजस्थानी शोध सस्थान', चौपासनी (जोधपुर) मे सगृहीत हैं।[3] प्रथम प्रति वि० १८वी शताब्दी के मध्य[4] की प्रतिलिपि बतायी जाती है। परन्तु किस आधार पर इसका यह रचनाकाल निश्चित किया गया है, इसका कोई सकेत उसके सम्पादक ने कही नही दिया। प्रयत्न करने पर भी इस प्रति को देख नही पाया अत उसके बारे मे निश्चयात्मक रूपेण कुछ अधिक कह सकना सम्भव नही है। उक्त प्रथम प्रति म सात परगनो जोधपुर, सोजत, जैतारण, फलोधी, मेडता, सीवाणा और पोहकरण का ही विवरण है। विगत० के सम्पादक के अनुसार इस प्रति की पत्र सख्या ३६२ है और प्रत्येक पत्र के हरेक पृष्ठ पर २० से लेकर

---

१ तैस्सीतोरी० जोधपुर०, १, पृ० ४८-५१।
२. दूगड०, १, (मुहणोत नैणसी का-परिचय, पृ० १०)।
३ विगत०, १, भूमिका, पृ० २७।
४ विगत०, १, भूमिका, पृ० २७।

२३ पंक्तियाँ लिखी हुई हैं। एक ही व्यक्ति ने इसे सुवाच्य मारवाड़ी लिपि में लिखा है। इस प्रति के सब ही पत्र खुले हुए अलग-अलग हैं और कुछ पत्र खंडित हो जाने से उनका मूल पाठ नष्ट हो गया है।[1]

इस विगत० की दूसरी प्रति वही है जो पहिले जोधपुर के चारण वणसूर महादान के संग्रह में थी, और जिसे तब तैस्सीतोरी ने देखा और जिसका विस्तृत विवरण तब उसने लिखा था।[2] यहाँ आगे दिये गये उसके ब्योरेवार जानकारी का मूल आधार तैस्सीतोरी द्वारा यह सविस्तार वृत्तान्त ही है। राजस्थानी शोध-संस्थान, चौपासनी ने उक्त प्रति वणसूर महादान के वंशजों से ही प्राप्त की होगी। तैस्सीतोरी के अनुसार उक्त दूसरी प्रति की प्रतिलिपि संवत् १९३७ (सन् १८८१ ई०) के लगभग या उसके कुछ समय बाद[3] की गयी थी। इसमें विशेष रूपेण ध्यान देने की बात यह है कि 'नागौर की हगीगत' में दिया गया ऐतिहासिक और भौगोलिक विवरण स्पष्टतया सन् १८८१ ई० (सं० १९३७ वि०) में मारवाड में हुई जनगणना के बाद ही लिखा गया था। यह समूची प्रतिलिपि एक ही व्यक्ति द्वारा लिखी गयी थी, जिससे उसका प्रतिलिपिकाल उससे तत्काल बाद का ही स्पष्टतया निश्चित किया जा सकता है।

उक्त दूसरी प्रति में पहिली प्रति से कुछ भिन्नताएँ हैं। इसके प्रारम्भ और अन्त में कुछ अतिरिक्त विवरण हैं तथा मूल ग्रन्थ से पूर्व व पश्चात काल की जानकारियाँ लिख दी गयी हैं जो प्रथम प्रति में नहीं हैं। इस प्रति के प्रारम्भिक २५ पत्रों में निम्नलिखित विविध जानकारी है—

(क) 'अक्बर रै समै री मनसब री विगत', पत्र सं० १ अ से १११ अ तक में। (ख) पातसाही हिन्दू उमरावों री विगत'[4] (पत्र सं० IV अ से IX अ तक) में अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब के हिन्दू मनसबदारों के नाम, उनकी जातियाँ, और मनसब की सूची दी गयी है। (ग) 'नागौर री हगीगत'[5] (पत्र संख्या X अ से XII ब तक) में नागौर का भौगोलिक और ऐतिहासिक विवरण संवत् १९०८ तक का दिया है। (घ) 'जोधपुर महाराजा जसवन्तसिंघ जी रै मनसब रौ नावों ने थोडो वृतान्त (पत्र सं० १ अ से ७ ब तक) में जसवन्तसिंह के मनसब के आँकड़े और संवत् १७२७ से १७३० वि० तक की घटनाओं का संक्षिप्त विवरण दिया गया है। (ङ) 'जैपुर महाराजा जैसिंघ जी रै मनसब रौ

---

१ विगत०, १ भूमिका, पृ० ३७।
२ विगत०, १, भूमिका, पृ० ३७, तैस्सीतोरी० जोधपुर०, १ पृ० ४८ ५१।
३ तैस्सीतोरी० जोधपुर० १, पृ० ४८।
४ तैस्सीतोरी० जोधपुर०, १, पृ० ४८, विगत०, २, परिशिष्ट ६ पृ० ४६० ६६। अकबर-कालीन मनसबदारों की सूची 'आईन इ अकबरी' से ली गयी बतलायी जाती है।
५ तैस्सीतोरी० जोधपुर०, १, पृ० ४८, विगत०, २, परिशिष्ट ६ (घ), पृ० ४२१ २४।

नावो ने याडो वृतान्त'[1] (पत्र स० ८ अ से १३ अ तक) मे मिर्जा राजा जयसिह कछवाहा के मनसब और कार्यो का विवरण दिया गया है।

इसी प्रकार इस प्रति के अन्त के प० ४५३ ब से ४५९ ब तक के पत्रो मे 'जोधपुर सम्बन्धी फुटकर वार्ता' शीर्षक मे कई प्रकार की स्फुट जानकारी एकत्र कर लिख दी गयी है। जोधपुर परगने के गाँवो की तीन बार की गयी अलग-अलग गणनाओ के अक क्रमश. दिये गये हैं। स० १७१६ वि० मुहणोत नैणसी और पचोली नरसिघदास द्वारा की गयी अलग गणना की सारणियाँ और आंकडे दिये हैं, तदनुसार गाँवो की सख्या १२९६ थी। तीसरी गणना के अनुसार १४४० गांव थे। राव राम और चन्द्रसेन के बीच हुए स० १६२०-२२ वि० के सघर्ष का विवरण है। उदयसिह, सूरजसिह, गजसिह और जसवन्तसिह की तनख्वाह मे जोडे गये जोधपुर परगने के विभिन्न तफो की आमदनी के आंकडो की जो सूची कानूनगो महेशदास ने सकलित कर लिख दी थी वह सारणी दी गयी है। स० १६१४ वि० म जैतारण पर मुगल सेना के आक्रमण सम्बन्धी एक टिप्पणी है। स० १६४१, १६४३ और १६४४ वि० की घटनाओ का उल्लेख करते हुए मोटा राजा उदयसिह का सक्षिप्त विवरण दिया है। मुहणोत नैणसी ने स० १७२० वि० मे जो 'लाहिणा' भरा उसकी जानकारी दी है और अन्त मे 'करमूलो' नामक कर पर एक टिप्पणी दी गयी है।[2]

ये सारे विविध विवरण विगत० की प्रथम प्रति मे नही हैं। स्पष्टतया इस दूसरी प्रति के प्रतिलिपिकर्ता ने विभिन्न बहियो या पोथियो से लेकर इन सारे स्फुट प्रकरणो को इस प्रतिलिपि की नकल करते समय स्वय ने मूल ग्रन्थ के प्रारम्भ या अन्त मे जोड दिया था।

मुहणोत नैणसी द्वारा लिखित विगत० के इस उपयोगी ग्रन्थ को तीन भागो मे सम्पादित करने का श्रेय डॉ० नारायणसिह भाटी, निदेशक, राजस्थानी शोध-सस्थान, चौपासनी (जोधपुर), को है और उक्त ग्रन्थ को प्रकाशित[3] करने का श्रेय राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर को है। प्रथम भाग मे परगना जोधपुर, सोजत और जैतारण का विवरण है। अन्य सूत्रो से सकलित कर सम्पादक ने इस प्रथम भाग मे एक परिशिष्ट जोड दिया है, जिसमे कुछ अतिरिक्त सामग्री भी प्रकाशित कर दी है। दूसरे भाग मे परगना फलोधी, मेडता, सीवाणा और पोह-करण का वर्णन है। उक्त भाग मे भी सम्पादक ने दस परिशिष्ट जोडकर जोधपुर

---

1 तैस्सीतोरी० जोधपुर०, १, पृ० ४६, विगत०, २, परिशिष्ट ८, पृ० ४८६-८९ मे केवल 'राजा जैसिघ रा मनसब रो नावो सम्वत् १७२१ या लिखाया' ही छाप दिया गया है।

2 तैस्सीतोरी० जोधपुर०, १, पृ० ५१, विगत०, २, परिशिष्ट २ (क), पृ० ४२८-३५।

3 प्रथम भाग का प्रकाशन १९६८ ई०, दूसरे का १९६९ ई० और तीसरे भाग का १९७४ ई० म हुआ।

तथा *अन्य परगनो सम्बन्धी जानकारी* के लिए अतिरिक्त सामग्री संगृहीत की है। इसमे परिशिष्ट (घ), ८ और ६ तैस्सीतोरी० द्वारा उल्लेखित विक्रम की २०वीं शती की प्रतिलिपि (ख) के प्रारम्भ या अन्त मे प्रतिलिपिकार द्वारा जोडी गयी की 'फुटकर वार्ता' से लिये गये हैं।[1] तीसरे भाग मे सम्पादक ने सब ही भागो की अनुक्रमणिकाएँ और कुछ विशिष्ट शब्दो की परिभाषा देने का प्रयास किया है। कुछ शासको की जन्म-पत्रियाँ भी संगृहीत कर दी गयी हैं।

५ विगत की बहु-विधि विषयवस्तु, उसकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता तथा इस ग्रन्थ का सर्वांगीण प्राथमिक महत्त्व

विगत मे तत्कालीन मारवाड के सात परगनो, जोधपुर, सोजत, जैतारण, फलोधी, मेडता, सीवाणा और पोहकरण का प्रारम्भ से लेकर १७१६, १७२०, १७२१ और १७२२ वि० तक का विस्तृत विवरण दिया है जिससे इतिहास के अतिरिक्त विवाह प्रथा, दहेज का प्राधान्य, सती प्रथा, होली, दीपावली, दशहरा और रक्षाबंधन *आदि त्योहारो की जानकारी, धार्मिक विश्वास, विभिन्न* देवी-देवताओ मे विश्वास, मूर्ति-पूजा सम्बन्धी विवरण, लोक-देवता के प्रति मान्यता, हिन्दुओ के मृतक सस्कार, मारवाड राज्य के केन्द्रीय प्रशासन के अधिकारियो के कर्तव्य और कार्यों पर प्रकाश, परगना प्रशासन के अधिकारियो के कार्यों आदि सम्बन्धी विशेष जानकारी, विभिन्न युद्धो म मारे जाने वाले विशिष्ट व्यक्तियो के नामों, खापों आदि की जानकारी, जागीरदारी व्यवस्था पर प्रकाश, जोधपुर का अन्य राज्यो से सम्बन्ध, मारवाड-मुगल सम्बन्ध, मुगलों से अथवा मुसलमानो से वैवाहिक सम्बन्धो पर नवीन प्रकाश, मनसबदारी प्रथा विशेषकर मनसब के जात सवार आदि के आधार पर दिये जाने वाले वेतनमानो की दरो आदि के सम्बन्ध मे प्रामाणिक जानकारी मिलती है।

सातों परगनो मे प्रत्येक गाँव का ब्योरेवार विवरण लिखते हुए गाँव का नाम, परगना-केन्द्र से उसकी दूरी, प्रत्येक गाँव मे सिंचाई के साधन, गाँव मे पीने के पानी की व्यवस्था, गाँव की रेख और स० १७१५ वि० से १७१६ वि० तक प्रत्येक गाँव की वार्षिक आय, गाँव की मुख्य फसलो, नैणसी के समय मे गाँव की तत्कालीन दशा आदि का विवरण दिया है। उस गाँव विशेष सम्बन्धी कोई खास ऐतिहासिक घटना हुई हो या विशेष बात हो तो उसका भी उक्त विवरण मे स्पष्ट उल्लेख है जिससे मारवाड राज्य और राजघराने के पूर्ववर्ती इतिहास की अनेको *छोटी-छोटी लुप्त कड़ियाँ प्राप्त हो जाती हैं। जैसे कुडल (सीवाणा)* के

---

१. तैस्सीतोरी० जोधपुर०, १, पृ० ४८-४६, ५१, विगत०, २, पृ० ४२१-२४, ४२८-३५, ४८६ ६६।

विवरण मे दिया गया है कि 'त्रिपै राव श्री मालदेवजी कूडल रे भाखर रहा था।'[1] सासण के गाँवो का विवरण लिखते हुए भी वह कब किसे दिया गया था आदि जानकारी भी दे दी गयी। जैसे पचेटीयो (सोजत) के सन्दर्भ मे लिखी है 'दत्त महाराजा गजसिंघजी रो आढा दुरसा मेहावत बीमन दुरसावत नु० समत १६७७ रा काती सुद ७ री वही मे आढो महेसदास किसनावत है।'[2] ब्राह्मणों आदि के सासणो के सम्बन्ध म भी ऐसी ही क्रमवद्ध ऐतिहासिक जानकारियाँ मिलती हैं। जैसे सीवाणा परगना मे 'सीलोर रा वास' के सम्बन्ध मे लिखा है—'दत्त रावल हापा जैतमलोत रो प्रो० नाना रोहडीयोत जात राजगुर नु० पहला पुवार री दीधी अगनोतीयाँ (अग्निहोत्रियाँ) नु सासण थो। हिमे प्रा० मेहराज भोजा रो ने लिषमीदास देवीदास रो नैं हेमराज येतै सूरा रो नै रतनो रावतोत।'[3] परगनो की भौगोलिक सीमा, राज्य की आमदनी के साधन, इस प्रकार नैणसी के इस ग्रन्थ से मारवाड के राजनैतिक इतिहास, भौगोलिक, प्रशासनिक, सामाजिक, धार्मिक और सास्कृतिक तथा आर्थिक दशा आदि सभी विषयो पर पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है।

मुहणोत नैणसी ने विगत० मे सातो परगनो का ऐतिहासिक वर्णन करते समय तब तत्सम्बन्धी उपलब्ध सारी आधार-सामग्री का उपयोग किया है। जहाँ से सामग्री प्राप्त की या जिस सामग्री का उपयोग किया, उसका उसने अनेक स्थानो पर स्पष्ट उल्लेख कर दिया। इस प्रकार अपने ग्रन्थ की प्रामाणिकता उसने स्वय ही स्पष्ट कर दी है। प्रत्येक परगने का प्राचीन इतिहास लिखने के लिये तब उसे कोई अन्य प्रामाणिक आधार-सामग्री उपलब्ध नही हो पायी थी इस कारण उस प्राचीन धार्मिक ग्रन्थ, प्राचीन पद्य और वशावली आदि का सहारा लेना पडा और उसे तब उसमे प्रचलित कथानको या प्रवादो का भी समावेश करना पडा। विशेषकर जोधपुर परगना सम्बन्धी विवरण मे ऐसी बातो का समावेश बहुत मिलता है। अत राव जोधा के पूर्व का राजनैतिक इतिहास प्रामाणिक नही माना जा सकता है। राव जोधा के बाद के राजनैतिक इतिहास को लिखते समय उसने तब उपलब्ध शासकीय कागज-पत्रों, निजी व्यक्तियो के सग्रहो, ताम्र-पत्रो, स्तम्भ लेखो आदि आधार सामग्री का उपयोग कर लिखा, जिनकी प्रामाणिकता मे सन्देह नही किया जा सकता था। परन्तु इस काल के विवरणो मे भी अनेक स्थानो

---

१ विगत०, २, पृ० २५१ (विपत्ति के समय राव मालदेव कूडल के पहाडो में रहा था)।

२ विगत०, १, पृ० ४८३।

३ विगत०, १, पृ० २६६ (रावल हापा जैतमलोत ने पुरोहित नाना रोहडियोत राजगुरु को दान में दिया। पूर्व मे अग्निहोत्रियो को पवार ने दान मे दिया था। वर्तमान में पुरोहित मेहराज भोजा का, लक्ष्मीदास देवीदास का, हेमराज खेता सूरा का और रतना रावतोत है।)

पर सुनी-सुनायी बातों का आधार लेना पड़ा जिनकी ऐतिहासिकता स्पष्ट नहीं है। मालदेव-शेरशाह युद्ध सम्बन्धी विवरण में उसने लिखा कि 'राव जी कहे छै अजमेर आया।'[1] इसी प्रकार मोटा राजा उदयसिंह के विवरण में लिखा कि 'मोटा राजा नु राव मालदे रै मरण फलोधी भाली सरूपदे दिराय, पछै चन्द्रसेन नु जोधपुर रो टीको हुआ। फलोधी रहा री बात कोई कहै छै कोई गांपाणी रो हासल लीयो।'[2] 'एक बात यु सुणी है—संवत १६३७ तथा १६३६ रा० सुरताण जेमलोत नु कोई दिन सोजत पातसाही री दीयी जागीर मांह पायी छै।'[3]

विभिन्न परगनों में कुल राजस्व आदि के उल्लेख उसने सरकारीय कागज-पत्रों के आधार पर किये थे और परगनों के गांवों की रेख और १७१५ वि० से १७१६ वि० तक के वार्षिक आय के आँकड़े व यहाँ के गाँवों का विवरण उसने सब परगनों के कानूनगो से प्राप्त किये थे। जोधपुर में लगने वाली हाटों के वर्णन भी लिखके-लिखाके द्वारा लिखवाकर एकत्र किये और सब ही उसने उन्हें प्रस्तुत किया था, इसका भी उसने यथास्थान उल्लेख किया है। इसी प्रकार सब परगनों की कुल जातियों आदि का वर्णन करते हुए भी उनके आधार दिये हैं।

विगत० का महत्त्व न केवल मारवाड़ के इतिहास के लिए ही है बल्कि राजस्थान और तत्कालीन भारतीय इतिहास के लिए भी इसका प्रामाणिक महत्त्व है। मारवाड़ के ही नहीं मुगलों के राजनैतिक व सामाजिक इतिहास के लिए इसका आधार-सामग्री के रूप में उपयोग किया जा सकता है। मध्यकालीन मारवाड़ के राजनैतिक इतिहास के लिए (राव जोधा से जसवन्तसिंह तक) भी आधार-सामग्री के रूप में इसका प्रामाणिक महत्त्व है।[4] तत्कालीन मारवाड़ के धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक इतिहास के लिए यह ग्रन्थ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, जिसकी विशद व्याख्या आगे अध्याय १० और ११ में की गयी है।

विगत० में गाँवों का वर्णन में भी अनेक महत्त्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया गया है। कभी किसी गाँव में किसी समय विशेष प्रयोजन से कोई शासक रहा था, उसका भी उल्लेख मिलता है, साथ ही गाँव की यदि कोई विशिष्ट उपलब्धि है तो उसका विवरण भी इसमें मिलता है। विभिन्न परगनों, अथवा उनके अन्तर्ग-

---

१ विगत०, १, पृ० ५६ (ऐसा कहा जाता है कि रावजी अजमेर आया।)

२ विगत०, १, पृ० ८३ (राव मालदेव के मरणोपरान्त झाली स्वरूपदे के समर्थन से मोटा राजा का फलोधी पर अधिकार हुआ, तदनन्तर ही राव चन्द्रसेन जोधपुर की गद्दी पर बैठा। *कुछ लोग कहते हैं कि फलोधी निवास काल के समय मोटा राजा गांपाणी का* लगान वसूल किया था।)

३ विगत०, १ पृ० ६६ (एक बात ऐसी सुनी है—सम्वत् १६३७ अथवा १६३६ वि० किसी दिन बादशाह ने रा० सूरताण जैमलोत को सोजत जागीर में दी थी।)

४ अध्याय ६ में विशद विवरण दिया गया है।

अलग उपविभाग, तफो की तब भौगोलिक सीमाएँ क्या थी इसका विवरण विगत० के अतिरिक्त अन्य किसी समकालीन ग्रन्थ मे प्राप्त नही है। यो तत्कालीन मारवाड के राजनैतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक इतिहास के लिए इस ग्रन्थ का उपयोग प्राथमिक आधार-ग्रन्थ के रूप मे किया जा सकता है।

अध्याय : ५

मुहणोत नैणसी री ख्यात

१. ख्यात की सम्भावित परियोजना और उसका प्रस्तावित लक्ष्य

मुहणोत नैणसी की ख्यात० और विगत० के सांगोपांग अध्ययन के बाद ख्यात की सम्भावित परियोजना के बारे मे कुछ निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है। नैणसी ने लगभग ३३ वर्ष[1] की अवस्था मे ही यह परियोजना बनायी होगी कि वह सभी राजपूत राज्यो का विस्तृत प्रामाणिक इतिहास लिखे। अत अपनी इस परियोजना के ही अनुसार उसने लगभग १६४३ ई० से ही ऐतिहासिक सामग्री का सकलन प्रारम्भ कर दिया था। महाराजा जसवन्तसिंह के आदेशानुसार वह मारवाड मे ही यत्र-तत्र सेवारत रहा। कोई १५ वर्ष बाद मई, १६५८ ई० मे वह मारवाड का देश-दीवान बन गया। विभिन्न परगनो का हाकिम रहते हुए भी उसे सूझा होगा, परन्तु अब समूचे देश का शासन-भार पाने के बाद तो विशेष रूप से उसका ध्यान सर्वप्रथम मारवाड के सभी परगनो का इतिहास लिखने और उनके सम्बन्ध मे बहुविध अत्यावश्यक शासकीय राजस्व आदि सम्बन्धी जानकारी एकत्र करने की ओर गया होगा। अतः मारवाड के इतिहास की सामग्री के सकलन और लेखन की ओर अधिक ध्यान दिया।[2]

परन्तु इस समयान्तर मे भी उसने अपनी उक्त ख्यात सम्बन्धी परियोजना मे कोई ढील नही दी। उसने 'मारवाड रा परगना री विगत' की आधार-सामग्री के सकलन और लेखन के साथ साथ ख्यात की भी सामग्री के सकलन का काम पूर्ववत् जारी रखा और वह अपने उस लक्ष्य को भी पूरा करने मे लगा रहा। जून,

---

१ मुहणोत नैणसी का जन्म १६१० ई० मे हुआ था और १६४३ ई० से ख्यात विषयक सामग्री के सग्रह का प्रथम उल्लेख मिलता है। देखिये अध्याय २, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६।

२ देखिये अध्याय ४, पृ० ८४-८९।

१६६६ ई० तक ख्यात सम्बन्धी सामग्री के सकलन और उसके लेखन का उल्लेख मिलता है।[1] दिसम्बर २४, १६६६ ई० मे नैणसी को पदच्युत कर दिया गया था[2] और नवम्बर २६, १६६७ ई० को उसे बन्दी बना लिया गया था।[3] अतः १६६६ ई० से ही ख्यात का सकलन और लेखन कार्य एकाएक रुक गया और यह कार्य अपूर्ण ही रह गया।

२ उल्लिखित तथा अनिर्दिष्ट आधार-स्रोत

मुहणोत नैणसी ने अपनी सुविख्यात ख्यात को लिखते समय यथासम्भव सब ही विभिन्न प्रकार के आवश्यक उपयोगी आधार-स्रोतो का उपयोग किया है जिनमे से अधिकाश आधार-स्रोत का उसने यथास्थान स्पष्ट उल्लेख भी कर दिया है। विभिन्न राजपूत राजवशो की उत्पत्ति तथा प्राचीन जानकारी के लिए उसने कई प्राचीन ग्रन्थो का अध्ययन किया और उनके आधार पर तत्सम्बन्धी विवरण दिया है। उसने जैसलमेर के भाटियों की उत्पत्ति का विवरण हरिवशपुराण और यादवो के वश का विवरण श्रीमद्भागवत के आधार पर दिया है। उसने स्वय ने उल्लेख किया है 'भाटियाँ री सोमवसी हरिवस पुराण माहे इणा री उत्पत कही',[4] तथा 'ॐ सोमवसी, एकादसमे तीसमे अध्याय मे जादव स्थल मे इतरा जादवा रा वश कह्या'।[5] इसके अतिरिक्त उसने अनेको उपयोगी काव्य-ग्रन्थो का भी अध्ययन किया था। बुन्देलों के विवरण मे उसने लिखा कि 'कवि प्रिया ग्रन्थ केसोदास रो कियो— तिण माँहि बुन्देला रे वश री इण भाँत वात कही छै'।[6] साथ ही नैणसी ने विभिन्न शासको से सम्बन्धित गीत, दोहे, छन्द और कवित्त आदि काव्य का भी सग्रह कर उन्हे सम्बन्धित शासको के विवरण में लिख दिया है। उदाहरणार्थ—'कवित्त रावल बापा रो'[7], 'रावल खुमाण बापा रो तिण रो कवित्त'[8], 'कवित्त रावल आलू मेहदारा रो'[9], 'रावल बैरड रो कवित्त'[10], 'दूहो राणा नाग-

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६५।

२ देखिये अध्याय २।

३ देखिये अध्याय २।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १५।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३। श्रीमद्भागवत०, ११ स्कद, ३० अध्याय, श्लोक १८।

६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२८ (केशवदास रचित कवि प्रिया में बुन्देलो के वश की बात इस तरह कही है।)

७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३।

८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ४।

९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४-५।

१० ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५-६।

राल रो"[1], 'गीत दहिया हमीर रो"[2], 'कवित्त छप्पय सीरोही रा टीकायतां रा परयावली रो आसियो मालो कहै"[3], 'कवित्त राव रायसिंघ सीरोहिया रा 'आसियो करमसी खीवसरोत कहै"[4], 'कवित्त सिधराव जैसिंघ दे रा देहुरा रा लल्ल भाट रा कह्या"[5] आदि।

चारण ही उस समय के अधिकांश सुप्रसिद्ध साहित्यकार और कवि थे और वे राजाओं के आश्रय में रहकर जीवन-यापन करते थे। शासक वे गुणग्राहक भी होते थे और अपना अधिकांश समय वे अपने आश्रयदाताओं की ही सेवा में बिताते थे और उन सम्बद्ध घरानों के बारे में जानने को समुत्सुक रहते थे। अपने ऐसे निकटस्थ सम्पर्क के कारण भी उनको विभिन्न राजवंशों की जानकारी रहती थी। इसलिए नैणसी ने भी इन चारणों से ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त कर उसे ख्यात में लिपिबद्ध किया। नैणसी ने जिन-जिन चारणों से जो जानकारी प्राप्त की उसका उल्लेख किया है। कब यह जानकारी प्राप्त की गयी थी, यह भी उसने यथासम्भव लिख दी है। कुछ ऐसे विशिष्ट उल्लेख हैं—'सीसोदिया री विरद 'आहूठमो नरस' कहावे छैं। तिण रो भेद आढै महेश समत १७०६ मे कह्यो"[6], 'खिडीय खीवराज बात कही"[7], 'खिडीये खीवराज कह्यो—'चीतोड़ तूटी पहली वरस ५ तथा १० उदैपुर राणे उदैसिंघ वसायो"[8], 'वात चारण आसीये गिरधर कही समत १७१६ रा भादवा सुदी ६ नै"[9], 'वात पठाण हाजीया राणे उदैसिंघ वेढ हरमाडै हुई, तिण री धधवाडिये खीवराज लिख मेली समत १७१४ रा वेसाख माहे"[10], सीसोदिया चूडावत री साख समत १७२२ पोह बदी ५ खिडीये खीवराज लिखाई"[11], 'आ वात चारण भूलै रुद्रदास भाण रै साइया भूला रै रै पालरै कही समत १७१६ रा चेत माहे मुहता नैणसी आगै जेतारण मे"[12], 'पीढी सीरोही रा धणिया री समत

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२५।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८४।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १६१।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २७७।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ८।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० २०।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४८ (खडिया खीवराज ने कहा कि चित्तौड़ टूटने (अकबर का आधिपत्य) से ५ या १० वर्ष पहिले ही राजा उदयसिंह ने उदयपुर बसाया था।)
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४६।
१० ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६०।
११ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० ६६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८८।

१७२१ रा माह् माहे आढ़ै महेसदास लिख मेली"[1], 'भाटीया री पीढी चारण रतनू गावलै इण भांत मडाई"[2], 'समत १७०६ रै फागुण सुदी १५ आढा महेसदास किसनावत कही"[3], 'भाटिया माहे एक साख मगरिया छै। पैहली तो सुणियो थो, अै मगलराव रा पोतरा छै। पछै गोकल रतनू कहयो"[4], 'वात एक जीवै रतनू धरमदासाणी कही"[5], 'मेवाड रा झाला री पीढी आढै महेसदास लिख मेली समत १७२२ रा आसाढ सुद ७[6]। इसके अतिरिक्त नैणसी ने कुछ प्रमुख राजपूत खापों के भाटों से भी सम्बन्ध स्थापित कर उन भाटों से भी जानकारी प्राप्त की थी। 'साख इत्ती पड़िहारा मिलै, भाट सगार नीलिया रै लिखाई"[7], 'पीढी कछवाहा री, भाट राजपाण उदैही रै मडाई तिण री नक्ल छै[8]।

नैणसी ने अपने भाई मुहणोत नरसिंहदास और मुहणोत सुन्दरदास को भी इतिहास विषयक सामग्री एकत्रित कर उसके पास भेजने के निर्देश दे रखे थे। अत. 'समत १७०७ रै वरस मुहतो नरसिंघदास जैमलोत डूगरपुर गयो थो। तरे रावल पूजा रो करायोडो देहरो छै। तिण रै थाभे रावल पूजै आप री पीढी मडाई छै। तठा थो लिख ल्यायो"[9], 'प्र० सीरोही री फिरसत मु० सुन्दरदास जालोर थका इण भांत लिख मेली हुती"[10]।

जब कभी नैणसी किसी राज्य के प्रमुख व्यक्ति से मिला तो उसने उनसे भी जानकारी प्राप्त की और उसे ख्यात मे सगृहीत किया। साथ ही कब किस व्यक्ति से क्या जानकारी प्राप्त की उसका भी उसने स्पष्ट उल्लेख कर दिया है—'समत १७२१ रा जेठ माँहे रा० रामचन्द जगनाथोत मडाई"[11], 'बुन्देला सुभकरण रै

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३५।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १५।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३१ (भाटियों की एक शाखा मांगरिया है। पहिले तो सुना था कि ये मगलराव के वशज हैं। बाद में गोकल रतनू ने कहा।)
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २५३।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६५।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८६।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २८७ (उदेही के भाट राजपाण ने कछवाहों की पीढी लिखवाई उसकी प्रतिलिपि है।)
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७७ (सम्वत् १७०७ वि० में मुहता नरसिंहदास जैमलोत डूगरपुर गया था। वहाँ रावल पूजा द्वारा बनवाया हुआ मंदिर है, उसके स्तम्भ पर रावल पूजा ने अपनी वशावली लिखाई है, वहाँ से वह लिख लाया।)
१० ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १७३।
११ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११३।

चाकर चत्रसेन मडाया समत १७१०"[1], 'समत १७१७ रा भाद्रवा रै मास माहे मु० नैणसी गुजरात श्री जी री हजुर गयो। आसोज माहे पाछो आयो, तरै देवडा अमरा चन्दावत रो प्रधान वाघेलो रामसिंघ नू अमरै नैणसी कनै मेलियो हुतो। ओ जालोर आयो तरै सीरोही री हकीकत पूछी, उण कही"[2], 'अथ जैसलमेर रै देस री हकीकत वीठलदास लिखाई'[3], 'जैसलमेर रा देस री हकीकत मुा लखै मडाई, समत १७०० रा माह वदी ६ मुकाम मेडतै"[4]। इसके अतिरिक्त नैणसी जिन-जिन स्थानो पर गया, उन स्थानो की जानकारी उसने स्वय ही प्राप्त कर तब उसे लिख लिया, जिसका कि उल्लेख सम्वत्, माह, मिति के साथ उसने किया है। उसने सिद्धपुर के वर्णन के पूर्व लिखा कि 'समत १७१७ रा भादवा माहे मु० नैणसी नू हजूर बुलायो, तरै भादवा वदि ७ मु० नैणसी रो सिधपुर डेरो हुवो। सु सिधपुर भलो सहर छै'[5]। इसी प्रकार उसने अन्यत्र लिखा है 'परवतसर माहे लिखी समत १७२२ आसोज माह"[6]।

मुहणोत नैणसी ने जिस राजवश अथवा शाखा या व्यक्ति विशेष के बारे मे जिस किसी से जानकारी प्राप्त की थी उसे भी उसने ख्यात मे यथावत् उल्लिखित कर दिया है। परन्तु इसके अतिरिक्त अन्य विवरण किस आधार पर उसने दिया इसका कोई उल्लेख नही किया है। उसने अनेक शासको तथा व्यक्तियो का विवरण तब प्रचलित कथाओ के आधार पर दिया, उसका भी स्पष्ट सकेत नैणसी ने स्वय कर दिया है—'आदि सीसोदिया गैहलोत कहिजै। एक वात यूं सुणी'[7], 'एक वात यूं सुणी छै'[8], 'वात एक राणो उदैसिंघ उदैपुर वसाइया री'[9], 'वात पहली यूं सुणी थी। समत १६२४ चीतोड तूटी। तठा पछै राणै उदैसिंघ आय

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२७।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० १७२ (मुहणोत नैणसी स० १७१७ वि० के भाद्रपद माह में गुजरात में श्री जो (जसवन्तसिंह) के पास गया था। माह आश्विन मे वह पुन जालोर आया। तब देवडा अमरा चन्दावत ने अपने प्रधान बाघेला रामसिंह को नैणसी के पास भेजा। वह जालोर में नैणसी से मिला तब नैणसी ने उससे सीरोही की हकीकत पूछी और उसने कही।)
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २७६।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२२।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १ (आदि सीसोदिया गहलोत कहे जाते हैं। एक बात ऐसी सुनी।)
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ८ (एक बात ऐसी सुनी है।)
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३२ (बात एक राणा उदयसिंह द्वारा उदयपुर बसाने की।)

उदैपुर बसायो[1], एक वात सुणी हुती[2], 'एक वात यूं सुणी'[3], 'एक वात यूं पण सुणी छै'[4]। यदि किसी के बारे मे विभिन्न मत रखने वाली एक से अधिक बातें प्रचलित थीं तो उसे भी नैणसी ने लिख लिया है।—'वात एक जीवें रतनू घरमदासाणी कही नै पहला सुणी थी तिका तो लिखी हीज हुती। बात जाडेचा साहिब नै भालार रायसिंघ री फेर लिखी'[5]।

मुहणोत नैणसी ने ख्यात का विवरण लिखने के लिए विभिन्न ग्रन्थो का अध्ययन किया था। उसमे से कुछ का तो उल्लेख कर दिया, परन्तु कुछ के नाम नही लिखे हैं, यथा—'एकण ठौड पीढियाँ यूं पिण माडी छैं।'[6]

इनके अतिरिक्त मुहणोत नैणसी की ख्यात के अधिकाश ऐतिहासिक और भौगोलिक विवरण मे नैणसी ने किसी भी आधार-स्रोत का उल्लेख नही किया है जिस कारण उसके अनिर्दिष्ट आधार स्रोतों के बारे में कोई निश्चित मत प्रकट नही किया जा सकता है। परन्तु सम्भवत भौगोलिक विवरण उसने स्वय की जानकारी के आधार पर अथवा किन्ही व्यक्ति विशेषो से जानकारी प्राप्त कर अथवा तत्सम्बन्धी सर्वत्र मान्यताओ के आधार पर लिखा होगा। इसी प्रकार सत्रहवी सदी का अर्थात् उसके समकालीन विभिन्न राज्यो तथा प्रमुख व्यक्तियो की घटनाओं का विवरण भी उसने व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर लिखा होगा। जागीरदारों के जागीर गाँव, पट्टे तथा उनकी विशिष्ट घटनाओं के उल्लेखो के सम्बन्ध में भी यही सुस्पष्ट सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि जोधपुर शासकों के आधीन जागीरदारो का विवरण शासकीय दस्तावेज के आधार पर ही लिखा होगा। वह स्वय तब देश-दीवान के पद पर था, अत सारे राजकीय पुरालेख सीधे उसी के नियन्त्रण मे होने के कारण उसे सहज सुलभ थे।

३ सकलन अथवा रचना का काल

मुहणोत नैणसी ने ख्यात का सकलन और लेखन कब से प्रारम्भ किया इस सम्बन्ध मे प्राप्त प्रमाणो के आधार पर निर्विवाद रूप से कुछ भी कह पाना सम्भव नही है। ख्यात मे सुलभ जानकारी अथवा उल्लेखो के आधार पर इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि नैणसी ने ३३ वर्ष की अवस्था मे तथा १६४३ ई०

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४८।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५१ (एक बात सुनी थी।)
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६८ (एक बात ऐसी सुनी।)
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६६ (एक बात ऐसी भी सुनी है।)
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २५३।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३०।

से ख्यात का योजनाबद्ध लेखन और सकलन कार्य प्रारम्भ कर दिया था।[1] इसके बाद १६५० ई०, १६५१ ई०, १६५३-५४ ई०, १६५८ ई०, १६६० ई०, १६६२ ई०, १६६३ ई०, १६६५ ई० और जून १६६६ ई० तक ख्यात सम्बन्धी सामग्री के सकलन विषयक उल्लेख ख्यात मे मिलते हैं।[2] अत यह निर्विवाद कहा जा सकता है कि १६४३ से १६६६ ई० तक तो अवश्य ही निरन्तर २३ वर्ष तक मुहणोत नैणसी ख्यात का सकलन और लेखन कार्य करता रहा था। परन्तु तब ही एकाएक महाराजा जसवन्तसिंह द्वारा उसे पदच्युत कर बन्दी बना लिये जाने के कारण सकलन और लेखन कार्य सम्बन्धी उसका यह समूचा काम एकाएक बन्द हो गया और यह महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सग्रह ग्रन्थ अपूर्ण ही रह गया।

४ ख्यात का अपूर्ण और अव्यवस्थित स्वरूप . उसकी लेखन-प्रक्रिया का आकस्मिक अन्त

मुहणोत नैणसी की ख्यात की मूल प्रति अथवा उसकी ही प्रामाणिक प्रतिलिपियाँ तो वर्तमान मे कही भी उपलब्ध नहीं हैं। इस कारण उसके तत्कालीन वास्तविक मूल स्वरूप के बारे मे निश्चित रूप से कुछ भी कह सकना कठिन ही है। वर्तमान मे नैणसी की समूची ख्यात की सबस प्राचीन प्रति अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर, मे सगृहीत है (अनुक्रमाक २०२), जो वि० स० १८६६ (१८४३ ई०) मे लिखकर पूरी हुई थी। समूची ख्यात की ऐसी सब अन्य प्राप्य प्रतियाँ इसी की प्रतिलिपियाँ हैं। इसी प्रति म नैणसी स्वय का एक उल्लेख मिलता है कि "एक बात तो ऊपर के पत्र ४६७ मे लिखी है और एक बात पोकरणा ब्राह्मण कवीश्वर जसवन्त के भाई जोशी मनोहरदास ने इस प्रकार लिखायी है।"[3] उक्त उल्लेख स यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान मे उपलब्ध समूची ख्यात की पूरी प्रति का प्रारम्भ सीसोदियो की जिस ख्यात से होता है, नैणसी द्वारा तैयार की गयी ख्यात की मूल प्रति म वही विवरण पत्र सख्या ४६७ पर था। इससे यह सम्भावना लगती है कि ख्यात की जिन तब प्राप्य प्रति या प्रतियो से अब मान्य मूल प्रति तैयार की गयी उसमे विभिन्न विवरणो का क्रम आदि सर्वथा भिन्न ही थे। नैणसी को समय-समय पर राजवशों के जो विभिन्न विवरण प्राप्त हुए उन्हे तब वह क्रमश लेखबद्ध करता गया होगा। सामग्री-सकलन का कार्य पूरा होने के बाद ही उस सबको पूरी तरह सुव्यवस्थित करने

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ६।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १५, १, पृ० ८, ७७ १२७, ६० १७२, २७६, ४६, ८८, ११३, १२२, १३५, ३, पृ० २६५।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६।

की नैणसी की योजना रही होगी, परन्तु उसे हाथ मे लेने से पहले ही बन्दी बना लिया गया था। अत. उसे वह व्यवस्थित नही कर पाया था।

बाद के प्रतिलिपिकर्ता ने प्रत्येक राजवश की सामग्री को एक ही स्थान पर सगृहीत कर उसे कुछ व्यवस्थित रुप देने का प्रयत्न किया होगा। परन्तु वर्तमान मे ख्यात की सन् १८४३ ई० की वीठू पना द्वारा बीकानेर मे लिखित जो सबसे पुरानी समग्र प्रति उपलब्ध है वह भी पूर्णतया व्यवस्थित नही है, उदाहरणार्थ—सीसोदियो के विवरण मे प्रारम्भ मे बापा रावल स राणा राजसिंह तक की पीढ़ियाँ आदि दी हैं। तदनन्तर पुन· रावल बापा का विवरण दिया है।[1] इसके बाद बापा के पूर्व की पीढियाँ, सीसोदिया नागदा कहलाने का कारण, बापा का हारीत ऋषि की सेवा और चित्तौड पर अधिकार, बापा रावल से करण तक की पीढ़ियाँ, रावल और राणा कहलाने सम्बन्धी विवरण, रावल रत्नसिंह, राणा राहप से राणा राजसिंह तक की वशावली और सक्षिप्त विवरण, मेवाड का भौगोलिक विवरण, राणा प्रताप और कुँवर मानसिंह, मेवाड के पहाड, नदियाँ, उदयपुर बसाया जाने सम्बन्धी,[2] कुँवर मानसिंह कछवाहा और प्रताप,[3] राणा अमरसिंह और शाहजादा खुर्रम,[4] बहादुरशाह का चित्तौड पर आक्रमण,[5] राणा कुम्भा,[6] राणा राजसिंह,[7] राणा कुम्भा द्वारा राघवदे को मारना,[8] राणा रायमल के पुत्र पृथ्वीराज सम्बन्धी विवरण,[9] महाराणा अमरसिंह,[10] राणा खेता,[11] राणा उदयसिंह,[12] राणा अमरसिंह,[13] चूण्डावतो की शाखाओ का विवरण।[14] इस प्रकार उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि नैणसी की ख्यात की यो संशोधित क्रम मे नकल की गयी वीठू पना की उस प्रति मे भी सही क्रम का पूर्ण निर्वाह नही हुआ है। एक शासक का विवरण भी एक स्थान पर सगृहीत नही है साथ ही उस

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १७।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३२, ४८।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४८।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४८-४९।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४९-५१।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५१।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५२-५३।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५३ ५४।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५५-५६।
१० ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५६ ५९।
११ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५९ ६०।
१२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६०-६२।
१३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६२-६५।
१४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६६-७०।

उसी की प्रतिलिपियाँ मिलती हैं ।[1]

नैणसी की समूची ख्यात की वीठू पना की लिखी जो वर्तमान प्राचीनतम प्रति उपलब्ध है और जो आज के तत्सम्बन्धी प्रकाशनो का मूल आधार बन गयी है उसमे कुछेक स्थलों पर सन् १६६६ ई० के बाद के शासको, सरदारो आदि से सम्बन्धित उल्लेख या सूचियाँ मिलती हैं। स्पष्टतया यह सब जानकारी वीठू पना न स्वय या अपने सहयोगी द्वारा एकत्रित करवाकर नैणसी की मूल ख्यात मे यत्र-तत्र यथास्थान जोड दी है। ख्यात० मे यह स्पष्ट लिखा है 'महाराजा श्री अनूपसिहजी कस्य वशावली' 'महाराजा श्री सूरतसिह जी परत लिखाई' है।[2] अत सन् १८८२ ई० के पूर्व तैयार की गयी इस वशावली को भी यह ख्यात लिखते समय वीठू पना ने सर्वद्धित कर दिया था। इसी प्रकार वीठू पना ने यत्र-तत्र राजाओ आदि की सूचियो मे कई नाम जोडे हैं।[3] सम्भवत जोधपुर और किशनगढ के राजाओ की ख्यात विगत तथा जोधपुर और बीकानेर के सरदारो की समूची सूचियाँ भी उसी समय इस ख्यात० मे जोडी गयी थी।[4] अत नैणसी की इस ख्यात का मूल रूप निर्धारित करते समय ये सारे अश जोड दिये जाने चाहिए।

मुहणोत नैणसी की ख्यात का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने का श्रेय रामनारायण दूगड को है। रामनारायण दूगड ने सम्पूर्ण ख्यात को पूरी तरह सुव्यवस्थित कर उसका हिन्दी अनुवाद किया और नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ने इस अनुवाद को दो भागो मे प्रकाशित किया।

---

१ दूगड०, १, पृ० ९१० ।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १७७ ८० (समूचा विवरण बाद में जोडा गया।)

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७९ क्र० स० १७० से १७३ तक, पृ० ८७ पर क्र० स० ७ स ९ तक, २, पृ० १०९ मे क्र० स० ६ से पृ० ११० मे प० १६ तक, ३ पृ० ३२ का सम्पूर्ण विवरण, पृ० ३६-३७ म क्र० स० २८ और जैसलमेर के सरदारो की पीढियो मे नैणसी के बाद के सरदारो के नाम। मुगल चक्ता भाटियो की सूची नैणसी स्वय ने लिखी थी अथवा बाद मे जोडी गयी निश्चित रूप से नही कहा जा सकता। पृ० १८१ मे प० ११ से अतिम तक, पृ० २०८ पर महाराजा करणसिह, अनोपसिह और आनन्दसिह के पुत्रों के नाम, पृ० २०९ पर महाराजा अनोपसिह की सतियो तथा पृ० २१०-१२ पर महाराजा करणसिह, सुजाणसिह, जोरावरसिह की सतियों के नाम भी बाद में जोडे गये हैं।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २१३-१७ तक तथा पृ० २२३-३७ तक। इसके अतिरिक्त पृ० २३८ पर 'विगत' सूची मे 'वरस ४८ पातसाही कीवी' 'समत १७३२ फोत हुवो' भी बाद में जोडा गया है।

६. प्राप्य प्रतिलिपियाँ तथा प्रकाशित सस्करण

आज इतिहास जगत मे बहुचर्चित और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मुहणोत नैणसी की ख्यात का राजस्थान के सुविख्यात आदि इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड को पता भी नही था। यह वस्तुतः आश्चर्य की बात है कि टॉड के समकालीन मारवाड के सर्वमान्य सुविख्यात इतिहासविज्ञ कविराज बांकीदास के बहुविध ऐतिहासिक जानकारी सग्रह 'बाकीदास री ख्यात' मे भी न तो नैणसी के इतिहास ज्ञान सम्बन्धी कोई सकेत है और न उसकी ख्यात आदि ऐतिहासिक रचनाओ का कही कोई सकेत है। स्पष्टतया यह जान पडता है कि महाराजा जसवन्तसिंह द्वारा पदच्युत कर उसको कैद किये जाने तथा मारवाड राज्य द्वारा लाछित और उस पर भी आत्मघाती मुहणोत नैणसी को तब कौन याद करता ? नागोर म नी नैणसी के कुटुम्बियो और वशजो पर जो बीती वह इतिहास बन चुका है।

परन्तु ऐसे इतिहास पुरुष नैणसी तथा साथ ही उसकी अति महत्त्वपूर्ण परन्तु बिना सँवारी-सजाई इस ऐतिहासिक 'ख्यात' का मारवाड न तदनन्तर पूर्णतया भुला दिया। मारवाड मे पुन नैणसी तथा 'नैणसी री ख्यात' की चर्चा नैणसी की मृत्यु क कोई सवा दो सौ वर्ष बाद ही जोधपुर मे तब प्रारम्भ हुई जब जोधपुर राज्य के पदमुक्त रेसीडेण्ट कर्नल पी० डब्ल्यू० पाउलट ने बीकानेर राज्य क हस्तलिखित ग्रथागार मे सुलभ बीठू पना की तैयार की गयी 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' की अपनी प्रतिलिपि कविराजा मुरारदान को सन् १८९२ ई० मे दी थी।[१] कविराजा के वशज से जब सारा 'कविराजा-सग्रह' दिसम्बर, १९७६ ई० म 'श्री नटनागर शोध सस्थान' ने क्रय कर लिया तब साथ ही यह प्रति भी सस्थान को उपलब्ध हो गयी थी।

अब तक प्राप्य जानकारी के अनुसार नैणसी की ख्यात की कुछ वातो का सग्रह[२] बीकानेर महाराजा गजसिंह के आदेश पर 'फुटकर वाता रो सग्रह' तैयार किया गया था, यह ग्रथ वि० स० १८२० (१७६३ ई०) मे तैयार किया गया था।[३] यह ग्रन्थ अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर मे सुरक्षित है। अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर मे ही दो और ग्रन्थ 'फुटकर वाता' क्रमश १८४७ वि०[४] और

---

१ डूगड०, १, भूमिका, पृ० ८ ९, राजपूताना गजेटियर (१९०८), भाग ३ व पृ० ३।

२ तैस्सितोरी बीकानेर०, भाग २, ग्रथ स० २२, पृ० ७१ ८८ मुहणोत नैणसी जी री ख्यात रो अेक भाग, प० १०१ म ११३ व मुहणोत नैणसी जी री ख्यात रो अेक भाग प० १४३ व १५२ व मुहणोत नैणसी जी री ख्यात रो अेक भाग, प० ३०७ म ३११ क, और मुहणोत नैणसी जी री ख्यात रो अेक भाग प० ३४३ व ३५० म तक।

३ तैस्सीतोरी बीकानेर०, भाग २, ग्रथ स० २२ पृ० ७१, अनूप०, अनुक्रमांक २१०, विषयाक १०, पृ० ९६।

४ तैस्सीतोरी बीकानेर०, भाग २, ग्रन्थ स० १८, पृ० ५६, अनूप०, अनुक्रमाक २०७, विषयाक ३, पृ० ९०।

वि० सं० १८४५ तथा १८६२[1] (नैणसी की ख्यात का विवरण १८६२ मे प्रतिलिपि किया गया) तैयार किये गये थे। इन ग्रन्थो मे भी नैणसी की ख्यात मे वर्णित कुछ बातो का सग्रह प्रतिलिपि किया गया था।

जैसा कि पहिले ही लिखा गया है मुहणोत नैणसी की पूरी ख्यात की प्राचीनतम प्रति बीकानेर राजघराने के आधीन उसके निजी ग्रन्थागार अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर मे उपलब्ध है। उक्त प्रति बीकानेर महाराजा रतनसिंह के अनुज लक्ष्मणसिंह ने बीठू पना से लिखवाई थी। इस प्रति की पुष्पिका मे लिखा है—'समत १८६६ ॥ मिती ॥ माह बदि ॥८॥ सोमवासरे श्री श्री बीकानेर मध्ये माहाराजाधिराज माहाराजा शिरोमण' माहाराजा श्री श्री ॥१०८॥ श्री रतनसिंहजी अनुज श्री लक्ष्मणसिंहजी इद पुस्तक वार्ता लिखायितम् ॥ लिपतम् ॥ बीठू पनो वाचै सो सिरदार जे श्री ॥ रुघनाथजी री वचावज्यो ॥ शुभ भवतु ॥ कल्याणमस्तु ॥ श्र ॥ श्री गणेशायनमः ॥ श्री ॥

यो सोमवार, जनवरी २३, १८४३ ई० को इस प्रति का लिखा जाना सम्पूर्ण हुआ था। वर्तमान मे जो भी प्रतियाँ अन्यत्र पायी जाती हैं वे सब ही मूलत *अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर वाली इसी मूल प्रति की नकलें हैं।* 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' की एक प्रति उदयपुर राज्य मे भी पहुँची थी। वर्तमान उक्त ख्यात की एक प्रति प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, उदयपुर मे उपलब्ध है। आगे चलकर 'वीर-विनोद' लिखे जाते समय इसका समुचित उपयोग किया गया। यही नही, तदनन्तर ईसा की १९वी सदी के मध्य में जब सिंढायच दयालदास 'बीकानेर रै राठोडा री ख्यात' लिखने लगा तब उसने 'नैणसी री ख्यात' की इस प्रति का यथासम्भव लाभ उठाया था।[2] कर्नल पी० डब्ल्यू० पाउलेट से १८९२ ई० मे प्राप्त प्रतिलिपि की नकल करवाकर कविराजा मुरारदान ने गौरीशकर हीराचन्द ओझा को दी थी।[3] ओझा की प्रति की उसके तीन-चार मित्रो ने भी उसकी प्रतिलिपियाँ करवायी थी, परन्तु ओझा ने नाम सिर्फ एक रामनारायण दूगड का ही दिया है।[4] ओझा का यह कथन कि 'नैणसी की सम्पूर्ण ख्यात को प्रसिद्धि मे लाने का यश उक्त कविराजाजी मुरारदान को ही है' सर्वथा सत्य है, परन्तु इस प्रचार मे ओझा ने स्वय भी पूरा-पूरा योगदान दिया था।

---

१. तैस्सीतोरी बीकानेर०, भाग २, ग्रन्थ स० १८, पृ० ४५, अनूप०, अनुक्रमाक २०६, विषयाक २, पृ० ८६।
२. गजेटियर बीकानेर०, इन्ट्रोडक्शन, पृ० ii iii, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ४, भूमिका, पृ० ६, पा० टि० ६।
३ दूगड०, १, भूमिका, पृ० ८-९।
४. दूगड०, १, भूमिका, पृ० ९।

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर मे भी नैणसी की ख्यात की एक अपूर्ण प्रति 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' है। इसमें 'सीसोदिया री ख्यात' से 'कछवाहा री ख्यात' तक की प्रतिलिपि है।[1] यह भी उक्त लायब्रेरी के अनुक्रमाक २०२ की प्रतिलिपि जान पडती है। यद्यपि उसका इसमे लिपिकाल नही दिया है।

तैस्सीतोरी के अनुसार कविराजा गणेशदान के पास भी नैणसी की ख्यात की प्रतिलिपि थी। उक्त प्रतिलिपि स० १६२८ वि० (१८७१ ई०) मे पचोली गुमानमल ने की थी। उक्त प्रतिलिपि मे 'सीसोदिया री ख्यात' से 'कानडदे री वात' तक का विवरण है।[2] इसका क्रम भी अनूप० के अनुक्रमाक २०२ के समान ही है। इसी से अनुमान है कि यह प्रतिलिपि भी अनूप० अनुक्रमाक २०२ की ही प्रतिलिपि हो। परन्तु वर्तमान में उक्त प्रतिलिपि अनुपलब्ध है। गणेशदान के सग्रह की उक्त प्रति की प्रतिलिपि चारण वणसूर ने वि० स० १६४१ मे प्राप्त की थी।[3] इसी प्रकार चारण वणसूर महादान के पास 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' की पूर्ण प्रति थी, परन्तु उक्त प्रति मे अनूप० अनुक्रमाक २०२ की प्रति से क्रम मे कुछ भिन्नता है। अनूप० अनुक्रमाक २०२ की प्रति 'सीसोदिया री ख्यात' से प्रारम्भ होती है, जबकि उक्त प्रति का प्रारम्भ, 'भाटियां री ख्यात' से और अन्त मे 'सीसोदिया री ख्यात' का विवरण है।[4] परन्तु वणसूर महादान की उपर्युक्त दोनो ही प्रतियाँ अब उसके वशज के पास हैं या नही हैं इसकी जानकारी सुलभ नही है।

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, उदयपुर की प्रति की एक अपूर्ण प्रतिलिपि साहित्य सस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर मे उपलब्ध है। इसमे 'सीसोदिया री ख्यात' से 'बुदेला री ख्यात' तक का विवरण है।[5]

इसके अतिरिक्त स्व० प० विश्वेश्वरनाथ रेउ, स्व० प० रामकर्ण आसोपा और प्रो० नरोत्तमदास के पास भी नैणसी की ख्यात की प्रतियाँ थी। परन्तु उक्त सभी प्रतियाँ अनूप सस्कृत लायब्रेरी अनुक्रमाक २०२ प्रति की प्रतिलिपियाँ हैं।[6]

मुहणोत नैणसी की ख्यात के अब तक दो प्रकाशित सस्करण हैं। सर्वप्रथम मुहणोत नैणसी की ख्यात के सम्पादित हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ने दो भागो मे किया है।[7] प्रथम भाग का अनुवाद

---

१ अनूप०, अनुक्रमाक २०३, विषयाक २५, पृ० ८५।
२ तैस्सीतोरी जोधपुर०, भाग १, ग्रन्थ स० ६, पृ० २१-२६।
३ तैस्सीतोरी जोधपुर०, भाग १, ग्रन्थ स० ७, पृ० २६-२७।
४ तैस्सीतोरी जोधपुर, भाग १ ग्रन्थ स० १३, पृ० ५१-५२।
५ साहित्य सस्थान, ग्रन्थ स० २६, पृ० १२४।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ४, भूमिका, पृ० २२।
७ प्रथम भाग का १६८२ वि० और द्वितीय भाग का १६६१ वि० में प्रकाशन हुआ।

और सम्पादन रामनारायण दूगड ने किया था। दूसरे भाग का अनुवाद रामनारायण दूगड और सम्पादन गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने किया था।

मुहणोत नैणसी की ख्यात का प्रकाशन प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ने चार भागो[1] मे किया है। प्रथम, दूसरे और तीसरे भाग मे मूल ग्रन्थ तथा चौथा भाग अनुक्रमणिका है। इसका सम्पादन बदरीप्रसाद साकरिया ने किया है। उक्त सम्पादित ख्यात मे सम्पादक ने मूल ख्यात के क्रम मे कोई फेर-फार नही किया है। अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर अनुक्रमाक २०२ वीठू पना की लिखित प्रति के क्रम का पूरी तरह निर्वाह किया गया है। सम्पादक ने तो सिर्फ कठिन शब्दो के अर्थ और कही-कही पर पाद-टिप्पणियाँ अवश्य दी हैं।

---

१ प्रथम भाग का १९६० ई०, दूसरे भाग का १९६२ ई०, तीसरे भाग का १९६४ ई० और चौथे भाग का १९६७ ई० मे प्रकाशन हुआ।

अध्याय ६

नैणसी और मारवाड़ का इतिहास

नैणसी के दोनो ही ग्रथो 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' और 'मारवाड रा परगना री विगत' मे मारवाड का इतिहास मिलता है। ख्यात० मे राव सीहा से मालदेव तक की बातो का वर्णन मिलता है, जबकि विगत० मे प्रारम्भ से जसवतसिंह तक का क्रमबद्ध इतिहास दिया गया है। परन्तु नैणसी ने इन दो ग्रथो मे मारवाड का जो इतिहास दिया है वह एक ही काल सम्बन्धी होते हुए भी एक-दूसरे से बहुत कुछ भिन्न है क्योकि वे तत्कालीन इतिहास के दो विभिन्न पहलू प्रस्तुत करते हैं।

१ प्रत्येक ग्रथ मे मारवाड के इतिहास का अपना विशिष्ट विभिन्न पहलू

नैणसी का प्रथम ग्रथ 'मुहता (मुहणोत) नैणसी री ख्यात' है। जैसा कि पहले ही लिखा जा चुका है। इस मूल ख्यात० की जो समूची प्रतिलिपि आज प्राप्य तथा सर्वत्र प्रचलित रही है वह बीठू पना की लिखी है, सभवत. जिसने उसे थोडा-बहुत व्यवस्थित रूप देने का प्रयत्न किया था। परन्तु वह भी सही रूप मे पूर्णतया व्यवस्थित नही है। रामनारायण दूगड ने अवश्य ही उसके हिन्दी अनुवाद को यथासभव पूरी तरह से व्यवस्थित करने का भरसक प्रयत्न किया है, अत यह विवेचन रामनारायण दूगड द्वारा निर्धारित क्रमानुसार ही दिया जा रहा है। नैणसी ने ख्यात० मे राठोड वश की सुविख्यात १३ शाखो[१] उनके विभिन्न नामों और प्रसार का विवरण दिया है। राठोडो के इतिहास की पूर्वपीठिका के रूप मे कन्नोज के शासक राजा वर्दाईसेन के पुत्र और मारवाड के राठोडो के आदि पुरुप राव सीहा के पिता सेतराम के अफीम सेवन और वीरता से सबन्धित कथा दी गयी है।[२]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २१८ १९।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १९३-२०४।

तदनन्तर राव सीहा का कन्नौज से द्वारका की यात्रा, मार्ग मे पाटण म मूलराज सोलकी की सहायता करना और मूलराज की बहन से विवाह करने का उल्लेख है। सीहा की मृत्यु के बाद राव सीहा की चावडी रानी अपने तीनों पुत्रो को लेकर मायके चली गयी थी। वहाँ वह अधिक समय तक नहीं रही और उसके पुत्र पाली म आकर रहने लगे। यही रहते हुए उसके ज्येष्ठ पुत्र आस्थान ने खेड के गुहिल को मारकर खेड पर अधिकार कर मारवाड म राठोड राज्य की स्थापना की।[1] इन सब घटनाओं का वर्णन ख्यात० म वार्ता कथानक के ही रूप मे दिया गया है, जो स्पष्टतया दतकथाओं पर ही आधारित है।

ख्यात० मे राव धूहड, रायपाल, कान्हा और जालणसी नामोल्लेख हैं। राव टीडा का सोनगरों से युद्ध, उनकी सीसोदणी राणी को अपने अत पुर म डालने और उसी के पुत्र कान्हडदे का उत्तराधिकारी बनाने आदि का उल्लेख जो राव टीडा के बाद गद्दी पर बैठा था।[2] कान्हडदे ने सलखा को सलखावासी गाँव जागीर मे दिया था। नि सतान सलखा के पुत्र उत्पन्न होने के सम्बन्ध म ख्यात० म दो विभिन्न घटनाओ का उल्लेख है।[3]

यो सलखा के चार पुत्र माला (मल्लिनाथ) वीरम, जैतमाल और सोभत हुए थे। अवसर पाकर माला ने कान्हडदे मे राज्य का तीसरा हिस्सा किस प्रकार प्राप्त कर लिया था कुछ समय बाद कान्हडदे के पुत्र त्रिभुवासी की हत्या करवाकर कैसे महेवा पर भी अधिकार कर लिया इस बात का ख्यात० मे उल्लेख है। माला के अन्य भाई जागीर प्राप्त कर वहाँ ही रहने लगे। परन्तु माला के पुत्रो न वीरम को परेशान करना प्रारम्भ कर दिया था। अत वह जोइयों के वहाँ जाकर रहने लगा। माला के समय दिल्ली के बादशाह की महेवा पर चढ़ाई का भी ख्यात० मे वर्णन है। माला के बाद महेवा पर जगमाल गद्दी पर बैठा था। इस समय हेमा और कुभा के वैर भाव का वर्णन है।[4]

तदनन्तर ख्यात० म वीरमदेव सलखावत का सविस्तार विवरण दिया है।[5] दल्ला जोइया की सुरक्षा, महेवा छोड जैसलमेर और बाद म जोइयों के पास जाना, और अन्त म जोइयो से युद्ध कर मारे जाने आदि का उल्लेख है।

वीरमदेव की मृत्यु के बाद उसके पुत्र चूण्डा को लेकर उसकी माँ आल्हा चारण के पास गाँव कालाऊ पहुँची। नैणसी ने चूण्डा से सम्बन्धित चमत्कारिक घटना का उल्लेख किया है जिससे आल्हा प्रभावित हुआ और चूण्डा को मल्लि

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २, पृ० २६६ ७५ २७६ ७६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान) ३ पृ० २३ २४।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८० ८१ ३, २६ २७।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २ पृ० २८१ ६७।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० २६६ ३०३।

नाथ के पास ले गया। मल्लिनाथ की सेवा में रहते चूण्डा ने अपनी सैनिक शक्ति बढ़ा ली। उधर मण्डोवर पर अधिकार कर इंदों ने चूण्डा को वैसे वहाँ का शासक बनाया,[1] इन सभी बातों का वर्णन ख्यात० में है।

अपने सरदार तेजा और पिता वीरमदेव का बदला लेने के लिये राणा माणिकराव मोहिल और जोइया दला से गोगादेव वीरमदेवोत के युद्ध करने और अन्त में जोगी गोरखनाथ के साथ चले जाने का विवरण नैणसी ने दिया है।[2] इसी प्रकार अडकमल द्वारा राणगदे से बदला लेने का वर्णन है।[3]

चूण्डा की मृत्यु के बाद मण्डोवर का शासक उसका ज्येष्ठ पुत्र रिणमल राज्याधिकार से वंचित होकर मेवाड चला गया और बाद में राणा मोकल की सहायता से उसने मण्डोवर पर अधिकार कर लिया। आगे चलकर राणा मोकल के हत्यारे चाचा-मेरा को मारकर रिणमल ने कुंभा को गद्दी पर बैठाया। तब मेवाड राज्य म रिणमल का बढता हुआ प्रभाव देखकर राणा कुंभा ने रिणमल को मरवा दिया, परन्तु उसका पुत्र जोधा बचकर भाग निकला। नैणसी की ख्यात० में इन सब बातों का विवरण तीन अलग-अलग स्थानों पर कुछ भिन्नता लिये हुए मिलता है।[4]

नर्बद सत्तावत ने किस प्रकार अपनी पूर्व मगेतर सुपियारदे को प्राप्त किया इसका भी वर्णन ख्यात० म है।[5] ख्यात० म राव जोधा का सेना एकत्र कर राणा पर चढाई करना, दूदा को मेघा सिंधल के विरुद्ध भेजना आदि का विस्तार से वर्णन है।[6]

नैणसी न सीहा सिंधल और माण्डण कूपावत के मध्य झगडे का उल्लेख किया है।[7] माता के कहन पर नरा सूजावत के पोहकरण पर आक्रमण करने और अन्तत लूका द्वारा नरा क मारे जान आदि का विवरण ख्यात० में है।[8]

राव गागा—सूजा की मृत्यु के बाद सरदारों द्वारा वीरम को राज्य से वंचित कर गागा को गद्दी पर बैठाये जाने, वीरम को जागीर मे सोजत मिलने और राव गागा का वीरम स निरन्तर युद्ध करने आदि बातो का विवरण दिया है।[9] हरदास ऊहड राव गागा की सवा छोडकर, वीरम और शेखा के पास

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ३०६-१६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३१६ २३।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ३२४ २८।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३२९ ४२ ३, पृ० १२९-४०, १, पृ० १६ १७।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान) ३, पृ० १४१ ४८।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ५ १२ ३८ ४०।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३ पृ० १२३ २८।
तिष्ठान), ३ पृ० १०३ १४।
तिष्ठान), ३, पृ० ८० ८६, ८७ ९४।

जाना और गांगा से युद्ध करना आदि का विवरण दिया है।

राव मालदेव द्वारा वीरमदेव दूदावत को पराजित कर अजमेर पर अधिकार करना, तदनन्तर वीरमदेव का शेरशाह के पास जाकर उसे मालदेव के विरुद्ध चढ़ा लाना, युद्ध मैदान से मालदेव का भाग जाना आदि का विवरण ख्यात० मे है। आगे चलकर राव मालदेव और जयमल मेडतिया के मध्य हुए युद्ध का विवरण भी मिलता है।[1]

पाबू राठोड की चमत्कारिक बातो[2] और राजा बीसल और सगमराव राठोड के मध्य हुए झगडे[3] का विवरण दिया गया है। इसी प्रकार खेतसी और उसके बाद भटनेर पर जिस-जिस का अधिकार रहा उनका विवरण दिया गया है।[4] ख्यात० मे बीकानेर के भी प्रारभिक राजाओ का कुछ विवरण दिया है।[5]

ख्यात० म दी गयी मारवाड के इतिहास सम्बन्धी इन सारी बातों म नैणसी ने कही भी उनके कोई सवत्, तिथियाँ आदि नही दी हैं। न यह ऐतिहासिक विवरण पूर्णतया क्रमबद्ध है। इसम बीच-बीच मे कई एक घटनाएँ या शासको आदि के वृत्तान्त छूट गये हैं। ख्यात० का यह सारा विवरण मारवाड सम्बन्धी विभिन्न ऐतिहासिक कथाओ का सग्रह मात्र ही है, जिसे वास्तविक रूप से ऐतिहासिक वृतान्त नही कहा जा सकता है। ये ऐतिहासिक बातें तत्कालीन मारवाड के अनेको इतर प्रसगो पर कुछ प्रकाश डालती है, साथ ही मारवाड के तत्कालीन जीवन, तब के अन्ध विश्वासो, लोक-मान्यताओ और पारस्परिक आचार-विचार या नित्य-प्रति के जीवन सम्बन्धी बहुत कुछ जानकारी देती है जो तत्कालीन आर्थिक, सामाजिक और सास्कृतिक आदि परिस्थितियो के कई एक विभिन्न पहलुओ का समुचित चित्रण कर देती है।

इसमे सर्वथा विपरीत *मारवाड रा परगना री विगत* मूलत एव क्रमबद्ध इतिहास ग्रन्थ है, जिसमे मारवाड के राठोड राजघराने की राजधानी मण्डोर-जोधपुर वाले वतन परगने के इतिहास के अन्तर्गत वस्तुत मारवाड क्षेत्र का राजनैतिक इतिहास प्रस्तुत किया गया है, यो सर्वप्रथम 'बात परगने जोधपुर री' मे नैणसी ने मारवाड मे राठोडो के पूर्व के शासको तथा मारवाड मे राठोड राजवश की स्थापना से लेकर महाराजा जसवन्तसिह (१६६४ ई०) तक का क्रमबद्ध ऐतिहासिक विवरण दिया है। मारवाड म राठोड राजवश की स्थापना

---

१ ख्यात० (प्रतिष्टान), ३, पृ० ६५ १०२, ११५-२२।
२ ख्यात० (प्रतिष्टान), ३, पृ० ५८ ७६।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २८०-६४।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १५ १८।
५ ख्यात० (प्रतिष्टान), ३, पृ० १३-१५, १५१ ५२।

के बाद उस राज्य क्षेत्र म विस्तार, फिर चूण्डा द्वारा मण्डोवर पर अधिकार और बाद मे जोधा द्वारा जोधपुर दुर्ग के निर्माण और राठोड राज्य की नयी राजधानी जोधपुर नगर की स्थायी स्थापना और विस्तार, मारवाड के राठोड शासको द्वारा पूर्वकालीन मुसलमान आक्रमणकारियो तथा पडोसी राज्यो के साथ सघर्ष, मालदेव का उत्कर्ष और अन्त मोटा राजा उदयसिंह तथा बाद के शासको द्वारा मुगलो की आधीनता स्वीकार करना और तदनन्तर मारवाड मे राजनैतिक शान्ति और प्रशासनिक सुधार आदि सभी बातो विषयक मारवाड के इतिहास का पर्याप्त विवरण मिलता है।

मारवाड राज्य के इस ऐतिहासिक इतिवृत्त म सर्वप्रथम राव चूण्डा की मृत्यु तिथि और सवत् दिया है। उसके बाद अधिकाश महत्त्वपूर्ण घटनाओं के सवत् दिये हैं। राव गागा के शासनकाल के बाद तो वह निरन्तर निश्चित तिथि, माह, सवत् देता गया और अनेको बार उस दिन का वार भी दिया गया है। यो राव चूण्डा के बाद का और विशेषकर राव गागा से लेकर बाद का समूचा वृतान्त इतना तथ्यात्मक है कि वह फारसी म लिखे विवरणो से कही अधिक स्पष्ट और सही प्रमाणित होता है। मारवाड के शासको को दिये गये मनसबो तथा उनमे की गयी वृद्धियो के आँकडे और जागीर मे दिये जाने वाले परगनो आदि की सही-सही जानकारी पूरे ब्योरे के साथ दी गयी है। शाही कागज-पत्रो के आधार पर दी गयी यह जानकारी बहुत ही सही व प्रामाणिक है जो मुगल-कालीन राजकीय इतिहास ग्रन्थो मे प्रस्तुत सूचनाओं की पुष्टि और उनका खुलासा भी करती है।

जोधपुर परगने की बात के अन्तर्गत दी गयी इस सारी जानकारी की पूरक सामग्री जोधपुर परगने के अतिरिक्त अन्य छ परगनो के ऐतिहासिक विवरणो मे मिलती है। मारवाड राजघराने के आधीन होने के पूर्व के क्षेत्रीय इतिहास की तब सुलभ समुचित जानकारी प्रत्येक परगने की वात के अन्तर्गत अलग से दे दी गयी जिससे वहाँ के क्षेत्रीय इतिहासो के सम्बन्ध मे बहुत ही महत्त्वपूर्ण नयी जानकारी प्राप्त होती है तथा यों समूचे मारवाड क्षेत्र का पूर्ववर्ती इतिहास क्रमवद्ध और यथासाध्य पूरा करने मे विशेष सहायता मिल सकेगी। तदनन्तर उस क्षेत्र विशेष के साथ मारवाड के राठोड घराने के साथ के सम्बन्धो का अधिक ब्योरेवार पूरा-पूरा वृतान्त मिलता है जो मारवाड तथा वहाँ के राठोड राजघराने के इतिहास की कई एक लुप्त कडियाँ जोडकर उसका समग्र चित्र प्रस्तुत करता है। परगनो के इस सारे इतिवृत्त म भी तिथि सवत् आदि यथास्थान दे दिये गय है जिनसे इनका सही काल भी ज्ञात हो जाता है। परगनो के विभिन्न गाँवो का विवरण लिखते समय भी उस गाँव विशेष से सम्बद्ध मारवाड के इतिहास या शासक सम्बन्धी घटना विशेष के जो उल्लेख कर दिये गये है, उनसे उक्त इतिहास की

जाना और गागा से युद्ध करना आदि का विवरण दिया है।

राव मालदेव द्वारा वीरमदेव दूदावत को पराजित कर अजमेर पर अधिका करना, तदनन्तर वीरमदेव का शेरशाह के पास जाकर उसे मालदेव के विरु चढा लाना, युद्ध मैदान से मालदेव का भाग जाना आदि का विवरण ख्यात० है। आगे चलकर राव मालदेव और जयमल मेड़तिया के मध्य हुए युद्ध क विवरण भी मिलता है।[1]

पाबू राठोड की चमत्कारिक बातो[2] और राजा बीसल और सगमरा राठोड के मध्य हुए झगडे[3] का विवरण दिया गया है। इसी प्रकार खेतसं और उसके बाद भटनेर पर जिस-जिस का अधिकार रहा उनका विवरण दिय गया है।[4] ख्यात० मे बीकानेर के भी प्रारंभिक राजाओ का कुछ विवरण दिय है।[5]

ख्यात० मे दी गयी मारवाड के इतिहास सम्बन्धी इन सारी बातो मे नैणसं ने कही भी उनके कोई सवत्, तिथियाँ आदि नही दी हैं। न यह ऐतिहासिव विवरण पूर्णतया क्रमबद्ध है। इसमे बीच-बीच मे कई एक घटनाएँ या शासकं आदि के वृतान्त छूट गये हैं। ख्यात० का यह सारा विवरण मारवाड़ सम्बन्धी विभिन्न ऐतिहासिक कथाओ का सग्रह मात्र ही है, जिसे वास्तविक रूप से ऐतिहासिक वृतान्त नहीं कहा जा सकता है। ये ऐतिहासिक बातें तत्कालीन मारवाड के अनेको इतर प्रसगो पर कुछ प्रकाश डालती है, साथ ही मारवाड के तत्कालीन जीवन, तब के अन्ध-विश्वासों, लोक-मान्यताओं और पारस्परिक आचार-विचार या नित्य-प्रति के जीवन सम्बन्धी बहुत कुछ जानकारी देती है जो तत्कालीन आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदि परिस्थितियो के कई एक विभिन्न पहलुओ का समुचित चित्रण कर देती है।

इससे सर्वथा विपरीत *'मारवाड रा परगना री विगत'* मूलत एक क्रमबद्ध इतिहास ग्रन्थ है, जिसमे मारवाड के राठोड राजघराने की राजधानी मण्डोर-जोधपुर वाले वतन परगने के इतिहास के अन्तर्गत वस्तुत मारवाड क्षेत्र का राजनैतिक इतिहास प्रस्तुत किया गया है, यो सर्वप्रथम 'वात परगने जोधपुर री' मे नैणसी ने मारवाड मे राठोडो के पूर्व के शासको तथा मारवाड मे राठोड राजवश की स्थापना से लेकर महाराजा जसवन्तसिंह (१६६४ ई०) तक का क्रमबद्ध ऐतिहासिक विवरण दिया है। मारवाड़ म राठोड राजवश की स्थापना

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ६१-१०२, ११४-२२।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ५८-७६।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २८०-६४।
४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १५ १८।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १३-१५, १५१-५२।

के बाद इस राज्य क्षेत्र में विस्तार, फिर चूण्डा द्वारा मण्डोवर पर अधिकार और बाद में जोधा द्वारा जोधपुर दुर्ग के निर्माण और राठोड़ राज्य की नयी राजधानी जोधपुर नगर की स्थायी स्थापना और विस्तार, मारवाड़ के राठोड़ शासकों द्वारा पूर्वकालीन मुसलमान आक्रमणकारियों तथा पड़ोसी राज्यों के साथ संघर्ष, मालदेव का उत्कर्ष और अन्त मोटा राजा उदयसिंह तथा बाद के शासकों द्वारा मुगलों की आधीनता स्वीकार करना और तदनन्तर मारवाड़ में राजनैतिक शान्ति और प्रशासनिक सुधार आदि सभी बातों विषयक मारवाड़ के इतिहास का पर्याप्त विवरण मिलता है।

मारवाड़ राज्य के इस ऐतिहासिक इतिवृत्त में सर्वप्रथम राव चूण्डा की मृत्यु तिथि और संवत् दिया है। उसके बाद अधिकांश महत्त्वपूर्ण घटनाओं के संवत् दिये हैं। राव गांगा के शासनकाल के बाद तो वह निरन्तर निश्चित तिथि, माह, संवत् देता गया और अनेकों बार उस दिन का वार भी दिया गया है। यों राव चूण्डा के बाद का और विशेषकर राव गांगा से लेकर बाद का समूचा वृत्तान्त इतना तथ्यात्मक है कि वह फारसी में लिखे विवरणों से कहीं अधिक स्पष्ट और सही प्रमाणित होता है। मारवाड़ के शासकों को दिये गये मनसबों तथा उनमें की गयी वृद्धियों के आँकड़े और जागीर में दिये जाने वाले परगनों आदि की सही-सही जानकारी पूरे ब्यौरे के साथ दी गयी है। शाही कागज-पत्रों के आधार पर दी गयी यह जानकारी बहुत ही सही व प्रामाणिक है जो मुगल-कालीन राजकीय इतिहास ग्रन्थों में प्रस्तुत सूचनाओं की पुष्टि और उनका खुलासा भी करती है।

जोधपुर परगने की बात के अन्तर्गत दी गयी इस सारी जानकारी की पूरक सामग्री जोधपुर परगने के अतिरिक्त अन्य छः परगनों के ऐतिहासिक विवरणों में मिलती है। मारवाड़ राजघराने के आधीन होने के पूर्व के क्षेत्रीय इतिहास की तब सुलभ समुचित जानकारी प्रत्येक परगने की बात के अन्तर्गत आरम्भ में दे दी गयी जिससे वहाँ के क्षेत्रीय इतिहासों के सम्बन्ध में बहुत ही महत्त्वपूर्ण नयी जानकारी प्राप्त होती है तथा यों समूचे मारवाड़ क्षेत्र का पूर्ववर्ती इतिहास क्रमबद्ध और यथासाध्य पूरा करने में विशेष सहायता मिल सकेगी। तदनन्तर उस क्षेत्र विशेष के साथ मारवाड़ के राठोड़ घराने के साथ के सम्बन्धों का अधिक ब्यौरेवार पूरा-पूरा वृत्तान्त मिलता है जो मारवाड़ तथा वहाँ के राठोड़ राजघराने के इतिहास की कई एक लुप्त कड़ियाँ जोड़कर उनका समग्र चित्र प्रस्तुत करता है। परगनों के इस सारे इतिवृत्त में भी तिथि-संवत् आदि यथास्थान दे दिये गये हैं जिससे इनका सही काल भी ज्ञात हो जाता है। परगनों के विभिन्न गाँवों का विवरण लिखते समय भी उस गाँव विशेष से सम्बद्ध मारवाड़ के इतिहास या शासक सम्बन्धी घटना विशेष के जो उल्लेख कर दिये गये हैं, उनसे उक्त इतिहास की

कई अज्ञात बातें प्रकाश मे आती हैं और उनकी सहायता से मारवाड के राठोड राज्य तथा राजघराने का इतिहास अधिक परिपूर्ण बनाया जा सकेगा ।

२. मारवाड क्षेत्र का पूर्वकालीन इतिहास वहाँ राठोड राज्य की स्थापना

मारवाड क्षेत्र का पूर्वकालीन इतिहास—मारवाड क्षेत्र क पूर्ववर्ती इतिहास का विवरण देते समय नैणसी ने विगत० मे सर्वप्रथम वहाँ पवारो अर्थात् परमारो के शासन का उल्लेख किया है । बाहडमेर के शासक धरणीवाराह ने अपने भाई सावत को मण्डोवर दिया था, जिसने मण्डोवर मे पवार राज्य की स्थापना की ।[१] कुछ समय बाद पवारो को वहाँ से निकालकर मण्डोवरपर पडिहारो ने अधिकार कर लिया ।[२] पडिहार शासको म नाहडराव प्रसिद्ध शासक हुआ था । उसने मण्डोवर मे कई भवन निर्माण कार्य भी करवाय थे । नाहडराव को दिल्ली के शासक पृथ्वीराज चौहान[३] सामेश्वर-पुत्र का समकालीन लिखा है । वैवाहिक सम्बन्ध को लेकर दोनों मे युद्ध हो गया । पृथ्वीराज विजयी रहा तब नाहडराव ने उसकी अधीनता स्वीकार कर अपनी पुत्री का विवाह उससे कर दिया । नाहडराव की मृत्यु के बाद चौहान पृथ्वीराज ने मण्डोवर का शासक महणसी को बनाया जो पृथ्वीराज की मृत्यु तक वहाँ का शासक रहा । सवत् ११७३ मे तुर्कों ने पडिहारो को पराजित कर मण्डोवर पर अधिकार कर लिया । अन्त म नैणसी ने नाहडराव के जन्म के सम्बन्ध मे प्रचलित कहावत को भी जोड दिया है ।[४]

मारवाड मे राठोड राज्य की स्थापना—यह इतिवृत्त सीहा चेतरामोत[५] की द्वारका की तीर्थयात्रा से ही प्रारम्भ होता है जिसके लिए उसने तब कन्नौज से प्रस्थान किया । तब प्रचलित अनैतिहास प्रवादो का ही आधार लेकर नैणसी ने यह विवरण लिखा है । तदनुसार उस समय अणहलवाडा पाटण पर मूलराज सोलकी का राज्य था । उसने अपने पिता का बदला लने के लिए लाखा फूलाणी को मारने के लिए अनेक बार युद्ध किये परन्तु वह पराजित ही होता रहा । अब तब उस मार्ग से गुजर रहे सीहा से मूलराज ने सहायता प्राप्त की और

---

१ विगत०, १, पृ० १ ।
२ विगत०, १ पृ० २ ।
३ विगत०, १, पृ० २४ ।
४ विगत०, १ पृ० ४५ ।
५ ख्यात० (३, पृ० १६३-२०४) मे नैणसी ने वरदाईसेन के पुत्र सेतराम के सम्बन्ध मे एक लोक कथा का विवरण भी दिया है उसमें उल्लेखित विवरण का अन्य किसी सम कालीन ग्रथ में उल्लेख नही मिलता है । नैणसी ने विगत० मे भी उसका विवरण नही दिया है ।

लाखा फूलाणी को युद्ध मे पराजित किया।[1] तदनन्तर मूलराज ने अपनी बहन राजा सोलकिणी का विवाह सीहा से किया, जिसे साथ लेकर सीहा वापस कन्नौज लौट आया।[2]

इसी राणी के तीन पुत्र—१. आसथान, २. सोनग, और ३. अज हुए थे।[3] नैणसी के अनुसार पटरानी के उत्तराधिकारी पुत्र के दुर्व्यवहार के कारण सोलकिणी राणी ने अपने तीनो पुत्रो को लेकर पाटण के लिए प्रस्थान कर दिया। परन्तु मार्ग मे पाली के ब्राह्मणो ने चोरो मे अपनी सुरक्षा हेतु इनको वहाँ ही रख लिया[4] और यो तब मारवाड मे राठोडो का प्रवेश हुआ।[5] पाली मे रहकर आसथान ने अपना प्रभाव जमा लिया। पाली के आसपास के अनेक गाँवो की सुरक्षा का पूर्ण आश्वासन देकर उसने उनसे भी 'घुघरी' लेना तय कर लिया। अत. उसकी आय मे वृद्धि होती गयी जिससे वह भी अपनी सैनिक शक्ति मे वृद्धि करता गया।[6]

उक्त समय खेड पर गुहिल राजा प्रतापसी का अधिकार था। राजा प्रतापसी ने अपनी पुत्री का विवाह आसथान से किया। विवाह के कुछ समय बाद आसथान ने गुहिल शासक प्रतापसी के प्रधान को अपनी ओर मिलाकर धोखे से आक्रमण कर खेड पर अधिकार कर लिया।[7] खेड के १४० गाँवो पर आधिपत्य जमाने के बाद कोटणे के भी १४० गाँवो पर उसने अधिकार कर लिया और तब ही देवराज गोगादे के भी १४० गाँवो पर आसथान का अधिकार हो गया।[8] आसथान के

---

१ विगत०, १, पृ० ५-८, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६६ ७३। ख्यात० का यह विवरण अतिशयोक्तिपूर्ण है। विगत०, १ पृ० ५-६ और ख्यात० (प्रतिष्ठान) (२, पृ० २६७-७३, २, पृ० २७० ७२, २७३ २७४-७५) म अंधविश्वासपूर्ण विवरण और अनैतिहासिक बातें ही उल्लेखित हैं।

२ विगत० और नैणसी० मे वर्णित सारा विवरण काल्पनिक है। मूलराज और लाखा फूलाणी दोनों ही सीहा के समकालीन नहीं थे। सीहा की मृत्यु भी पाली जिले मे ही हुई थी। ओझा जोधपुर०, १, पृ० १५०-५२।

३ विगत०, १, पृ० ८; ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २६।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान) (२, पृ० २७६-७७, २७८) के सीहा की मृत्यु के बाद के विवरण और पाली पर अधिकार के सम्बन्धित उल्लेखो मे कुछ भिन्नता है।

५ विगत०, १, पृ० ८ १०।

६ विगत०, १, पृ० ११ १२।

७ विगत०, १, पृ० १२ १४, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २७८ ७९, १, पृ० ३३४।

८ विगत० १ पृ० १४। आसथान सम्बन्धी सम्पूर्ण विवरण कुछ अन्तर के साथ प्राय सभी ख्याता में मिलता है (जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १५-१६, उदेभाण० (ग्रंथ १००) प० १० ख, ख्यात० (वणशूर), प० १३ क १४ क, मुदियाड०, पृ० ३ ५)। परन्तु उनकी प्रामाणिकता सिद्ध करन के लिए कोई प्रामाणिक आधार-सामग्री उपलब्ध नहीं है।

मरणोपरान्त उसका पुत्र धूहड़ गद्दी पर बैठा परन्तु उसने पिता से उत्तराधिकार मे प्राप्त क्षेत्र मे कोई वृद्धि नही की। धूहड के बाद रायपाल गद्दी पर बैठा। उसने अपने दादा के क्षेत्र मे और विस्तार कर बाहडमेर पर अधिकार कर ५६० गाँव और अपने आधीन कर लिये।[1]

रायपाल की मृत्यु के बाद राव कान्हड गद्दी पर बैठा। उसने किसी नवीन क्षेत्र पर अधिकार नही किया। उसके समय मे शान्ति रही। उसके बाद जाल्हण गद्दी पर बैठा था। उस पर तुर्कों ने आक्रमण किया। वह उनका सामना करता हुआ मारा गया। तब छाडा गद्दी पर बैठा। उसने सोनगरो से युद्ध किया और उसमें ही मारा गया था,[2] तब उसकी गद्दी पर तीडा बैठा था। उसने अपने पिता का बदला लेने के लिए सोनगरो से युद्ध किया और भीनमाल पर अधिकार कर लिया।

उसने भाटियो और सोलकियो से भी युद्ध किये। अत मे जब सीवाणा पर अलाउद्दीन खिलजी ने आक्रमण किया तब तीडा युद्ध करता हुआ मारा गया।[3] तब कान्हडदे छाडावत गद्दी पर बैठा। सलखा[4] को राज्याधिकार से वचित कर दिया गया। इस कारण सलखा के पुत्र कान्हडदे के विरुद्ध हो गये। कुछ समय बाद माला सलखावत ने जालोर के खान के सहयोग से कान्हडदे को मरवा दिया

---

१ विगत०, १, पृ० १५। पवारों से बाहडमेर लेने का वर्णन सही नहीं है, क्योंकि उस समय बाहडमेर पर चौहानो का शासन था। ओझा जोधपुर०, १, पृ० १७०।

२ विगत०, १, पृ० १५, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २६-३०। ख्यात० मे जाल्हण और छाडा के कार्यों के बारे मे कोई उल्लेख नही है। छाडा का सोनगरो से युद्ध होने सम्बन्धी घटना का उल्लेख दयाल० पृ० ८३ मे भी मिलता है। परन्तु उक्त वर्णन सही प्रतीत नही होता क्योंकि तब भीनमाल पर तो मुसलमानो का अधिकार था। ओझा जोधपुर०, १, पृ० १७६।

३ विगत०, १, पृ० १५, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २३ २४। ख्यात० के अनुसार तीड़ा महेवा मे गुजरात के सुलतान से हुए युद्ध मे मारा गया था। विगत० के कथन का जोधपुर ख्यात० (पृ० २३), और ख्यात० (वणशूर) (प० १५ क) मे और ख्यात० का कथन दयाल० (१, पृ० ८६) से दुहराए गये हैं। परन्तु विगत० और ख्यात० दोनो के कथन ऐतिहासिक सत्य नही हैं। ओझा जोधपुर०, १, पृ० १७६ ७९।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान) (२, पृ० २८०-८१) में सलखा के पुत्र होने सम्बन्धी शकुन और योगी से सुपारी प्राप्त करने (३, पृ० २६ २७) की घटना का और सलखा का गुजरात के सुल्तान द्वारा बंदी बनाये जाने (३, पृ० २४) के सारे विवरण सर्वथा काल्पनिक ही हैं। ओझा जोधपुर०, १, पृ० १८५।

और वह स्वय महेवा की गद्दी पर बैठा।[1] रावल माला (मल्लीनाथ) ने सीवाणा पर अधिकार कर अपने भाई जेतमाल को वह क्षेत्र दे दिया था।[2]

रावल माला ने महेवा पर शासन किया और अपने भाई वीरम सलखावत को भाईवट मे ५-७ गाँव दे दिये थे। वीरम ने अपनी जागीर मे रहते हुए अपनी शक्ति का विस्तार किया और शीघ्र ही उस सारे क्षेत्र मे वीरता के लिए विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कर ली। तब रावल माला उससे ईर्ष्या करने लगा। देपाल जोइया २०० गाडी नमक लेकर आया और महेवा मे ठहरा था। माला उसका सामान लूट लेना चाहता था। परन्तु वीरम के सरक्षण से देपाल बच गया।[3] इसी समय वीरम ने गुजरात के सौदागरो के घोडे, जो कि आगरा जा रहे थे, लूट लिये। इस पर गुजरात के शासक ने महेवा के विरुद्ध आक्रमण के लिये महाबली खाँ के नेतृत्व मे १२ हजार सैनिक भेज दिये और माला को सदेश भेजा कि वीरम को महेवा से निकाल दिया जाय, अन्यथा युद्ध के लिए तैयार रहे। वीरम महाबली खाँ का सामना करने मे असमर्थ रहा[4] और भागकर बीकानेर क्षेत्र मे चला गया। वहाँ देपाल ने उसको शरण दी और गाँव वडनेर उसको प्रदान कर दिया। वहाँ रहते वीरम ने अपनी सैनिक शक्ति बढाई और जोइयो की भूमि पर अधिकार करने के लिये उनके क्षेत्र मे लूटमार करनी प्रारम्भ कर दी जिससे

---

१ विगत०, पृ० १५-१६; जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २४, ख्यात० (वणशूर), प० १५ क। ख्यात० मे भिन्न विवरण है जिसके अनुसार माला ने दिल्ली के बादशाह से मिलकर महेवा का पट्टा प्राप्त कर लिया था, तथापि वह महेवा पर अधिकार नही कर पाया। कान्हडदे के मरने के बाद उसका पुत्र त्रिभुवनसी गद्दी पर बैठा। जिसे बाद म छल से मरवा कर माला महेवा का शासक बना। ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २८२-८४। ख्यात० मे माडू के सुलतान और दिल्ली के बादशाह स माला का युद्ध और कुँवर जगमाल का विवाह और हेमा मे मनमुटाव सम्बधी विवरण दिया गया है। ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८५-९८। ओझा (जोधपुर०, १, पृ० १९२) के अनुसार 'नैणसी का उक्त वर्णन भी काल्पनिक ही है'।

२ विगत०, १, पृ० १६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८४, ख्यात० (वणशूर), प० १५ ख।

३ विगत०, १, पृ० १६-१७, ख्यात० (वणशूर), प० १५ ख १६ क। ख्यात० के अनुसार दला जोइया की स्त्री का माला अपहरण करना चाहता था (ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २९९ ३००)।

४ विगत०, १, पृ० १८। ख्यात० मे उक्त घटना का उल्लेख नही है। ख्यात० के अनुसार माला के पुत्रो के साथ हुए मनमुटाव के कारण ही दला (दपाल के स्थान दला नाम दिया गया है) सर्वप्रथम जैसलमेर गया, वहाँ से नागोर लौट आया। वहाँ भी अधिक समय नही ठहर सका और जागलू गया। अत में जोइयावाटी मे जोइया दला के पास पहुँचा। ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३००-३०४।

किया कि तत्कालीन मारवाड के एक ओर नागोर का मुस्लिम शासक, दूसरी ओर मेवाड़ का राणा और तीसरी ओर दिल्ली के सुलतान हैं। अतः अधिक समय तक मण्डोवर पर अधिकार नही रह पायेगा। तब सबने विचार कर निर्णय लिया कि इस समय राठोड शक्तिशाली हैं वे इसकी सुरक्षा कर सकते हैं। अतः उन्होने रावल माला के भतीजे चूण्डा को लाकर गद्दी पर बैठा दिया।

चूण्डा ने मण्डोवर का शासक बनने के बाद राज्य की व्यवस्था की ओर ध्यान दिया। जिन गाँवो पर जिन राजपूतो का अधिकार था, वे उनको जागीर मे प्रदान कर दिये। निर्जन गाँवो को पुन. बसाया और वहाँ के उपजाऊ गाँवो को उसने अपने ही आधीन रखा। इस प्रकार धीरे-धीरे सम्पूर्ण भूमि पर राज्याधिकार जमाकर मारवाड मे राठोड राज्य की स्थापना की, और उसने मण्डोवर को अपनी राजधानी बनाया। कुछ समय पश्चात् चूण्डा ने नागोर पर भी आधिपत्य जमा लिया। चूण्डा की मृत्यु नागोर मे १३७१-७२ ई० में सलीम खाँ के साथ युद्ध मे हुई थी।[1] राव चूण्डा के मरणोपरान्त उसके छोटे पुत्र राव कान्हा ने मण्डोवर पर अधिकार कर लिया, क्योंकि चूण्डा ने अपनी प्रिय रानी के पुत्र कान्हा को ही अपना उत्तराधिकारी बनाया था। तब चूण्डा का ज्येष्ठ पुत्र रिणमल राज्याधिकार छोडकर राणा मोकल के पास मेवाड चला गया था।[2]

कान्हा के बाद उसका बडा भाई सत्ता शासक बना, सत्ता के छोटे भाई रिणधीर व पुत्र नरबद मे मनमुटाव होने पर रिणधीर ने रिणमल को उकसाया जिसके फलस्वरूप रिणमल ने राणा की मदद से मण्डोवर पर आक्रमण कर दिया।

---

१ विगत०, १, पृ० २०-२५, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३०४-३०५, ३०६-१०, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २८-३२, ख्यात० (वणशूर) प० १६ ख-१७ क, ख्यात वंशावली (ग्रंथ ७४), प० २८ क-३० ख।

२ विगत०, १, पृ० २५-२६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३१२ १३। ख्यात० के अनुसार रिणमल राणा लाखा के समय मे मेवाड गया था और यही कथन सही है। ओझा जोधपुर०, १, पृ० २२७। ख्यात० में ही एक अन्य स्थान पर लिखा है कि चूण्डा के मरने के बाद रिणधीर ने सत्ता को टीका कर दिया और रिणमल राणा मोकल के पास मेवाड चला गया। इसी प्रकार ख्यात० मे पिता के आदेश से राज्याधिकार छोडकर रिणमल का सोजत जाना और चूण्डा के मरने के बाद पनिहारियो के व्यंग सुनकर पुन नागोर पर आक्रमण कर नागोर रहना आदि भिन्न-भिन्न विवरण दिये गये हैं। (२, पृ० ३१३, ३१५-१६)। दोनो ही कथन मान्य नहीं हैं।

राव सत्ता बिना युद्ध किये ही भाग गया[1] परन्तु उसके पुत्र नरबद ने सामना किया। नरबद बंदी बना लिया गया।[2] मण्डोवर पर रिणमल का अधिकार हो गया। तब राव रिणमल मण्डोवर और राणा द्वारा उसे प्रदत्त जागीर का उपभोग करने लगा।[3]

राव रिणमल प्राय राणा मोकल के पास ही रहता था। जब गागरोन के अचलदास खीची पर माण्डू के बादशाह ने आक्रमण किया था तब राणा के लिए अपने दामाद अचलदास की सहायता करना अनिवार्य हो गया। अतः राणा ने अचलदास की सहायता के लिए सैनिक तैयारी प्रारम्भ की और राव रिणमल से भी कहा कि वह भी मण्डोवर जाकर अपनी सेना लेकर आ जावे। राव रिणमल मारवाड़ चला गया था। इधर खातण से उत्पन्न पुत्र चाचा और मेरा ने राणा को मारने की योजना बनायी और उन्होने राणा मोकल पर अचानक आक्रमण कर दिया। आक्रमण के कुछ ही समय पूर्व उक्त योजना का पता चलने पर राणा ने पुत्र कुम्भा को वहाँ से निकालकर चित्तौड भेज दिया और स्वय लडता हुआ काम आया।[4]

चित्तौड पहुँचकर कुम्भा ने अपनी सहायता के लिए रिणमल के पास अपने आदमी भेजे। राव रिणमल ने चाचा-मेरा को मारकर कुम्भा को चित्तौड की गद्दी पर बैठाया, जिससे कुम्भा के दरबार मे रिणमल का प्रभाव बढने लगा। इससे अप्रसन्न होकर सीसोदियो ने राव रिणमल के विरुद्ध कुम्भा के कान भरने प्रारम्भ कर दिये। रिणमल के प्रभाव को कम करने के लिए चूण्डा लखावत सीसोदिया और महपा पवार को भी राणा ने चित्तौड बुलाकर एक रात्रि म सोये हुए

---

१ विगत०, १, पृ० २६ २७। ख्यात० (प्रतिष्ठान) के अनुसार सत्ता अधा था। अत रिणमल ने उसे गढ मे रहने दिया था। (२, पृ० ३३६ ३७) अन्य स्थान पर उल्लेख है कि सत्ता भागकर बाद मे मेवाड चला गया था। (३ पृ० १३७)। इसी प्रकार एक स्थान पर रिणमल और सत्ता के मध्य युद्ध मे राणा मोकल को रिणमल का सहयोगी और नागोरी खाँ को सत्ता का सहयोगी होना लिखा है। राणा मोकल और नागोरी खाँ दोनो युद्ध मैदान से भाग निकले और युद्ध अनिर्णीत ही रहा। यदि उक्त कथन सही होता तो नैणसी विगत० मे उसका उल्लेख अवश्य करता। (ओझा जोधपुर०, १ पृ० २१६) ने भी उक्त कथन को अमा य ही किया है।

२ नरबद सत्तावत की मगेतर से नरसिंह सीधल न विवाह कर लिया था, अत नरबद सत्तावत द्वारा उसको लाने सम्बन्धी और नरबद द्वारा राणा कुभा को अपनी आँख निकालकर दने सम्बन्धी वृतान्त ख्यात० म दिये गये हैं। (३, पृ० १४०-४८, १४६ ५०)।

३ विगत०, १, पृ० २६ २७, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १३०-३३, १४१।

४ विगत०, १, पृ० २८ २६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १३४-३५।

रिणमल को मरवा डाला ।[1]

राव रिणमल के मारे जाने पर उसका पुत्र जोधा वहाँ से भाग निकला। राणा की सेना ने उसका पीछा किया, परन्तु कुछेक स्थानो पर लडता-भिडता अन्त मे जोधा सकुशल मण्डोवर पहुँच गया।[2]

राव जोधा मण्डोवर से अपने सैनिको को लेकर बीकानेर की तरफ चला गया और काहुनी में डेरा किया। यही पर अपने पिता रिणमल का क्रियाकर्म किया। इधर राणा कुम्भा ने मण्डोवर पर अधिकार करने के लिये सेना भेजी, जिसने वहाँ पहुँचकर मण्डोवर पर अधिकार कर लिया। सब जगह राणा के थाने बैठा दिये गये। जोधा के विपत्ति का समय प्रारम्भ हो गया। काहुनी से अपने सैनिको को लेकर जोधा समय-समय पर धावा करता रहा, परन्तु कोई सफलता नही मिली। १२ वर्ष तक मारवाड पर मेवाड का अधिकार बना रहा।[3]

धीरे-धीरे अपने साथियो की सख्या मे वृद्धि कर जोधा मण्डोवर पर पुनः अधिकार करने का आयोजन करने लगा। राव जोधा ने सेत्रावे जाकर रावत लूणा के १४० घोडे प्राप्त कर लिये। तब उसने रात्रि मे मण्डोवर पर अचानक आक्रमण कर राणा के सैनिको को पराजित किया और यो मण्डोवर पर पुनः अधिकार कर लिया। मण्डोवर के बाद जोधा ने चोकडी और कोसाणे मे नियुक्त राणा के थाणो पर आक्रमण कर वहाँ से भी राणा के सैनिको को भगा दिया। तदनन्तर राव जोधा ने सोजत पर कूच किया और अपने भाई काधल रिणमलोत को मेडता की तरफ भेजा। राव जोधा सोजत पर अधिकार कर गांव धगले जा पहुँचा। राठोड काधल ने मेडता की तरफ भेरूदा तक राणा की

---

१ विगत०, पृ० २६-३०, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३३७-४२, ३, पृ० १३६-४०, १, पृ० १६-१७। ख्यात० मे चाचा-मेरा का मरने सबधी दो भिन्न वृतांत हैं, प्रथम—रिणमल को मोकल की हत्या की सूचना मिलते ही चाचा-मेरा को मारने की प्रतिज्ञा लेकर मेवाड की ओर रवाना हुआ। ५०० सशस्त्र सैनिको के साथ पई का पहाड घेर लिया। परन्तु छ मास तक सफलता नहीं मिली। अत में चाचा मेरा द्वारा निकाले हुए एक मेर को अपने पक्ष में कर चाचा-मेरा को मारने में सफलता प्राप्त की। (ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३३७-३६)। दूसरे के अनुसार एक भील जिसके पिता को रिणमल ने मरवा दिया था। अत वह चाचा-मेरा की सहायता कर रहा था। एक दिन वह भील घर पर नही था, तब उस भील के घर पर रिणमल पहुँच गया। घर आये शत्रु को मेहमान मानकर भील के पुत्रो ने उसे क्षमा कर उसकी सहायता करना स्वीकार कर लिया। उनके सहयोग से रिणमल चाचा मेरा को मारने में सफल हुआ (ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १३६-३८)।

२ विगत०, १, पृ० ३० ३१, ख्यात० (प्रतिष्टान), ३, पृ० १४०, २, ३४२।

३ विगत०, १, पृ० ३१-३२, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ५; जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ४०-४४। ओझा जोधपुर०, १, पृ० २३६-३७।

सेना का पीछा किया। तदनन्तर राव जोधा मोजत लौट गया। राठोड काधल को भी सोजत ही बुला लिया।[1] काधल से वैर लेने के लिये जोधा का हिसार के सारग खां से युद्ध का वर्णन और राव जोधा द्वारा द्रोणापुर पर आक्रमण तथा उस पर अधिकार सम्बन्धी वर्णन भी ख्यात० मे दिया है।[2]

इस प्रकार राव जोधा ने मारवाड पर से राणा के अधिकार को समाप्त कर वहां राठोड राज्य की स्थायी स्थापना की।

३. मारवाड़ के राठोड और उनके पडोसी राज्य

नैणसी ने अपने ग्रथो मे प्रसगानुसार उनके पडोसी राज्यो के साथ मारवाड के राठोड शासको के सम्बन्धो की भी यथेष्ट जानकारी दे दी है, जो मारवाड की वाह्य नीति के साथ ही उन सम्बन्धित पडोसी राज्यो के इतिहास पर भी पर्याप्त प्रकाश डालती है। अत मारवाड राज्य की वाह्य नीति की चर्चा के सदर्भ में उसके पडोसी राज्यो के साथ सम्बन्धो का सक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

मेवाड़—मारवाड के राव चूण्डा के मरणोपरान्त उसका ज्येष्ठ और उत्तराधिकारी पुत्र रिणमल अपने पिता की इच्छानुसार छोटे भाई कान्हा को गद्दी पर विठा अपने भाणेज राणा मोकल के पास मेवाड चला गया। वाद मे उसी के भाई सत्ता के पुत्र नरवद और भतीजे रणधीर चूण्डावत मे मनमुटाव हो गया। रणधीर रिणमल के पास चला गया और रिणमल को मण्डोवर पर आक्रमण करने के लिये उकसाया। रिणमल ने महाराणा मोकल की सहायता से मण्डोवर पर अधिकार कर लिया।[3]

उन्ही दिनो राणा मोकल की स्वीकृति से चाचा-मेरा ने पई के पहाड पर अपने मकान बनवाये थे। रिणमल को इसका पता चलने पर उसने राणा को सचेत किया कि इससे तो पई क्षेत्र से राणा का अधिकार समाप्त हो जावेगा।

---

१ विगत०, १ पृ० ३४ ३५, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ४० ४४ वाकीदास, न० ७२ ओझा (जोधपुर०, १, पृ० २३६) के अनुसार राव जोधा ने पहले चोकडी और कोमाणा पर अधिकार करने के बाद मण्डोवर पर अधिकार किया। ओझा० का आधार जोधपुर राज्य की ख्यात है जो नैणसी की विगत० के बाद मे लिखी गयी थी। अत विगत० का कथन अधिक मान्य है। मेवाड के विरुद्ध जोधा की चढाई राणा का भयभीत हो दोनों ओर के एक एक सामन्त का आपसी युद्ध और उसके निणय को स्वीकार कर जोधा को मारवाड देना सम्बन्धी वृतात ख्यात० मे दिया है। ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ८-१२।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २१ २२, १५८ ६६।

३ विगत०, १ पृ० २६-२७, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १२६। परन्तु ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ३३१ मे एक अन्य स्थान पर राणा रिणमल के मेवाड जाने का उल्लेख किया है और वह ही सही है।

इस पर राणा ने चाचा-मेरा की वह जागीर समाप्त कर दी और उनके महल गिरवा दिये, जिससे चाचा-मेरा राणा से अप्रसन्न हो गये। इसी प्रकार एक वृक्ष सम्बन्धी पूछताछ को लेकर राणा मोकल के प्रति चाचा-मेरा का रोष और अधिक बढ गया। अत बागोर के डेरे पर उन्होंने राणा मोकल की हत्या कर दी।[1]

रिणमल उस समय नागोर मे था और वहीं पर उसे राणा मोकल के मारे जाने की सूचना मिली। भाणेज की इस प्रकार हत्या हो जाने पर वह आग-बबूला हो उठा और मोकल के उत्तराधिकारी पुत्र कुम्भा की सहायता के लिये वह तत्काल चित्तौड के लिये रवाना हुआ। चाचा-मेरा को मारकर उसने कुभा को चित्तौड की गद्दी पर बैठाया।

रिणमल की सहायता से ही राणा कुम्भा सिंहासनारूढ हुआ था, अत उसका प्रभाव बढता गया और तब रिणमल के आदेश का सबको पालन करना पडता था। हुकूमत मे रिणमल के बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर सीसोदिया सरदार उसके विरुद्ध हो गये और उसके विरुद्ध राणा कुम्भा के कान भरने लगे, जिसके फलस्वरूप राणा कुम्भा ने रिणमल को धोखे से मरवा डाला।[2]

इस बात का पता चलते ही जोधा जान बचाकर चित्तौड से भाग निकला। कुम्भा की सेना न सामेश्वर के घाटे तक जोधा का पीछा किया। परन्तु छुटपुट लडाइया मे सफल होता हुआ जोधा सकुशल मण्डोवर पहुँच गया।[3] राणा कुम्भा का सामना करने मे स्वय को असमर्थ समझकर मण्डोवर छोडकर अपने सैनिको आदि के साथ उत्तर मे जागलू क्षेत्र म काहुनी चला गया। तब इधर राणा कुम्भा की सेनाओ ने मण्डोवर पर अधिकार कर लिया और मारवाड क्षेत्र मे स्थान-स्थान पर अपने थाणे बैठा दिय।[4] काहुनी मे रहते जोधा अपनी सैनिक शक्ति बढाने और मण्डोवर को पुन अपने अधिकार म करने के लिये प्रयत्न करता रहा था। अपनी शक्ति का विस्तार कर अन्त मे मण्डोवर पर आक्रमण कर जोधा ने राणा कुम्भा की सेना को वहाँ से मार भगाया और मण्डोवर पर अधिकार कर लिया।[5] मण्डावर पर पुन अधिकार करने का राणा कुम्भा का प्रयत्न असफल ही रहा, और अत म समझौता कर लिया गया।[6]

विगत० म जोधा के बाद मालदेव के राज्यारूढ होने तक के मेवाड-मारवाड

---

१ विगत० १, पृ० २७ २८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १३४ ३५।

२ विगत०, १, पृ० २९ ३०, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३३७ ४२, ३, पृ० १३६-४०।

३ विगत०, १, पृ० ३०-३१।

४ विगत०, १ पृ० ३१ ३२।

५ विगत० १ पृ० ३३ ३५।

६ विगत०, १, पृ० ३५ ३६।

संबंधों पर कोई प्रकाश नही पडता है। राव मालदेव अपनी साली और झाला जेता की बेटी स्वरूपदे की बहन से विवाह करना चाहता था जिसे झाला जेता ने स्वीकार नही किया और उक्त कन्या का विवाह मेवाड के महाराणा उदयसिंह के साथ कर दिया, जिससे मालदेव महाराणा उदयसिंह के विरुद्ध हो गया और उसने सम्पूर्ण गोडवाड मे अपने थाने बैठा दिये थे।[1] साथ ही इसी कारण जब रविवार, जनवरी २४, १५५७ ई० को हरमाडा मे हाजी खाँ और राणा उदयसिंह के मध्य युद्ध हुआ उस समय राव मालदेव ने राणा के विरुद्ध हाजी खाँ की सहायतार्थ अपनी सेना भेजी थी।[2]

राव मालदेव की मृत्यु शनिवार, नवम्बर ७, १५६२ ई० को हुई थी। उस समय उसकी भटियाणी राणी उमादे मेवाड मे केलवा मे थी और तब वह वहीं नवम्बर १०, १५६२ ई० को सती हुई थी।[3]

राव चन्द्रसेन के समय मे मेवाड के साथ उसके सम्बन्ध पुन मधुर हो गये थे, और शुक्रवार, दिसम्बर ६, १५६६ ई० को राव चन्द्रसेन ने अपनी कन्या करमेतीबाई का विवाह राणा उदयसिंह के साथ कर दिया।[4]

अकबर के समय मे मेवाड-मुगल सघर्ष प्रारम्भ हुआ, जो १६०७-८ ई० मे भी चल रहा था। उस समय राणा के कई व्यक्ति मारवाड मे शरण लेने लगे थे। अत: जहाँगीर ने सोजत को जब्त कर लिया था, परन्तु बाद मे फिर वापस दे दिया गया।[5]

१६१३ ई० राजा सूरसिंह के प्रधान भाटी गोविन्ददास के आधीन सैनिकों तथा राणा की सेना के मध्य नाडोल के मोरचे पर युद्ध हुआ। जिसमे मारवाड की सेना विजयी रही।[6]

जैसलमेर—राव रायपाल के समय से ही मारवाड-जैसलमेर के मध्य मन-मुटाव प्रारम्भ हो गया था। रावरायपाल ने भाटी मागा को चारण बनाकर अपना

---

१ विगत०, १, पृ० ४७-४८।

२ विगत०, १, पृ० ६०-६५, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६०-६२। ख्यात० के अनुसार मालदेव ने हाजी खाँ पर आक्रमण किया तब राणा उदयसिंह ने हाजी खाँ की सहायता की थी। उस सहायता के बदले में राणा ने हाजी खाँ से रगराय पातर की माँग की जिसे उसने अस्वीकार कर दिया जिससे तब राणा ने हाजी खाँ पर आक्रमण कर दिया।

३ विगत०, १, पृ० ५४, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ८०, ख्यात वशावली, (ग्रन्थ स० ७४) प० ८६ ब।

४. विगत०, १, पृ० ६६; जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ६१।

५ विगत०, १, पृ० ६६।

६ विगत०, १, पृ० १०३-४।

बारहठ भी बना लिया था।[1] इसी कारण राव रायपाल के पुत्र मोहण का विवाह जैसलमेर के शासक ने अपने कामदार (ओसवाल) की कन्या के साथ कर दिया,[2] परन्तु नैणसी के ग्रथो मे इसका कोई उल्लेख नही मिलता है।

पुन राव चूण्डा के समय जैसलमेर के भाटियो से दुश्मनी हो गयी। अत राव केलण ने सुलतान सलीम खां के साथ चूण्डा पर आक्रमण कर दिया। इसी युद्ध मे चूण्डा स० १४२८ (१३७१-७२ ई०) मे मारा गया।[3]

राव जोधा का विवाह राव वैरीसाल चाचावत की पुत्री पूरा के साथ हुआ था, जिसके दो पुत्र करमसी और रायपाल हुए थे।[4]

सन् १५३६-३७ ई० मे राव मालदेव ने जैसलमेर के रावल लूणकरण की पुत्री उमादे भटियाणी के साथ विवाह किया था। उक्त राणी राव मालदेव से रूठ गयी थी। उसके कोई सतान नही होने से उसने मालदेव के ज्येष्ठ पुत्र राम को गोद ले लिया था। राव मालदेव द्वारा राम को देशनिकाला दिये जाने पर वह भी राम के साथ मेवाड म केलवे चली गयी और अपना शेष जीवन उसने वहीं व्यतीत किया। शनिवार, नवम्बर ७, १५६२ ई० म राव मालदेव के मरने की सूचना मिलते ही नवम्बर १०, १५६२ ई० के दिन वह वही सती हो गयी।[5] राव मालदेव की एक पुत्री सजना का विवाह जैसलमेर के रावल हरराज से हुआ था।[6]

शेरशाह के हाथो मारवाड की सेना की पराजय के बाद जोधपुर पर भी सूर सुलतानो का अधिकार हो गया था। उसका अत हो जाने पर लगभग तीन वर्ष बाद मालदेव जो तब तक अन्यत्र ही था, वापस जोधपुर आ गया।[7] तदनन्तर उसकी आक्रामक नीति पुन प्रारम्भ हो गयी थी जिससे सन् १५५० ई० मे फलोधी और बाहडमेर को लेकर जैसलमेर से छेडछाड प्रारम्भ हो गयी और अक्तूबर,

---

१ विगत०, १, पृ० १५, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २०।

२ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २१।

३ विगत०, १, पृ० २६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३१५, ८४, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ३२, उदेभाण० (ग्रन्थ सं० १००), प० १२ क १३ ख।

४ विगत०, १, पृ० ४०, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ४७, उदेभाण० (ग्रन्थ सं० १००), प० १९ क।

५ विगत०, १, पृ० ४७, ५५, उदेभाण० (ग्रन्थ सं० १००), प० १९ क, प० २४ क, ख्यात वशावली (ग्रन्थ स० ७४), प० ८६ क, जोधपुर ख्यात०, १, प० ८०; ख्यात० (बणसूर), प० २७ क।

६ विगत०, १, पृ० ५२, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६२, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ८१।

७ विगत०, १, पृ० ५६ ५८, ६२, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ७१, ७४।

१५५२ ई० मे राव मालदेव ने जैसलमेर पर आक्रमण करने के लिये सेना भेजी।

मोटा राजा उदयसिंह और बीकूपुर के राव डूगरसी दुर्जनसालोत के मध्य बाहर से आने वाले घोडों के समूह पर दाण (कर) को लेकर मनमुटाव हो गया था। भाटियो और मोटा राजा उदयसिंह दोनो ही आपसी समझौता करना चाहते थे एव इस कार्य के लिये अपने व्यक्ति भाटियो के पास भेजे थे। परन्तु भाटियो की सैनिक सख्या कम देखकर मोटा राजा ने भाटियो पर दबाव डालना प्रारम्भ किया। वह भाटियो के साथ युद्ध छेडने का बहाना बनाना चाहता था, परन्तु भाटी उसकी हर बात कबूल कर युद्ध का अवसर टालते रहे। परन्तु अधिक समय तक युद्ध टाला नही जा सका और अत मे १५७० ई० मे डूगरसी और मोटा राजा उदयसिह के मध्य युद्ध हुआ। इस युद्ध म जैसलमेर के रावल हरराज ने राव डूगरसी की सहायता की थी।[1] मोटा राजा उदयसिंह पराजित होकर फलोधी लौट आया। उसके बाद उसन कभी भाटियो के विरुद्ध पुन कोई अभियान नही छेडा। नैणसी के अनुसार मोटा राजा उदयसिंह ने जैसलमेर के रावल लूणकरण की पोत्री और सूरजमल की पुत्री से विवाह किया था।[2]

राव चन्द्रसेन ने पोहकरण जैसलमेर के रावल हरराज को गिरवी के तौर पर दी थी।[3] तब से पोहकरण पर भाटियो का अधिकार हो गया था। राजा सूरसिंह को पोहकरण शाही मनसब म मिला हुआ था, परन्तु सूरसिंह का उस पर अधिकार नहीं हुआ था।[4]

अक्तूबर, १६५० ई० म राजा जसवन्तसिंह न पाहकरण पर अपना अधिकार कर लिया।[5] शाहजहाँ के शाहजादों म जब उत्तराधिकार युद्ध चल रहा था, तब अपने अनुकूल अवसर देखकर भाटियो ने पोहकरण को मार्च २६, १६५६ ई० को घेर लिया। इस पर राजा जसवन्तसिंह ने भाटियो के विरुद्ध सेना भेजी। उक्त युद्ध अभियान म नैणसी स्वय था। अत नैणसी ने विस्तार से इसका विवरण दिया है।[6]

बीकानेर—राव जोधा ने अपने पुत्र बीका को बीकानेर-जागलू प्रदान किया

---

१ विगत०, २, पृ० ४-५, १, पृ० ६३-६४, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ७४।

२ विगत०, १, पृ० ८४-८८।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६०, जोधपुर ख्यात०, १ पृ० १०३।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६७।

५ विगत०, १, पृ० ६४। वैवाहिक सम्बन्धों के कारण ही सूरसिंह न जैसलमेर के साथ मनमुटाव करना उचित नही समझा।

६ विगत०, १, पृ० १२७, २, पृ० ३०५, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १०५-८।

७ विगत०, १, पृ० १३७-४४।

था ।[1] और तब बीकानेर राज्य की स्थापना हुई।[2] यो जोधपुर राजघराने के वशज होने के कारण बाद मे भी आपसी सम्बन्ध ठीक ही रहे होंगे, परन्तु प्रारम्भ से ही वहाँ के शासक बीकानेर राज्य को सर्वथा स्वतत्र राज्य के रूप मे ही विकसित करते रहे थे। अत जब राव मालदेव ने राज्य विस्तार की नीति अपनायी,[3] तब उसने बीकानेर को भी मारवाड राज्य के आधीन एक अर्ध-स्वतन्त्र राज्य मानकर उसे भी अपने आधीन एक जागीर ही के रूप मे परिणत करने की योजना क्रियान्वित की। इसी कारण राव मालदेव और बीकानेर के राठोड राज्य के मध्य सघर्ष प्रारम्भ हो गया। १५४३ ई० मे राव मालदेव ने बीकानेर पर अधिकार कर लिया था।[4] तब इस युद्ध मे मारे गये बीकानेर के राव जैतसी का पुत्र कल्याणमल बदला लेने के लिए शेरशाह को राव मालदेव के विरुद्ध बढा लाया था।[5] तब सुमेल के युद्ध में मालदेव की पराजय के बाद बीकानेर पर राव कल्याणमल का अधिकार हो गया था। पुन कई वर्षों बाद जब रविवार, जनवरी २४, १५५७ ई० को राणा उदयसिंह और हाजी खाँ के मध्य युद्ध हुआ तो मालदेव ने हाजी खाँ की सहायतार्थ सेना भेजी और राव कल्याणमल ने राणा का साथ दिया था।[6]

आम्बेर—१६वीं सदी के प्रारम्भिक युगो से ही ढूढाड क्षेत्र मे कछवाहो का आम्बेर राज्य धीरे-धीरे अपनी शक्ति और राज्य-क्षेत्र बढाने लगा था। मुगलो के साथ उनके सम्बन्ध होने के बाद उसका महत्त्व सहसा बहुत बढ गया। अत राव मालदेव ने भगवन्तदास भारमलोत को अपनी पुत्री ब्याही थी। बाद मे राव चन्द्रसेन, मोटा राजा उदयसिंह और राजा सूरसिंह ने अपनो कन्याओ के विवाह आम्बेर के नरेशो के साथ किये थे।[7] इसके अतिरिक्त राजा आसकरण

---

१ विगत०, १, पृ० ३६। ख्यात० (प्रतिष्ठान), (३, पृ० १६-२२) में बीकानेर की स्थापना सम्बन्धी वृतांत, जोधा द्वारा साहरण जाट की सहायता (३, पृ० १३-१५) सम्बन्धी वृतात दिया है।

२ विगत०, १, पृ० ४२। ख्यात० (प्रतिष्ठान), (३, पृ० १६१) के अनुसार सवत् १५२६ में बीका कोडमदेसर में गद्दी पर बैठा था।

३ विगत०, १, पृ० ४४। राव जैतसिंह की स्मारक छत्री लेख के अनुसार उसकी मृत्यु फरवरी २६ १५४२ ई० (ओझा बीकानेर०, १, पृ० १३६ पा० टि०) को हुई थी। अत राव जैतसिंह की मृत्यु के बाद मालदेव का बीकानेर पर अधिकार हुआ था।

४ विगत०, १, पृ० ४४, ५६। 'कर्मचन्द्रवशोत्कीर्तनक' काव्यम्' के अनुसार जैतसिंह न अपने मत्री नगराज को शेरशाह के पास भेजा था। (ओझा बीकानेर०, १, पृ० १३३ ३४)।

५ विगत०, १, पृ० ५६।

६ विगत०, १, पृ० ६०।

७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६७, २६८-६६, ३०१, ओझा जोधपुर०, १, पृ० ३२६, ३५१, १६४।

और उसके पुत्र तथा आम्बेर घराने के अन्य वशजो के साथ भी अपनी पुत्रियो का विवाह किया और उनकी कन्याओ के साथ भी विवाह किये।[1] यो दोनो राज्यो के मध्य वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होने के कारण ही दोनो राज्यो के बीच निरन्तर मधुर सम्बन्ध बने रहे।

विगत० के अनुसार आम्बेर के शासक मिर्जा राजा जयसिह और जोधपुर के राजा जसवन्तसिह के मधुर सम्बन्ध थे। धरमाट के युद्ध मे पराजित होकर जसवन्तसिह जोधपुर चला गया था, तब राजा जयसिह कछवाहा उससे भेंट करने गया था।[2] औरगजेब और शुजा के मध्य युद्ध हुआ उस समय भी जसवन्तसिह औरगजेब का साथ छोडकर निकल भागा था, तब मार्ग मे राजा जयसिह ने उससे भेंट की थी।[3] उसके बाद भी दाराशिकोह की अजमेर पर चढ़ाई के समय राजा जसवन्तसिह को पुन औरगजेब के पक्ष मे करने के लिये उसे फरमान भेजा, राजा जयसिह ने मध्यस्थता की और तत्सम्बन्धी पत्र जसवन्तसिह को भेजे।[4] बाद मे औरगजेब ने उन्हे फरमान भेजकर सान्त्वना दी तथा बाद मे गुजरात के सूबे की सूबेदारी दी गयी तदनन्तर कुछ समय बाद जसवन्तसिह से भेंट भी की।[5]

सिरोही—मारवाड की दक्षिण-पश्चिम सीमा पर स्थित होने के कारण सिरोही राज्य के देवडा राजघराने का मारवाड के राठोड राज्य के साथ सपर्क होना अवश्यभावी था। राव गागा की पुत्री का विवाह सिरोही के राव रायसिह के साथ हुआ था।[6] राव चन्द्रसेन और मुगल सेना के मध्य सोमवार, जून ३०, १५७८ ई० को सवराड मे जो युद्ध हुआ था, उसमे सिरोही का शासक बीजा देवडा अपने सत्रह साथियो सहित चन्द्रसेन की तरफ से युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ था।[7]

बाद मे जब सिरोही का आधा राज्य अकबर ने जगमाल उदयसिहोत सीसो-

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९८ ३००, ३०१, ३०३, ३१५, ३१६, ३२३ विगत०, १, पृ० ९२, ओझा जोधपुर० १, पृ० ३२६, जयपुर वशावली०, पृ० २८, ३०।

२ विगत०, १, पृ० १३०।

३ विगत०, १, पृ० १३५।

४ विगत०, १, पृ० १३६।

५ विगत०, १, पृ० १३७, वही०, पृ० ३८ ४०।

६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३७, ओझा जोधपुर०, १, पृ० २८३, ओझा० सिरोही० पृ० २०७।

७ विगत०, १, पृ० ७३। चन्द्रसेन की पुत्री का विवाह बीजा देवडा से हुआ था (ओझा जोधपुर०, १, पृ० ३५१)।

दिया को दे दिया तब शाही आदेश पर रायसिंह चन्द्रसेनोत सिरोही के राव सुरताण के विरुद्ध जगमाल की सहायतार्थ सिरोही गया। रायसिंह ने जगमाल का आधिपत्य जमवा दिया। किन्तु जगमाल आबू पर भी अधिकार करना चाहता था, अतः तब मार्ग में दताणी के डेरे पर राव सुरताण ने अचानक आक्रमण कर दिया। उस युद्ध में रायसिंह चन्द्रसेनोत गुरुवार, अक्तूबर १७, १५८३ ई० को सिरोही में मारा गया था।[1] मोटा राजा उदयसिंह ने रायसिंह चन्द्रसेनोत का बदला लेने के लिए सिरोही पर आक्रमण किया और धोखे से देवडा पत्ता सावतसिंहोत और अन्य को मार डाला।[2] उक्त घटना मार्च, १५८८ ई० की है। बाद में यदा-कदा छुटपुट घटनाएं होती रही। अतत गुजरात जाते समय राजा जसवतसिंह ने १६५६ ई० में सिरोही के राव अखैराजा की पुत्री आनन्दकुँवर से विवाह किया था।[3]

४. मारवाड़ के राठोड और मुगल सम्राट, मारवाड़ राज्य की निरन्तर बदलती सीमाएँ

नैणसी की ख्यात० में मारवाड के इतिहास सम्बन्धी वार्ताएँ मेडता के घेरे के समय में सन् १५५४ ई० में जयमल के हाथो मालदेव की पराजय के साथ ही समाप्त हो जाती हैं। परन्तु विगत० में मालदेव का बाकी रहा अन्य वृतात भी क्रमबद्ध सवत् तिथि आदि के साथ विस्तार के साथ दिया है। पुन. मालदेव के देहात के बाद मारवाड पर मुगलो का दबाव बढ़ा और अततः मारवाड मुगल साम्राज्य के आधीन हो गया। इस सब का ब्यौरेवार तिथि, माह, सवत् समेत विवरण विगत० में दिया गया है।

राव मालदेव के मरणोपरान्त मारवाड में उत्तराधिकार के लिये सघर्ष प्रारभ हो गया। जिसने मुगल बादशाहों के मारवाड़ में हस्तक्षेप का मार्ग प्रशस्त कर दिया।[4]

सर्वप्रथम हसनकुली के नेतृत्व में मुगल सेना ने मई, १५६४ ई० में जोधपुर पर आक्रमण किया। राम को सोजत देकर समझौता हो गया, परन्तु मुगल आक्रमण जोधपुर पर प्रारभ हो गये। और दिसम्बर ३, १५६५ ई० में

---

१. विगत०, १, पृ० ७८, ७६-८०; ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५३; ओझा० सिरोही०, पृ० २२६-३१।

२. विगत०, १, पृ० ८६, १०१, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५१-५३।

३ विगत०, १, पृ० १३७-३८; जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५८।

४. विगत०, १, पृ० ६७-६८।

मुगलों ने जोधपुर पर अधिकार कर लिया,[1] परन्तु चन्द्रसेन ने जीवन-भर मुगलों का विरोध किया।[2]

जोधपुर पर मुगल आधिपत्य हो जाने के बाद भी जोधपुर राज्य अथवा जोधपुर के राठोड़ राजाओं सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण उल्लेख ही फारसी आधार-ग्रंथों में मिलते हैं, परन्तु ये अधिकांश उक्त राजाओं को जोधपुर का टीका दिये जाने, उनके मनसब में वृद्धि, शाही सेवा में उनकी नियुक्तियों और उनके देहांत जैसी बातों के ही होते हैं। जोधपुर राज्य की आन्तरिक बातों तथा अन्य बातों सम्बन्धी विवरणों के लिए विगत० के वृतांत कहीं अधिक ब्योरेवार और प्रामाणिक भी हैं। यों जोधपुर राज्य और वहाँ के शासकों के संदर्भ में विगत० वस्तुतः महत्वपूर्ण प्राथमिक आधार-ग्रंथ है।

चन्द्रसेन के भाई, उदयसिंह ने, जो बाद में मोटा राजा के नाम से विख्यात हुआ, नवम्बर, १५७० ई० में मुगल बादशाह अकबर की आधीनता स्वीकार कर ली थी।[3] तब उदयसिंह को ग्वालियर क्षेत्र का समावली (अब पीछोर तहसील में) जागीर में दिया था।[4] अंततः परन्तु रविवार, अगस्त ४, १५८३ ई० को मोटा राजा जोधपुर प्राप्त करने में सफल हो गया। अकबर ने मोटा राजा को १०००/८०० का मनसब देकर जोधपुर का परगना प्रदान किया, परन्तु तब आसोप और बीलाड़ा तफे परगना जोधपुर में सम्मिलित नहीं थे।[5] इसी वर्ष (१५८३ ई०) नवाब खानखाना ने सोजत भी मोटा राजा को प्रदान कर दी थी।[6] मोटा राजा को सातलमेर (पोहकरण) भी शाही जागीर में मिला था, परन्तु उस पर उसका अधिकार नहीं हो सका था।[7]

---

१ विगत०, १, पृ० ६७-६८। जोधपुर ख्यात० (१, पृ० ८६-८७) का तत्सम्बन्धी विवरण विगत० के ही समान है परन्तु इसे ओझा (जोधपुर०, १, पृ० ३३४-३७) ने 'अकबरनामा' के विवरण की तुलना में अविश्वसनीय माना है क्योंकि जोधपुर पर अधिकार होने का वृतांत सन् १५६१ ई० में होना लिखा है। तो क्या विगत० और जोधपुर ख्यात० में जोधपुर पर आक्रमण सम्बन्धी संवतों में दो वर्ष की भूल हो गयी है? यह प्रश्न विचारणीय है।

२ विगत०, १, पृ० ६६, ७०, ७१, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ८९-९०, फुटकर ख्यात (ग्रन्थ ६) प० २७ ख-२९ ख, उदैभाण० (ग्रन्थ सं० १००), प० २५ ख-२६ ख।

३ विगत०, १, पृ० ८७। ख्यात० में उल्लेख नहीं है।

४ विगत०, १, पृ० ७७, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १६४; २, पृ० २११, २४१; महिल्या० पृ० २१।

५. विगत०, १, पृ० ७६-७७, फुटकर ख्यात० (ग्रन्थ सं० ६) प० ३१ क।

६ विगत०, १, पृ० ७७।

७ विगत०, १, पृ० ७७।

मोटा राजा को निम्नलिखित परगने जागीर मे मिले थे—

१. जोधपुर वार्षिक आय रु० १,५३,६७५ ।

२ सीवाणा वार्षिक आय रु० ३७,५०० ।

३ सोजत वार्षिक आय रु० १,२५,००० ।[१]

मोटा राजा उदयसिंह के मरने के पश्चात् सूरसिंह गद्दी पर बैठा। राजा सूरसिंह को सिंहासनारूढ होने के वक्त जोधपुर, सीवाणा और सोजत[२] जागीर मे मिले थे।[३] मई ३०, १६०५ ई० को अकबर ने सूरसिंह को आधा मेडता और जैतारण दिया था।[४] साचोर सवत् १६७४ (१६१७-१८ ई०) मे मिला और सवत् १६७५ (१६१८-१६ ई०) मे पुन तगीर कर लिया गया।[५] सवत् १६७२ (१६१५-१६ ई०) मे परगना फलोधी मिला। सातलमेर (पोहकरण) भी जागीर मे था, परन्तु सूरसिंह का उस पर अधिकार नही था।[६]

मगलवार, सितम्बर ७, १६१६ ई० को सूरसिंह की मृत्यु हो गयी, तब राजा गजसिंह को शाही मनसब मे जोधपुर, जैतारण, सोजत और सीवाणा जागीर मे मिले थे।[७] राज्यारूढ के वक्त गजसिंह का मनसब ३०००/२००० था और जागीर म जोधपुर ११ तफे से, सोजत, जैतारण, सीवाणा और सातलमेर—पोहकरण मिले थे, परन्तु सातलमेर—पोहकरण पर उसका भी अधिकार नही हो पाया था।[८]

तदनन्तर अप्रैल, १६२१ ई० मे परगना जालोर और अगस्त, १६२२ ई० मे गजसिंह को साचोर खुर्रम से प्राप्त हुए। १६२२ ई० मे फलोधी बादशाह जहाँगीर ने और शनिवार, अगस्त ६, १६२३ ई० मे मेडता परवेज ने उसे दिये। मेडता तब शाही जागीर मे नही मिला था सो १६३५ ई० मे ही उसे शाही जागीर मे मिला।[९] अप्रैल, १६२१ ई० मे गजसिंह के मनसब मे १०००/१००० की वृद्धि की और जालोर दिया।[१०] नवाब मोहब्बत खाँ की सिफारिश पर गजसिंह के मनसब मे १०००/१००० की वृद्धि की और फलोधी दिया गया।[११]

---

१ विगत०, १, पृ० ८३।

२ सोजत परगना सूरसिंह को नवम्बर, १६०८ ई० में मिला था। विगत०, १, पृ० ६६।

३ विगत०, १, पृ० ६३।

४ विगत०, १, पृ० ६७।

५ विगत०, १, पृ० ६४।

६ विगत०, १, पृ० ६४।

७ विगत०, १, पृ० ६५।।

८ विगत०, १ पृ० १०५।

९ विगत०, १, पृ० १०५ ६, १०७, १०८, १०९।

१० विगत०, १, पृ० १०७।

राजा गजसिंह के मरणोपरान्त जसवंतसिंह सिंहासनारूढ़ हुआ। शुक्रवार, मई २५, १६३८ ई० को बादशाह शाहजहाँ ने जसवंतसिंह को टीका प्रदान किया।[1] गद्दी पर बैठने के समय ४०००/४००० का मनसब और मारवाड़ के परगना जोधपुर, सीवाणा, मेड़ता, सोजत, फलोधी और सातलमेर (पोहकरण) दिये गये थे और जालोर और साचोर तगीर कर लिये गये।[2] जनवरी, १६३९ ई० में महाराजा जसवंतसिंह के मनसब में १०००/१००० की वृद्धि हुई और जैतारण जागीर में मिला।[3] शनिवार, जनवरी ४, १६४० ई० को महाराजा जसवंतसिंह के मनसब में १०००/१००० की पुन वृद्धि कर जैतारण परगना प्रदान किया।[4] अक्तूबर, १६५० ई० में महाराजा जसवंतसिंह ने परगना पोहकरण पर अधिकार कर लिया था।[5] मई-जून, १६५६ ई० को परगना जालोर मिला था।[6] शनिवार, नवम्बर ४, १६५५ ई० को परगना बधनोर दिया गया था। उक्त परगने पर महाराजा जसवंतसिंह का मई, १६५८ ई० तक अधिकार रहा था।[7] गुरुवार, जुलाई २९, १६५८ ई० को महाराजा से मेड़ता तगीर कर रायसिंह अमरसिंहोत को दिया गया था।[8]

धरमाट के युद्ध के पूर्व दिसम्बर १७, १६५७ ई० को राजा जसवंतसिंह का मनसब ७०००/७००० का था और मारवाड़ के जोधपुर, मेड़ता, सोजत, जैतारण सीवाणा, फलोधी, पोहकरण, जालोर, गजसिंहपुरा, नागोर की पटी और बधनोर आदि परगने उसके आधीन थे।[9] अगस्त, १६५८ ई० के पूर्व इनमें से नागोर की पटी भी तगीर कर दी गयी थी।[10]

फरवरी, १६६४ ई० में महाराजा जसवंतसिंह के पास मारवाड़ के परगना जोधपुर, मेड़ता, जैतारण, सोजत, जालोर, सीवाणा, फलोधी और गजसिंहपुरा परगने थे।[11]

---

१ विगत०, १, पृ० १२३।
२ विगत०, १ पृ० १२४।
३ विगत०, १, पृ० १२४।
४ विगत०, १, पृ० १२५।
५ विगत०, १, पृ० १२७।
६ विगत० १, पृ० १२७, १२६।
७ विगत०, १, पृ० १२८।
८ विगत०, १, पृ० १३०।
९ विगत०, १, पृ० १३१, १३३।
१० विगत०, १, पृ० १३२।
११ विगत०, १, पृ० १५१, १५४ ५५।

५. मारवाड़ के राठोड राजघराने की स्वाधीन प्रशाखाएँ

मारवाड मे राठोड राज्य की स्थापना के बाद उस राजघराने के कुछ वशजो ने अपने आधीन क्षेत्रो मे सर्वथा स्वाधीन राज्यो की स्थापना की थी उनका भी नैणसी के ग्रथो मे यत्र-तत्र कुछ वर्णन मिलता है।

राव जोधा ने अपने पुत्र वरसिंह और दूदा को मेडता प्रदान किया था।[1] तब दूदा[2] ने मेडता को एक स्वतत्र राज्य बना दिया था। दूदा की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र वीरमदे गद्दी पर बैठा था। राव गागा तक मेडता और जोधपुर राज्यो के मध्य सम्बन्ध मधुर रहे थे, परन्तु महत्त्वाकाक्षी राव मालदेव मेडता की स्वतत्रता समाप्त करना चाहता था। अत दोनो मे सघर्ष प्रारभ हो गया।[3] मालदेव ने १५९९ वि० (१५४३ ई०) में मेडता पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया। तब मेडता का शासक राव वीरमदे शेरशाह सूर के पास पहुँचा और उसको मालदेव के विरुद्ध चढा लाया। गिररी-सुमेल मे शेरशाह और मालदेव की सेना के मध्य युद्ध हुआ। उसमे मालदेव की सेना पराजित हो गयी। अत उस समय मेडता पर राव मालदेव का अधिकार अधिक समय तक नहीं रह पाया।[4] शेरशाह के सहयोग से वीरमदे ने पुन. मेडता पर अधिकार

---

१ विगत०, १, पृ० ३९, २, पृ० ३७।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), (३, पृ० ३८-४०) में दूदा द्वारा मेघा नरसिंहदासोत को मारने सम्बन्धी वृतात ही दिया है।

३. ख्यात० के अनुसार एक हाथी को लेकर वीरमदेव और मालदेव के मध्य मनमुटाव मालदेव के राजगद्दी पर बैठने से पहले ही प्रारभ हो गया था। अत गद्दी पर बैठने के बाद मालदेव ने मेड़ता पर आक्रमण कर दिया। (ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ९३-९५)।

४ विगत०, १, पृ० ४३, ५६, ५८, १०३, ख्यात (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ९५-१०२। नैणसी के अनुसार वीरमदेव मलारणा के थाणेदार और रणथभोर के किलेदार के माध्यम से शेरशाह से मिला था (ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ९९)। ख्यात० में यह भी लिखा है कि वीरमदेव ने बीस-बीस हजार रुपये जैता और कूपा के डेरे भेजकर कहलाया कि इनकी सिरोही की तलवारें और कबलें भेज दें और उधर मालदेव के पास संदेश भेजा की उक्त दोनों सामन्त शेरशाह से मिल गये हैं। वीरमदेव की उक्त युक्ति से मालदेव के मन में मारवाड के उसके सरदारों के प्रति संदेह उत्पन्न हो गया और वह बिना युद्ध किये ही वहाँ से चला गया। प्रात काल राव के सरदारों ने युद्ध किया। (३, पृ० ९९-१०१) तारीख ई-शेरशाही के अनुसार शेरशाह ने अपने नाम (शेरशाह) लिखे गये मालदेव के सरदारों के पत्र इस आशय के मालदेव के वकील के डेरे के पास डलवा दिये कि 'बादशाह को चिन्तित होने और संदेह करने की आवश्यकता नहीं। युद्ध के समय हम मालदेव को पकड़कर आपके सुपुर्द कर देंगे।' (अब्बास, सरवानी, पृ० ६५५-५६) जोधपुर ख्यात० (१ पृ० ७१) में मालदेव के मन में संदेह पैदा करने का श्रेय वीरम को दिया, यद्यपि घटना नैणसी से भिन्न दी है।

कर लिया।

फरवरी, १५४४ ई० म वीरमदे की मृत्यु हो गयी तब मेडता का शासक उसका पुत्र जयमल बना। मालदेव ने जयमल के साथ भी लड़ाई प्रारम कर दी। बुधवार मार्च २१, १५५४ ई० को मालदेव ने अपनी सेना के साथ मेडता को घेर लिया। परन्तु इस समय मालदेव को पराजित होकर लौटना पडा।[१] इस पराजय का बदला लेने के लिए मालदेव ने पुन फरवरी १०, १५५७ ई० को मेडता पर अधिकार कर लिया,[२] और इसके साथ ही मेडता की स्वाधीनता समाप्त हो गयी।

राव जोधा ने अपने एक अन्य पुत्र बीका को जागलू-बीकानेर दिया था। बीका ने अपने नाम से बीकानेर राज्य की स्थापना की।[३] मालदेव के साथ मे हुए बीकानेर के राव कल्याणमल के सघर्ष के सदर्भ मे विगत० मे अवश्य कुछ उल्लेख हैं। राव मालदेव ने बीकानेर पर आक्रमण कर राव कल्याणमल को पराजित कर शुक्रवार, मार्च २, १५४३ ई० को बीकानेर पर अधिकार कर लिया था।[४] राव कल्याणमल अपनी खोई हुई सत्ता को पुन प्राप्त करने के लिए शेरशाह के पास सहसराम पहुँचा और उसके सहयोग से एक वर्ष बाद ही १५४४ ई० मे पुन बीकानेर पर अधिकार कर लिया और तदनन्तर बीका राठोड के वशजों के आधीन स्वतत्र बीकानेर राज्य और उस राठोड राजघराने की उक्त स्वाधीन प्रशाखा यथावत् चलती हो रही।[५]

इसके बाद के विगत० मे यत्र तत्र बीकानेर के शासको के जो उल्लेख है वे जोधपुर राज्य के सदर्भ मे ही दे दिये गये हैं।

बीकानेर राज्य अथवा वहाँ के राजघराने सम्बन्धी कोई क्रमबद्ध विशेष वृतात ख्यात० मे नही हैं। उसमे केवल राव लूणकरण सम्बन्धी कथानक लिखे हैं। किशनगढ राज्य के शासको के सम्बन्धी उल्लेख भी विगत० मे यत्र तत्र हैं। इसी प्रकार मोटा राजा उदयसिंह के प्रपौत्र रतनसिंह का सदर्भित उल्लेख भी विगत० मे है, क्योंकि सन् १६५६ ई० मे महाराजा जसवतसिंह को जालोर का

---

१ विगत०, १ पृ० ५६, ६६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ११५ २२ जोधपुर ख्यात०, १ पृ० ७४ ७५।

२ विगत०, १ प० ६५, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ७६। नैणसी की ख्यात० मे जोधपुर के इतिहास सम्बन्धी विवरण यही समाप्त हो जाता है। इसके बाद की घटनाओ का उल्लेख केवल विगत० मे है।

३ विगत०, १, पृ० ३६।

४ विगत०, १, पृ० ४४।

५ विगत०, १, पृ० ५६।

वह परगना दिया गया। वह परगना तब तक शाही मनसब में रतनसिंह के अधिकार में था। परन्तु उसके शाहजहाँ से निवेदन करने पर अनुपजाऊ क्षेत्र होने के कारण जालोर के स्थान पर उसे मई, १६५६ ई० में मालवा का रतलाम परगना प्राप्त हो गया और उसने रतलाम के प्रथम राज्य की स्थापना की।[1]

---

१. विगत०, १, पृ० १२६।

अध्याय : ७

नैणसी और अन्य राजपूत राज्यों अथवा खाँपों के इतिहास

मारवाड-जोधपुर के अतिरिक्त अन्य राज्यो के इतिहास के बारे म ख्यात० मे ही वर्णन मिलता है।

१ मेवाड के गुहिलोत और उनके पडोसी अन्य गुहिलोत राज्य

नैणसी की ख्यात० मे मेवाड के गुहिलोतो का विस्तृत वर्णन मिलता है। नैणसी न गुहिलोतो की २४ शाखाओ का वर्णन दिया है।[1] इसके साथ ही इसम प्रमुख शाखाओ के नामकरण की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे उल्लेख है। तदनन्तर मेवाड के स्वामिया के पूर्वजो की पीढियाँ दी है।[2]

नैणसी के अनुसार सीसोदिया पहल गुहिलोत कहलाते थे। सीसोदा गाँव मे बहुत समय तक रहने के कारण ये सीसोदिया कहलाये थे।[3]

नैणसी ने रावल बापा गुहदत्त के पूर्व पीढ़ियाँ दी, तदनन्तर रावल बापा द्वारा हरीत ऋषि की *सेवा और चित्तौड पर अधिकार का वर्णन दिया है।*[4] यह सारा वर्णन तब मान्य दतकथाओ पर ही आधारित है। नैणसी ने रावल खुमाण और रावल आलू से सम्बन्धित तब प्रचलित कवित्त दिये हैं। तदनन्तर रावल आलू स कर्ण तक की पीढियाँ दी गयी है।[5] रावल कर्ण से ही गुहिलोतो की एक अन्य राणा शाखा प्रारम्भ हुई।

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ८८ ८६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ८, ६, १०।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३ ४, ७, ११ १२
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४ ५।

रावल कर्ण के दो पुत्रो से रावल और राणा शाखाओ के उद्भव आदि की जो वार्ता दी है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि राणा शाखा का तब से ही चित्तोड पर आधिपत्य हो गया था, जो ठीक नही है। रावल शाखा का वंश-वृक्ष और विवरण यहाँ से ही गलत हो गया है। अलाउद्दीन के चित्तोड के प्रथम साके का विवरण भी बहुत ही असम्बद्ध और भ्रान्तिपूर्ण है। पद्मिनी सम्बन्धी तब प्रचलित मान्यताओ को दुहराया गया है। यह सारा विवरण विश्वसनीय नहीं है।

नैणसी ने उक्त राणा शाखा की पीढियाँ राणा राजसिह तक की दी हैं।[1] नैणसी न राणा हमीर से राणा मोकल तक का अति सक्षिप्त उल्लेख किया है।[2] राणा लाखा की राठोड कन्या हसकुमारी से विवाह और चूण्डा की राज-गद्दी त्याग की बात लिखी है, जो साधारणतया मान्य कथानक से कुछ भिन्न है। अत लाखा के बाद मोकल चित्तोड की राजगद्दी पर बैठा। मोकल की हत्या हो जाने पर कुम्भा को गद्दी पर बैठाया। कुम्भा ने ही कुम्भलमेर बसाया था। कुभा राव रिणमल की सहायता से ही मेवाड का शासक बना, परन्तु शासन मे रिणमल का प्रभाव अधिक बढ जान से सीसोदियों से उसका विरोध उत्पन्न हो गया और अतत रिणमल की हत्या करवा दी। जोधा भाग निकला। तब कुछ समय तक मण्डोवर पर भी राणा कुभा का ही आधिपत्य रहा।[3] राणा कुभा की ऊदा ने हत्या कर दी और स्वय राजगद्दी पर बैठा। किन्तु मेवाड के सब ही उमराव विरोधी हो गय और उन्होने रायमल को शासक बनाया। नैणसी ने राणा रायमल के पुत्रो का वर्णन दिया है।[4] उसी सदर्भ म नैणसी ने सोलकी राव सुरताण हरराजोत की बात लिखकर जयमल की मारे जाने की घटना भी वर्णित कर दी है।[5]

नैणसी की ख्यात० मे राणा सागा का कुछ अधिक उल्लेख मिलता है। राणा रायमल क पश्चात् सागा गद्दी पर बैठा था। राणा सागा का माण्डू के सुलतान से दो बार युद्ध हुआ और बादशाह बाबर से खानवा का युद्ध हुआ। सागा का बाधवगढ स युद्ध का वर्णन केवल नैणसी म ही मिलता है। नैणसी के अनुसार राणाओ म सर्वाधिक शक्तिशाली शासक सागा ही था।[6]

ख्यात० मे राणा रतनसिह और विक्रमादित्य का वर्णन अति सक्षिप्त ही

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५६, १३-१४, १५।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५-१६।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १६-१७।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ प० ५१, १७ १८।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, प० २८१ ८३।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० १६-२०।

मिलता है। विक्रमादित्य के समय मे १५३५ ई० मे चित्तौड पर सुलतान बहादुरशाह ने आक्रमण किया था और राणी कर्मवती ने जौहर किया।[1] राणा विक्रमादित्य के बाद सागा का पुत्र उदयसिह मेवाड़ का शासक बना था। उदयसिह का जीवन भी विपत्तियो मे ही बीता था। चित्तौड पर पुन अधिकार करने के लिए उसे बनबीर से युद्ध करना पडा था। चित्तौड की भौगोलिक स्थिति के कारण बारबार उस पर आक्रमण तथा घेरे होते थे एव पश्चिम मे पहाडो से घिरे गिरवा क्षेत्र म उदयसिह ने नया नगर बसाया जो उसके नाम पर 'उदयपुर' कहलाया, तथा अमरसिह के साथ मुगलो की सधि हो जाने के बाद मेवाड की राजधानी बन गया।[2] पुन अकबर के आक्रमण के कारण उदयसिह को चित्तौड छोडना पडा था।[3] ख्यात० मे राणा उदयसिह के पुत्रो का वर्णन विस्तार से मिलता है।[4] मवाड के इतिहास के सदर्भ मे नैणसी ने सीसोदियो की दो प्रमुख खांपो—चूण्डावतों और सकतावतो—के प्रारभिक वश-वृक्ष सविस्तार से दिये हैं[5], जो सशोधको के लिए बहुत ही उपयोगी हैं।

राणा उदयसिह के बाद मेवाड का शासक राणा प्रताप बना था। कुंवर मानसिह और प्रताप के मध्य हुए हल्दीघाटी युद्ध के बारे म भी उल्लेख मिलता है। नैणसी ने राणा प्रताप के पुत्रो का विस्तार से उल्लेख किया है।[6]

प्रताप के बाद मेवाड की गद्दी पर अमरसिह बैठा था। अमरसिह ने जहांगीर स सन्धि कर ली, और तब पांच हजारी मनसब दिया गया, जो वस्तुत अमरसिह के उत्तराधिकारी राजकुमार कर्णसिह के ही नाम पर जारी हुआ था।[7] मनसब की जागीर मे मिले परगनों का वर्णन दिया गया है। यो नैणमी के वर्णन से राणा अमरसिह और जहांगीर के सम्बन्धो पर प्रकाश पडता है। नैणसी ने राणा अमरसिह के पुत्रो का भी विस्तृत विवरण दिया है।[8]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४९-५०, अकबरनामा०, १ पृ० ३०१ मीरात ईसिकन्दरी, (अ० म०), पृ० १८५ ८८ तबकात०, ३, पृ० ३६९ ७२। चारण आसीये गिरधर की कही जो बात नैणसी ने यहाँ उद्धृत की है, वही कुछ परिवर्तित रूप मे वही० (पृ० ११८) मे भी मिलती है।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ३२ ३४ ४८।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २०-२१।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० २१ २२, २३, २४, २५ २६ २७ २८।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ६६ ७०, २६ २८।

६ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० २८ २९, ४८।

७ वीरविनोद, २, पृ० २३९ ४१ पर तत्सम्बधी फरमान और उसका हिन्दी अनुवाद उद्धृत है।

८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९ ३१, ४८-४९।

नैणसी मे राणा करण और राणा जगतसिंह का विवरण बहुत ही कम मिलता है। राणा राजसिंह के ६००० जात, ६००० सवार मनसब और उसे प्राप्त जागीर का वर्णन दिया है।[१]

मेवाड के अतिरिक्त ख्यात० मे डूंगरपुर और बांसवाडा के गुहिलोत राज्यो का भी इतिहास प्राप्त होता है। नैणसी ने तत्कालीन डूंगरपुर राज्य की सीमा का वर्णन दिया है और इसके साथ ही डूंगरपुर राज्य की स्थापना और डूंगरपुर के शासको की वशावली प्रारभ से रावल उदयसिंह तक दी है।[२] इसमें वस्तुत रावल पूजा के बाद के नाम बाद मे ही जोडे गये हैं।

इसी प्रकार नैणसी ने बांसवाडा के गुहिलोतो का भी वर्णन दिया है। उसने बांसवाडा राज्य की तत्कालीन सीमाओ का उल्लेख किया है। पूर्व म यह बांसवाडा राज्य डूंगरपुर राज्य का ही अग था। रावल उदयसिंह के द्वितीय पुत्र जगमाल ने ही बांसवाडा राज्य की स्थापना की। नैणसी ने बांसवाडा के शासको की वशावली भी दी है। साथ ही रावल मानसिंह और रावल उग्रसेन का कुछ विशेष विवरण दिया है।[३]

मेवाड का अन्य पडोसी गुहिलोत राज्य देवलिया था। मुहणोत नैणसी की ख्यात मे ग्यासपुर-देवलिया मे गुहिलोत राज्य की स्थापना का वर्णन मिलता है। बीका ने देवलिया की स्थापना की थी।[४] स्थापना के बाद देवलिया राज्य के विस्तार का भी ब्यौरेवार विवरण दिया गया है।[५] इसके अतिरिक्त नैणसी के समय देवलिया की सीमा का वर्णन है।[६] ख्यात० मे देवलिया के स्वामी रावत भाणा, रावत सिंध, रावत जसवत और अत मे शाहजहां-औरगजेब के समकालीन रावत हरीसिंह का वर्णन है।[७]

अत म नैणसी ने चन्द्रसिंह भुवनसीयोत के वशजो, चन्द्रावत सीसोदियों, द्वारा स्थापित राज्य का उसकी स्थापना से लेकर अतत मुगल साम्राज्य के आधिपत्य म राव अमरसिंह हरिसिंहोत चन्द्रावत के राज्यारोहण का भी विवरण दिया है।[८]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३०, ३१, ५२ ५३, वीरविनोद, २, पृ० ४२५ ३१ पर मूल फरमान और हिन्दी अनुवाद दिया गया है।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७७ ८७।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० ८८, ८७, ७३-७७।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० ६० ६३।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६३-६४।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६४।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६४ ६७।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), पृ० २३६-४६।

२. बूंदी और सिरोही के चौहान राजवश : अन्य चौहान खाँपें

ख्यात० मे चौहानों की चौबीस शाखाओ का उल्लेख किया गया है। हाडो क प्रारंभिक पीढ़ियों की सूची दी गयी है। नैंणसी के अनुसार चौहानों की चौबी शाखाओ म से एक शाखा नाडोल के राव लाखण के वशजो की है, जो हाडा कहला और हाडा विजयपालोत के पौत्र देवा बाघा ने बूंदी राज्य तथा वहाँ के हा राजघराने की स्थापना की है।[1] बूंदी म पहले मीणे रहते थे। हाडा देव बाघावत ने बूंदी मीणो से हस्तगत कर ली। यो बूंदी मे हाडा चौहान राज्य क स्थापना की।[2] स्थापना के बाद नैंणसी न राव नारायणदास का सक्षिप्त उल्ले किया है। नारायणदास का पुत्र सूरजमल था। हाडा सूरजमल और मेवाड महाराणा रतनसिंह के मध्य हुए मनमुटाव और झगडे का विस्तृत वर्णन दिय गया है।[3]

सूरजमल के मारे जाने के बाद बूंदी की गद्दी पर सूरताण बैठा। परन् वह कुलक्षणा था। अत वह अधिक समय तक नही रह पाया।[4] राणा उदय सिंह ने बूंदी का टीका राव सुर्जन को दे दिया। राणा उदयसिंह ने रणथम्भोर की किलेदारी भी सुर्जन को दे रखी थी। चित्तौड पर अधिकार करने के बाद अकबर ने रणथम्भोर पर आक्रमण कर दिया। राजा भगवन्तदास के माध्यम से अकबर से बातचीत और सधि कर मार्च २४, १५६६ ई० को राव सुर्जन शाही सेवा मे उपस्थित हो गया था।[5] उपरोक्त बातो का वर्णन ख्यात० मे मिलता है। सुर्जन द्वारा शाही सेवा स्वीकार करने के बाद उसके पुत्र दूदा और भोज के पारस्परिक सघर्षों आदि पर भी नैंणसी ने पूरा प्रकाश डाला है।[6]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६७। नैंणसी द्वारा दी गयी बूंदी के हाडा राजघराने की पूर्वपीढ़ियों की पूर्ण पुष्टि स० १४४६ वि० (१३८६ ६० ई०) के उस शिलालेख से होती है, जिसका अग्रेजी अनुवाद टाड ने *राजस्थान (ग्रा० स०, ३, पृ० १८०२-१८०४)* में दिया है। ओझा ने (उदयपुर०, १, पृ० २४० पा० टि०) भी नैंणसी द्वारा दिये गये वशानुक्रम को मान्य किया है।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६७ १०० नैंणसी में देवा द्वारा बूंदी लेने सम्बन्धी तीन भिन्न भिन्न वृतात दिये हैं।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १०२-६।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान) पृ० १०६-१०।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११०, १११ १२। यह बात उल्लेखनीय है कि टाड *(राजस्थान० ग्रा० स०, ३, पृ० १४८१ ८३)* ने इस अवसर पर की गयी जिस मुगल-हाडा सधि का उल्लेख कर उसकी दस शर्तों तथा अकबर की ओर से दिये आश्वासनों आदि की विस्तृत चर्चा की है, और जिनको हाडाओ के इतिवृत्तों मे बलपूर्वक दुहराया जाता है, उनका कोई उल्लेख नैंणसी मे कही भी नही है।

६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २६६ ७२।

ख्यात० में बूंदी नगर की तत्कालीन वस्तुस्थिति का उल्लेख है। राव भावसिंह की जागीर के परगनें और गाँवो का उल्लेख, बूंदी के पास हाडोती के परगनो, बूंदी और कोटा में अन्य प्रमुख नगरों की दूरी का वर्णन, मऊ के निकट के गाँवो का वर्णन, परगने मऊ के प्रमुख गाँवो आदि का विवरण दिया गया है। मऊ परगने की प्रमुख फसलों, प्रत्येक का राजकीय लगान, वहाँ निवास करने वाली विशिष्ट जातियों और हाडोती में बहने वाली नदियों का उल्लेख है।[1] बूंदी राज्य के प्रमुख सरदारों और उनकी जागीर आदि का भी नैणसी ने उल्लेख किया है।[2]

बूंदी के हाडा चौहान राजवंश के संदर्भ में बूंदी के राव राजा रत्नसिंह सरबलदराय के दूसरे पुत्र माधोसिंह द्वारा सस्थापित कोटा के स्वतंत्र हाडा राज्य का उल्लेख करते हुए माधोसिंह के उत्तराधिकारी पुत्र मुकुन्दसिंह हाडा का उल्लेख करते हुए कोटा और गागरोन में उसके बनाये राजमहलों की भी चर्चा की है।[3]

तब राजस्थान में चौहानों की दूसरी महत्त्वपूर्ण देवडा शाखा के सिरोही राज्य का इतिहास भी नैणसी ने अपनी ख्यात० में सम्मिलित किया है। उस राज्य का भौगोलिक विवरण लिखते हुए सिरोही राज्य के अन्तर्गत आने वाले गाँवो की विस्तृत सूची दी गयी है।[4] तब मान्य स्थापना को दुहराते हुए नैणसी ने भी लिखा है कि चौहानों की उत्पत्ति अग्निकुण्ड से हुई। वशिष्ठ ऋषि ने राक्षसों का विनाश करने के लिए जिन चार क्षत्रियों को उत्पन्न किया उनमें एक चौहान है।[5] परन्तु अधिकांश चौहान नाडोल के स्वामी लक्ष्मण के वंशज हैं। सिरोही के देवडा भी उसी के वंशज हैं।[6] ख्यात० में चौहानों द्वारा आबू पर अधिकार करने सम्बन्धी वृत्तांत दिया है।[7] स० १२१६ माघ वदि १ को वीजड का पुत्र तेजसिंह चौहान आबू की राजगद्दी पर बैठा। उसका विवाह मेहरा की बहन के साथ हुआ था। नैणसी ने आबू के सम्बन्ध में तेजसिंह और मेहरा का संवाद दिया है।[8]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११३-१७।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ११७ ११८।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११४-१५।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १७३ ८०।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० १३४।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३४।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३४, १८०-८३।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८३।

ख्यात० में सिरोही के स्वामियों की पीढ़ी की सूची दी गयी है।[1] नैणसी ने इस राजवंश के 'देवड़ा' नामकरण का जो कारण दिया है वह विश्वसनीय नहीं है, और नाडोल और जालोर के राजाओं और सिरोही राजवंश के प्रारंभिक पूर्वजों के जो नाम नैणसी ने दिये हैं, वे भी न तो पूरे हैं और न उनका क्रम सही है। उसकी इस ख्यात० में दिये गये पूर्ववर्ती सब ही संवत् गलत हैं। बडवों की पोथियों के आधार पर लिखा गया, यह प्रारंभिक विवरण विश्वसनीय नहीं है। तत्कालीन शिलालेखों के आधार पर अब उन शासकों के क्रम को ठीक कर विभिन्न शासकों आदि के संवतों का सही निर्धारण भी संभव हो सका है।[2] तदनन्तर नैणसी ने राव जगमाल और उसके वंशजों की जानकारी में राव रायसिंह का विवरण दिया है। भीनमाल पर आक्रमण के समय बिहारियों के सैनिकों द्वारा चलाये गये तीर से उसकी मृत्यु हो गयी। उसकी इच्छानुसार पुत्र को शासक न बनाकर भाई दूदा को बनाया।[3] परन्तु दूदा ने उदयसिंह को ही शासक मान-कर राज्य की देखभाल की और मरने के पूर्व राव रायसिंह के पुत्र उदयसिंह को ही गद्दी पर बैठाने की इच्छा व्यक्त की।[4] उदयसिंह गद्दी पर बैठने के एक वर्ष बाद ही मर गया और दूदा का पुत्र मानसिंह सिरोही का शासक बना।[5] मानसिंह ने कोलियों का दमन कर शांति स्थापित की। राव उदयसिंह की गर्भवती स्त्री की हत्या कर दी। पंवार पचायण को विष दिलवाकर मार डाला। अतः उसके भतीजे कल्ला ने राव मानसिंह की हत्या कर दी।[6]

राव मानसिंह के आदेशानुसार तब सिरोही की गद्दी पर सुरताण बैठा। उस समय राज्य में बीजा का प्रभाव, राव सुरताण के उत्तराधिकार संबंधी संघर्ष के संदर्भ में राव द्वारा बीजा का दमन, राव सुरताण का शाही सेवक बनना, राणा उदयसिंह के पुत्र जगमाल को आधा सिरोही मिलना, जगमाल और सुरताण के मध्य संघर्ष और शाही सेना का जगमाल की सहायता करना, कार्तिक सुदि ११, १६४० (अक्तूबर १७, १५८३ ई०) को दताणी के युद्ध में जगमाल का मारा जाना, मोटा राजा द्वारा सिरोही पर आक्रमण, राणा प्रताप की पुत्री का विवाह राव सुरताण के साथ आदि बातों का विवरण ख्यात० में दिया गया है।[7]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३५-३६।
२ *डूगड० १, पृ० ११६-२० पा० टि०, १२३ पा० टि०।*
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३६-३७।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३७।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १३७-४०।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १४१।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १४२ ५३।

राव सुरताण आश्विन बदि ६, १६६७ (सितम्बर १, १६१० ई०) को मरा था। तब उसका पुत्र राजसिंह गद्दी पर बैठा। राव राजसिंह को भी उत्तराधिकार का संघर्ष करना पड़ा था। राज्य के दावेदारों को समर्थन देने वाले देवड़ा पृथ्वीराज का दमन कुँवर गजसिंह (जोधपुर) की सहायता से किया। परन्तु अवसर पाकर पृथ्वीराज ने राजसिंह की हत्या कर दी। तब सरदारों ने उसके शिशुपुत्र अखैराज को गद्दी पर बैठाया। अखैराज के समय में पृथ्वीराज की विद्रोही गतिविधि रही और उसकी हत्या के बाद उसके पुत्र चादा का सर्वत्र प्रभाव था, जिसका भी ख्यात० में विवरण दिया गया है। यों ख्यात० में सवत् १७२१ (१६६४-६५ ई०) तक का सिरोही का इतिहास मिलता है, जब अखैराज के बड़े पुत्र, उदयसिंह को मार डाला गया था।[1]

नैणसी ने राव लाखा और डूगरोत देवडा चौहानों की पूरी वंशावलियाँ दी हैं। इसके साथ किसी ने कोई उल्लेखनीय कार्य किये थे तो उनके भी उल्लेख किये गये हैं।[2] इसी प्रकार डूंगर देवडा और चीवा की वंशावली दी है।[3]

तदनन्तर नैणसी ने नाडोल के राव लक्ष्मण के प्रतापी वंशज आसराव के छोटे बेटे आल्हण के उन वंशजों का भी विवरण सविस्तार दिया है जिन्होंने आगे चलकर जालोर (स्वर्णगिरि) और साचोर (सत्यपुर) पर अपना आधिपत्य स्थापित कर महत्त्वपूर्ण बने और इस प्रकार चौहानों की चौबीस शाखाओं में से उनसे क्रमश सोनगरा तथा साचोरा खाँपों का उद्भव हुआ।

ईसा की १२वीं सदी के मध्य में जालोर और सीवाणा पर पवार कुतपाल और पवार वीरनारायण का शासन था। आसराव के पौत्र और आल्हण के छोटे बेटे कीतिपाल अथवा कीतू ने ही वहाँ के इन पवार शासकों को पराजित कर जालोर और सीवाणा पर अधिकार किया। कीतू के बाद जालोर के सोनगरा शासकों की पीढी दी है। जालोर के रावल कान्हडदेव का विस्तार से उल्लेख किया गया है। उनका दो बार सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी से युद्ध का उल्लेख है। युद्ध के कारणों में शिवलिंग, सोमनाथ के पुजारी और शाहजादी का वीरमदेव पर आसक्त होना आदि लोक-कथा का भी समावेश है। कान्हडदेव की पराजय के साथ ही जालोर से सोनगरों का अधिकार समाप्त हो गया था। तदनन्तर वे जागीरदारों के रूप में रहने लगे तथा मुगल काल में भी प्रभावशील रहे एव उनका भी उल्लेख ख्यात० में है।[4]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५३-५७।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५८-६१।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १६२-६८, १६८-६६।
४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २०२-२६।

उधर साचोर पर दहिया राजपूतो का आधिपत्य था। जालोर के विजेता कीतू के ही छोटे भाई चौहान विजयसिह ने दहियो को पराजित कर साचोर पर अधिकार कर लिया। तब उसके वशज साचोरा कहलाय। नैणसी ने विजयसिह के पूर्व की पीढी और विजयसिह के बाद विशेषत तब सुविख्यात साचोरा वरजाग के वशजो की विस्तृत वशावली दी है। उसमे कौन साचोर का अधिकारी हुआ, कौन किसी राजा का जागीरदार बना, उसे कौन-सा गाँव पट्टे मे मिला, कौन कहाँ किस युद्ध आदि मे मारा गया आदि प्रमुख व्यक्तियो का सक्षिप्त उल्लेख कर दिया गया है।[1]

राजस्थान और मालवा मे चौहानो की कई और भी छोटी-मोटी शाखाएँ महत्त्वपूर्ण रही हैं जिनका कालान्तर मे प्रभाव और अधिकार-क्षेत्र घटा ही है। परन्तु उनके ऐतिहासिक महत्त्व के कारण नैणसी ने अपनी ख्यात० मे उन उल्लेखनीय शाखाओ का भी विवरण दिया है। नाडोल के आसराव के सबसे छोटे लडके सोहड के पुत्र मुधा की सन्तान की भी जानकारी दी है, जो बागड प्रदेश मे बस जाने के कारण बागडिया चौहान कहलाये।[2]

बोडा भी चौहानो की एक शाखा है। ये भी नाडोल के शासक राव लक्ष्मण के वशज और सोनगरा चौहानो के आदिपुरुष कीतू के पौत्र भाखरसी के पुत्र, बोडा के वशज होने क कारण बोडा चौहान कहलाय। उनका वतन जालोर परगने का गाँव सैणा था। नैणसी ने अपनी ख्यात० म सैणा का सिरोही से जालोर परगने म सम्मिलित होन और मारवाड के राजा सूरसिह के साथ वैवाहिक सबध आदि का विवरण दिया है। बाद मे जब जालोर परगने के साथ ही, सैणा के ताल्लुक के गाँव भी राव महेशदास के आधीन हो गय तब महेशदास के उत्तराधिकारी शासक रतनसिह ने कल्याण बोडा को मारकर सैणा को भी अपने अधिकार मे ले लिया। तब बचे खुचे बोडा चौहान बिखर गये।[3]

चौहानो की एक शाखा कापलिया चौहान कहलाई। साचोर परगने के कापला गाँव के निवासी महेवा के राव मल्लिनाथ के साथ हुए झगडे म कुभा कापलिया की मृत्यु के बाद सपत्ति के बँटवारे सबधी वृतात दिया गया है।[4]

खीची भी चौहानो की दूर-दूर तक फैली हुई बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रभावशाली शाखा रही है। ये भी राव लक्ष्मण के ही वशज हैं। नैणसी ने खीची कहलाने वाले माणकराव के वशजो सबधी वृतात दिया है। अजमेर के पृथ्वीराज चौहान

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२९-४४।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११९ २१।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २४५।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २४८।

(द्वितीय) की राणी सुखदे के गुदलराव से प्रेम सबधी वृत्तात, गुदलराव का मालवा के उत्तर-पश्चिमी गागारोन-सारगपुर के प्रमुख क्षेत्र पर अधिकार, कोटा के निकट गाँव सुरसेन मे आना, खीची का डेरा और उसके पुत्र धारू के स्वर्ण मुद्राएँ प्राप्त करने सबधी कथा और वही खीचीवाडे की स्थापना करना और अन्त मे मुगलो के साथ खीचियो के सबधो आदि के विवरण हैं।[1]

मोहिल भी चौहानो की शाखा है। मोहिल के वशज मोहिल चौहान कहलाय। नैणसी ने मोहिल के पूर्व की पीढियाँ दी हैं। मोहिल ने छापर-द्रोणपुर पर अधिकार किया तब से यह क्षेत्र मोहिलवाटी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। छापर द्रोणपुर नामकरण सबधी और वर्तमान दशा और डाहलिया और वागडिया का युद्ध और अन्त मे वागडियो को पराजित कर मोहिल द्वारा अधिकार सबधी विवरण दिया गया है। मोहिल से अजीतसिह तक की पीढ़ी दी हुई है। अजीत मोहिल और जोधपुर के राव जोधा के मध्य कौटुम्बिक सबध होते हुए मोहिलों को अपने आधीन बनाने को लकर उनके साथ राठोडो का वैर बँधन और तदनन्तर हुए सघर्ष-वृत्तात, राव जोधा का मोहिल राणा वैरसल और नरवद से सघर्ष और अतत जोधा द्वारा छापर द्रोणपुर पर अधिकार कर लेने सबधी विस्तृत विवरण दिये हैं।[2]

नैणसी के अनुसार कायमखानी भी चौहानो की शाखा थी। ये दरेरा के निवासी चौहान थे। हिसार के फौजदार सैय्यद नासिर ने दरेरा को लूटा और एक चौहान बालक को प्राप्त कर उसका पालन-पोषण किया। नासिर की मृत्यु के बाद वह बालक सुल्तान बहलोल लोदी को नजर कर दिया गया। तब सुल्तान बहलोल लोदी ने उस बालक का नाम क्याम खाँ रखा और उसी के वशज कायमखानी चौहान कहलाये। बाद में क्याम खाँ ने झूजनू को बसाया था। झूजनू अकबर के समय में राठोड माण्डण को जागीर मे मिला आदि विवरण दिया गया है।[3]

रणथभोर के हमीर चौहान के वशज न गुजरात पहुँचकर वहाँ पावागढ क्षेत्र पर अधिकार किया तथा अपने स्वतत्र राज्य की स्थापना की थी। उसी वशक्रम मे रावल जयसिह हुआ जो पताई रावल के नाम से प्रसिद्ध था। उसके समय म गुजरात के सुल्तान महमूद बेगडा ने आक्रमण कर उसे जीत लिया था। पावा-गढ़ के इस साके की भी बात नैणसी ने दी है।[4]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २५० ५७।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३ पृ० १५३ ७२।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २७३-७५।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २५ २६

३ इतर अग्निवशी राजपूत राजघराने

नैणमी न इतर अग्निवशी राजपून राजघरान सोलकी पड़िहार और परमारो का भी विवरण अपनी ख्यात० म लिखा है।

सोलकिया की विभिन्न शाखाओ की सूची, सोलकियो की वशावली आदि नारायण से मूलराज तक की दी गयी है। टोडा म सोलकी राजा क पाटण आन और उसके पुत्र मूलराज द्वारा पाटण पर अधिकार करन सम्बन्धी कथा का वणन मूलराज द्वारा लाखा (फूलाणी) को मारन सबधी वृत्तात और सिद्धराज सोलकी द्वारा रुद्रमाल का मन्दिर बनवान सबधी कहानी का विवरण दिया गया है। सवत १७१७ भाद्रपद वदि ७ को मुहणोत नैणसी स्वय का डेरा सिद्धपुर म हुआ था। तब उसन वहाँ स प्राप्त जानकारी क आधार पर सिद्धपुर का विवरण दिया है। इसके अतिरिक्त मूलराज ने भीमदेव तक क राजाओ के शासनकाल का भी इतिवृत्त लिखा है। वाघेला सोलकी वीर धवल न सवत १२५१ वि० म भीमदेव से गुजरात छीन ली थी। नैणसी न गुजरात क विभिन्न वाघला सोलकी राजाओ क शासनकाल तथा अल्लाउद्दीन खिलजी द्वारा उनस गुजरात छीन लेन और तब वहाँ अपन अधिकारी उमरावो को नियुक्त करने अलाउद्दीन के उत्तराधिकारी कुतुबुद्दीन के समय म वहाँ की प्रजा स १८ प्रकार क कर वसूल करन तथा अकबर द्वारा गुजरात पर अधिकार करन तक का सक्षिप्त विवरण दिया है। इसके अतिरिक्त वाघले द्वारा बधवगढ पर अधिकार करन सम्बन्धी वृत्तात है। सोलकियो का मेवाड म आने और देसूरी पर उसक १४० गाँव पट्टे मे प्राप्त करन के वृत्तान्त के साथ ही उनकी वशावली भी दी है।

इसी प्रकार खैराड के सोलकिया की मुगलकालीन स्थिति माडलगढ से अन्य प्रमुख नगरो की दूरी आदि टोडा क सोलकिया की वशावली राव सुरताण द्वारा टोडा छोडकर राणा रायमल की सेवा म जाना और वहाँ राणा रायमल क राजकुमार जयमल क साथ सुरताण के युद्ध जयमल का मारा जाना आदि का विवरण और नैणव के निवासी नाथावत सोलकियो क क्रमश बूदी और बाद मे मुगल सेना मे जान सबधी इतिवृत्त भी दिये है।[1]

नैणसी की ख्यात० मे पडिहारो की विभिन्न शाखाओ तथा उसके काल म उनम म प्रत्येक के निवास आदि का उल्लेख किया गया है। सिखरा पडिहार का भूत स मुकाबला सबधी कथा एक सिंह को मार डालने पर ऊदा उगमणावत और सिंधलो के मध्य हुए वैर और आपसी झगडो का विवरण है। मेला

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ६० २५८-८५।

सेपटा के मारे जाने के बाद ही यह वैर समाप्त हुआ था। नैणसी की ख्यात० के अनुसार स० ११०० वि० मे नाहरराव पडिहार ने मडोवर बसाया।[1]

नैणसी की ख्यात० के अनुसार परमार भी अग्निवशी हैं और उनकी कुल-देवी सचियाय है।[2] नैणसी ने परमारो की ३६ शाखाओ का उल्लेख किया है।[3] साथ ही दो अलग अलग वशावलियाँ दी हैं, परन्तु उनमे दिये नाम एक-दूसरे मे पूरी तरह असम्बद्ध और विभिन्न क्षेत्रीय तथा विभिन्न कालीन ही हैं। मालवा अथवा राजस्थान के प्रमुख ऐतिहासिक परमार राजवशो का कोई क्रमबद्ध विवरण नैणसी ने नहीं दिया है। परन्तु पश्चात्कालीन शतियो मे मुख्यतया मारवाड या जागलू क्षेत्र मे तब प्रभावी साखला परमारो की वार्ताएँ ही दी हैं।[4] परमारो की साखला शाखा की उत्पत्ति सबधी वृतात दिया है और वैरसी का रूणवाय मे बसना और रूणकोट के निर्माण का उल्लेख है।[5] इसके बाद नैणसी ने रूण के साखलो की पीढियो की सूची दी है, साथ ही व्यक्तियो के विशिष्ट कार्य अथवा किसी विशिष्ट घटना का उल्लेख भी कर दिया है।[6] तदनन्तर साखला परमारो द्वारा जागलू पर अधिकार करने और उनकी गति-विधियाँ तथा उनकी पीढियाँ दी हैं।[7] नापा साखला राव जोधा के पास जाकर बीका जोधावत को जागलू ले आया और यो जागलू पर राठोडो का अधिकार हो गया और तदनन्तर साखले उनके सेवक बन गये।[8]

सोढा भी परमारो की पैंतीस शाखाओं मे से एक है। सोढा दुर्जनशाल उमरकोट का शासक हुआ था। नैणसी ने सोढा की पीढी—सोढा से राणा ईश्वरदास तक की दी है। उसम व्यक्ति विशेष म सबधित विशिष्ट घटनाओ का भी उल्लेख कर दिया है।[9] इसी प्रकार पारकर के सोढा की वशावली

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८६-९० ३, पृ० २५० ६५, २८। पडिहारो प्रतिहारो का यह विवरण मूलत तब मालानी आदि क्षेत्र मे बस कर वहाँ शासन कर रहे राठोड राजाओ और उनसे सम्बन्धित इंदा परिहारो आदि की दतकथाओं आदि पर ही निर्धारित है। मण्डावर के ऐतिहासिक पडिहार राजाओं सबधी कोई ख्यात नैणसी को नहीं प्राप्त हुई जान पडती है।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३६, ३, पृ० १७५।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८६।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३६ ३७, ३, पृ० १७५-७६।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३८-३९।

६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३९-४३।

७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३४४ ५३।

८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३५३-५४।

९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३५५-६२।

धरणी वराह से लूणा तक की दी है। साथ ही पारकर की भौगोलि
परिस्थितियों की जानकारी, यहां की मुख्य पैदावार और पारकर की सीमा
का विवरण भी दिया गया है।[1] भायल भी परमारों की एक शाखा है। नैण
ने सजन भायल को महाऋषि से जोड़ा है। अलाउद्दीन के समकालीन इस स
भायल के बाद विस्तृत वंशावली दी जिसमें व्यक्ति विशेष से सबंधित विशि
घटनाओं का उल्लेख भी कर दिया गया है।[2]

४. कछवाहे और उनकी विभिन्न खांपें

नैणसी ने अपनी ख्यात० में आम्बेर के कछवाहों के बारे में तीन अलग-अल
वंशावलियां दी हैं। प्रथम में आदि नारायण से राजा जयसिंह तक पीढ़ियों की सू
दी गयी है। साथ ही राजा भारमल से राजा जयसिंह तक उनके पुत्रों के नाम भ
दिये गये हैं।[3] दूसरी में आदि से राजा पूज तक की सूची और साथ ही राज
हरचंद, श्री रामचन्द्र जी, राजा ढोला, राजा सुमित्र, राजा सोढ़, राजा कांकि
राजा मलैसी, राजा बीजलदे, कल्याणदे, कुतल, जुणसी, उदैकरण और क
वीर के बारे में संक्षिप्त विवरण और पुत्रों का नामोल्लेख किया गया है।
तीसरी के अनुसार श्री रामचंद्र के कुश हुआ उससे उसके वंशज कछवाहे कहला
और राजा सोढ़ल नरवर छोड़ ढूंढाड आया। राजा सोढ़ल से राजा जयसिंह त
की पीढ़ी तथा विशिष्ट घटनाओं का उल्लेख तथा राजा भारमल से राज
जयसिंह तक के राजाओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।[4] इसके अतिरिक्त
राजा पृथ्वीराज का ईश्वर भक्ति संबधी वृतांत दिया है।[5] तीसरी वंशावल
में राजाओं के पुत्रों आदि से जो विभिन्न खांपें निकली उनका भी उल्लेख किय
गया है। नैणसी ने राजा पृथ्वीराज के सब ही पुत्रों और वंशजों की पूर
वंशावलियां दी हैं और उनमें विशिष्ट व्यक्तियों के सम्बन्ध में टिप्पणियां भ
जोड़ दी हैं, जिनमें यदा-कदा संवत् भी दे दिये हैं। कछवाहों की नरूका औ
शेखावत शाखाओं की भी पूरी वंशावलियां दी गयी हैं। इन सब ही विभिन्
खांपों के उल्लेख के साथ ही साथ कुछ विशिष्ट जागीरदारों की जागीर, उनके
वैवाहिक सम्बन्ध, उनकी विभिन्न राज्यों के शासकों, मुगल बादशाहों औ
मुगल मनसबदारों के आधीन सेवा, उनके द्वारा किसी युद्ध में भाग लेना, यु

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १६३-६५।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १६३-२०१।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २८७-९१।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९१-९५।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९५-९७, २९८-९९।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९६।

म घायल होना अथवा मारे जाने और वे किसी शासक अथवा जागीरदार और बादशाहो के पक्ष म लडकर मारे गये आदि का भी यथास्थान विवरण दिया गया है। इससे कछवाहा खांपो के इतिहास के साथ-साथ जागीरदारी व्यवस्था, वैवाहिक सबधो पर भी प्रकाश पडता है।[१] यह बात उल्लेखनीय है कि आम्बेर के राजाओ की सूचा मे भारमल के पुत्र और मानसिंह के पिता भगवतदास का ही नाम है।[२] भगवतदास के छोटे भाई भगवानदास को भी 'राजा' की उपाधि थी और वह भी अकबर का प्रतिष्ठित मनसबदार था। अत आवश्यक जानकर उसका भी उल्लेख नैणसी ने किया, परन्तु भ्रातिवश 'आम्बेर टीकाई' लिख दिया[३], जिससे पश्चात्कालीन इतिहासकारो म भ्राति बढ गयी थी।

५ जैसलमेर के भाटी और उनके पडोसी क्षेत्र

मुहणोत नैणसी की ख्यात० मे जैसलमेर के भाटियो के बारे मे बहुत विस्तृत ब्योरेवार जानकारी दी गयी है। ख्यात० मे जैसलमेर की भौगोलिक स्थिति, जैसलमेर की सीमाएँ, खडाल क्षेत्र के गांवो के नाम, वहां की मुख्य पैदावार, जैसलमेर से अन्य प्रमुख नगरो की दूरी, जैसलमेर राज्य की आय के साधन और कर आदि का ब्यौरेवार विस्तृत विवरण है।[४] नैणसी ने भाटियो की दो वशावलियाँ भी दी हैं। प्रथम मे आदि से रावल मनोहरदास तक[५] दूसरी म जैसल से रावल सबलसिंह तक का विवरण दिया गया है।[६] इसमे जैसलमेर के रावल और अन्य प्रमुख व्यक्तियो के सम्बन्ध मे भी सक्षिप्त जानकारी और विशिष्ट घटना का उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त नैणसी की ख्यात० म भाटी, वछराव मझमराव, मगलराव, केहर, तणु, विजयराव चुडालो, मध, वछु, दुसाल, विजयराव लाजो और भोजदे के नामोल्लेखो के सिवाय उनमे से प्रत्येक से सम्बन्धित विशिष्ट घटना का विवरण और उनके पुत्रो की नामावलियाँ आदि दी गयी हैं।[७] रावल जैसल से सबलसिंह तक के जैसलमेर के शासको का सक्षिप्त विवरण दिया है।[८] इसके साथ ही इन सब ही शासको के पुत्रो आदि की वशावलियाँ भी दी गयी हैं, जिसम विशेष

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९८-३३२।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९५।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९७।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ३ ६, १२।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ९-११।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६२ ६३।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १५ ३४।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २, पृ० ३५ ६२, ६४ १०८।

कर १७वी सदी के जागीरदारो सम्बन्धी विशिष्ट घटनाओ का उल्लेख भी कर दिया गया है। नैंणसी की ख्यात० मे जैसलमेर के केलणोत भाटियो की राव केलण से १७२२ वि० तक की विस्तृत वशावली दी गयी है। राव केलण के अधिकार मे विकुपुर, पूगल, वैरसलपुर, मोटासर और हापासर था। केलण के मरने के बाद उसके आधिपत्य का क्षेत्र उसके वशजो मे बँट गया था। इस प्रकार केलणोत शाखा के भाटियो का अधिकार विकुपुर, पूगल और वैरसलपुर पर बना रहा था। पूगल के राव केलण से राव सुदर्शन तक, विकुपुर के दुर्जनसाल से जैतसी तक और वैरसलपुर के रावत खीवा से कर्णसिंह तक का विवरण इस ख्यात० मे मिलता है। इसके अतिरिक्त केलणोत भाटियो की वशावली दी गयी है। साथ ही उस शाखा के विशिष्ट व्यक्तियो की जागीरो, गाँवो, किस शासक का जागीरदार अथवा सेवक रहा इसकी जानकारियाँ, किस युद्ध मे वह मारा गया आदि सब ही मुख्य बातें अथवा विशिष्ट घटनाओ का उल्लेख है।[१] इसके अतिरिक्त जेसा और रूपसिहोत भाटियो की शाखा का भी विस्तृत विवरण दिया है।[२] इस प्रकार १६वी और १७वीं सदी म केलणोत एव अन्य भाटियों के कार्यों तथा उनकी जागीर व्यवस्था पर पूरा-पूरा प्रकाश पडता है। नैंणसी ने केलणोत भाटियो की विभिन्न शाखाओ का भी विवरण दिया है। नैंणसी की ख्यात० म पूगल, विकुपुर, वैरसलपुर और खारबारे के भाटियो की सूचियाँ दी हैं। नैंणसी की ख्यात० मे दिये गय विवरण क सदर्भ मे देखन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि उक्त सूचियो मे पूगल के राव सुदशन, विकुपुर के राव जैतसी और वैरसलपुर के राव कर्णसिह के बाद के नाम पश्चात्कालीन प्रतिलिपिकर्ता द्वारा ही जोडे गये हैं।[३] इसी प्रकार जैसलमेर के रावल की एक अस्पष्ट सी वशावली भी दी गयी है।[४] नैंणसी की आज सुलभ ख्यात० मे 'सिरगोता री पीढी' शीर्षक स अनेकानक ठिकाणो अथवा विशिष्ट जागीरो क सरदारो की पीढियाँ दी गयी है।[५] परन्तु इनके सम्बन्ध म यह कहना सभव नही है कि इन नामावलियो मे कितन नामो को नैणसी न अपनी ख्यात० म सम्मिलित किया था या नही, और कोई नामावलियाँ तब उसने सकलित करवाई हो तो उनम कितन नाम बाद म प्रतिलिपिकारो ने जोड दिय थे क्योकि अधिकाश ठिकाणों की वशावलिया सुलभ नही हैं।

नैंणसी ने खडाल के गाँवों की सूची तथा राजस्व आदि की जानकारी

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ११२-५२
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २ पृ० १५२ २०१।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ३६ ३७।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ३३ ३५।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३ पृ० २२३ ३४।

विठलदास से प्राप्त की थी। इसी प्रकार स० १७०० माघ वदि ६ को मुहता लखा से विभिन्न साधनो से जैसलमेर राज्य की आय और जैसलमेर के सीमात गाँव आदि का विवरण प्राप्त किया था। अत इनकी प्रामाणिकता मे सदेह नही है। नैणसी ने जैसलमेर के प्राचीन राजनैतिक इतिहास का विवरण चारण, भाटो की जानकारी के आधार पर तथा प्रचलित दतकथाओ अथवा वार्ताओ के आधार पर दिया है। अत ओझा० (दूगड०) के अनुसार रावल जैसल से सबलसिंह तक के ४५४ वर्ष के काल मे २३ राजा हुए अर्थात प्रत्येक के राज्य समय का औसत १६.७४ वर्ष आता है सो ठीक है। परन्तु राव भाटी से रावल जैसल के समय तक के ५३७ वर्ष के काल मे कुल १३ राजा होने की जो बात कही जाती है वह विश्वास के योग्य नही।[1] रावल मूलराज से पूर्व के शासको की प्रामाणिक सूची निर्धारित कर सकने या उनके शासनकाल सबधी जाँच के लिये कोई प्राचीन शिलालेख आदि किसी भी प्रकार की कोई सभावित सामग्री उपलब्ध नही है। अत नैणसी मे वर्णित जैसलमेर के भाटियो का स० १४०० के पूर्व का इतिहास सदिग्ध मान लेने मे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए।[2]

६ अपर राजपूत वश अथवा राजघराने

राजस्थान मे भी राजपूतो की इन विशिष्ट खाँपो के अतिरिक्त कई एक सामान्य राजपूत राजवश थे, जिनके अपने कई स्वतत्र राज्य राजस्थान से बाहर तब विद्यमान थे। उनमें से विशेष उल्लेखनीय झाला राजवश था, जिसकी उपेक्षा नही की जा सकी। अत नैणसी ने झाला राजपूतों का विवरण दिया है, जिनका मूल स्थान हलवद था। अत नैणसी ने हलवद के मकवाणा झाला राजवश आदि का पर्याप्त विवरण दिया है। हलवद दुर्ग, हलवद क्षत्र की पुख्य फसलें, १७१६ वि० मे हलवद नगर की जनसख्या, हलवद नगर से अन्य प्रमुख नगरों की दूरी आदि का विवरण, और उसी राजवश की वाकानेर शाखा का भी विवरण दिया है। सौराष्ट्र प्राय द्वीप मे तब सुज्ञात झालावाड क्षेत्र के परगनो का विवरण दिया है। नैणसी० मे हलवद के स्वामी मानसिंह और उसके पुत्र रायसिंह का भी विवरण है, क्योंकि जब झाला रायसिंह और उसके साले जसा जाडेचा मे मनमुटाव के परिणामस्वरूप युद्ध हुआ उसके दूरगामी परिणाम हुए थे जिनका विवरण दिया है।[3] हलवद से ही आकर झाला मेवाड मे निवास

---

१ दूगड०, २, पृ० ४४५।

२ दूगड०, २, पृ० ४३६-४२, ४४३।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २५८ ६१, २६६ ५७, २४४ ५५।

करने लगे। नैणसी ने मेवाड़ में आन के पूर्व की झाला की पीढ़ियाँ दो हैं तथा मेवाड़ के झाला घराने की वंशावली दी है। इसमें विशिष्ट व्यक्तियों के संबंध में संक्षिप्त जानकारी दी है।[1] मेवाड़ में आने के पूर्व की पीढ़ियों को छोड़कर नैणसी द्वारा दिया गया मेवाड़ के झाला घराने का वर्णन विश्वसनीय ही है।

ईसा की १६वी सदी के अन्तिम युगों से ही ओरछा के बुंदेला राज्य तथा वहाँ के राजाओं का महत्त्व बढ़ा लगा था। जहाँगीर के समय में बुंदेला राजा वीरसिंहदेव का प्रभाव और महत्त्व बढ़ गया था। अतः नैणसी ने बुंदेलों का भी संक्षिप्त विवरण दिया है। ओरछा के शासक राजा वीरसिंहदेव बुंदेला के आधिपत्य के परगना प्रत्येक परगने के गाँवों की संख्या और प्रत्येक परगने की वार्षिक आय तथा उस राज्य के विभिन्न दुर्गों का विवरण दिया है। उक्त विवरण नैणसी ने सं० १७१० वि० (१६५३-५४ ई०) में दतिया के बुंदेला शुभकर्ण के सेवक चक्रसेन से प्राप्त कर लिखे थे। उस समय शुभकर्ण बुंदेला महाराजा जसवंत सिंह की सेवा में था। तदनन्तर ही वह औरंगजेब के पास दक्षिण चला गया होगा। अतः यह प्रामाणिक ही है।[2] नैणसी ने बुंदेलों की दो अलग-अलग वंशावलियाँ दी हैं। प्रथम में जो वीरसिंहदेव के राजकवि आचार्य केशवदास कृत कविप्रिया के आधार पर लिखी है जो राजा वीरू गहरवाड़ से किसोरशाह[3] तक है और दूसरी मे राजा वीरू से राजा पहाड़सिंह तक की सूची दी गयी है। दोनों में बीरू के बाद राजा नागदे अथवा नानगदे के पूर्व के नामों में साम्य नहीं है, परन्तु राजा नागदे से राजा अर्जुनदे तक समानता है, उसके बाद दूसरी में मलूखां (मलखान) का नाम अधिक है। तदनन्तर आगे प्रथम में मधुकरशाह के ग्यारह पुत्रों का नामोल्लेख तथा दूसरी में वीरसिंह के पुत्र और पौत्रों तथा रुद्रप्रताप के ही अन्य वंशज तक सुविख्यात चंपतराय के वंशज का भी उल्लेख किया गया है।[4] इसके अतिरिक्त वीरसिंहदेव और जुगराज का कुछ संक्षिप्त में विवरण दिया है। अन्य प्रमाणों[5] से जाँचने पर नैणसी का दिया गया यह विवरण प्रामा-

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २ पृ० २६२ ६५।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० १२७ २८ १३०. भीमसेन तारीख० पृ० ११ १७।

३ कविप्रिया० (छंद ५ से ४१) में भारतशाह तक के नाम हैं। भारतशाह के उत्तराधिकारी पुत्र देवीशाह (देवीसिंह) और उसी के पौत्र किशोरशाह नैणसी के समकालीन थे एवं ये नाम नैणसी ने ही जोड़ हैं। इसी प्रकार भारतशाह के पौत्र जगतमणि जो महाराजा जसवन्तसिंह की सेवा में रहा था तथा उसके पिता किशोरशाह के नाम नैणसी ने निजी जानकारी से जोड़े होंगे। ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० १२८ ३०।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० १३० ३१।

५ वंशावली० पृ० १४ गजटियर (ओरछा०) पृ० १३ ३१। बुंदेलखण्ड० (परिशिष्ट) पृ० ३८३ ८६ ३६२।

णिक ही प्रतीत होता है ।

नैणसी ने भुज नवानगर के स्वामी जाडेचा राजवश का भी विवरण दिया है । नैणसी ने प्रचलित गीतो व यश वर्णन के आधार पर इनको यदुवशी लिखा है ।[1] नैणसी ने जाडेचो की गाहरियो से तमाइची तक की पीढियाँ दी हैं । भुज के स्वामी रायधण के पुत्र भीम द्वारा कच्छ की भूमि पर योगी गरीबनाथ की कृपा से आधिपत्य जमाने सबधी वृतात दिया है ।[2] भीम के वशजो का भुजनगर पर अधिकार रहा । नैणसी ने भीम से खगार (दूसरा) तक भुज के रावों की पीढियाँ दी हैं ।[3] नैणसी ने लाखा की बात मे लिखा है कि किलाकोट (कथकोट) मे हाला और रायधण दो भाई थे, जिनके वशज हाला और रायधण कहलाये । साथ ही रायधणिये राव और हाला जाम कहलाने लगे । भीम के समय मे घोघो ने हालो को अपने पक्ष मे करना चाहा, परन्तु असमर्थ रहा । बारह या चौदह पीढी बाद हालो मे जाम लाखा और रायधणियो मे हमीर हुए । हमीर लाखा के यहाँ मिलने गया था, वहाँ लाखा के पुत्र ने हमीर की धोखे से हत्या कर दी । तब हमीर के पुत्र खगार और लाखा के पुत्र रावल के साथ वैर प्रारभ हो गया,[4] इन दोनो के मध्य हुए झगडे का विवरण दिया गया है । नवा नगर के जाम की पीढियाँ जाम लाखा से तमाइची तक दी हैं ।[5] ख्यात० मे केलाकोट के व्यापारियो द्वारा मत्र द्वारा वर्षा बद करवा देना और उससे प्रजा का भूखों मरना, जाडेचा फूल को इस बात का पता लगने पर वर्षा पुन प्रारभ करवाना, अत्यधिक वर्षा से घायल होने पर खेरडी गाँव के जमला अदोर की

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २०६, बाम्बे गजेटियर०, ५, पृ० ५७-५८, १३२-३४।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २०६ १४ । यह विवरण अलौकिक पूर्ण काल्पनिक दन्तकथाओ पर ही आधारित है ।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २०६-१५ । इसमे प्रथम सूची अस्पष्टतया काल्पनिक ही प्रतीत होती है । दूसरी सूची ऐतिहासिकता पूर्ण होते हुए भी शासकों के क्रम में भ्रांतियाँ हैं । भुज राजघराने की मान्य वशावली के लिए देखें बाम्बे गजेटियर०, ५, पृ० १३३ ३७, २५४ ।

४ यह सारा विवरण मूलत ऐतिहासिक ही है, यद्यपि इसमे यत्र-तत्र दी गयी पीढियो की सख्या अत्युक्तिपूर्ण ही है । कथाकोट (किलाकोट) भद्रेसर से ५४ मील उत्तर-पूर्व मे है और वह बाद में ददावशीय हाला के वशजो के अधिकार म आ गया । तदनन्तर सन् १५३७ ई० बाद वे कच्छ छोडकर सौराष्ट्र चले गये और वहाँ नवानगर बसाया । सौराष्ट्र का उत्तर-पश्चिम भाग हालार-वशीयो के अधिकार मे आ जाने के कारण ही यह क्षेत्र 'हालार' कहलाने लगा । बाम्बे गजेटियर०, ५, पृ० २२४ २५, २१४, १३४; १३६, २४५, ८, ५६६, ५७६ ।

५. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २२४, ये पीढ़ियाँ और विवरण ऐतिहासिक है । बाम्बे गजेटियर०, ५, पृ० १३५-३६; ८, ५६६-७३ ।

कुमारी कन्या द्वारा उसे अपने साथ सुला होश म लाना तथा उसी कन्या से लाखा का जन्म होने सबधी वृतात दिया है। लाखा का अपने पिता के पास जाना, फूल की राणी का लाखा पर आसक्त होना और लाखा द्वारा उसकी माँग को ठुकराने पर देश निकाला तथा फूल के मरन के बाद गद्दी पर बैठना, उसकी सोढ़ी राणी द्वारा मनबोलिया डोम क साथ रतिरग मनाना, आदि रोमांचक वृतात दिया गया है।[1] उक्त सारा विवरण एतिहासिक कम और तत्कालीन धार्मिक और सामाजिक दशा पर अच्छा प्रकाश डालता है। इसी प्रकार नैणसी ने सिंध क जाम ऊनड (सम्मा) द्वारा कवि सावल सुध को आठ करोड पसाव के रूप म राज्य कवि को प्रदान कर स्वय समुद्र के बेट (द्वीप) म चला जाने की बात लिखी है।[2] जाम सत्ता का अमी खाँ आजम खाँ से युद्ध और जाम सत्ता के गीत का उल्लेख किया है।[3]

णसी ने सरवाहिया जादव वश[4] का भी विवरण दिया है। गिरनार के स्वामी राव मण्डलीक द्वारा नागड़ी गाँव के चारण रखा के बछेरे प्राप्त करन का प्रयत्न तथा अन्त म उसकी पुत्रवधू पदमिनी पर आसक्त हो उस प्राप्त करन नागड़ी पहुँचना पदमिनी दवी रूप थी अत उसके द्वारा मण्डलीक को श्राप देना जिसस दुग पर महमूद बगडा का अधिकार होना, मण्डलीक को मुसलमान बनाना सबधी वृतात दिया है।[5] महमूद बेगडा के मरने क बाद गिरनार पर पठानो का अधिकार रहा था। अक्बर की सना न अमी (अमीर) खाँ गोरी को पराजित कर गिरनार पर अधिकार किया। उक्त विवरण पूर्ण रूप से ऐतिहासिक है।[6] साथ ही सरवाहिया जैसा की बीरता सबधी वृतात दिया गया है।[7]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २ पृ० २२५ ३५।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २ पृ० २३६ ३६।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २ पृ० २४० ४३ बाम्ब गजटियर० ५ पृ० ५६७ ६६।

४ य सरवाहिया यादव वस्तुत सौराष्ट्र मे राजपूतो की प्रमुख खांप चूडासमा की ही एक शाखा है। ये सब ही चूडासमा मूलत सम्मा वशीय चूडा के ही वशज है जो सम्मा वशीय जाडेचा कुल के आदि पुरुष 'जाडा का भाई था। ये दोनो ही वश सिंध से कच्छ और बाद म सौराष्ट्र म जा पहुचे थ। रणछोडजी कृत तारीख इ सौराष्ट्र दूगड० २ पृ० २५० ५४ पा० टि० बाम्ब गजटियर० ८ पृ० ४८६ ६० ५६५ ६६ ६ पृ० १२४ १२५ १२६।

५ मण्डलीक को चारण नागबाई की पुत्रवधू द्वारा श्राप दिय जान की इसी कथा को प्राय चारणा द्वारा कहा जाता रहा है रणछोडजी ने तारीख इ-सौराष्ट्र मे भी दी है। बाम्ब गजटियर० ८ पृ० ४९९ ५०० मीरात इ सिकन्दरी (अं० अ०) पृ० ५२ ५८ ५९।

६ दूगड० २ पृ० २५० ५१ २५२ पा० टि० १ और २ बाम्ब गजटियर० ८ पृ० ५०० ५०१ मीरात इ सिकन्दरी (अ० अ०) पृ० १११ ११४ २७० २८५ ३१३, ३१४, ३२५ २६।

७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० २०६ २०८ इस प्रकार की घटनाओ के उल्लेख फारसी ग्रथो मे नही मिलते हैं।

अध्याय : ८

नैणसी के ग्रन्थों में ऐतिहासिक भूगोल

इतिहास और भूगोल का सदैव से अकाट्य पारस्परिक सम्बन्ध रहा है। देश-प्रदेश, क्षेत्र या राज्य का प्राकृतिक प्रतिवेश वहाँ के जनजीवन, तथा समाज के सब ही पहलुओं को प्रभावित करता है। उन्ही से वहाँ की राजनीति का स्वरूप बनता है, परम्पराएँ स्थापित होती हैं, आर्थिक विकास या अभाव आदि सब ही प्रकार की गतिविधियाँ निर्धारित होती हैं। सामाजिक और सास्कृतिक परिस्थितियाँ वहाँ के निवासियो के मानवीय चिन्तन और आध्यात्मिक, भौतिक व धार्मिक दृष्टिकोणो को दिशा देते हैं और शासकीय व्यवस्था और प्रशासनिक सगठन की रूपरेखा को ही बहुत-कुछ निर्धारित करते हैं। यही कारण है कि इतिहास सम्बन्धी निरन्तर उठने वाले कब, क्यो, कैसे और किसने विषयक अधिकाश प्रश्नो और अनबूझ उलझनो का सही हल निकालने के लिए वहाँ के भूगोल और उससे सम्बन्धित सब ही प्रभावो, परिणामो आदि को जानने-बूझने का प्रयत्न करना पडता है।

किन्तु इतिहास की घटनाओ, उनके परिणामो, प्रभावो आदि के फलस्वरूप वहाँ का मानवीय भूगोल जो स्वरूप लेता है, जिस प्रकार वह परिवर्तित होता रहा है, वह सब इतिहास की ही देन होती है। अत जिस प्रकार किसी भी क्षेत्र के इतिहास पर अनुसधान करने वाले को उस क्षेत्र तथा पास-पडोस या सम्बन्धित प्रदेशो के भूगोल तथा वहाँ के प्राकृतिक प्रतिवेश आदि को पूरी तरह समझना-बूझना पडता है, उसी तरह उस क्षेत्र के इतिहासकार के लिए और विशेषतया वहाँ की विस्तृत विवरणिका प्रस्तुत करने वाले के लिए यह अत्यावश्यक हो जाता है कि वह सम्बन्धित क्षेत्रो अथवा क्षेत्र विशेष के मानवीय भूगोल की ओर भी ध्यान देवें।

नैणसी ने जहाँ अपनी ख्यात० मे अनेको राजघरानो द्वारा स्थापित राज्यो के इतिहास लिखे, वही उसने अपनी विगत० मे जोधपुर राज्य के आधीन मारवाड के परगनो के क्रमबद्ध इतिहास के साथ ही उनके बारे मे विस्तृत विवरणिका भी लिखकर तैयार की थी। जैसा कि पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है नैणसी

को इतिहास बोध की ही तरह भूगोल बोध भी पूरा था। अत अपने इन दोनो ग्रन्थो मे उसने यथाशक्य अथवा आवश्यकतानुसार मानवीय भूगोल की ओर भी पूरा पूरा ध्यान दिया है। अत इतिहासकार नैणसी सम्बन्धी इस अध्ययन मे उसके इतिहास-लेख के इस पक्ष विशेष की भी देखभाल अनिवार्य हो जाती है। परन्तु उन दोनो ग्रन्थो के लेखन म नैणसी का उद्देश्य और दृष्टिकोण सर्वथा भिन्न थे, एव इस सन्दर्भ म प्रत्येक का विवेचन अलग-अलग करना ही समीचीन जान पडता है।

१ परगना री विगत

जैसा कि अध्याय-५ म ही लिखा जा चुका है कि विगत० म स० १७१५ (१६५८ ई०) से १७१६ (१६६२ ई०) तक का तब जोधपुर राज्य के आधीन मारवाड के प्रत्येक परगने का पचवर्षीय विस्तृत वृत्तान्त दिया गया है। अपने इन ब्योरेवार विवरणो म नैणसी ने प्रत्येक परगने के राजनैतिक और आर्थिक महत्त्व के वृत्तान्त तो दिये ही हैं, साथ ही सब ही विषयक भौगोलिक विवरण भी विस्तृत रूप मे दिये गये है। अब उनके विभिन्न पहलुओ की चर्चा की जाती है।

(क) परगने और उनके अन्तर्विभाग—उनका प्राकृतिक भूगोल

नैणसी ने अपनी विगत० म जोधपुर राज्य के आधीन मारवाड के कुल सात परगनो—जोधपुर, सोजत, जैतारण, फलोधी, मेडता, सिवाणा और पोहकरण का ही विस्तृत विवरण दिया है। यो तो मई, १६५८ ई० मे जब मुहणोत नैणसी जोधपुर राज्य का देश दीवान नियुक्त किया गया, तब मारवाड का आठवाँ जालोर परगना भी महाराजा जसवन्तसिंह के आधीन था[१], परन्तु तब भी 'जालोर परगने की विगत' नैणसी ने अपनी इस 'मारवाड रा परगना री विगत' म सम्मिलित नही की थी। यह परगना कैसे छूट गया, इस सम्बन्ध म कही कोई उल्लेख नही मिलता है कि इस प्रश्न का सन्तोषजनक हल मिल सके। मारवाड का नौवाँ परगना साचोर महाराजा जसवन्तसिंह को स० १७२१ वि० की उन्हाली (सन् १६६४ ई० के अन्तिम महीना) म ही मिला था, एव उस परगने की विगत तैयार करवाने आदि का नैणसी को समय ही नही मिल पाया था।[२]

नैणसी ने अपनी विगत० म यथास्थान मारवाड के प्रत्येक परगने की सीमाओ का सुस्पष्ट विवरण दिया है। पडोस के परगने, राज्य आदि की सीमा

---

१ विगत० १, पृ० १२६, वही०, पृ० ३, ५।
२ वही०, पृ० ३, विगत०, २, पृ० ३६१।

उस परगने विशेष के किस-किस गांव से लगती है इसकी ब्यौरेवार पूरी सूची दी है जिसके आधार पर प्रत्येक परगने की सीमाओं का रेखाकन सहज सुलभ हो गया है।[1] अब उन क्षेत्रो से सम्बन्धित 'सेन्सस ऑफ इण्डिया' की 'डिस्ट्रिक्ट सेंसस हैण्डबुक' की जिल्दो के द्वारा उन सब ही तत्कालीन गांवो की पहचान कर नैणसी कालीन परगनो या उनके अन्तर्विभागो के सुनिश्चित मानचित्र बनाये जा सकते हैं।

जैतारण और मेडता पर तो राव मालदेव के समय मे ही मुगल आधिपत्य हो गया था।[2] राव चन्द्रसेन के जोधपुर की राजगद्दी पर बैठने के बाद जोधपुर, सोजत, फलोघी और सिवाणा परगनों पर भी मुगल आधिपत्य हो गया।[3] पोहकरण परगना अवश्य ही दूसरे के हाथो मे रहा और मुगल बादशाहों द्वारा दिये जाने पर भी कोई मुगल मनसबदार सन् १६५० ई० से पहले उस पर अधिकार नही कर पाया था। तब महाराजा जसवन्तसिंह ने ही पोहकरण पर अधिकार किया।[4] मारवाड के इन अधिकाश परगनो पर ईसा की १६वीं शती के सातवें दशक या उसके बाद से ही मुगल आधिपत्य हो गया था। अत अकबर के शासनकाल मे जब मुगल शासन-व्यवस्था को सुव्यवस्थित बनाया जाने लगा तब मारवाड क्षेत्र को भी उसी ढांचे मे ढालने का प्रयत्न कर जोधपुर सरकार के अन्तर्गत अधिकांश परगनो (महलो) को रखा गया। यही नहीं, वहां की राजस्व-व्यवस्था को भी यथासम्भव मुगल प्रणाली के साथ समन्वित करने का प्रयत्न किया गया था।[5] इसी के फलस्वरूप विगत० मे कुछ परगनो के विवरणो मे उनके 'अमल दस्तूर' का उल्लेख मिलता है।[6]

आईन० के अनुसार जोधपुर सरकार को २२ महलों या परगनो मे विभक्त किया गया था। पोहकरण जैसे दो-तीन परगनो को अन्य सरकारो मे गिन लिया गया है। परन्तु ऐसा जान पडता है कि परगनो का यह विभाजन स्थायी नहीं हो पाया, और जब उस क्षेत्र पर क्रमश जोधपुर के शासको का अधिकार होने लगा तब आईन० मे अकित यहां के परगनो का विभाजन स्वत. ही परिवर्तित होता गया। यही कारण है कि राजा सूरसिंह, गजसिंह और महाराजा जसवन्तसिंह के शासनकाल मे उन्हें दिये गये परगने तथा उनकी रेख सम्बन्धी

---

१. विगत० १ पृ० ३७२-८२, ३६५, ५५५-५७; २, पृ० ६, ३२-३६, ८८-१०६, २७८ ८०, ३२०-२२।
२ विगत०, १, पृ० ४६५; २, पृ० ६३।
३ विगत०, १, पृ० ६७-६८, ३८६; २, पृ० ६, २१६।
४. विगत०, २, पृ० २६६-६८।
५. आईन० (अ० अ०), २, (द्वितीय), पृ० २८१-८२, १०६-११।
६ विगत०, २, पृ० ८८-६३, ३३४।

उल्लेख आईन० के विभाजनो से सर्वथा भिन्न ही थे। यही नहीं तब इन मानकों की जागीर आदि के जो हिसाब लेखा या तालिका शाही दरबार में बनते थे, वे भी उसी पश्चात्कालीन परगना-विभाजन के ही आधार पर बनाये जाते थे।[1]

यो निर्धारित इन परगना में से मेड़ता और जोधपुर परगने बहुत बड़े थे, अत उन परगनो को कई एक अन्तर्विभागों म विभक्त कर दिया गया था जो टप्पा अर्थात् तफा कहलाते थे। मेड़ता परगने मे हवेली समेत कुल नो तफे थे।[2] अकबर के शासनकाल मे जोधपुर परगने पर जब मुगल आधिपत्य था, तब मुगल साम्राज्य की शासन-व्यवस्था के साथ उक्त परगने को भी सुव्यवस्थित किया गया और उस समय जोधपुर परगने को कुल १४ तफों मे विभक्त किया गया था।[3] शाही कागज-पत्रो मे तफो की यही सख्या आगे भी लिखी जाती रही। परन्तु मुगल व्यवस्था के अन्तर्गत किये गये विभाजन मे जोधपुर हवेली तफा कुल मिलाकर ५०५ गाँवो का था। जोधपुर राज्य-शासन के स्थापित हो जाने के बाद शासकीय सुविधा और सुव्यवस्था की दृष्टि से यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि इस हवेली को कई-एक तफो मे विभक्त कर दिया जावे। अत पूर्व निर्धारित हवेली तफे को छ तफो मे विभक्त कर दिया गया। इसी प्रकार शाही कागज-पत्रों मे पाली और रोहट के तफे साथ ही गिने जाते थे, उन्हें भी जोधपुर राज्य के अन्तर्गत अलग-अलग लिखा जाने लगा। यो तदनन्तर जोधपुर परगने के आधीन तफो की सख्या कुल मिलाकर २० हो गयी।[4] नैणसी ने अपनी विगत० मे जोधपुर और मेड़ता परगनो के गाँवो का विवरण क्रमश २० तथा ६ तफो के अन्तर्गत ही दिया है। अन्य परगना को तफो मे विभक्त नही किया था एव उनके विवरणो मे ऐसे कोई तफो का कोई उल्लेख नहीं है।

परगनो के विवरण लिखते समय नैणसी ने सामूहिक रूप से प्रत्येक परगने के प्राकृतिक भूगोल की जानकारी नही लिखी है। नगरो, कस्बों और गाँवो का विवरण लिखते समय अवश्य ही उसने वहाँ के प्राकृतिक भूगोल की जानकारी दी है। उन सब उल्लेखो को सकलित कर प्रत्येक परगने की और उन सबकी सम्मिलित जानकारी से उस सारे मारवाड़ प्रदेश के प्राकृतिक भूगोल का विवरण तैयार किया जा सकता है।

---

१ विगत०, १, पृ० १०५-१०६, १२४ २५, १३१ ३२, १३३-३४, १४५ ४६, १५०-५६, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १२२, १५२ ५५, १६६ ६८, वही०, पृ० ३ ५।
२ विगत०, २, पृ० ७८।
३ विगत०, १, पृ० १६४ ६५।
४ विगत०, १, पृ० १६४-६५, २०३-२०४।

(ख) नगर, कस्बे और ग्राम : उनके स्थल और वहां की जीवन परिस्थितियां

नैणसी ने विगत० में मारवाड के सात परगनों के जो विवरण प्रस्तुत किये हैं, वे विवरणिकाओं (डिस्ट्रिक्ट गजेटियर) से कहीं अधिक विस्तृत और ब्यौरेवार हैं। इन विवरणिकाओं म जहां केवल प्रमुख नगरो, कस्बों अथवा विशिष्ट महत्व वाले स्थलों की ही जानकारी दी जाती है वहां इस विगत० म परगनों के प्रत्येक गांव सम्बन्धी जानकारी और बहुविध आधार-सामग्री प्रस्तुत की गयी है।

नैणसी ने विगत० मे जोधपुर के अतिरिक्त सोजत, जैतारण, फलोधी, मेडता, सिवाणा और पोहकरण आदि सभी प्रमुख नगरो का विस्तृत विवरण दिया है। उसन सर्वप्रथम इस बात का उल्लेख किया है कि उस नगर या कस्बे की स्थापना कब, कैसे और किसने की थी, और उस क्षेत्र की पूर्ववर्ती स्थिति का भी कुछ दिग्दर्शन कराया है। यो यह लिखकर कि जोधपुर नगर का पूर्ववर्ती, 'आदि शहर मडोवर थो', उसकी जानकारी दी है। वह स्वय लिखता है कि जैतारण का 'सवत् १५२५ नवो सहर वसीयो'।[1] तदनन्तर नैणसी ने बताया है कि नगर का नामकरण कैसे हुआ। जैसे परगनो मेडतो आद सहर छै, राजा मानधाता रो वसायो, यू सको कहै छै। केहीक दिन यू पण सुणीयो थो।'' एक बार कान्हडदे रो अमल हुवो छै। तठा पछै घणा दिन आ ठौड़ पाली सुनी रही छै। पछै राव जोधा वेटा बरसिंघ दूदो (ने) कहो—'म्है थानुं मेडतो दां छां, थे जाय वसो।'[2] इसी प्रकार सोजत के सम्बन्ध मे लिखा मिलता है कि—'शास्त्रो में इसका नाम शुद्धदन्ती मिलता है। प्राचीन काल मे त्रम्बावती नगरी कही जाती थी। राजा त्रम्बसेन यही राज्य करता था। उसके सोजत नामक लडकी से ही इसका नामकरण सोजत हुआ।'[3]

नैणसी ने अपने काल म इन मुख्य नगरो या कस्बो की जो स्थिति थी उसका विस्तृत ब्यौरेवार वर्णन किया है। राज्य के मुख्य केन्द्र 'जोधपुर नगर' से अन्य परगना केन्द्रों की भौगोलिक स्थिति और दूरी देकर उसको स्पष्ट किया है। वह नगर जिस स्थान पर वसा हुआ था उसकी जानकारी दी गयी है और यदि वहां कोई गढ या किला था तो उसका भी विवरण दे दिया है तथा आस-पास

---

१ विगत०, १, पृ० १ ४९३ ('प्राचीन शहर मण्डोवर था' स० १५२५ वि० नया शहर बसा)।

२ विगत०, १, पृ० ३७ (सभी ऐसा कहते हैं कि राजा मानधाता द्वारा बसाया परगना मेडता प्राचीन शहर है। किसी दिन ऐसा भी सुना था एक बार कान्हडदे का अधिकार हुआ था। उसके बाद बहुत दिनो तक यह स्थान निर्जन ही रहा बाद मे राव जोधा ने अपने पुत्रो वरसिंह और दूदा से कहा कि हम मेडता तुमको देते हैं, तुम वहाँ जाकर वसो)।

३ विगत०, १, पृ० ३८३ ८४।

यहाँ नदी-नाला हुआ तो उसका भी उल्लेख कर दिया गया है।

'फलोधी री हकीकत' के अन्तर्गत वहाँ के दुर्ग का वर्णन लिखा है कि कोट की हाथ २३८ लम्बाई और १२२ चौड़ाई है। और १६ बुरज हैं जिनकी बुरज फिरणी (चौड़ाई-व्यास) हाथ ६, और ऊँचाई हाथ २१ है। मीठे पानी की एक बावड़ी और एक तालाब है।[1]

इसी प्रकार 'सोजत शहर की बात' में लिखा है कि सोजत का छोटा सा दुर्ग छोटी-सी पहाड़ी पर बना हुआ है। थोड़े-से ही मकान उसमें हैं। राजा गजसिंह के समय में एक नया घर फिर बनाया गया था। यहाँ पर वीरमदे बाघावत का स्थान है जहाँ पूजा होती है। घोड़ों को बाँधने की घुड़शाला है। घरों के बाहर दरबार लगने का चौतरा है। एक ही प्रोल है। गढ़ के नीचे तुर्कों का बनाया हुआ एक परकोटा है। जहाँ पर राजकीय घोड़े बाँधे जाते हैं। परकोटा की प्रोल के ऊपर दीवानखाना है। नगर समतल मैदान में बसा हुआ है।[2] यही नहीं, तत्र सोजत में जितने तालाब थे उन सबका विवरण दिया गया है।[3] शहर के पास से होकर निकली सुकड़ी नदी का भी उल्लेख करते हुए उसके पानी के बारे में लिखा है कि कहीं पानी भलभला है और कहीं मीठा है।[4] उस नदी पर लगे अरहटों की संख्या भी दे दी है।[5]

इसी प्रकार नैणसी ने विगत० में सातों परगनों के प्रत्येक गाँव का विस्तृत विवरण दिया है। उसने गाँवों की भौगोलिक स्थिति पर भी प्रकाश डाला है। परगना केन्द्र नगर से गाँवों की दूरी, खेतों की किस्म, सिंचाई के साधन, गाँव की प्रमुख फसलें, नदी, नाले और तालाबों का विवरण दिया है। उदाहरणार्थ—'खारीयो नींबा रो सोझत था कोस ३ रीतड़ह में। जाट, सीरवी, बाणीया, रजपूत बसै। खेत कवला, बाजरी, मोठ, मूग, कण हुवै। ऊनाली ढीवड़ा ठा १० तथा १२ हुवै, मीठा। सीव घणी हलवा २००। नींव रा भाखर रा वाहला घणा सीव म आवै। रा० सागा सूजावत रो उतन छै। डोहली गाँव म घणी छै। जोड बीघा २००।'

'महेव-कोस ४ रीतरह दूण उत्तर रे सींधं। जाट बाणीया, मुलतानी बसै। बसी गाँव म छै। धरती हलवा २५०। जवार, बाजरी हुवै। नन्दवाणा बोहरा रहे छै। अरट २, चांच ५ मोटा, ढीवड़ी १, लूण रा आगर ५। जोड सखरो।

---

१ विगत०, २ पृ० ८।
२ विगत०, १, पृ० ३९० ९१।
३ विगत०, १, पृ० ३९२ ९३।
४ विगत०, १, पृ० ३९३ ९४।
५ विगत०, १, पृ० ४२७।

गाडा २०० री ठौड । तलाव ३, मास ८ तथा १० पाणी रहै। वेरा तलाव मे छै। वाहला २ हायता नै चावडीयाक दिसी छै। नीब था नजीक छै।[१]

(ग) मानव भूगोल और आर्थिक विवरण

नैणसी ने अपनी विगत० मे जहाँ नगरो, कस्बो गाँवो के इतिहास, वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियो, वहाँ की नदियो और तालाबो, मैदानो अथवा टेकरियों पर बने कोट-किलो आदि का विवरण दिया है, वहीं उसने उन नगरो, कस्बो और गाँवों तक मे बसने वाले जनसाधारण की ओर भी पूरा-पूरा ध्यान दिया है। कौन लोग कहाँ रहते थे, कैसे रहते थे, और उन बस्तियो के सामाजिक वातावरण तथा जातिगत सरचना की भी उपेक्षा नही की है। इस प्रकार वहाँ के समाज तथा जातीय जीवन पर पर्याप्त प्रकाश पडता है।

सन् १६६४ ई० के अन्तिम महीनो मे जोधपुर शहर की बसावट कैसी थी, कहाँ-कहाँ विभिन्न हाट-बाजार थे, विभिन्न जातियो अथवा धधो वाले कैसे-कहाँ रहते थे, जिनके जातीय नामो पर उन गलियो का नामकरण हो गया था, आदि का ब्योरा दिया गया है और समूचे जोधपुर शहर के विभिन्न नगर-द्वारो या सुज्ञात स्थलो के बीच की दूरियाँ भी दे दी गयी हैं जिससे शहर की रूपरेखा स्पष्ट हो जाती है।[२] इसी प्रकार सोजत कस्बे की बस्ती और शहर की हकीकत भी सविस्तार दी गयी है। वहाँ के मन्दिरो की सख्याएँ दी हैं जिनसे ज्ञात होता है कि सोजत मे जैन धर्मावलम्बियो की संख्या पर्याप्त ही नही थी किन्तु साथ ही उनकी आर्थिक स्थिति भी विशेष सुदृढ थी कि वहाँ कोई ८ जैन देवालय थे। वहाँ हिन्दू मन्दिरो की सख्या भी ८ ही थी जिसमे से ३ ठाकुरद्वारा अथवा वैष्णव मन्दिर थे और ३ शैव मन्दिर थे।[३] इसी प्रकार आगे अन्य परगनो के केंद्रीय नगरो-कस्बो, जैतारण, फलोधी, मेडता, सिवाणा और पोहकरण मे भी निवास करने वाली जातियो का विवरण दिया गया है। इन सब ही नगरो मे राजपूतो, महाजनों, ब्राह्मणों और कायस्थो के अतिरिक्त दर्जी, स्वर्णकार, नाई, ठठेरा, सूत्रधार, कुम्हार, सिलावट, धोबी, जुलाहा, माली, तेली, कलाल, छीपा, लुहार, मोची, भडभूजा, पींजारा, ढेढ, सरगरा, डूम आदि व्यवसायिक जातियाँ निवास करती थी।[४] यो व्यवसायिक दृष्टि से ये सब ही बस्तियाँ आत्मनिर्भर होती थी। सभी आवश्यक वस्तुओं का प्रत्येक नगर मे वहाँ ही उत्पादन होता था।

---

१. विगत०, १, पृ० ४५७।
२ विगत०, १, पृ० १८६-८६।
३ विगत०, १, पृ० ३६०-६२।
४ विगत०, १, पृ० ४६७, २, पृ० ६, ८३-८६, २२३-२४, ३

इसके अलावा बाजीगर और नृत्य करने वाली जातियाँ भी इन नगरो मे निवास करती थी, जो विभिन्न खेलो द्वारा लोगो का मनोरजन किया करती थी। प्राय सब ही नगरो मे वेश्याएँ भी निवास करती थी।[1] पाली, गुदौच और आसोप म भी सभी पवन जाति निवास करती थी।[2]

नैणसी ने गाँवो का विवरण लिखते समय भी वहाँ के जनसाधारण की ओर भी पूरा ध्यान दिया है। जो-जो गाँव उस समय वीरान थे, उनका भी स्पष्ट उल्लेख कर दिया है। तथा उन सून खेडो-माजरो (छोटी बस्तियो) पर लगने वाली रेख की रकम भी लिख दी है। प्रत्येक गाँव म बसने वाली प्रमुख जातियों का उल्लेख उस गाव सम्बन्धी वर्णन म ही नही किया है, परन्तु वहाँ बसने वाली एक या अनेक जातियो के आधार पर उनका वर्गीकरण कर प्रत्येक परगन मे उनकी अलग-अलग सूचियाँ भी प्रस्तुत की गयी है। गाँवो के इन सब ही विवरणो को देखने से यह ज्ञात होता है कि मारवाड के इन गाँवो मे बसन वाली जातियो मे अधिकतर राजपूत, ब्राह्मण, महाजन, जाट, विश्नोई, पटेल, और घाँची ही प्रमुख थी। परगना जोधपुर के २१५ गाँवो मे केवल जाट, २० गाँवो मे केवल विश्नोई, ३७ गाँवो मे केवल पालीवाल (ब्राह्मण) ४७ गाँवो मे केवल पटेल और १६७ गाँवो मे केवल राजपूत निवास करते थे।[3] जोधपुर, मेडता और सोजत के गाँवो मे सर्वाधिक जाट जाति के लोग निवास करते थे। फलोधी के गाँवो मे सर्वाधिक विश्नोई निवास करते थे।[4] सातो परगनो के प्राय सब ही गाँवो म माली, सीरवी, घाँची, ओड, कलाल, रेबारी, खाती, स्वर्णकार, खारोल और बोहरा जाति के लोगो की सख्या नगण्य ही थी। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि मारवाड क अधिकाश और विशेषतया छोटे गाँव आत्मनिर्भर नही थे। और उन्ह अपनी नित्यप्रति की आवश्यकताओं के लिए भी पास के नगर या कस्बे जाना पडता था। जोधपुर और मेडता मे तो आधे से अधिक ऐसे छोटे गाँव थे जहाँ कुएँ नही होने के कारण अथवा कुओ का पानी खारा होने के कारण पीने का पानी भी निकट के गाँव से लाना पडता था। अथवा निकटस्थ नदी और तालाब के पानी का उपयोग किया जाता था।

मारवाड के लगभग सभी परगनो मे गेहूँ, बाजरा, ज्वार, चना, मूँग,

---

१ विगत०, १, पृ० ३६६, ४३७ २, पृ० ६, ८६।

२ विगत०, १, पृ० २६२ २७२, ३५०।

३ विगत०, १, पृ० १६० ६५, 'पटेल' जाति जिसे 'पीटल' या 'कलबी' भी कहते हैं, जो एक विशेष काश्तकार जाति है जो कुनबी' अथवा 'पाटीदार' नामो से भी सुज्ञात है। जातियाँ, पृ० ३२ ३३।

४ विगत०, १, पृ० १६० ६५, २ पृ० १० ११। प्रत्येक गाँव में बसने वाली जातियो के उल्लेखो पर भी यह निष्कर्ष आधारित है।

मोठ, तिल, कपास और जौ की फसलें होती थी। परन्तु परगना जोधपुर और मेडता की गेहूँ और चना, जैतारण, सीवाणा और फलोधी की बाजरा, ज्वार और मोठ और सोजत की ज्वार, बाजरा, मोठ और तिल प्रमुख फसलें थी। विगत० के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मारवाड मे वर्षा की कमी और सिचाई के साधनो की न्यूनता के कारण ही वहां की मुख्य फसलें ज्वार, बाजरा, मूँग और मोठ थी। जिन-जिन गांवो मे कुएँ आदि सिचाई के साधन थे वहाँ गेहूँ की फसल लेते थे। गेहूँ और चना की सेवज फसलें भी कही कही पैदा होती थी।

सामान्य जनता मुख्य खाद्य के रूप मे ज्वार और बाजरा तथा दालो मे मूँग और मोठ का ही उपयोग करती थी। गेहूँ तो तब धनी और उच्च-मध्यम वर्ग के लोगो का ही भोज्य रहा होगा। अधिकाश परगनो मे तिल की खेती होती थी। अत तिल का तेल ही उपयोग किया जाता होगा। इसके अतिरिक्त परगना जोधपुर और सोजत म सरसो की फसल भी होती थी।

मारवाड के सब ही गांवो मे खेती ही वहां का मुख्य व्यवसाय था। अधिकतर गांवो मे कही भी कोई छोटे हस्त-शिल्प व्यवसाय नही थे, जो सब ही मुख्यत प्राय परगना केन्द्र-नगरो और कस्बो मे ही केन्द्रित थे। अत गांव के लोगो को खेती के उपकरणो से लेकर अन्य सब ही आवश्यक वस्तुओं के लिए नगरो पर निर्भर रहना पडता था। नगर से गांव की दूरी के कारण और आवागमन के साधनो के अभाव मे आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त करने मे गांव के लोगों को तब अनेक असुविधा और कठिनाइयो का सामना करना पडता रहा होगा। इसी समस्या का कुछ समाधान तब मारवाड मे समय-समय पर यत्र-तत्र लगन वाले हाटो से होता था। सुज्ञात निश्चित दिन पर बडे गांवो मे लगे बाजार मे पहुँचकर लोग आवश्यक वस्तुएँ खरीद लेते थे।

राजपूत समाज के साथ चारण जाति का बहुत ही घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। तब मारवाड के राज-दरबार म ही नही प्रमुख राजपूत सरदारो की हवेलियो मे भी चारणो का ससम्मान स्वागत किया जाता था और उन्ह वे सासण मे गांव या छोटी-बडी जागीरें भी प्रदान करते थे। इसी परम्परा म भाट-दसौंदी आदि की गणना होती थी। जो जातीय और सामाजिक दृष्टि से भिन्न होते हुए भी अपने यजमानो की वशावलियाँ और कीर्तिगाथा को सुरक्षित रखने मे ही सदा प्रयत्नशील रहते थे। सासण मे चारणो-भाटो को दिये गये गांवो के विगत० मे जो विवरण हैं उनमे भी तत्कालीन समाज के इस विशिष्ट पहलू पर विशेष प्रकाश पडता है।

इसी प्रकार सासण मे ब्राह्मणो को भी गांव दिये जाते थे। ये ब्राह्मण उन विशिष्ट वर्गों के होते थे जो या तो अपने यजमानो के घरानो की पुरोहिताई

करते थे अथवा उनके गुरु होते थे। सासण में गाँव जोगियों को भी दिये जाने के उल्लेख मिलते हैं।[1] राजस्थान में लोक-देवताओं का विशेष महत्त्व रहा है; अतः उन्हें अथवा उनके भोपों (पुजारी) को भी सासण में गाँव दिये गये थे, जो नैणसी के समय तक उन्हीं परम्पराओं में यथावत् चले आ रहे थे।[2]

मारवाड़ में राठौड़ राजघराने की ही नहीं मारवाड़ के सारे राठौड़ राजपूतों की आराध्या देवी राठासण अथवा नागणेची की पूजा करने वालों का भी *सासण में गाँव दिये जाना*[3] *सर्वथा स्वाभाविक ही था। तत्कालीन समाज की* मान्यताओं तथा आस्थाओं में व्यक्त होने वाली मानवीय अनुभूतियों और भावनाओं की जो जानकारी मिलती है वह कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है।

२. नैणसी की ख्यात० : उसका सीमित क्षेत्र

देश-दीवान बनने से बहुत पहले ही नैणसी ने अपनी इस ख्यात० के लिये आवश्यक जानकारी और आधार-सामग्री एकत्रित करना प्रारम्भ कर दिया था। क्योंकि तब से ही वह राजपूतों की सब ही प्रमुख जातियों और खांपों का इतिहास लिखना चाहता था। विगत० लिखने की योजना बन जाने के बाद उसने मारवाड़ सम्बन्धी लेखन कार्य को समुचित रूपेण उन दोनों में विभक्त कर दिया था। परन्तु अन्य राजपूत जातियों के सन्दर्भ में उसकी पूर्व योजना में कोई परिवर्तन नहीं किया गया। अतः अपनी इस ख्यात० में नैणसी ने उन राजपूत जातियों, उनकी खांपों और सम्बन्धित राजघरानों के इतिहास के साथ ही सर्दभित राज्यों के भूगोल की ओर भी बहुत-कुछ ध्यान दिया है।

परन्तु विगत० में वर्णित मारवाड़ के परगनों के ब्यौरेवार विस्तृत भौगोलिक विवेचन की तुलना में ख्यात० में दिये गये विभिन्न राज्यों की यह भौगोलिक जानकारी अपेक्षाकृत बहुत ही सीमित और संक्षिप्त ही थी। उस राज्य विशेष के इतिहास को ठीक तरह से समझ सकने के लिये अत्यावश्यक भौगोलिक जानकारी देते हुए वहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियों और विशिष्टताओं का वृत्तांत लिख देना ही नैणसी को अभीष्ट था। अतः वहाँ के शासकीय अन्तर्विभागों अथवा गाँवों आदि की ओर उसने कोई ध्यान नहीं दिया। यों निर्धारित सीमित लक्ष्य को ही ख्यात० में यथासम्भव पूरा करने की नैणसी ने तदनुरूप उसकी योजना बनाई थी, अतः उसी परिप्रेक्ष्य में ख्यात० में दिये गये भौगोलिक विवरणों की जाँच की जानी चाहिए।

---

१ विगत०, १ पृ० ४८६, ५५२।
२ विगत०, २, पृ० २६-३०, ३४६।
३ विगत०, १, पृ० ३०४५।

(क) सम्बन्धित राज्य क्षेत्रों की विस्तृत जानकारी

मुहणोत नैणसी की ख्यात० मे मेवाड, डूंगरपुर, बांसवाडा, देवलिया (प्रतापगढ), बूंदी, सिरोही, ओरछा और जैसलमेर राज्यो केआकार-प्रकार आदि की विस्तृत भौगोलिक जानकारी दी है। आम्बेर राज्य की भी जानकारी दी है जो अति सक्षिप्त है।

नैणसी ने मेवाड राज्य की तत्कालीन सीमाओ का उल्लेख कर उनके अन्तर्गत स्थित प्रमुख नगरो की सूची दी है।[1] मुगल मनसब मे राणा अमरसिंह और राजसिंह को प्राप्त जागीर के परगनो के नाम और उनकी रेख के आँक दे दिये हैं।[2] मेवाड के प्रमुख क्षेत्रो के नामकरण और वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियो का विवरण भी ख्यात० मे दिया है। उदयपुर के आस-पास १० मील तक का क्षेत्र 'गिरवा' कहलाता था।[3] इस प्रकार झाडोल, सलूम्बर, सेमारी और चावण्ड चारो क्षेत्रो म प्रत्येक के आधीन ५६-५६ गाँव थे। अत ये क्षेत्र चार छप्पन कहलाता था।[4]

ख्यात० मे मेवाड के पहाडो, विभिन्न उल्लेखनीय घाटियो, रास्तो और नदियो[5] का विवरण मिलता है। पहाडो के विवरणो मे उनमे और उनके आस-पास निवास करने वाली आदिवासी जातियो का भी उल्लेख किया गया है।[6] सारी प्रमुख घाटियो मे होकर गुजरने वाले रास्तो की उदयपुर नगर से दूरियाँ भी दी गयी हैं। जैसे देबारी की घाटी नगर से तीन कोस, घाणेराव का घाटा उदयपुर से कोस १६ वायव्य कोण मे कुम्भलमेरू के पास है।[7] मेवाड के दोनो केन्द्र-स्थलो, उदयपुर और चित्तौड से आस-पास के अन्य प्रमुख नगरो की दूरी का विवरण भी दिया है। 'उदयपुर से चित्तौड २६ कोस, सोजत ४० कोस, मन्दसौर ५२ कोस और बूंदी का गढ रणथम्भोर ४० कोस, नीमच १५ कोस आदि।[8]

ख्यात० मे डूंगरपुर और बांसवाडा राज्यो की सीमाओ का विवरण दिया गया है।[9] साथ ही इन राज्यो की सीमाओ मे बहने वाली नदियो और उनके बहने

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३८-३६।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६, ४८-४६, ५२-५३।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३६, ३२।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३६-३७।
५. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४५, ४७।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३५, ३६।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३७-३८।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४०-४६।
६. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८६-८७, ८८।

की दिशा और मार्ग मे पड़ने वाले स्थानो के नाम दिये हैं।[1] इसके अतिरिक्त देवलिया (प्रतापगढ़) राज्य की सीमाओं का विवरण सक्षेप मे दिया गया है।[2] उस राज्य की जाखम और जाजावलो नदियो का वृतात तथा उनके हानिकारक जल का उल्लेख किया गया है।[3] ख्यात० म देवलिया क्षेत्र की प्रमुख फसलो और वहाँ पाये जाने वाले फलदार वृक्षो के नाम भी दिय हैं।[4]

ख्यात० मे बूदी की भौगोलिक स्थिति का विस्तृत विवरण दिया गया हैं। बूंदी नगर का वृतात और बूदी से विभिन्न प्रमुख नगरो की दूरी की जानकारी दी गयी है। बूदी राज्य के आधीन गाँवो की सख्या और विभिन्न परगना के आधीन गाँवो की सख्या भी दी गयी है। कुछ ही युगो पहले नव-स्थापित कोटा राज्य की स्थापना और बूदी राज्य के साथ उसके सभावित सम्बन्धो आदि का सकेत कर कोटा राज्य की भी कुछ जानकारी दी है।[5] मऊ नगर की तत्कालीन स्थिति पर प्रकाश डाला है। वहाँ की जमीन की किस्म, और निवास करन वाली रैय्यत का विवरण दिया गया है। मऊ के निकट के नगरो की जानकारी दी गयी है।[6] उसी सन्दर्भ मे गागरोन कस्बे और वहाँ के गागरोन गढ का विस्तृत वर्णन लिखा है। गागरोन के पूर्ववर्ती शासक खीची घराने के वशज खीचियो के तब आधीन मऊ क्षेत्र की भी पर्याप्त जानकारी दी गयी है।[7]

सिरोही राज्य के सम्बन्ध मे नैणसी ने जानकारी ब्योरेवार दी है। प्राकृतिक व अन्य आधारो पर शासकीय विभाजनो का स्पष्ट उल्लेख कर सिरोही राज्य के परगनो के आधीन गाँवा की सख्या और गाँवो की नामावली दी गयी है। साथ ही सिरोही राज्य के सोलकियो तथा सब ही प्रकार के सासण गाँवो की सूचियाँ भी दी गयी हैं।[8] आम्बेर और ओरछा राज्यो सम्बन्धी जानकारी सक्षेप मे दी गयी है। आम्बेर राज्य के आम्बेर, अमृतसर (साभर), चाटूस दयोसा और मौजाबाद आदि परगनो के आधीन गाँवो की सख्या दी गयी है।[9] इसी प्रकार ओरछा राज्य के आधीन सब ही परगनो के गाँवो की सख्या तथा प्रत्येक परगन

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८६-८७ ८८।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६४, ६५ ६६।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६४।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६३ ६४।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ११३ १११, ११४ १५।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ११३ १४, ११५ १६।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ११५ १६, २५६।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १७३ ८०।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० २८७।

की आमदनी के आँकडे, और ओरछा नगर से प्रत्येक परगना केन्द्र-नगर की दूरी की जानकारी दी गयी है।[1]

ख्यात० मे जैसलमेर राज्य के खडाले के आधीन गाँवो की सूची दी गयी है। वहाँ के तालाबो तथा प्रमुख फसलो का विवरण दिया गया है।[2] राणा चापा के बाद जैसलमेर के रावल द्वारा राज्य विस्तार कर जैसलमेर के आधीन किये गये गाँवों की सूची दी गयी है।[3]

(ख) विभिन्न राज्यों आदि की राजनैतिक सीमाओं सम्बन्धी निर्देश

ख्यात० मे उदयपुर, डूंगरपुर, बाँसवाडा, देवलिया (प्रतापगढ), बूंदी, सिरोही, ओरछा आदि राज्यो की राजनैतिक सीमाओ सम्बन्धी पर्याप्त सुस्पष्ट जानकारी मिलती है। उसी के आधार पर उन राज्यों की तत्कालीन राजनैतिक सीमाओ का प्रामाणिक रूप से सही निर्धारण किया जा सकता है।

१६१५ ई० मे राणा अमरसिंह द्वारा मुगल आधीनता स्वीकार करने के बाद शाही मनसब मे उसे प्राप्त जागीर का विवरण ख्यात० मे दिया गया है। साथ ही कौन-सा परगना कब खालसा कर लिया गया उसका भी उसमे उल्लेख है।[4] इसी प्रकार १६५८ ई० मे मुगल बादशाह औरंगजेब की ओर से महाराणा राजसिंह को दी गयी जागीर की पूरी-पूरी जानकारी दी गयी है, उसे प्रदान किये गये परगनो की सूची के साथ शाही कागजो मे दर्ज उनकी रेख आदि के पूरे आँकडे दिये हैं।[5] यों इस विवरण से महाराणा अमरसिंह से महाराणा राजसिंह तक के सब ही महाराणाओ के काल की मेवाड की राजनैतिक सीमाओ को निश्चित-रूपेण जाना जा सकता है। १६५८ ई० मे डूंगरपुर, बाँसवाडा और देवलिया (प्रतापगढ़) के तीनो राज्यो को औरंगजेब ने महाराणा राजसिंह की जागीर मे दे दिया था। मेवाड राज्य की सीमा वायव्य कोण मे उत्तर से बाईं तरफ मारवाड राज्य की सीमा से मिलती थी। उसके बाद अजमेर सरकार के आधीन खालसा के या अन्य परगने पडते थे। पूर्वी दिशा से लेकर दक्षिण तक मे बूंदी, रामपुरा, देवलिया राज्य पडते थे। दक्षिण मे इनसे लगा हुआ मालवा सूबे के मन्दसौर सरकार का इलाका था, दक्षिण और नैर्ऋत्य दिशाओ मे बाँसवाडा और डूंगरपुर के राज्य पडते थे। डूंगरपुर से उत्तर मे ईडर का राठोड़ राज्य

---

१. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२७-२८।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ४, ५।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६।
४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६, ४८-४६।
५. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५२-५३, वीर विनोद०, २, पृ० ४२५-३१।

पडता था । उधर गांव छाली पूतली तक मेवाड की सीमा थी ।[1]

ख्यात० में डूंगरपुर, बांसवाडा और देवलिया की तत्कालीन राजनैतिक सीमाओं का विवरण संक्षेप में ही दिया है । तब डूंगरपुर राज्य के अधिकार में १७५० गांव थे और डूंगरपुर राज्य उदयपुर की तरफ सोम नदी तक, ईडर की ओर गांव पुजूरी तक और बांसवाडा की तरफ माही नदी तक फैला हुआ था ।[2] इसी प्रकार प्रारम्भ में बांसवाडा के अधिकार में भी केवल १७५० गांव ही थे, परन्तु १६६२ ई० तक बांसवाडा के शासकों ने पास-पडोस की बहुत-कुछ भूमि को अपने राज्य में मिला लिया था, यों सिरोही के भीलों के और देवडों के १४० गांवों पर, खल-महीडों के १२ गांवों पर, मगरा महीडों के १२ गांवों पर बांसवाडा राज्य का अधिकार हो गया । बांसवाडा की सीमा डूंगरपुर से पश्चिम की तरफ देवलिया से मिली हुई थी ।[3] देवलिया (प्रतापगढ़) राज्य क्षेत्र में कुल ७०० गांव थे और देवलिया की सीमा मन्दसोर, रतलाम, बलोर, जीहरण, घरियावद परगनां और बांसवाडा राज्य से मिलती थी ।[4]

ख्यात० में सिरोही, बूंदी और कोटा आदि चौहान राज्यों की सीमा सम्बन्धी सीधे निर्देश तो नहीं मिलते हैं । परन्तु उन राज्यों के तब आधीन रहे परगना अथवा गांवों की सूची मिलती है जिसके आधार पर सीमा का निर्धारण किया जा सकता है । ख्यात० में १६५७-५८ ई० में सिरोही राज्य के अधिकार क्षेत्र के परगनों तथा गांवों की सूचियां दी गयी हैं जो तत्कालीन सिरोही राज्य की सीमा को स्पष्टतया निर्धारित करती हैं ।[5] बूंदी के शासक राव भावसिंह के अधिकार में परगना बूंदी, खटखड, पाटण और गौडों की लाखेरी थे ।[6] कोटा राज्य के आधीन खेरावद, पलायता, सागोद, घाटी और गागरोन आदि परगने थे ।[7]

इसी प्रकार ओरछा के शासक वीरसिंहदेव बुंदेला के अधिकार में जगहर, भाडेर, एलच, राठ, खटोला, पबई, पाडवारी, धमाणि, दमोह, सीलवनी, गढ पाहराद, चोकीगढ़, उदयपुर कछउवा, करहर, दिहामलो, खुटहर, बेडछा, दभोवा, गोओद, लारगपुर और चौरागढ आदि परगने थे ।[8] इस विवरण से

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३८-३९ ।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८९ ।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८८ ।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ९३-९४, ९५-९६ ।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० १७३ ८० ।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११३ ।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० ११४-१५ ।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० १२७-२८ ।

बुंदेला राज्य का तत्कालीन आकार-प्रकार भी सर्वथा स्पष्ट हो जाता है, और उसका सीमांकन भी सुगमता से किया जा सकता है।

(ग) प्राकृतिक रूप-रेखाएँ और आर्थिक परिस्थितियाँ

ख्यात० में नैणसी ने राजस्थान के कई एक राज्यों के आधीन क्षेत्रों की प्राकृतिक रूप-रेखाओं का सविस्तार विवरण लिखा है, जिससे उन क्षेत्रों की तत्कालीन परिस्थितियों की, विशेषतया तब वहाँ के जंगलों आदि की, पूरी जानकारी मिलती है। उस काल में मुसलमान आक्रमणकारी युद्धों के अवसर पर इन दुरूह पहाड़ों और वहाँ के सघन-जंगल बहुत सहायक होते थे। मेवाड़ राज्य की प्राकृतिक परिस्थितियों का तो विशद विवरण दिया गया है। उदयपुर नगर के निकट ही छोटा-सा माच्छला मगरा है तथा वायव्य पश्चिम दिशा में सिसारमा का पहाड़ है।[1] राणा उदयसिह द्वारा निर्मित उदयसागर के चारों ओर भी पहाड़ हैं।[2] उदयपुर से १० मील पर स्थित एकलिंग मंदिर भी चारों ओर पहाड़ों से घिरा हुआ है।[3]

जीलवाड़ा और रीछोड़ के मध्य अमजमाल का पर्वत है, जिसकी लम्बाई १० मील है। केलवा और वाघोर के आगे घाटा गाँव के निकट भोरड का मगरा है, जो उत्तर से दक्षिण तक १० मील लम्बा है। उदयपुर से ३५ मील पर समीचा गाँव है और उसके आगे १४ मील लम्बा मछावला मेरू है। मछावला के बाद क्रमश बरवाड़ा, घासेर और पिण्डर झाप पर्वत हैं। घासेर और पिण्डर झाप के बीच झामनाला है तथा उससे आगे खमण का पहाड़ है जिसकी लम्बाई उत्तर-दक्षिण ४ मील है। उसके बाद ईसवाल का मगरा है। यह पर्वत गिरवा के पहाड़ों से जा लगा है। घाणेराव से ५ मील पर कुंभलमेर पर्वत है जो ३० मील के क्षेत्र म फैला हुआ है। सादड़ी, राणपुर और सेवाड़ी तक इसका फैलाव है। सेवाड़ी के आगे राहग का पहाड़ है जिसकी लम्बाई ३२ मील और चौड़ाई ३० मील है। उसके आस-पास २५ गाँव बसते थे। वह सिरोही के सरणुवा पहाड़ से जा लगा है। कुहाडिया नाले के दाहिनी ओर जरगा का पहाड़ है। उसके एक ओर केलवाड़ा और दक्षिण में रोहिड़ा गाँव है, रोहिड़ा से १४ मील आगे तक नाहेसर और भाडेर के पहाड़ हैं।[4]

ईडर की ओर गंगादास की सादड़ी के पहाड़ हैं। छाली-पूतली और दरोल-

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३२-३३।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३४।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३४।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ४०-४२।

करोन के पहाड ईडर से १४ मील पर हैं। डूंगरपुर और देवगदाघर के बीच जवास के पहाड हैं।[1]

छप्पन, चावण्ड, जवास और जावर के बीच तथा उदयपुर से ३४ मील पर पीपलदडी और सीरोड के पहाड हैं। घरियावद के पश्चिम मे मेवल के मगरे हैं। चाठरडा और सलूम्बर के मध्य भी बडे पहाड हैं। उदयपुर से १० मील पश्चिम की ओर सिर्गडिया नामक वडा पहाड है। उदयपुर से ६ मील उत्तर मे धार का पहाड है।[2] कोठारिया से ५० मील पूर्व चित्तोड और चित्तोड से २ मील पर अखण के बडे पहाड हैं।[3]

यो ख्यात० मे अरावली पर्वत श्रेणियो का विस्तृत विवरण दिया है। इस समय मे जब आधुनिक मानचित्रो जैसे कोई चित्रण सुलभ नही थे, इस समूचे क्षेत्र का यह विस्तृत ब्यौरेवार विवरण लिखकर नैणसी ने इस बात को स्पष्टतया प्रमाणित कर दिया है कि इस समूचे क्षेत्र के प्राकृतिक भूगोल की नैणसी को कितनी विशद और सूक्ष्मतम जानकारी थी। यही नही उसने ख्यात० मे पहाडो की तत्कालीन स्थिति, वहाँ निवास करने वाली जातियों तथा पहाडो के आस-पास बसने वाले गाँवो तथा वहाँ की मुख्य फसलो आदि का भी बहुत-कुछ उल्लेख किया है। इसी से ज्ञात होता है कि तब इन पहाडी क्षेत्रो मे घना जगल था। आम आदि पेडो का सर्वत्र बाहुल्य था। वहाँ अधिकतर भील जाति के लोग ही निवास करते थे और गेहूँ, चावल और चना ही वहाँ की मुख्य फसलें थीं।[4]

ख्यात० मे अरावली पर्वत श्रेणियों की जानकारी के अतिरिक्त पहाडी क्षेत्र की प्रमुख दुर्गम घाटियो का भी विवरण दिया गया है। उदयपुर से ६ मील पर देवारी की घाटी थी और १४ मील पर केवडा की नाल। उदयपुर से ८ मील दक्षिण में और चावण्ड के पहाडी मार्ग के पूर्व और आग्नेय कोण के बीच जावर की नाल थी। मुगल आक्रमणो के समय मे मेवाड के शासक इस क्षेत्र मे ही आश्रय लेते थे। उदयपुर से ६ मील ईशान कोण मे खमणोर का घाटा था। मारवाड की ओर जाने के लिये सायरा के घाटे में होकर गुजरना पडता था। मानपुरा का घाटा सारण के उत्तर मे है।[5]

ख्यात० मे तत्कालीन मेवाड के दोनों प्रमुख तालावों का भी विवरण दिया

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४३।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४३।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४४।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४०-४४।
५. ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० ३५-३६।

है। पीछोला तालाब का निर्माण राणा लाखा के शासनकाल मे किसी वनजारे ने करवाया था। इसी तालाव की पाल पर राणा उदयसिंह ने अपन महल बनवाये थे। माछला और सिसारमा पहाडो का पानी इस तालाब मे आता है। इस तालाव से तब सिचाई भी होती थी। नगर के लोग भी पीने के लिए इसी के पानी को काम मे लेते थे।[1] उस क्षेत्र के दूसरे तालाव उदयसागर का निर्माण राणा उदयसिंह ने १५६३-६४ ई० मे करवाया था। यह उदयपुर से ६ मील पूर्व मे है। इसमे गोघूदा और कुभलमेर के पहाडो का पानी आता है। इन्ही पहाडो से बेडच नदी भी निकलती है जो उदयसागर मे जा मिलती है। इस तालाब की पाल १००० फीट लम्बी और ५०० फीट चौडी है तथा १४० फीट ऊँची है। महाराणा जगतसिंह ने यहाँ महल बनवाये थे।[2]

मेवाड के पहाडो से निकलने वाली तथा मेवाड क्षेत्र मे होकर बहने वाली प्रमुख नदियों का भी उल्लेख ख्यात० मे किया गया है। गोघूदा और कुभलमेर के पहाडो से बेडच नदी निकलती है।[3] बरवाड और जरगा के पहाडो से वर और बनास नदियो का उद्गम है।[4] देवलिया के पहाडो से जाखम और जाजावली नदियाँ निकलती हैं।[5] भैंसरोड के पास होकर चम्बल नदी निकलती है।[6] माही नदी बाँसवाडा से ६ मील पूर्व मे तथा डूंगरपुर से २० मील पर बहती है। माही नदी माडू के पहाडो से निकलती है।[7]

ख्यात० मे बूदी राज्य की प्राकृतिक रूप-रेखाओ का भी सक्षिप्त विवरण ही है। बूदी नगर पहाड से सटा हुआ बसा है। राजमहल पहाड के ढाल पर बने हुए हैं, जहाँ पानी का पूर्णतया अभाव था एव नीचे पहाड से लगे हुए बूदी शहर से ही पानी लाते हैं। इस पहाड पर वृक्ष बहुत थे और तलेटी मे पर्याप्त पानी था।[8] इसी प्रकार हाडोती क्षेत्र का मऊ नगर भी एक छोटी-सी पहाडी पर बसा हुआ था। आगे की ओर के ७०० गांव तो समभूमि मे थे और पीछे की तरफ के ७४० गाँव पहाडो व वृक्षो से घिरे हुए थे।[9] पुन बूदी से ६० मील और कोटा से २० मील दूरी पर स्थित गागरोन का विशाल दुर्ग भी पर्वत

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३४, ३२-३३।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३४, ३५।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३५।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४१, ४७।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६४।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४५।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८६, ८७।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११३।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११३-१४।

ार ही बना हुआ है। कालीसिंध नदी इसी दुर्ग के पीछे की ओर बहती है।[१] ख्यात० में हाडोती क्षेत्र में बहने वाली चम्बल, कालीसिंध, पार और पूहण नदियों का उल्लेख है।[२]

ख्यात० से तत्कालीन राजस्थान के राज्यों, परगनों आदि की आर्थिक परिस्थितियों की भी थोड़ी-बहुत जानकारी मिलती है। मेवाड़ राज्य की आय का प्रमुख साधन भोग (लगान) ही था। मेवाड़ में गेहूँ, चना, मक्का, उड़द और चावल मुख्य फसलें थीं।[३] पहाड़ी क्षेत्र में गेहूँ, चना और चावल मुख्य रूप से पैदा होते थे।[४] इन विभिन्न फसलों की पैदावार का तीसरा हिस्सा भोग (लगान) के रूप में राज्य को देना पड़ता था। साथ ही अन्य लागें भी देनी पड़ती थीं, जिसके कारण पैदावार का लगभग ५०% भाग राज्य के खजाने में पहुँच जाता था। अतः निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सामान्य रैय्यत की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी।[५]

देवलिया (प्रतापगढ़) राज्य की मुख्य फसलें गेहूँ, उड़द, चावल, गन्ना आदि थीं। आम और महुवा भी तब वहाँ बहुतायत से थे।[६]

ख्यात० में जैसलमेर राज्य के आय के स्रोतों की जानकारी दी गयी है। जैसलमेर राज्य की प्रजा से सामान्यतया खरीफ की फसल पर पैदावार का चौथा और रबी की फसल पर पैदावार का पाँचवाँ हिस्सा भोग (लगान) के रूप में लिया जाता था। ब्राह्मणों से उपज का पाँचवाँ भाग ही लिया जाता था।[७] इसके अतिरिक्त 'माल रो बाब' (माल पर कर) कस्बे के व्यापारियों से लिया जाता था।[८]

इसके अतिरिक्त दीवाली-होली के मांगलिक त्यौहारों पर गुड़ के नाम से भेंट ली जाती थी, क्योंकि अन्यत्र सेवारत राजपूत मुसलमान सब ही तब अपने इस देश में आते थे। जैसलमेर राज्य की सीमा में होकर गुजरने वाले सब ही प्रकार के माल पर 'दाण तुलावट' (तुलाई पर सायर महसूल) वसूल किया जाता था। यों उस राह से रेशम, मजीठ, घी, खारक-छुहारा, नारियल, रुई,

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११५।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११६-१७।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४६।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४२, ४३।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३६।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६४।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ८।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ७। कस्बा के महाजनों से प्रति घर ८ दुगाणी ली जाती थी।

मोम, फिटकड़ी, लाख से रंगी हुई लोवडियाँ (ऊनी वस्त्र) और किराना से लदे हुए ऊँट, घोड़े गुजरते थे, जिन पर यह सायर महसूल लिया जाता था। यदि उनका कोई माल उस राज्य-क्षेत्र मे बिक जाता था, तो उसके वजन के आधार पर अलग कर लिया जाता था।[१]

ख्यात० मे साचोर परगने की तत्कालीन आर्थिक स्थिति पर भी प्रकाश डाला गया है। साचोर नगर मे पानी की कमी थी। दुर्ग मे एक ही कुआँ था, जिसमे भी पानी नही था। नगर मे एक बावडी थी, उसका पानी क्षारयुक्त था, फिर भी अधिकाश लोग इसी बावडी का पानी पीते थे। राव वल्लू ने नगर से २ मील दूर एक कुआँ खुदवाया था। अतः नगर के सम्पन्न लोग वाहनो पर लादकर उस कुएँ का पानी लाते थे। फिर भी नगर मे सभी जातियाँ निवास करती थी।[२]

साचोर नगर ही नही पूरे परगने मे भी पानी की कमी थी। साचोर का परगना निर्जल और एकफसली ही था। अतः बाजरा, मोठ, मूंग, तिल और कपास ही मुख्य फसलें थी। रबी की फसल तो नाम-मात्र की ही होती थी। २८ गाँवो मे कुल २०० कुएँ थे जिनसे और लूणी नदी की रेल से कुछ गेहूँ और चना सेंवज हो जाते थे।[३]

(घ) मानव-भूगोल, राजनैतिक और आर्थिक कारणो से उसके बदलते प्रतिमान

नैणसी की ख्यात० मे प्रसगवश दी गयी जानकारियो से कई एक सम्बन्धित क्षेत्रो के मानव-भूगोल की भी विस्तृत जानकारी मिलती है। नैणसी के समय उदयपुर नगर की जनसख्या तब लगभग १,००,०००[४] रही होगी। इनमे से २००० घर महाजनों के, १५०० घर ब्राह्मणो के, ५०० घर कायस्थो (पचोली-भटनागर) के, ६० घर भोजग के, ५०० घर भीलो के, ५००० घर मोहिलवाडिय लोगो के, १५०० घर राजपूतो के और ६००० घर यवन जातीय लोगो के थे।[५]

इसी प्रकार ख्यात० मे साचोर नगर मे निवास करने वाली जातियो की भी जानकारी दी गयी है। साचोर मे महाजन (ओसवाल, श्रीमाल), ब्राह्मण (श्रीमाली), राजपूत, सकना (तुर्क), दर्जी, मोची, तेली, स्वर्णकार, पीजारा, सूत्रधार, छीपा, धोबी, कुम्हार, रंगरेज, भोजग, माली, लुहार, गन्धर्व, ढेंढ और

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ७-८।

२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२७-२९।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२८।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३ पर कुल २०,००० घरो का उल्लेख है। प्रति घर औसत ५ व्यक्ति के अनुमान से ही यह जनसख्या निर्धारित की गयी है।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३-३४।

भील जातियाँ निवास करती थी। यो व्यवसायिक दृष्टि से सांचोर नगर आत्म-निर्भर था।[1]

ख्यात० मे दिये गये विवरणो से इस बात की भी जानकारी मिलती है कि किसी क्षेत्र विशेष मे प्रारभ मे कौन-सी जातियाँ निवास करती थी तथा उस पर किस जाति विशेष अथवा राजपूत जाति की विशिष्ट शाखा का अधिकार रहा था। कालान्तर मे किस जाति अथवा राजपूतो की किस खाँप ने उस क्षेत्र पर अधिकार किया आदि की भी जानकारी मिलती है, यद्यपि उस क्षेत्र विशेष पर अधिकार करने आदि की तिथि या सवत नही दिये गये हैं।

ख्यात० म वर्णित है कि गुहिल और सीसोदिया राजवश का मेवाड मे प्रभुत्व स्थापित हो जाने के बाद भी राणा उदयसिंह के समय तक गिरवा क्षेत्र मे देवडा (चौहान) और छप्पन क्षेत्र मे छप्पनिया राठोडो का प्रभाव था। राणा उदयसिंह ने उदयपुर नगर बसाने के बाद इन दोनो शाखाओं का दमन करना प्रारम्भ किया। महाराणा प्रताप के समय तक इनका पूरी तरह दमन कर दिया जा चुका था। अत इस क्षेत्र मे देवडा और छप्पनिया राठोडो की शाखा के अधिकाश लोगो को अन्यत्र भाग जाना पडा और इस क्षेत्र पर सीसोदियो का पूर्ण एकाधिपत्य स्थापित हो गया।[2]

वागड (डूंगपुरर-बाँसवाडा) पर पहल भीलो का अधिकार था। रावल समरसी (सामतसिह)[3] ने चोरासीमल को मारकर वागड पर अधिकार कर लिया था। तदनन्तर इस क्षेत्र मे गुहिल वशीय शाखा का प्रभुत्व और प्रसार हो गया।[4] इसी प्रकार देवलिया (प्रतापगढ़) पर मेरो का अधिकार था। सर्वप्रथम राणा मोकल के पुत्र खीवा ने तेजमाल की सादडी पर अधिकार किया था। मोकल की मृत्यु के बाद महाराणा कुम्भा और खीवा के मध्य मनमुटाव प्रारम्भ हो गया और खीवा विद्रोही हो गया। खीवा की मृत्यु के बाद उसके पुत्र सूरजमल का भी महाराणा से विरोध रहा। सूरजमल की मृत्यु के बाद उसके पौत्र बाघ न मेवाड को सहयोग दिया और मेवाड पक्ष से बहादुरशाह के विरुद्ध लडता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ था। अत तदनन्तर उसके पुत्र रायसिंह को कुछ गाँव मेवाड की ओर से जागीर मे मिले थे। इसी रायसिंह के पुत्र बीका ने

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२८-२६।

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३२, ३६।

३ ओझा (डूगरपुर०, पृ० ३८-३६,३५) के अनुसार वागड़ राज्य का वास्तविक सस्थापक मेवाड के शासक क्षेमसिह का ज्येष्ठ पुत्र सामनसिह था और उसका ११८६ ई० के पूव वागड पर अधिकार हो गया था। नैणसी द्वारा ख्यात० (प्रतिष्ठान, १, पृ० ७६-८२) में दिये गये नाम 'रावल समरसी' का ओझा (डूगरपुर०, पृ० ३६) ने सही पाठ 'समरसो' (सामतसिह) माना है।

४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७६-८३।

मेरो को मारकर देवलिया पर अधिकार कर स्वतन्त्र देवलिया (प्रतापगढ़) राज्य की स्थापना की।[1]

बूंदी मे तब मीणा जाति के लोग रहते थे। उस समय बागा का पुत्र देवा हाडा भैंसरोड मे था। वहीं से आक्रमण कर उसने मीणो को पराजित कर बूंदी पर अधिकार किया और यो बूंदी पर हाड़ा चौहानो के राज्य की स्थापना हुई।[2]

खेड पर भी पहले गुहिलो का शासन था और वहाँ गुहिल राजा प्रतापसी राज्य करता था। राव आस्थान ने पाली पर अधिकार जमाने के बाद खेड के शासक प्रतापसी को धोखे से मारकर खेड पर भी आधिपत्य जमा लिया। तब गुहिल खेड छोडकर पहले बरियाहेडा और जैसलमेर गये। कुछ समय जैसलमेर रहने के बाद अन्त मे वे सोरठ चले गये।[3]

इसी प्रकार नैणसी ने अपनी ख्यात० मे यत्र-तत्र अनेको आदिम जातियो तथा विभिन्न राजपूतो के समय-समय पर स्थानांतरण और वहां राजपूतो की अन्य खांपो के आधिपत्य का उल्लेख किया है, जिससे राजस्थान प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रो के बदलते हुए मानव-भूगोल की महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है जिसके फलस्वरूप क्षेत्रीय इतिहास मे अनेको उल्लेखनीय नये मोड आये थे। रूण और जागलू के साखला परमारो[4] विभिन्न क्षेत्रो के सोलकी घरानो[5], खीची चौहानो[6] तथा मोहिल चौहानो[7] आदि के जो ऐतिहासिक विवरण नैणसी ने दिये है वे इस दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं।

ख्यात० मे वर्णित काल में अधिकतर राज्य क्षेत्रो मे भी पूर्वकाल से रह रहे आदि निवासियो सम्बन्धी मानव-भूगोल मे भी अनेको महत्त्वपूर्ण बहुत से फेरफार हुए थे, जिनकी भी प्रामाणिक जानकारी नैणसी ने अपनी इस ख्यात० मे सहज रूप से अनेको प्रसगो मे यत्र-तत्र दी है। जैसे डूंगरपुर गलियाकोट आदि क्षेत्रों के भूमियो और भीलो से छीनकर वहाँ सामतसी का वागड राज्य स्थापित करना[8], मेवाड राज्य के अन्तर्गत मेवल क्षेत्र और उसी के पास ही कामडल क्षत्र के मेरो का वहाँ से निकालकर उनके स्थान पर महाराणा राजसिंह का अनेक

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ९०-९३।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ९७-१०१।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३४-३५; २, पृ० २७६-७९।
४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३७-३९, ३४४-५०, ३५३-५४।
५. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६२-६३, ५३, १३२, २८० ८३।
६. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २५०-५३, २५५-५६।
७. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५३-६६, १६०-६६।
८. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८१-८५।

खांपो के सीसोदिया राजपूतो को उनकी बसी समेत बसाना[1], देवलिया परगने मे स्थित मेरों के राज्य पर देवलिया के राव बीका का आधिपत्य और वहाँ अपने नये स्वाधीन राज्य की स्थापना करना[2], और बूदी क्षेत्र मे मीणों के आधिपत्य को समाप्त कर हाडा देवा का वहाँ अपना राज्य स्थापित करना।[3]

इस सारे विवेचन से यह सर्वथा स्पष्ट है कि नैणसी के ग्रन्थो मे ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यो मे विभिन्न राज्य-क्षेत्रो के बदलते हुए मानव-भूगोल का बहुत ही सटीक स्पष्ट चित्रण मिलता है। उन ग्रन्थो मे दी गयी अनेकानेक ऐतिहासिक घटनाओ के विवरणो से नैणसी मे विद्यमान मानवीय भावनाएँ और उसकी सहृदयता भी स्पष्ट हो जाती है।

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४५-४६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६३-६४।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६७-१००।

अध्याय : ६

नैणसी और राजपूती राज-तन्त्र

१ विभिन्न राजपूत राजवश और उनकी खॉपे, उनके पारस्परिक सम्बन्ध

राजस्थान के प्राय सब ही प्रमुख राजवशो की कालातर मे अनेकानेक खॉपो का उद्‌भव हुआ, उनका विस्तार बढता गया, जिससे उनमे से अधिकाश का कम-ज्यादा भू-भाग पर अधिकार होने से राज्य विशेष की अथवा क्षेत्रीय राजनीति आदि मे उनका प्रभाव स्पष्ट हो जाता था। अत मध्यकालीन राजपूत राज-तन्त्र मे इन विभिन्न खॉपो का अपना विशेष महत्त्व था, जिससे उनके पारस्परिक सम्बन्धो का अध्ययन अत्यावश्यक हो जाता है। नैणसी के ग्रथो मे प्राप्य विवरणो से राजस्थान के इन विभिन्न राजपूत राजवश, उनकी खॉपो और उनके पारस्परिक सम्बन्धो पर प्रकाश पडता है।

मेवाड मे गुहिलोतो का शासन था। इसी गुहिलोत राजवश से रावल और राणा शाखाओ का क्रमश उदय हुआ। प्रारम्भ मे रावल रतनसिंह के शासनकाल मे १३०३ ई० के चित्तौड के प्रथम साके तक चित्तौड पर रावल शाखा का राज्य रहा और सन् १३३६ ई० मे या उसके बाद चित्तौड पर राणा हमीर का आधिपत्य हो जाने के बाद राणा शाखा (जो सीसोदिया कहलाये) के राज्य की चित्तौड मे स्थापना हुई। गुहिलो की रावल और राणा शाखाओ के पारस्परिक कौटुम्बिक सम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिए नैणसी ने तब ज्ञात उनकी पूर्वापर वशावलियाँ दी हैं।[1]

चित्तौड मे तब तक शासन कर रही रावल शाखा का राजघराना चित्तौड के प्रथम साके के समय हुए युद्धो मे पूरा मर खुटा था, जिससे राणा शाखा के पराक्रमी नवयुवा वीर हमीर ने क्रमश अपनी शक्ति निर्बाध बढाई और उपयुक्त अवसर से लाभ उठाकर चित्तौड पर अधिकार कर लिया। यों उसने मेवाड मे शासको के रूप मे चित्तौड पर गुहिलो की राणा शाखा का आधिपत्य स्थापित

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२-१५।

पर सीसोदिया राजवंश की स्थापना की, जो आगे कोई छ. शताब्दी तक मेवा पर शासन करती रही।

परन्तु चित्तौड़ के पदच्युत शासक रावल समरसी (सामन्तसी) ने डूंगरपुर बाँसवाड़ा क्षेत्र में वागड़ राज्य की स्थापना की और इस प्रकार मेवाड़ के रावल राजवंश की इस अलग आहाड़ा शाखा का उदय हुआ। सन् १५२७ ई. में रावल उदयसिंह की मृत्यु के बाद वागड़ राज्य दो अलग राज्यों—डूंगरपुर और बाँसवाड़ा में विभक्त हो गया। इन दोनों राज्यों पर आहाड़ा शाखा का ही राज्य था। यद्यपि एक अलग राज्य वागड़ की स्थापना हो गयी, परन्तु यहाँ के शासक अपने-आपको मेवाड़ का सेवक ही मानते थे।[1] मुगल साम्राज्य की स्थापना के बाद अवश्य ही इन दोनों राज्यों के शासकों ने मुगल सेवा स्वीकार कर ली थी। नैणसी ने इन दोनों आहाड़ा राजघरानों के विशेष वृत्त नहीं दिये हैं, परन्तु जो बात उसने चौहान रावत मान सांवलदासोत की लिखी है,[2] उससे यह स्पष्ट है कि इन दोनों आहाड़ा राजघरानों में और उनके साथ मेवाड़ के सीसोदिया घराने के साथ आपसी सम्बन्ध अच्छे थे और आवश्यक होने पर एक-दूसरे की सहायता भी करते रहते थे।

परन्तु मेवाड़ के सीसोदिया राजघराने के पश्चात्कालीन वंशजों के सम्बन्ध राज्यारूढ़ राणाओं से सदैव सौहार्दपूर्ण नहीं होते थे, जिससे मेवाड़ के राजघराने में बारबार गृहकलह उठ खड़ा होता था, जो मेवाड़ की शक्ति और प्रतिष्ठा के लिए हानिकारक ही प्रमाणित होता था। राणा मोकल का छोटा बेटा खींवा राणा मोकल के जीवनकाल में सादड़ी में जाकर रहने लगा था। राणा कुंभा के शासन काल में ही उसने स्वतंत्र होने का प्रयत्न किया। फलस्वरूप कुंभा और खींवा के मध्य निरन्तर संघर्ष चलता रहा था।[3] राणा रायमल के समय खींवा के पुत्र सूरजमल ने भी राणा से निरन्तर द्वेष रखा और राणा के क्षेत्र पर अधिकार बनाये रखा था। साथ ही उसने स्वतंत्र शासक के रूप में अपने अधिकार वाले क्षेत्र में से चारणों को सासण में गाँव देना भी प्रारंभ कर दिया था। सूरजमल का भी मेवाड़ के महाराणा से निरन्तर संघर्ष चलता रहा था।[4] अन्त में सूरजमल के पुत्र बीका ने मेवाड़ के साथ मधुर सम्बन्ध कायम किये और हाड़ी राणी कर्मवती के सहयोग से जागीर प्राप्त कर ली।[5] बीका ने ही देवलिया पर अधिकार जमाया। रावत हरिसिंह के पूर्व तक देवलिया के स्वामी

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७०।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७४-७८।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६१।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६१-६२।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६१-६२।

राणा की ही आधीनता में रहते थे।[1] रावत हरिसिंह शाही मनसबदार हो गया और उसके साथ ही तब तक निरन्तर चली आ रही मेवाड के राणा की आधीनता समाप्त हो गयी।[2]

मेवाड के सीसादिया राजवश की ही एक शाखा चन्द्रावत है, जिसने मालवा-मेवाड के सधि क्षेत्र मे सर्वथा अलग रामपुरा राज्य की स्थापना की। सीसोदे के राणा राहप से कोई छ सात पीढी बाद हुए राणा भुवनसी के पुत्र चाँदा के वशज ही चन्द्रावत कहलाते हैं। कालान्तर मे जब राणा राजवश चित्तौड मे राज्यारूढ होकर मेवाड पर राज्य करने लगा तब मेवाड के तत्कालीन राणा, सभवत सेता के समय मे चन्द्रावतो को आँतरी क्षेत्र जागीर के रूप मे दिया था। ईसा की १५वी सदी के प्रारम्भ मे शिवा चद्रावत ने अपनी शक्ति बढाई और मालवा के सुलताना का प्रश्रय पाकर वह स्वतत्र भोमिया के रूप मे रहने लगे। राव शिवा चन्द्रावत के वशज राव रायमल को राणा कुभा ने दबाकर पुन सेवा स्वीकार करने को बाध्य किया।[3] चित्तौड के तीसरे साके के समय रामपुरा पर मुगल सत्ता न अधिकार कर लिया तब राव दुर्गा को पुन मेवाड से अलग होकर मुगल सम्राट् अकबर का मनसबदार बनना पडा और चन्द्रावत खाँप के आधीन रामपुरा पुन एक स्वतत्र राज्य बन गया।[4]

मारवाड के राठोड राजवश की दो ही प्रमुख खाँपो का नैणसी के ग्रन्थो म कुछ उल्लेख मिलता है। राव जोधा के पुत्र बीका स बीकावत खाँप का प्रचलन हुआ और वरसिह दूदा स मेडतिया।[5]

राव जोधा ने अपने पुत्र बीका को जागलु क्षेत्र दिया था। यही पर उसने अपने नाम से बीकानेर का निर्माण कर स्वतत्र राज्य की स्थापना की थी।[6] इस प्रकार मालदव के पूर्व तक बीका के वशज बीकानेर पर और दूदा के वशज मेडता पर स्वतत्र रूप स शासन करते रहे थे। यद्यपि तब भी जोधपुर के शासक से इन दोनो राज्यो क साथ यदा-कदा छोटे-मोटे बखेडे होते रहते थे, परन्तु उनम उत्कट आपसी विरोध तब ही उठा, जब राव मालदेव न इन दोनो खापो की स्वतत्र सत्ता का समाप्त करना चाहा। अत उसन दो बार मेडता[7]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० ६२ ६७।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६७।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २४७ ४८, ओझा० उदयपुर, २, पृ० १०६३।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २४८ ४६, अकबरनामा (अ० अ०), २, पृ० ४६५, ३ पृ० ५१८, आईन० (अ० अ०), १ पृ० ४५६, जहाँगीर०, पृ० ५६ ५७।
५ विगत०, १, पृ० ३८।
६ विगत०, १ पृ० ३६, दयाल०, २, पृ० १ ३३।
७ विगत० १, पृ० ४३, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ६८, ७६।

पर आक्रमण कर उस पर अधिकार कर लिया और इसी प्रकार बीकानेर पर भी आक्रमण[1] कर उसे परास्त किया, परन्तु मेडता के राव वीरमदेव और बीकानेर के राव कल्याणमल ने शेरशाह के सहयोग से पुन अपने अपने क्षेत्र पर अधिकार कर लिया।[2]

मालदेव और बीकानेर में विरोध तब भी चलता रहा, परन्तु कोई सीधी टक्कर नही हुई। परन्तु राव मालदेव ने बुधवार, मार्च २१, १५५४ ई० (वैशाख वदि २, १६१० वि०) को मेडता पर पुन आक्रमण किया, परन्तु उस पराजित होकर लौटना पडा।[3] अन्त म बुधवार जनवरी २७, १५५७ ई० को मेडता पर अन्तिम बार आक्रमण कर राव मालदेव ने मेडतियो के स्वतन्त्र राज्य का अस्तित्व ही समाप्त कर दिया।[4]

मालदेव की मृत्यु और राजस्थान पर मुगल आधिपत्य हो जाने के बाद परिस्थितियाँ ही पूरी तरह से बदल गयी। मेडतियो के स्वतन्त्र राज्य की पुन स्थापना नही हुई और बीकानेर से सीधे सघर्ष की सभावनाएँ भी नही रह गयी थी।

नैणसी ने अपनी ख्यात० मे आम्बेर के कछवाहा की विस्तृत वशावलियाँ दी हैं जिनम उन कछवाहो की दो अन्य उल्लेखनीय खांपा, नरूको और शेखावतो की तत्कालीन पूरी पीढियाँ दी हैं[5] परन्तु उन सबका अलग अलग विस्तृत ब्यौरा नही दिया है कि उनके आपसी सम्बन्धो आदि की स्पष्ट जानकारी मिल सके।

इस प्रकार नैणसी ने ख्यात० म भाटिया की सब ही शाखाओ की सक्षिप्त जानकारी और उन सब विभिन्न खांपो की विस्तृत वशावलियाँ दी हैं।[6] उन वशावलियो के साथ दी गयी टिप्पणियो से उन व्यक्तियो के व्यक्तिगत सम्बन्धो और सदर्भित समकालीन इतिहास की कुछ जानकारी अवश्य मिलती है। परन्तु उन खापो के साथ जैसलमेर राजवश के आपसी सम्बन्धो की पर्याप्त जानकारी नही मिलती है कि उनके आधार पर तत्सम्बन्धी कोई सुस्पष्ट स्थापनाएँ की जा सकें।

---

१ विगत० १ पृ० ४४ राठोड़ा री ख्यात (ग्रथ स० ७२) प० ६६ ख जोधपुर ख्यात० १ पृ० ६६।
२ विगत० १ प० ५६ जोधपुर ख्यात० १ प० ७२ ७६ ७७।
३ विगत० २ प० ६५।
४ विगत० १ प० ६० ६५ २ पृ० ५८ ६० जोधपुर ख्यात० १ पृ० ७६।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ प० २६६ ३१३ ३२।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ प० ३१ ३४ ७६ ७७ ७८ ७६ ८२ ८८ ६१ १११, ११२ ५२ १५३ ६५ १६६ २०१।

२. शासकत्व सम्बन्धी राजपूती मान्यताएँ तथा उत्तराधिकार विषयक राजपूत संहिता

प्राचीन काल मे राज्य-शासन तंत्र के अनेक प्रकार प्रचलित थे। काशी-प्रसाद जायसवाल ने अपने सुविख्यात ग्रन्थ 'हिन्दू राज्य तंत्र' मे प्राचीन भारत मे हिन्दू शासन-प्रणालियो के तत्कालीन अनेकानेक स्वरूपो का विवरण लिखा है[1] जिनमे से 'जनतंत्रीय (अर्थात् प्रजातंत्रीय) शासन' भी विशेषरूपेण उल्लेखनीय है जिसकी चर्चा पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' मे 'जनपद' कहे जाने वाले 'गण' या 'सघ' के अन्तर्गत की है।[2] परन्तु कालान्तर मे तो राजाओ द्वारा शासित 'राज्य-शासन' ही एकमात्र 'राज्य-तन्त्र' रह गया था, जिसमे काल-क्रम मे सारे अधिकार राजा मे ही अधिकाधिक केन्द्रित होते गये, जिससे राजा स्वच्छन्द हो गये। उनकी सत्ता की सीमाएँ अधिकतर उनकी निजी मनोवृत्ति, भावनाओ तथा परिस्थितियों को देखते हुए स्वय द्वारा व्यवहृत बन्धनो पर ही निर्भर रहती थी। तब 'एक-तंत्र शासन होते हुए भी राजा परोपकारी और प्रजाहितैषी था।'

किन्तु जब मध्यकाल मे भारत अनेक छोटे-बडे राज्यों मे विभक्त हो गया, तब निरन्तर पारस्परिक युद्ध होने लगे। गौरीशकर ओझा के अनुसार तब तो 'राजा शनै-शनै अधिक स्वतन्त्र और उच्छृखल होते गये। देश के शासन की ओर उनका अधिक ध्यान न रहा। प्रजा की आवाज की सुनवायी कम होने लगी।'[3] यही नही, राज्य शासन मे सेना तथा उसके सचालक सरदारो और जागीरदारो का महत्त्व और बोलबाला बढ़ता गया, और राजा के साथ ही राज्य मे सरदारो और जागीरदारो की शक्ति बढ गयी और वे राज्यादेशो की उपेक्षा करने अथवा राजकीय मामलो मे अधिकाधिक हस्तक्षेप भी करने लगे। कालान्तर मे जब राजस्थान पर मुग़ल आधिपत्य स्थापित हो गया तब राजस्थान के राज-तन्त्र म मुग़ल सम्राटो या उनके अधिकारियो का हस्तक्षेप अनेक रूप मे सामने आने लगा।

इसी पृष्ठभूमि मे नैणसी कालीन राजस्थान की शासन-व्यवस्था आदि की चर्चा की जानी चाहिए। पुनः राजस्थान मे तब सर्वत्र राजपूत राजा राज्य कर रहे थे, एव इस सदर्भ मे यह सारा विवेचन उन्ही के राज्यतंत्र पर ही केन्द्रित करना अनिवार्य हो जाता है।

---

१ हिंदू राज्य-तंत्र, जायसवाल कृत, दसवां प्रकरण, १६२७।

२ हिंदू राज्य तंत्र, जायसवाल कृत, अध्याय ४-६, इण्डिया एज नोन टू पाणिनि, वासुदेवशरण अग्रवाल कृत अध्याय ७, परिच्छेद ५-६, १६५३।

३ मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, गौरीशकर ओझा कृत, पृ० १५२, १६१, १६२८ ई०।

नैणसी के ग्रन्थो मे शासकत्व सम्बन्धी राजपूत मान्यताओ के बारे मे कोई सीधी निश्चित् जानकारी नही मिलती है। मेवाड के शासक को एकलिंगजी (ईश्वर) का प्रतिनिधि माना जाता था। मारवाड मे पाली के ब्राह्मणो ने राठोडो को अपनी रक्षार्थ आमन्त्रित किया था और बाद मे राठोडो न मारवाड में शक्ति के आधार पर राठोड राज्य की स्थापना की थी। इसी प्रकार अन्य बूंदी, आम्बेर और जैसलमेर आदि पर भी विभिन्न राजवशो ने शक्ति के आधार पर ही राज्य की स्थापना की थी।

राजपूत राज्यो मे उत्तराधिकार विषयक कोई लिखित या सुनिश्चित् सहिता नही थी, सैद्धान्तिक मान्यताएँ ही थी। जिसम भी परिस्थितियो के अनुसार हेर-फेर हो ही जाते थे। उत्तराधिकार विषयक साधारण तथा प्रचलित परम्पराएँ निम्नानुसार कही जा सकती थी।

शासक की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र ही गद्दी पर बैठता था।[1]

अपने पिता के जीवन काल मे ही यदि ज्येष्ठ पुत्र की मृत्यु हो जाती तो उस मृत ज्येष्ठ पुत्र का पुत्र (अर्थात शासक का पौत्र) गद्दी पर बैठता था। रामपुरा के राव चांदा के उत्तराधिकारी पुत्र नगजी की अपने पिता क जीवनकाल मे ही मृत्यु हो गयी तब नगजी का पुत्र दूदा उत्तराधिकारी बना था।[2]

यदि ज्येष्ठ पुत्र की अपने पिता के जीवनकाल म ही नि सन्तान मृत्यु हो जाती तो शासक ज्येष्ठ पुत्र के बाद से छोटे भाई को उत्तराधिकारी बनाता था। मेवाड के महाराणा सांगा के उत्तराधिकारी पुत्र भोजराज की अपने पिता के जीवनकाल मे ही नि सतान मृत्यु हो जाने पर उसका छोटा भाई रत्नसिंह उत्तराधिकारी बना था।[3]

यदि शासक के मरने के समय उसकी पत्नी गर्भवती हो तो उसकी मृत्युपरान्त जन्मे उसके पुत्र को ही उत्तराधिकारी बनाया जाता था।[4] परन्तु इस स्थिति म प्राय अनेको झझटें होती और षडयन्त्र प्रपच होने लगते थे।

यदि शासक का नि सन्तान मृत्यु हो जाती तो उसका छोटा भाई उत्तराधिकारी बनता था। मेवाड के महाराणा रत्नसिंह की नि सन्तान मृत्यु हो जाने पर उसका छोटा भाई विक्रमादित्य उत्तराधिकारी बना था।[5]

इसी प्रकार उत्तराधिकार अधिकार ज्येष्ठता के आधार पर उसी घराने के

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० १५३, २ पृ० १० ३३३ विगत० १ पृ० ३६, शाहजहां० पृ० १५०।

२ ख्यात० ३, पृ० २४८ ४६।

३ ख्यात० १, पृ० १६, २०,२१ प्रोझा उदयपुर०, पृ० ३५८ ३५६।

४ ख्यात० १, पृ० १४१।

५ ख्यात० १, पृ० २० १०६।

निकटतम वशज को ही उत्तराधिकारी माना जाता था, परन्तु कई परिस्थितियो मे उत्तराधिकार की इस परम्परा का उल्लघन भी होता था, जैसे—

यदि शासक समझता कि उसका ज्येष्ठ पुत्र योग्य नही है और राज्य की सुरक्षा नही कर पावेगा तो अपने छोटे पुत्र को भी उत्तराधिकारी बना देता था, और ज्येष्ठ पुत्र को जीवन-यापन के लिए समुचित जागीर प्रदान कर दी जाती थी।[१]

यदि शासक किसी कारणवश अपने ज्येष्ठ और उत्तराधिकारी पुत्र से सन्तुष्ट नही होता था, तो वह किसी भी अन्य पुत्र को उत्तराधिकारी बना देता था।

परन्तु जो राजपूत शासक मुगल मनसबदार हो गये थे उन्हे अपने उत्तराधिकार विषयक मामलो मे तत्कालीन मुगल बादशाह से मान्यता भी प्राप्त करनी पडती थी। पुन यदि कोई शासक अपने ज्येष्ठ पुत्र के अतिरिक्त अन्य किसी पुत्र, भाई अथवा भाई के पुत्र को उत्तराधिकारी बनाना चाहता तो उसे अपने सामन्तो के समक्ष उसकी घोषणा कर उनकी स्वीकृति प्राप्त करनी पडती थी, कि बाद मे उसके निर्णय के विरोध मे सामन्त नही उठ खडे हो।[२]

राजपूत राज्यो मे प्राय वहाँ के प्रमुख जागीरदार विशिष्ट शक्तिशाली रहे हैं।[३] यद्यपि सामन्त प्राय शासक द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी को ही मान्य कर उसे शासक स्वीकार कर लेते थे। परन्तु यदि सामन्त चाहते तो शासक द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी का अस्वीकार कर शासक के ज्येष्ठ अथवा अन्य पुत्र को सिंहासनारूढ करवा सकते थे।[४] इसी प्रकार यदि नवसिंहासनारूढ शासक को राज्य की सुरक्षा और गरिमा के अनुकूल नही पाते तो उसे हटाकर उसके स्थान पर वश के निकटतम व्यक्ति को उत्तराधिकारी बना देते थे।[५] इस प्रकार सिंहासनारूढ होने के लिए राज्य के अधिकाश प्रभावशील शक्तिशाली सामन्तो की सहमति आवश्यक होती थी।

राजपूत राज्यो मे उत्तराधिकार के लिए राजकीय वश की ज्येष्ठता की परम्परा को ही अधिकतर मान्य किया जाता था, परन्तु विशेष परिस्थितियों मे उक्त नियम का कदाचित् पूर्णतया पालन नही किया जाता था। कभी कभी शासको अथवा सामन्तो की स्वार्थपूर्ण नीति के कारण परम्परागत नियमों का उल्लघन अवश्य हुआ है। प्रत्येक राज्य का उत्तराधिकार वही के राजवश तक

---

१ ख्यात०, १ पृ० १३ १४।

२ ख्यात०, १, पृ० १३७।

३ ख्यात० २, पृ० १०४, ३८, १ पृ० १६२।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८, ३ पृ० ८० ८१, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १४७ १८७।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३७, १, पृ० ५१, ११०।

ही सीमित रखने के नियम का पूरी कडाई के साथ पालन किया जाता था। उस राज्य के संस्थापक के व्यक्ति को ही उत्तराधिकारी बनाया जा सकता था अन्य को नही। उदाहरणार्थ—राव लाखा का वशज राव सुरताण सिरोही का शासक था। डूगरोत वश का बीजा देवड़ा उसे पदच्युत कर देने के बाद स्वयं शासक बनना चाहता था। तब देवड़ा समरा ने उत्तर दिया कि अब तक राव लाखा के सन्तानो मे बीस व्यक्ति जीवित हैं। जब तक एक-दो वर्ष का बालक भी उसके वश का हो तब तक तुम्हारी क्या मजाल जो तू गद्दी पर बैठे।[1] इसी तरह जब बांसवाड़ा का रावल मानसिंह नि सन्तान मर गया, तब समय का लाभ उठाकर चौहान मानसिंह बांसवाडा का शासक बन बैठा, तब रावल सहसमल ने कहा—'बांसवाडा के स्वामी होने वाले तुम कौन व्यक्ति होते हो ?' इसी प्रकार बांसवाडा के अन्य सामन्तो ने उसे कहा कि 'हम बांसवाडा के स्वामी कभी नही रहे। हम तो बांसवाड़ा की रक्षा करने वाले हैं।' अत अन्तत. बांसवाड़ा राज्य के सस्थापक जगमाल के बडे लडके किशनसिंह के पौत्र उग्रसेन को बांसवाडा की राजगद्दी पर बैठाया।[2]

मुगल शासको ने ज्येष्ठता के आधार पर राजपूत उत्तराधिकार की परम्परा के उल्लघन मे सहयोग दिया क्योंकि जो भी राजपूत राजा मुगल मनसबदार बन गये थे, मुगल सम्राटो ने अनिवार्यरूपेण ज्येष्ठता के आधार पर उनके उत्तराधिकार क्रमनिर्धारण को कभी भी मान्य नही किया।

बूंदी के राव सुर्जन का छोटा पुत्र भोज अपने पिता के जीवनकाल मे ही मुगल दरबार मे पहुँचने पर बादशाह का कृपापात्र बन गया, एव मुगल बादशाह अकबर ने भी भोज को बूदी का उत्तराधिकारी बना लिया। इससे दोनो भाइयो दूदा और भोज मे सघर्ष प्रारम्भ हो गया था। दूदा के मरने के बाद ही भोज बूदी मे जा सका था।[3]

मोटा राजा उदयसिह की मृत्यु के बाद उसके छोटे पुत्र सूरसिंह को अकबर ने जोधपुर का उत्तराधिकारी बनाया।[4] क्योकि सूरसिंह पहले भी अकबर की सेवा में रह चुका था और मोटा राजा भी यही चाहता था। उदयसिंह के ज्येष्ठ पुत्र सकतसिंह को 'राव' की उपाधि दी जा कर शाही मनसब और अलग जागीर दी गयी थी।[5] इसी प्रकार शाहजहाँ ने गजसिंह के बडे पुत्र अमरसिंह को अलग

१ ख्यात०, १, पृ० १४४-४५।
२ ख्यात०, १, पृ० ७४।
३ विगत०, १, पृ० ११०-१२, २६६-७२; मा० उ०, (हिन्दी), १, पृ० ४४३।
४ विगत०, १, पृ० ८२-८३, वीरविनोद, २, पृ० ८१७, रेऊ, मारवाड०, १, पृ० १८१।
५. विगत०, १, पृ० ११०-१२, २६६-७२; मा० उ०, (हिन्दी), १, पृ० ४४३।

मनसब दे दिया और छोटे पुत्र जसवतसिंह को जोधपुर का उत्तराधिकारी बनाया।[1]

यो वश परम्परागत नियम का जब कभी उल्लघन हुआ, तब उत्तराधिकारी के एक से अधिक प्रतिद्वन्द्वी हो जाते थे, जिससे राज्यो म उत्तराधिकार युद्ध और दलबन्दी प्रारम हो जाती जिसके कारण राज्य की शक्ति का ह्रास और आर्थिक स्थिति भी बिगड जाती थी।

३ राजपूत राज्यो का सामन्ती सगठन और उसमे राजपूतो से इतर जातियो का स्थान

मुहणोत नैणसी के ग्रन्थो मे १६वी सदी के पूर्व राजपूत राज्यो के सामन्ती सगठन के निश्चित् स्वरूप पर कोई उल्लेखनीय प्रकाश नही पडता है। अत पूर्व के सामन्ती सगठन के बारे मे सम्भावना ही व्यक्त की जा सकती है। राव मल्लीनाथ ने अपने अधिकार क्षेत्र का कुछ भाग भाई-बट के रूप म अपने भाइयो म बाँट दिया था।[2] इसी प्रकार राव जोधा ने भी अधिकाश भू-भाग अपन पुत्रो और भाइयो मे बाँट दिया था।[3] पुन जोधा के समय म उसके भाई-बेटो ने मिलकर कई एक ऐसे क्षेत्र जीते, जिन पर पहले पूर्ववर्ती किसी भी राठोड शासक का कोई अधिकार नही था। ऐसे क्षेत्र जोधा ने उन क्षेत्रो के विजेताओं के ही अधिकार मे रहने दिये।[4] यही व्यवस्था मेवाड और जैसलमेर म भी प्रचलित थी।[5] पूगल के स्वामी राव केल्हण के पौत्र और चाचा के पुत्र रणधीर को भाईबट म देरावर मिला था। इसी प्रकार राव वैरसल के पुत्र आगायत को भाई बट मे केहरोर मिला था। राव शेखा केल्हणात भाटी के वशजो मे सारा क्षेत्र बँट गया था।[6] इससे यह निश्चित रूप स कहा जा सकता है कि राजपूत शासक अपने अधिकार क्षेत्र का बहुत कुछ भाग जागीर के रूप म अपने भाइयो और पुत्रो म बाँट देते थे।[7] इसके बदले में ये भाई और पुत्र भी राज्य की सेवा करते थे। इसके अतिरिक्त अन्य वशीय राजपूत और अन्य जातियो के लोगो को भी शासकीय सेवा के बदले मे जागीरें दी जाती थी। परन्तु तब प्राय यह सारी कार्यवाही

---

१ पादशाहनामा, लाहोरी कृत, २, पृ० ६७, शाहजहाँ, पृ० १५०।

२ विगत०, १ पृ० १६।

३ विगत०, १, पृ० ३८-४०।

४ विगत०, १, पृ० ३६, ख्यात० (बणसूर), प० २४ क-२४ ख।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १०२ १०४।

६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ११७, १२०, ११० ११, १२१, १२४।

७ जोधपुर ख्यात० (१, पृ० ६८) के अनुसार 'पहली धरती भाई-बट वटियोडी थी, सो पातसाही मालदे बणाई'।

मौखिक आदेशो की ही होती थी। परन्तु राव मालदेव के शासनकाल मे इस सामन्ती शासन-सगठन मे फेरफार होने लगे और राज्य के केन्द्रीय शासन को अधिक सबल बनाने के प्रयत्न हुए। यही नही मालदेव के समय मे जागीरो के पट्टे देने की परम्परा भी प्रारम्भ हो गयी थी।[1]

नैणसी के ग्रथो मे सोलहवी और सत्रहवी सदी के राजपूत राज्यो के सामन्ती सगठन विषयक विस्तृत उल्लेख मिलते हैं। राव मालदेव के देहान्त के कुछ ही समय बाद जोधपुर पर मुगलो का आधिपत्य हो जाने के फलस्वरूप जोधपुर राज्य का अस्तित्व ही समाप्त हो गया था। यह स्थिति लगभग बीस वर्ष तक बनी रही। मोटा राजा उदयसिंह को जोधपुर दिये जाने पर ही इस राज्य की पुन स्थापना हुई। तब तक मुगल शासन की अधिकाश निम्नस्तरीय परम्पराएँ जोधपुर क्षेत्र मे भी लागू हो चुकी थी।[2] मुगल मनसबदार बन जाने के बाद मोटा राजा भी मुगल शासन-व्यवस्था से बहुत-कुछ परिचित हो चुका था, एव उसके तब नये सिरे से जोधपुर राज्य मे जो राज्य-शासन-व्यवस्था स्थापित की, उसमे मुगल शासन का स्पष्ट प्रभाव झलकता है। इसी के फलस्वरूप तब तक भाई-बट के स्थान पर पट्टा व्यवस्था ने निश्चित् रूप ग्रहण कर लिया था। तब सामन्तो और अन्य प्रशासकीय अधिकारियो को भी राज्य की सैनिक अथवा असैनिक सेवा के बदले मे राज्य की ओर से निश्चित् आय की जागीर का पट्टा प्रदान किया जाने लगा। पट्टे मे उल्लेखित गाँव अथवा गाँवो का ही वह स्वामी होता था और उसको उसके बदले मे राज्य की सेवा करनी पड़ती थी। ये पट्टे वशानुगत नही होते थे। यह आवश्यक नही था कि पिता की मृत्यु के बाद पुत्र को भी उसी गाव या गावो का पट्टा दिया ही जावे, अथवा पिता के अधिकार मे रही जागीर की ही रेख की जागीर पुत्र को भी मिल जावे। यह सब राजा की इच्छा और परिस्थितियो पर निर्भर करता था।[3] सामान्यत राजा सामन्तो को जागीरें देने मे वशानुगत परम्परा को निभाता था। यो तो पिता के बाद पुत्र को भी जागीर का पट्टा मिलता रहता था।[4] नवीन पट्टा प्रदान करते समय पेशकश (भेंट) नकद अथवा पशु (घोडे और ऊँट) अथवा दोनो ही पट्टादार की सामर्थ्यानुसार लिये जाते थे।[5]

---

१ *विगत०* (२, पृ० ६१) में १५६० ई० मे *मालदेव* द्वारा राठोड़ *जगमाल वीरमदेवोत* को दिये गये पट्टे की प्रतिलिपि दी गयी है।

२ आईन० (अ० अ०), २, पृ० १०६।

३ देखिये वही०, पृ० १२५-१२७।

४ वही०, पृ०, १३१, १३५, १४६, १४६।

५ वही०, पृ० १५१, १५३, १६४, १७७, १७८, १७६, १८०, १८४, १८८, १६६, २०३।

पट्टा प्रदान करते समय प्रत्येक सामन्त के पट्टे मे सामन्त (पट्टादार) को सैनिक अथवा असैनिक किस प्रकार की सेवा करनी होगी, उसे पट्टे मे प्राप्त जागीर मे सिर्फ भू-राजस्व अथवा राजस्व (भू-राजस्व के अतिरिक्त माल, घासमारी, मेला, दाण आदि) का अधिकार होगा या नही, अपने जागीर क्षेत्र मे वह सासण दे सकेगा अथवा नही, उसे कितने घुडसवार, शुतुर सवार (ओठी) अथवा सैनिकों से राज्य की सेवा करनी होगी आदि बातो का स्पष्टीकरण भी कर दिया जाता था।[1] यों सामन्तो को राज्य की सेवा के बदले मे ही जागीर (पट्टा) दी जाती थी। परन्तु किसी कारण विशेष पर कुछ सामन्तों को राज्य की सेवा के बिना भी जागीर दी जाती थी।[2] राठोड जसकरण को महाराजा जसवंतसिह ने १६६१ ई० मे जब बीचपुडी राहीण का पट्टा दिया था, तब वह बालक था अत तब उससे राज्य की सेवा नही ली गयी थी।[3] इसी प्रकार यदि सामन्त बहुत वृद्ध हो जाता था तो उसके स्थान पर उसके पुत्र को राज्य की सेवा करनी पडती थी।[4]

यदि कोई सामन्त अपने तब के पट्टे अथवा जागीर से सन्तुष्ट नही होता था तो वह समरन उसमे फेरबदल भी करवा सकता था।[5] इसी प्रकार यदि पट्टे की रेख उस जागीर की वास्तविक आय मे बहुत अधिक होती ता सामन्त उस पट्टे मे उल्लिखित रेख मे कमी भी करवा सकता था।[6] कभी किसी सामन्त की रेख से कम जागीर दी जाती तो तलब राशि नकद दी जाती थी। साथ ही कभी-कभी जागीर प्रदान करने मे किसी कारणवश देरी होती थी तो उस सामन्त को जागीर मिलने तक नकद वेतन दिया जाता था।[7]

सामन्तों को राज्य की सीमाओं मे अथवा राज्य के बाहर भी आदेशानुसार सैनिक अथवा प्रशासनिक सेवा करनी पडती थी।[8] तब सैनिक सेवा ही महत्त्वपूर्ण थी। अत पट्टे मे ही इस बात का भी उल्लेख रहता था कि कितने घुडसवारों अथवा शुतुर सवारो से राज्य (देश) मे अथवा राज्य के बाहर उसे

---

१ विगत०, २, पृ० २६५, ३३१-२, ३३३, ३३४, ३३७, ३३८; वही०, पृ० १२४, १८४, १६४, १६६, १६८, २०२, २२५, २२६, २२६, २३५।

२ वही०, पृ० २००।

३ वही०, पृ० १८४। इसी प्रकार के उल्लेख पृ० १८३ और १८७ पर भी हैं।

४ वही०, पृ० १६६, २११।

५. वही०, पृ० १६३, १६८।

६. वही०, पृ० १४४।

७ वही०, पृ० १७६, १८७, १६४, १३७। (वही०, पृ० १३७ पर 'रोजीनो ले छै' के स्थान पर सम्पादको ने भूल के कारण 'रोजी तोले छै' कर दिया है)।

८. वही०, पृ० १८८, २१५, २१६, २२२, २२३, २२५, २२६, २२७।

सेवा करनी होगी। कितनी रेख पर कितने घुड़सवार अथवा शुतुर सवार रखने पड़ते थे इस सम्बन्ध में नैणसी के ग्रन्थों में कहीं कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलते हैं। नैणसी के समकालीन ग्रन्थ बही० में जो उल्लेख मिलते हैं, उनमें भी यही निष्कर्ष निकलता है कि सब रेख के आधार पर घुड़सवार अथवा शुतुर सवार आदि के निर्धारण के सम्बन्ध में कोई एक निश्चित नियम नहीं था। उदाहरणार्थ—४०,२०० रेख पर ५० घुड़सवार, ५,००० रेख पर ६ घुड़सवार, १,४०० रेख पर २ घुड़सवार, ६०० रेख पर १ घुड़सवार, ३०० रेख पर १ घुड़सवार ७०० रेख पर ५ शुतुर सवार रखने के उल्लेख मिलते हैं।[1] अत यही कहा जा सकता है कि पट्टा देते समय ही सवारों की संख्या का निर्धारण शासक की इच्छानुसार कर दिया जाता था।

सामन्तों को प्राय ठाकुर ही कहा जाता था।[2] कुछ विशिष्ट सामन्तों को शासक की ओर से 'राव' अथवा 'रावत' की उपाधि दी जाती थी।[3] साथ ही उन्हें सिरोपाव आदि से भी सम्मानित किया जाता था।[4] प्राय जागीर का वितरण शासक अपने ही वंश के लोगों में करता था।[5] इसके साथ ही उनके साथ वैवाहिक सम्बन्धों अथवा अन्य कारणों से भी कुछेक अन्य वंशीय राजपूतों को भी जागीरें (पट्टा) प्रदान की जाती थी।[6] भाटी राम पचायणोत राव चन्द्रसेन, जोधपुर, का श्वसुर था। अत राम के पुत्र सुरताण को मेडता का गाँव राजोर पट्टे मे प्राप्त हुआ था। इसी प्रकार भाटी गोविन्ददास पचायणोत ने अपनी पुत्री सुजानदे का विवाह मारवाड़ के राजा सूरसिंह के साथ किया था। अतएव तदनन्तर गोविन्ददास का पुत्र जोगीदास जोधपुर चला गया और बीसवाड़िया सहित चार गाँव उसे पट्टे में प्राप्त हुए।[7] जागीर मे वृद्धि सामन्तों के शासक से सम्बन्ध, उनके वंश और उनकी योग्यता पर भी निर्भर करती थी। राज्य दरबार में विभिन्न सामन्तों के बैठने की निश्चित् व्यवस्था भी राजा सूरसिंह के शासनकाल में निर्धारित कर दी गयी थी। मारवाड़ में दरबार के वक्त रिणमल के वंशज दायी ओर और जोधा के वंशज बायी ओर बैठते थे।[8]

---

१ बही०, पृ० १५२, २२५, २२६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६५, ८०, २, पृ० १०६ ३, पृ० ८० ८१ विगत०, २, पृ० २६४, ३०२, ३०५।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० २७, ६२, ६६।
४ बही०, पृ० १६६ २२१।
५ बही०, पृ० १२५-२११।
६ बही०, पृ० २११, २१३ २३०, २३४-३७।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ११६, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ६१, १४६।
८ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १४०, बही०, पृ० ७६।

मुगल काल मे अधिकाश राजपूत शासक मुगल मनसबदार हो गये थ। अत शासकों को बादशाहों की सेवा में रहकर उनके आदेशानुसार विभिन्न युद्धाभियानो मे जाना पडता था। सामन्त ही शासक की सैनिक शक्ति का आधार-स्तम्भ होते थे। अत उन्हे भी अपन शासक के साथ रहकर यत्र तत्र जाना पडता था।[1] अत ऐसी स्थिति म जब भी कोई सामन्त अपनी जागीर मे जाना चाहता था तो उसे अपने शासक की स्वीकृति लेनी पडती थी। पूर्व-स्वीकृति के बिना यदि कोई सामन्त अपनी जागीर म चला जाता तो उसका पट्टा जागीर अथवा खालसा भी कर लिया जाता था।[2] इसी प्रकार शासक के आदेशानुसार यदि कोई सामन्त अपनी जागीर से गन्तव्य स्थान पर नही पहुँचता था तब भी उसकी जागीर को खालसे कर लिया जाता था।[3] साथ ही राज्य के शत्रु को कोई भी सामन्त अपनी जागीर मे सरक्षण नही द सकता था। ऐसा करन पर तथा चोरो को सरक्षण देने पर भी उसकी जागीर जब्त कर ली जाती थी।[4]

यो पट्टादारी व्यवस्था के कारण सामन्तो को अपने स्वामी के प्रति पूर्णतया स्वामीभक्त रहते हुए अनुशासनबद्ध होना पडता था। तथापि कई एक कुछ राजवशीय ही नही कुछ अन्य बडे सामन्त भी बहुत शक्तिशाली होते थे। क्योकि उनकी सहमति से ही शासक राजगद्दी पर बैठते थे। अपन राज्यो के उत्तराधिकार म ये सामन्त विशेष रूप स निर्णायक होते थे।[5] परन्तु मुगल मनसब प्राप्त राजपूत शासकों के उत्तराधिकार का अन्तिम निर्णय मुगल बादशाह स्वय करता था। अत मुगल आधिपत्य स्थापना के बाद इस सदर्भ म भी सामन्तो का महत्त्व और शक्ति बहुत कम हो गयी थी।

सामन्तो का सामूहिक सैन्य बल ही राज्य की सैनिक शक्ति का मूल आधार-स्तम्भ होता था। अपने शासक के विभिन्न युद्धाभियानो म सहयोग देकर वे राज्य म शान्ति व्यवस्था बनाये रखने मे सहायक होते थे। पुन अपन शासक के सैनिक अधिकारियो के रूप म मुगल साम्राज्य के विस्तार मे भी इनका उल्लेखनीय सहयोग होता था।

इस प्रकार यद्यपि प्राय सब ही राजपूत राज्यो के सामन्ती सगठन मे अधिकाश राजपूत होते थे, उसमे अन्य जातियो को भी पर्याप्त स्थान प्राप्त थे। मुहणोत नैणसी के ग्रन्थो मे ऐसे अनेको उल्लेख प्रसगानुसार प्राप्त होते थे। राजपूत

---

१ विगत०, १, पृ० १३६ ८२ २ प० ५३, ५६।
२ वही०, प० १३३, १६६, २१०।
३ वही० पृ० १२७, १८६, १६२, १६६, २०८, २१७।
४ वही०, पृ० १६१ १६६।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६३, ८७, ३, पृ० ८०-८१।

राज्यों के देश-दीवान, बख्शी, परगना हाकिम, कानूनगो, वकील आदि विभिन्न प्रशासनिक पदों पर अनेकों ओसवाला, भण्डारी और सघवी आदि वैश्य-वर्गीय, कायस्थ, ब्राह्मण और मुसलमान आदि जातियों के लोगों के भी कार्यरत होने के बहुत से उल्लेख मिलते हैं।

राजा सूरसिंह के समय में भण्डारी माना और जोशी देवदत्त देश-दीवान के पद पर रहे थे।[1] महाराजा गजसिंह के समय में ओसवाल जाति का मुहणोत जयमल जैमावत सर्वोच्च प्रशासकीय पद 'देश-दीवान' तक पहुँच गया था।[2] उसका पुत्र नैणसी भी महाराजा जसवन्तसिंह के समय में ही विभिन्न परगनों का हाकिम रहा और अन्त में उसे 'देश-दीवान' पद प्राप्त हुआ था।[3] नैणसी का भाई सुन्दरदास को तन-दीवान[4] का पद मिला था, तथा नरसिंहदास और आसकरण तथा नैणसी का पुत्र कर्मसी परगना हाकिम के पदों पर रहे थे।[5] सघवी पृथ्वीमल रेवाड़ी का हाकिम नियुक्त हुआ था।[6]

महाराजा जसवन्तसिंह के समय में पचोली केशरीसिंह को क्रमश बख्शी और 'देश-दीवान' के पद पर नियुक्त किया गया था।[7] पचोली मनोहरदास वकील[8] के पद पर, पचोली नरसिंहदास[9] और करमचद[10] कानूनगो के पद पर और कई पचोली दफ्तरी[11] के पद पर थे। इसी प्रकार महाराजा जसवतसिंह के समय में मीयाँ फरासत[12] 'देश-दीवान' के पद (१६४५-१६४८, १६५०-१६५८ ई० तक) पर, ख्वाजा अगर[13] तन-दीवान के पद पर (मई १६४६ से मार्च १६४७ ई० तक) रहा था।

४. राजपूतों के सैनिक-व्यवस्था और उनकी युद्ध-प्रणाली

राजपूतों की सैन्य सगठन का आधार-स्तम्भ राज्य के छोटे-बड़े सभी जागीर-

---

१ विगत०, १, पृ० १०२, १०३।
२ देखिए अध्याय—२।
३ देखिये अध्याय—२।
४ विगत०, १ पृ० १२६, १५६, वही०, पृ० २७, जोधपुर ख्यात०, १ पृ० २५५।
५ विगत०, १, पृ० १२८।
६. विगत०, १ पृ० १२६।
७ जोधपुर ख्यात०, १ पृ० २५४।
८. विगत०, १, पृ० १५३ १५६, वही०, पृ० ३।
९ विगत०, १, पृ० १६४, २, पृ० ३५६।
१० विगत०, २, पृ० ८६-८७।
११ विगत०, १ पृ० १८३।
१२ विगत०, १, पृ० १२६, २, पृ० ६२, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५५।
१३ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५४।

-दार (पट्टादार) होते थे। प्रत्येक जागीरदार जागीर के बदले में निश्चित् संख्या में सैनिक रखते थे और आवश्यकता पड़ने पर राज्य की सेवा करते थे।[1] जागीर के अनुसार ही जागीरदारों को घुड़सवार और शुतुर सवार रखने होते थे।[2]

इसके अतिरिक्त प्रत्येक परगना में भी राज्य की ओर से निश्चित् सेना रखी जाती थी। उक्त सेना का मूल कार्य परगना में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना था, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर सैनिक अभियान में भी उक्त सेना का उपयोग किया जाता था।[3]

इसके अतिरिक्त शासक के सीधे नियन्त्रण में राज्य की अपनी अलग सेना भी रहती थी। उक्त सेना राज्य के केन्द्र स्थान पर ही रहती थी। राज्य की इस सेना में घुड़सवार, हस्ति सेना, शुतुर सवार अर्थात् ओठी, तोपची और पैदल सेना होती थी। सेना के प्रत्येक विभाग का अध्यक्ष होता था जिसे दरोगा अथवा मुशरिफ कहा जाता था। सैन्य-व्यवस्था का सम्पूर्ण दायित्व बख्शी पर होता था। केन्द्रीय स्थाई सेना को नकद भुगतान किया जाता था।[4]

राजपूत सेना के मुख्यत चार भाग हस्ती सेना, घुड़सवार, बन्दूकची, तोपची और पैदल थे।[5] प्राय सवार और पैदल सैनिक ही अधिक होते थे।[6] प्राय हाथियों का प्रयोग दुर्ग के द्वार तोड़ने के लिए किया जाता था।[7]

इसके अतिरिक्त रेगिस्तानी क्षेत्रों में आक्रमण, सुरक्षा व सुदूर संदेश भेजने आदि के लिए ऊँट सवार सेना भी रखी जाती थी। बन्दूक और तोप का प्रयोग १५२६ ई० के बाद ही प्रारम्भ हुआ था।[8]

युद्ध में स्वयं की रक्षा के लिए कवच और ढाल का प्रयोग किया जाता था।[9] साथ ही युद्ध के लिए तलवार[10], भाला[11], कटार[12], बन्दूकें, तोपें और डांगर जन्त्र[13]

---

१ विगत० १, पृ० १२८-३६।
२ विगत०, २, पृ० ३३१, ३३२, ३३३ ३३४ ३३७, वही०, पृ० १५०, १५२।
३ विगत०, १ पृ० १४१ १४२ १३६।
४ वही०, पृ० ५२ ५३ ६६, ८१ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १, पृ० ४ १००, जोधपुर ख्यात० २, पृ० १४७ ख्यात वंशावली० (ग्रंथ ७४), प० ५६ क।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ४, ८ कवित्त स० ३, १८५, २ पृ० २५५ २५८ वही०, पृ० ४१ ५४ ७४।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ४८ कवित्त रावल मलु सेहदरा रो'—५ ६ कवित्त स० ४, २ पृ० २५५।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० १२०
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० १३२, २४८, १, पृ० ६१।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान) २, पृ० ४८ ६५।
१० ख्यात० (प्रतिष्ठान), ४, पृ० ६५।
११ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २८२।
१२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १०६।
१३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ४८।

तथा तीर लडने के प्रमुख शस्त्र थे। युद्धाभियान के समय छोटी-छोटी सैनिक टुकडियो के अलग-अलग सेनापति होते थे, जिन्हे सरदार कहा जाता था।[1] परन्तु शासक स्वय ही सेना का प्रधान सेनापति नियुक्त करता था। सभी सरदारो को उसी की आज्ञा का पालन करना पडता था।[2] परन्तु राज्य की सेना मे अधिकतर राज्य के आधीन सरदारो की अपनी अपनी टुकडियाँ होती थी, जिनका नेतृत्व उस जागीर का प्रमुख रावत, ठाकुर या उसी द्वारा नियुक्त उसका भाई-बेटा या कोई अन्य प्रभावशील अधिकारी होता था। यो तो ये सारी टुकडियाँ मूलत राजा अथवा उसके द्वारा नियुक्त मुख्य सेनापति के नियन्त्रण मे रहती थी। परन्तु य विभिन्न टुकडियाँ प्राय उनके सेना-नायको द्वारा अपनी खाँपो के लोगो की होन के कारण, उनमे प्राय अत्यावश्यक पूर्ण सगठित एकता का अभाव पाया जाता था।

राजपूत प्राय खुले मैदान मे ही युद्ध करने पर अधिक महत्त्व दते थे, क्योकि उनका अधिकाश युद्ध शौर्य-प्रदर्शन के लिए हुआ करता था।[3] युद्ध जीतने के लिए अत्यावश्यक फौजी दावपेचो अथवा सैन्य विन्यास कला की प्राय उपेक्षा ही होती थी, जिसके कारण युद्धो मे शूरवीरतापूर्ण भयकर मारकाट के बाद भी पराजय का ही सामना करना पडता। ऐसे युद्ध मे राजपूत सेना एक खुले मैदान मे आ जाती थी। युद्ध मैदान म सेना को विभिन्न टुकडियो के रूप मे व्यवस्थित किया जाता था, जिन्हे 'अणी' कहा जाता था। प्रत्येक अणी का अलग से सेनापति होता था।[4] खुले मैदान के युद्ध मे युद्ध प्रारम्भ करने के पूर्व ढोल बजवाकर विपक्ष को युद्ध के लिए चुनौती दी जाती थी[5], और तब युद्ध प्रारभ कर दिया जाता था।

भारत मे मुगल साम्राज्य की स्थापना के बाद जब राजपूत शासक तथा उनकी सनाएँ मुगल शाही सेना मे सम्मिलित हो गये, तब उन्होने भी मुगल युद्ध-प्रणाली तथा युद्ध म तोपो के समुचित प्रयोग को अपना लिया जिससे उनकी परम्परागत युद्ध-प्रणाली मे कुछ बदलाव अवश्य आया था, परन्तु सर्वोपरि मुगल सनानायक नही हान पर प्राय ये बदलाव कम ही देख पडते थे।

प्रबल मुगल आक्रमणो का निरन्तर सामना न कर सकने की स्थिति का सामना करन पर राजपूतो ने छापा-मार युद्ध-प्रणाली अपनाना प्रारम्भ कर दिया था। अपेक्षतया अपनी सैनिक शक्ति कमजोर होने पर खुले मैदान मे युद्ध

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ६२ १०६७।
२ वही०, पृ० ४०।
३ ख्यात० २, पृ० ५५।
४ विगत० १, पृ० ६७, २, पृ० २६६।
५ ख्यात०, २, पृ० १३२।

कर शत्रु पक्ष पर विजय पाना कठिन होने की स्थिति म शत्रु के आक्रमण के पूर्व ही प्रायः ससैन्य पहाड़ो पर सुरक्षित स्थानो मे चले जाते थे। पहाड़ो मे रहते हुए ही अवसर पाकर शत्रु सेना पर छापे मारते थे। ऐसा युद्ध महाराणा प्रताप और राव चन्द्रसेन ने प्रारम्भ किया था।[1]

यद्यपि नैणसी न इसका कहो उल्लेख नही किया है, यहाँ इसी सन्दर्भ मे यह सकेत कर देना असगत नही होगा कि हल्दी-घाटी के युद्ध के बाद मे ही महाराणा प्रताप न सर्वसंहार-नीति (स्कॉर्च्ड अर्थ पालिसी) अर्थात मेवाड के समूचे समतल क्षेत्र के साथ ही साथ मुगलों द्वारा अधिकृत पहाड़ी क्षेत्रो को भी पूरी तरह उजाड देने तथा वहाँ कोई खेती-बाडी नही होने देने की नीति अपनायी। मेवाड मे होकर निकलने वाला व्यापार-मार्ग भी बन्द हो गया क्योकि माल लुट जाने लगा।[2]

इसी प्रकार किले मे रहकर रक्षात्मक युद्ध भी करते थे। बाहरी आक्रमण के समय यदि शत्रु दल अधिक शक्तिशाली होता तो ऐसी स्थिति मे खुले मैदान मे युद्ध करना अहितकर समझकर दुर्ग के द्वार बन्द कर लिये जाते थे। परन्तु प्राय शत्रुपक्ष का घेरा अधिक समय तक रहता था और ऐसी स्थिति मे जब दुर्ग मे रसद का अभाव हो जाता था तब दुर्ग-द्वार खोलकर, लडकर मरने का निर्णय करना पडता था। दुर्ग मे रहते हुए शत्रु के घेरे को परेशान करने के लिए किले की दीवारो से शत्रुपक्ष पर पत्थर भी फेंके जाते थे।[3] परन्तु आक्रमणकारी को यह दिखाने के लिए कि दुर्ग म रसद की कमी नही है, ग्राम सुअर के दूध की खीर बनवाकर पत्तलो पर लगवाकर बाहर फेंक दी जाती थी, ताकि आक्रमणकारी यह समझकर कि उनके पास सामान की कमी नही है, घेरा उठा लेवें।[4]

इन रक्षात्मक युद्ध मे प्राय राजपूतो की पराजय ही होती थी, क्योकि दुर्ग का घेरा अधिक समय तक रहता था और रसद का अभाव हो जाता था। ऐसी परिस्थितियो मे दुर्ग के प्रवेश-द्वार खोलकर लड मरने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नही रह जाता था। तब ऐसे युद्ध के पूर्व दुर्ग की राजपूत औरतें जौहर करती थी और दूसरे दिन दुर्ग के द्वार खोलकर सभी सैनिक लडकर अपने प्राण न्यौछावर कर देते थे।[5]

रात्रि आक्रमण—राजपूतो की युद्ध प्रणाली मे आकस्मिक रात्रि-आक्रमण

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २१, ४०, ४६ विगत०, १ पृ० ६६ ७०, ५३६।
२ महाराणा प्रताप० पृ० ३८।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ५९, ६०, ७३।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६१।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ६० ६१।

को यदा-कदा अपनाया जाता था। ऐसे युद्ध को 'रातीं बाहो' कहा जाता था राश्रि-आक्रमण करने के लिए समूची सेना काम मे नही ली जाती थी। युद्ध मे निपुण और साहसी सैनिको की ही सेना रात्रि-आक्रमण के लिए तैयार की जाती थी और उस चुनी हुई सेना के साथ सेनापति स्वय भी साथ रहकर रात्रि मे अचानक शत्रु सेना पर आक्रमण करता था।[१]

५ राजपूतो की जातियो अथवा खाँपो मे पारस्परिक विद्वेप, और राजघरानो अथवा कुटुम्ब में 'वैर' की परम्परा, उनके दुष्परिणाम और हानिकारक प्रभाव

मुहणोत नैणसी की ख्यात० मे राजपूतो की जातियों अथवा उनकी खाँपो मे पारस्परिक वैर भावना के सैकडो उदाहरण मिलते हैं, जिसमे राजपूत चरित्र का पता चलता है। राजपूत स्वभाव स ही स्वाभिमानी ही नही, प्राय अहकारी भी होता था और यों वह अन्य को स्वय से हीन ही समझता था। उनके पारस्परिक विद्वेप का मूल कारण यही होता था। मेवाड के महाराणा कुभा ने षड्यन्त्र से राव रिणमल को मरवा दिया तो सीसोदिया-राठोडो मे वैर हो गया।[२] राणा क्षेत्रसिंह के समय मे चित्तौड का एक चारण बारहठ बाहरू बूँदी लालसिंह के पास गया था। तब आपसी चर्चा के समय लालसिंह ने राणा के लिए कोई अपशब्द का प्रयोग किया। इस पर उक्त चारण ने आत्महत्या कर ली। इस घटना को लेकर हाडा-सीसोदिया वैर प्रारम्भ हो गया था।[३] सिरोही के राव सुरताण के साथ हुए युद्ध मे राणा उदयसिंह का पुत्र जगमाल मारा गया तो देवडा (चौहान)। सीसोदिया वैर प्रारम्भ हो गया। दाताणी के इसी युद्ध मे रायसिंह चन्द्रसेनोत के भी काम आने से देवडा-राठोड वैर भी प्रारम्भ हो गया, जिस कारण जोधपुर के शासको ने बारम्बार सिरोही पर आक्रमण किये।[४] भैरवदास जैसावत और सूरमालण के मध्य जागीर की सीमा विवाद लेकर हुए झगडे मेंभैरवदास मारा गया, तो दोनो कुटुम्बो के मध्य वैर प्रारम्भ हो गया।[५] इस प्रकार ख्यात० और विगत० मे राजपूतो की वैर परम्परा के अनेको उदाहरण मिलते हैं।

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८८।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८८-८६, ३, पृ० १७।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ८, ११।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५६, वही०, पृ० ११६।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२-२४, विगत०, १, पृ० ७८, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० ६३-६५, १३६-३८।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १७८।

वैर के परिणाम—वैर परम्परा के कारण राजपूत राज्यों को ही नहीं राजपूत घरानों को भी भारी हानि उठानी पड़ी। एक बार वैर हो जाने के बाद जब तक उसे दोनों मिलकर समाप्त नहीं कर देते, निरन्तर मनमुटाव और झगड़ा चलता ही रहता था। इन आपसी युद्धों के कारण दोनों जातियाँ अथवा राज्य शक्तिहीन होते गये थे। मेवाड़ के महाराणा कुंभा ने राव रिणमल को षड्यन्त्र से मरवा दिया जिसके कारण सीसोदिया-राठौड़ वैर प्रारम्भ हो गया था। उसी वैर का बदला लेने के लिए जोधा ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया था।[१] जैसलमेर के राव राणगदे भाटी को राव चूण्डा ने मारा था। राव केल्हण ने गद्दी पर बैठकर कहा कि 'राव राणगदे के कोई पुत्र नहीं है, अतः उसके वैर का बदला मैं लूंगा।'[२] यों भाटी-राठौड़ वैर प्रारम्भ हो गया।

इसी प्रकार राजनैतिक सूझ बूझ के कारण यदि कोई शासक वैर का बदला नहीं लेता था तो उसके सम्बन्धी उस शासक से नाराज होकर अन्य शासक अथवा मुगल बादशाह के पास चले जाते थे। इससे उस शासक और राज्य की शक्ति तो कम होती ही थी साथ ही उनकी कमजोरियाँ भी शत्रु शासक को ज्ञात हो जाती थी। महाराणा उदयसिंह का पुत्र जगमाल सिरोही के राव सुरताण के साथ हुए युद्ध मे मारा गया था। वैर परम्परा के अनुसार जगमाल के सौतेले भाई मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा प्रताप को सिरोही पर आक्रमण करना चाहिए था, परन्तु महाराणा ने राव सुरताण के साथ झगड़ा न कर उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। इस पर क्रोधित होकर जगमाल का सगा भाई सगर मुगल बादशाह की सेवा में चला गया था।[३]

हिसार के फौजदार सारग खाँ के साथ युद्ध मे कांधल मारा गया था। तब उसके वैर का बदला लेने के लिए राव बीका ने सारग खाँ के विरुद्ध आक्रमण की तैयारी की और राव जोधा को भी सहायनार्थ आमन्त्रित किया तब जोधा ने कहा कि 'कांधल का वैर मैं लूंगा।'[४]

भैरवदास जैसावत को राव सूजा ने सोजत का गाँव धवल जागीर में दिया था और सूरमालण के पास चौपड़ा का पट्टा था। दोनों के मध्य सीमा विवाद को लेकर झगड़ा हुआ जिसमें भैरवदास मारा गया। सूरमालण वहाँ से भागकर महाराणा के क्षेत्र मे चला गया, फिर भी बाद में आनन्द जैसावत ने सूरमालण पर आक्रमण कर उसे मारा।[५]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ६, १०, ११।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ११४ १५।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २३-२४।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २१।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १३८।

दो राजघरानो, जातियो अथवा खांपो और कुटुम्बो के मध्य प्रारम्भ वैर के परिणामस्वरूप दोनो पक्षो मे वैर समाप्ति के पूर्व तक युद्ध होता रहता था। वैर की समाप्ति वैर प्रारम्भ करन वाले व्यक्ति को मारकर की जाती थी अथवा कभी-कभी विना युद्ध किये वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर भी वैर समाप्त कर दिया जाता था।[1] यदा-कदा राज्य का शासक अथवा उस खांप का प्रमुख भी मध्यस्थ बनकर वैर का निपटारा कर देता था जो तदनन्तर मान्य किया जाता रहता था। अपने पुत्र नरा सूजावत और पोहकरण के राव खींवा के बीच के वैर का जोधपुर के राव सूजा ने ही अन्त किया था।[2]

राजपूतो म वैर को स्वाभाविक परम्परा के कारण दो जातियो, खांपो और राजघरानो के मध्य स्थायी रूप से कटुता उत्पन्न हो जाती थी जिससे राजघरानो, जातियो, खांपो और कुटुम्बो के मध्य वैर का बदला लेने के लिए आय दिन आपसी युद्ध और झगडे हुआ करते थे।

६ राजपूत राज्य तथा मुसलमानी सत्ताएँ उनके आपसी राजनैतिक तथा सामाजिक सम्बन्ध

नैणसी के ग्रन्थो से अकबर के पूर्व मुसलमान सत्ताधारियो के साथ राजपूतो के वैवाहिक सम्बन्धो के बारे मे साकेतिक उल्लेख ही मिलता है। इसके पूर्व तक राजपूत शासक मुसलमानो का विदेशी आक्रमणकारी ही मानते थे और उनके साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित करन के लिए तैयार नही थे। अलाउद्दीन खिलजी ने चित्तौड, जालार और सिवाणा दुर्गों पर आक्रमण किये थे और तत्कालीन शासको न उसका पूरा विरोध के साथ मुकाबला किया था।[3] मुसलमानो की धर्मांधतापूर्ण कट्टरता और दोनो की अलगावपूर्ण नीति के कारण भी दिल्ली के सुलतान राजपूत राज्यो पर स्थायी आधिपत्य नही कर पाय।

अकबर के पूर्व अजमर के अधिकारी हाजी खाँ के साथ राव मालदेव का वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हुआ था।[4] राव मालदेव न राजनैतिक कारण से अपनी कन्या का विवाह हाजी खाँ के साथ किया था और यह प्रथम हिन्दू महिला थी

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १८१ जोधपुर ख्यात० १ पृ० १३७ ३८।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० १०३ १४, विगत०, २ पृ० २६२ ६३।
३ विगत०, १, पृ० १५ २, पृ० २१५ उदेभाण० (ग्रन्थ १००), प० २४ ख।
४ विगत०, १, (पृ० १५२) मे मालदेव की एक लडकी कनकावती का विवाह गुजरात के सुलतान महमूद (द्वितीय) के साथ होने का उल्लख है जो उदेभाण० (ग्रन्थ १००) प० २४ ख म भी मिलता है। परन्तु गुजरात के सुलतानों सम्बन्धी फारसी इतिहास ग्रन्थो से इसकी पुष्टि नहीं होती है, एव विश्वसनीय नहीं जान पडती है।

जिसे मुस्लिम धर्म स्वीकार करने के लिए बाध्य नही किया गया था।[1] इसी परम्परा से लाभ उठाकर अकबर ने आम्बेर के राजा भारमल के प्रस्ताव का लाभ उठाकर भारमल की कन्या के साथ विवाह कर राजपूतो के साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने की सुनिश्चित् परम्परा प्रारम्भ की थी।[2] इसके साथ ही आम्बेर की सप्रभुसत्ता समाप्त हो गयी थी। भारमल को आम्बेर राज्य प्राप्त हो गया और उसके पुत्र तथा पौत्र मुगल मनसबदार बन गये।[3] इसके साथ ही राजपूत राज्यो के इतिहास मे एक नवीन अध्याय प्रारम्भ हुआ। मेवाड को छोडकर शेष राजपूत राजा शाही मनसबदार बन गये और उनमे से अधिकाश ने मुगल बादशाहो के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर लिए। तदनन्तर यद्यपि वे अपने राज्यो के स्वतन्त्र शासक बने रहे, परन्तु सर्वोपरिता मुगल बादशाहो की स्थापित हो गयी थी। इसी कारण मुगल बादशाह की अन्तिम स्वीकृति पर ही प्रत्येक नवीन शासक राज्यारूढ होता था।

तब तक राजपूत शासको मे वैर-भाव तथा राज्य विस्तार के लिए निरन्तर आपस मे झगडे होते थे। परन्तु बादशाह की सर्वोपरिता स्थापित हो जाने के बाद राज्य विस्तार के लिए होने वाले झगडे समाप्त हो गये, क्योकि उनके राज्य की सीमा मे घटा-बढी मनसब मे प्राप्त जागीर के आधार पर मुगल सम्राट के आदेशानुसार ही होती थी।[4] तदनन्तर इन सब ही राज्यो की सैनिक शक्ति का उपयोग मुगल साम्राज्य के विस्तार मे किया जाने लगा। राजपूत राज्य मे शान्ति स्थापित हो जाने के कारण वहाँ की प्रशासनिक व्यवस्था मे सुधार सभव हो सका था। राजा सूरसिह के समय मे जोधपुर मे मुगल प्रशासन पद्धति को अपनाया गया।[5] इसी प्रकार आम्बेर की प्रशासनिक पद्धति भी मुगल साम्राज्य के ही ढांचे पर निर्धारित की गयी थी।

मेवाड ने प्रारम्भ से ही मुगलो की आधीनता स्वीकार नही की और महाराणा उदयसिह के बाद महाराणा प्रताप और अमरसिह ने भी क्रमश मुगल शासको के साथ संघर्ष जारी रखा था। परन्तु अन्त मे १६१५ ई० मे अमरसिह

---

१. विगत०, १, पृ० ५२—'रतनावती बाई का विवाह हाजीखां के साथ हुआ था। हाजी खां के मरने के बाद वह विपत्तिकाल में चन्द्रसेन के पास रही। संवत् १६४६ वि० में मृत्यु हुई। नागौर मे छत्री बनी हुई है।' यदि रतनावती को मुसलमान बना दिया गया होता तो हिन्दू परम्परानुसार उसकी दाहक्रिया नही होती और न उस स्थान पर बाद में छत्री बनायी जाती।

२. अकबरनामा०, २, पृ० २४०-४४; बदायूनी० २, पृ० ४५।

३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६७।

४. विगत०, १, पृ० १२४, १२५, १२६, १२७, १२८, १३१, १३२, १३३ ३४।

५. जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १४०।

ने जहाँगीर के साथ सन्धि कर ली और तब उसका उत्तराधिकारी पुत्र महाराज कुमार कर्णसिंह को मुगल मनसब दिया गया था।[1] इस प्रकार जोधपुर के राव मालदेव और चन्द्रसेन ने मुसलमानी सत्ता के साथ सघर्ष किया था। परन्तु राव उदयसिंह ने अकबर की आधीनता स्वीकार कर ली थी।[2]

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० ३०।

२ विगत०, १ पृ० ६३ ६८ ७३, ७६ ७७ जोधपुर ख्यात०, १ पृ० ६७।

अध्याय . १०

नैणसी के ग्रन्थों में वर्णित मारवाड़ का प्रशासकीय संगठन और आर्थिक व्यवस्था

१ मारवाड का प्रशासकीय सगठन

मुहणोत नैणसी की विगत० और ख्यात० से मुगलकाल के पूर्व के मारवाड सगठन पर कोई स्पष्ट प्रकाश नही पडता है। मुहणोत नैणसी ने ख्यात० का सग्रह और विगत० की रचना सत्रहवी शताब्दी के मध्य मे ही की थी। अत उसके ग्रन्थो से नैणसी के समकालीन मारवाड के प्रशासकीय सगठन पर ही प्रकाश पडता है, और उसी का वर्णन यहाँ किया जा रहा है।

मुगल शाही मनसब स्वीकार करने के पूर्व मारवाड के शासक अपने राज्य में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र थे। राजा ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता था। अपने राज्य का सर्वोच्च अधिशासक राजा स्वय ही होता था। राजा ही अपने राज्य का प्रधान सेनानायक, मुख्य न्यायाधीश और सर्वोच्च प्रशासक होता था। अपने राज्य-शासन के सब ही विभिन्न विभागों के उच्चाधिकारियो की नियुक्ति वही करता था। परन्तु मुगल मनसब स्वीकार कर लेने के बाद मारवाड के शासकों को दोहरा काम करना पडता था। एक तरफ उसे मुगल बादशाहो की सेवा करनी पडती थी तो दूसरी तरफ वह अपने राज्य का भी सर्वोच्च अधिशासक था एव अपने राज्य के सन्दर्भ मे वह मुगल सम्राट् के प्रति जिम्मेदार ही नहीं था, किन्तु अपनी प्रजा के लिए तो वही सर्वोच्च अधिशासक बना रहा। फिर भी उसके पूर्व के अधिकारो मे कुछ कमी अवश्य आ गयी थी। सर्वमान्य प्राचीन परम्परानुसार उत्तराधिकारी होते हुए भी उस राज्य का शासक बनने के लिए मुगल सम्राट् की मान्यता आवश्यक होती थी। साथ ही आवश्यकता पडने पर मुगल बादशाह उसके राज्य के आन्तरिक प्रशासन मे भी यथेष्ट हस्तक्षेप करता था।

प्रधान[1]—मारवाड राज्य का 'प्रधान' राजा का मुख्य सलाहकार और सहायक होता था।[2] उसकी नियुक्ति राजा स्वय करता था।[3] परन्तु महाराजा जसवन्तसिह जब गद्दी पर बैठा तब वह अवयस्क था, एव मारवाड राज्य की सुव्यवस्था यथावत् बनाये रखने के लिए महाराजा गजसिह के प्रधान राजसिह खीवावत को शाहजहाँ ने ही उसी पद पर पुनर्नियुक्त किया था। उसकी मृत्यु के अनन्तर भी राठोड महेशदास और राठोड गोपालदास की नियुक्तियो मे भी शाहजहाँ का हाथ रहा, क्योकि तब भी जसवन्तसिह की वय १६ वर्ष की नही हुई थी।[4] अधिकाशत राजपूत जाति के ही सुप्रतिष्ठित व्यक्ति प्रधान पद पर नियुक्त किये जाते रहे।[5] मारवाड राज्य का जागीरदार (पट्टादार) भी प्रधान हो सकता था।[6] तब प्रधान पद का वेतन उसे अलग से दिया जाता था।[7] कभी-कभी प्रधान राजा का जागीरदार होने के साथ मुगल मनसबदार भी हो सकता था।[8] अत: उसे अपने राजा की सेवा तो करनी ही पडती थी,

---

१ डॉ० विमलचन्द्र राय (जसवन्त०, पृ० ११७, परिशिष्ट 'उ', पृ० १३७) ने प्रधान और दीवान के दोनो पदो को एक ही माना है, जो सर्वथा गलत है। प्रधान और दीवान (देश-दीवान) दोनों अलग अलग पद होते थे और दोनों के कार्य और कर्तव्यों म भी अन्तर था। सं० १७०५ वि० मे भाटी पृथ्वीराज गोविन्दासोत को प्रधान पद पर और भाटी रघनाथ सुरताणोत को देश-दीवान पद पर नियुक्त किया था। पोथी० (ग्रन्थ १११), पृ० ४१२ क। मुहणोत नैणसी को देश-दीवान पद से हटाने के बाद महाराजा जसवंतसिह ने १६६६ ई० मे राठोड आसकरण को प्रधान के पद पर और पचोली केशरीसिह को देश दीवान के पद पर नियुक्त किया था। यह बात इससे भी स्पष्ट हो जाती है कि १६६६ ई० मे राठोड़ उदयसिह देवीदासोत को पट्टा राठोड आसकरण और पचोली केशरीसिह दोनो ने ही मिलकर दिया था। बाकी०, बात स० ३३९, पृ० ३२, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५३ ५४, बही०, पृ० १४१।

२ विगत०, २, पृ० ४३, ४६, ५१, ७४, ५५, ७६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ६९-७०।

३ विगत०, १ पृ० १२५।

४. जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५२-५३; पाद०, २, पृ० १०५, २२९, राठोड़ा री ख्यात (ग्रन्थ ७२), प० ८८ क-८८ ख।

५ राजा जसवतसिह के समय मे राठोड राजसिह खीवावत, राठोड महेशदास, राठोड गोपालदास, भाटी पृथ्वीराज मानावत, राठोड आसकरण नींबावत, आदि प्रधान पद पर रहे थे। जोधपुर ख्यात०, २, पृ० २५२, २५३, विगत०, १, पृ० १२४, १२५, पोथी० (ग्रन्थ १११) प० ४१२ क।

६ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५२, २५३, २, पृ० १४७।

७ राजा जसवतसिह के प्रधान राठोड गोपालदास को प्रधान पद का वार्षिक वेतन रुपये ३३०० और मासिक वेतन रु० २७५ मिलता था। बही०, पृ० २२०-२१।

८. जोधपुर ख्यात०, १, पृ० २५२, २५३ ५४, पादशाह०, २, पृ० १०५, २२९।

इसके साथ ही उसे शाही सेवा भी करनी होती थी। इस प्रकार वह जागीरदार और मनसबदार होते हुए भी प्रधान का कार्य कर सकता था। यह भी आवश्यक नही था कि प्रधान पद से हटाने पर उसकी जागीर भी जब्त हो जावे।

प्रधान पद प्राप्त करने के लिए उस व्यक्ति मे ईमानदारी का गुण अनिवार्य रूपेण होना आवश्यक होता था। साथ ही साथ उसमे राजनैतिक व कूटनीतिक ज्ञान, सैनिक और सेनापति के गुण भी आवश्यक थे। प्रधान अपने स्वामी की सेना का प्रमुख सेनापति भी होता था।[१]

प्रधान का कार्य मुख्यतया राजनैतिक होता था। राजनैतिक समझौतो सम्बन्धी कार्य भी उसे ही करने पडते थे।[२] प्रधान का मुगल दरबार से भी सीधा सम्बन्ध होता था। यदि मुगल साम्राज्य के खालसा क्षेत्र के किसी गाँव आदि को राज्य के किसी परगना मे सम्मिलित करना होता तो वह मुगल दरबार मे पत्र व्यवहार व कार्यवाही कर यह काम करान का प्रयत्न करता था।[३] इसी प्रकार राजा के मनसब और जागीर की वृद्धि के लिए भी प्रधान निरन्तर प्रयत्न करता रहता था और इसके लिए वह शाही दरबार की सारी गतिविधियो पर हर समय नजर रखता था।[४] किसी राज्य से राजनैतिक समझौते सम्बन्धी कार्यवाही या अनुबन्ध (परठ) भी प्रधान ही करता था।[५] राज परिवार से सम्बन्धित मामलों के कार्य भी प्रधान करता था। राजा गजसिंह न जब उत्तराधिकारी पुत्र अमरसिंह को राज्याधिकार से हटाने का निर्णय कर लिया, तब तत्सम्बन्धी निर्णय की सूचना उसने प्रधान राजसिंह खीवावत को भेजी थी। गजसिंह की इच्छानुसार राजसिंह ने अमरसिंह को लाहौर जाने के लिए कहा था।[६] इसके अतिरिक्त सारे राजकीय निर्माण कार्य भी प्रधान की देख-रेख मे होते थे।[७] यदि कभी किसी देश दीवान और राजा मे मनमुटाव हो जाता तो उसे दूर कर आपसी समझौते के लिए मध्यस्थता प्रधान ही करता था।[८]

इस प्रकार प्रधान बडा सम्माननीय और बहुत ही उत्तरदायित्वपूर्ण पद होता था। राजा भी उसका विशेष सम्मान करता था। नियुक्ति के अवसर पर

---

१ विगत०, १, पृ० १०३-४, ११०।
२ विगत०, १, पृ० ४८, २, पृ० ४६, ७४, ७५।
३ विगत०, १, पृ० ७८, १०६।
४. विगत०, १, पृ० १२४, २, पृ० ३५।
५ विगत०, १, पृ० ८५-८६, २, पृ० ४२, ५१, ५४, ५५, जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १७६-८०।
६ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १७८।
७ जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १८५।
८. विगत०, १, पृ० १०२।

राजा की ओर से प्रधान को घोड़ा और सिरोपाव दिया जाता था।[1] यद्यपि प्रधान राजा का बड़ा स्वामीभक्त और विश्वासपात्र होता था, फिर भी यदि कभी उस पर रिश्वत आदि का आरोप होता तो शासक उसे उक्त पद से हटा देता था। ऐसे अपराध के लिए कभी कभी उसका पट्टा भी खालसे कर लिया जाता था और उसके घर की तलाशी लेकर उसके सामान आदि को भी जब्त कर लिया जाता था।[2]

देश दीवान—राज्य में प्रधान के बाद सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और सर्वोच्च प्रशासनिक पद देश दीवान का होता था जिसे देश हाकिम और दीवान भी कहते थे।[3]

तन दीवान—साम्राज्य की सेवाओं में राजा को अधिकतर राज्य से बाहर रहना पड़ता था, अतः तन दीवान की नियुक्ति की जाती थी। एवं राज्य की प्रशासन व्यवस्था में तन दीवान का भी महत्त्व था। उसकी नियुक्ति भी राजा स्वयं ही करता था।[4] देश दीवान और तन दीवान दोनों के सहयोग से ही प्रशासन सुचारु रूप से चलता था। महाराजा के साथ निरन्तर सेवा में रहकर तन दीवान आदेशानुसार सब ही कार्यों सम्बन्धी आदेश सम्बन्धित अधिकारियों को सूचित कर उन्हें निपटाया करता था। इसी कारण विगत० में सुन्दरदास को तन दीवान के पद पर नियुक्त करने की जानकारी देते समय उसे हजूर री खिजमत सौंपे जाने का स्पष्ट उल्लेख किया गया है।[5] नैणसी के समय में उसका भाई सुन्दरदास ही तन दीवान था।[6] नैणसी के ग्रन्थों[8] में तन दीवान

---

१ जोधपुर ख्यात० २ पृ० १५०।

२ जोधपुर ख्यात० २ पृ० १४६ ५०

३ इसके लिये देखिये अध्याय २ के अन्तर्गत देश दीवान के रूप में मुहणोत नैणसी के कृत्य और कार्य

४ विगत० १ पृ० १३४ जोधपुर ख्यात० १ पृ० २५५ वही० पृ० ४३।

५ विगत० १ पृ० १३२

६ विगत० १ पृ० १३२ (राजा की सेवा)।

७ राजा जसवन्तसिंह के समय में सुन्दरदास के पूर्व क्रमशः खाजा सुन्दर, खोजा अगर और पचोली बलभद्र तन दीवान थे। १६५४ ई० में बलभद्र के स्थान पर सुन्दरदास को तन दीवान पद पर नियुक्त किया गया था। दिसम्बर २४ १६६६ ई० को नैणसी के साथ उसे भी पदच्युत कर दिया गया और बाद में नवम्बर २६ १६६७ ई० को दोनों को बंदी बना लिया गया था। जोधपुर ख्यात० १ पृ० २५५ २५४ राठौड़ा री ख्यात० (ग्रंथ ७२) पृ० ८८ख ८६क ८६ख वही० (पृ० २७) और विगत० (१ पृ० १३२) के अनुसार सुन्दरदास को नैणसी के साथ ही मई १८ १६५८ ई० को तन दीवान नियुक्त किया गया था।

८ ख्यात० और विगत०

के कार्यों पर रोई प्रकाश नही पडता है, परन्तु मुगल शासन व्यवस्था के अनुसार तन-दीवान मुख्यतया वेतन सम्बन्धी कार्य करता था और जागीर का हिसाब भी रखता था।[1] तन-दीवान राजा का अत्यधिक विश्वासपात्र होता था।[2]

वकील—राज्य के अधिकारियो मे वकील का पद भी महत्त्वपूर्ण होता था। अत राजा अपने स्वामीभक्त व्यक्ति को ही वकील पद पर नियुक्त करता था। राजा के दूत के रूप मे वकील मुगल दरबार मे रहता था। वह शाही दरबार मे चल रही सारी गतिविधियो पर सतर्कता से ध्यान रखता था। वह अपने शासक को कब-कब कितना मनसब प्राप्त हुआ, कब मनसब म वृद्धि हुई आदि का ब्योरा रखता था। अपने स्वामी को मनसब मे प्राप्त जागीर, परगनो आदि का विवरण और हिसाब समय-समय पर मुगल कार्यालय से प्राप्त करता और मनसब का यह पूरा हिसाब अपने देश-दीवान के पास भेजता था।[3] मनसब मे प्राप्त परगनो मे फेरबदल करवाने का काम भी वकील ही करता था।[4] वह शाही दरबार मे राज्य के 'वाकियानवीस' का काम भी करता था। इस हैसियत से शाही दरबार के साम्राज्य सम्बन्धी सारे महत्त्वपूर्ण समाचारो के साथ ही वह ऐसे सभी समाचार राजा के पास भेजता था, जिनका उक्त राज्य से दूर का भी कोई सम्बन्ध हो सकता था। पुन अन्य राज्यो सम्बन्धी वे समाचार, जिनका उसके राज्य से थोडा-सा भी सम्बन्ध हो सकता था, अथवा जिनमे उसके स्वामी को कुछ भी दिलचस्पी हो सकती थी, उनको भी वह अवश्य ही सूचित करता था। वकील का यह पद पैतृक नही होता था, और वह स्थानान्तरित किया जा सकता था।

परगना शासन—राज्य विभिन्न परगनो मे विभाजित था। अत परगना प्रशासन की महत्त्वपूर्ण इकाई था। गद्दी पर बैठने के समय महाराजा जसवन्तसिंह को मुगल बादशाह स मारवाड क्षेत्र के छ. परगने—जोधपुर, मेडता, सोजत, सिवाणा, फलोधी और सातलमेर (पोहकरण) मिले थे।[5] १६३६ ई० मे मनसब की वृद्धि के साथ ही जैतारण परगना भी जागीर मे प्राप्त हो गया था।[6] सन् १६५६ ई० मे जालोर परगना भी उसे दे दिया गया था।[7] यों बढते-बढ़ते

१ सरकार०, पृ० ३९-४० (चौथा सस्करण, १९५२)।

२ विगत०, १, पृ० १५६ जोधपुर ख्यात० १, पृ० २३७।

३ विगत०, १, पृ० १२८, १४४, १५३, १५७, १५८, २, पृ० ६३।

४ विगत०, १, पृ० १२८।

५ विगत०, १, पृ० १२४। परन्तु इनमे स पोहकरण पर १६५० ई० मे ही अधिकार हो पाया था। विगत०, १, पृ० १२७।

६ विगत०, १, पृ० १२४।

७ विगत०, १, पृ० १२९।

सन् १६५८ ई० म उसका मनसब सात हजारी जात सात हजार सवार का हो गया जिसम पाँच हजार सवार दो अस्पा स अस्पा थे । तब उसकी जागीर म कुल पन्द्रह परगन जोधपुर मेडता, साजत जैतारण, सिवाणा, फलोधी पोहकरण जालोर, रेवाडी, गर्जसिहपुरा, नारनोल, रोहतक, कैथल, मुहम, और अठगाँव हो गये।[1] इसम से मारवाड क्षेत्र के ६ परगन—जोधपुर, मेडता जैतारण, सोजत पोहकरण (सातलमेर), जालोर, सिवाणा फलोधी और गर्जसिहपुरा थे । गुजरात की सूबेदारी मिलने पर जसवन्तसिह को गुजरात क जा परगने मिले थे वे गुजरात की सूबेदारी म स्थाना तरित किय जान पर खालसा किय जाकर उनक बदल म हाँसी हिसार आदि के परगने दिये गये थे। इस प्रकार इन अ य क्षेत्रीय परगनो म भी समय समय पर फरबदल होती रहती थी अधिकार मे बन रहे थे।[2] इसके अतिरिक्त गुजरात हाँसी हिसार पटी, नागोर और अन्य सूबो के भी कुछ परगन समय समय पर अस्थायी रूप से जसवन्तसिह के अधिकार म रहे थे।[3]

हाकिम—परगना का प्रमुख प्रशासनिक, सैनिक और राजस्व अधिकारी परगना हाकिम (दीवान) होता था।[4] परगना क अ य सब ही अधिकारी और कर्मचारी उसक आधीन होते थे।[5] देश दीवान की सलाह से राजा स्वय परगना हाकिम (दीवान) की नियुक्ति करता था। परगना म शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना वहाँ के परगना हाकिम का प्रमुख कर्त्तव्य और कार्य होता था। यदि परगना मे कोई विद्रोह होता या आस पास के अथवा सीमा त क्षत्र के लोग उपद्रव करते, तो उनका दमन करन का भार भी हाकिम पर ही होता था।[6] आवश्यकता पडने पर परगना हाकिम अपन परगना क्षेत्र के जागीरदारो से सैनिक सहायता भी प्राप्त करता था और पास पडोस के अन्य परगना से भी अतिरिक्त कुमक मँगवा लता था।[7] यदि कोई परगना हाकिम परगना म शान्ति व्यवस्था बनाय रखन म असमर्थ होता तो उस पदच्युत अथवा स्थानान्तरित कर दिया जाता था।[8] अत परगना हाकिम म प्रशासनिक क्षमता

---

१ विगत० १ पृ० १३० १३१ १३२ ३४ वही० पृ० ३१ ३२।
२ विगत० १ पृ० १४५ ४६ १४७ १५१ १५४ ५५।
३ विगत० १ पृ० १२५ १२६ ३० १३२ १३४ १४६ १४७ १४८ ४६ १५१ ५३ १५५ ५६।
४ परगनों मु० जगनाथ रै हवालै छ मु० नेणसी रै हवालै फलोधी कीवी। विगत० १ प० ११६।
५ विगत० २ पृ० ३०६ ८।
६ विगत० १ पृ० ११८ १९ १२० २३ १२६।
७ विगत० १ पृ० १२० २१।
८ विगत०, १ पृ० ११८ १६।

के साथ ही सैनिक और सेनापति की पूरी योग्यता होना भी आवश्यक थे। परगना मे राजस्व की वसूली का उत्तरदायित्व भी परगना हाकिम का होता था। परगना मे न्याय सम्बन्धी कार्य भी वही करता था।[1] इस प्रकार परगना हाकिम सभी प्रकार के प्रशासनिक कार्यों की देखभाल करता था। उसकी सहायता के लिये थाणेदार, किलदार और कानूनगो आदि अनेक अधिकारी होते थे।[2]

थाणेदार—परगना दुर्ग मे या अन्य स्थान पर आवश्यकतानुसार थाणा (सैनिक चौकी) रखा जाता था, जिसकी व्यवस्था के लिए वहाँ शासक द्वारा थाणेदार नियुक्त किया जाता था। थाणे के प्रभारी को थाणेदार कहा जाता था। प्रत्येक थाणे मे एक थाणेदार होता था।[3] परन्तु क्षेत्र विशेष की स्थानीय परिस्थितियो के अनुसार थाणो की संख्या मे वृद्धि भी की जाती थी। परगना फलोधी मे मुहता जगन्नाथ के समय दो थाणेदार थे।[4] थाणेदार अपनी सैनिक टुकडी का सेनापति होता था। वह विभिन्न सैनिक अभियानो मे परगना हाकिम (दीवान) की सहायता करता था। साथ ही राजस्व के संग्रह, परगने मे शान्ति, कानून और व्यवस्था बनाये रखने मे हाकिम की सहायता करता था। दुर्ग की सुरक्षा का दायित्व भी उसी पर होता था। नया क्षेत्र आधीन करने पर वहाँ अपने अधिकारो को सुदृढ करने के हेतु आवश्यक थाणे स्थापित किये जाते थे।[5] किसी पडोसी राज्य से बाहरी खतरे के समय भी सीमा पर सतर्कता के लिए विभिन्न थाणे (सैनिक चौकियाँ) रखे जाते थे।[6]

किलेदार—परगना के प्रत्येक किला, दुर्ग और गढ़ की सुरक्षा के लिए नियुक्त अधिकारी को किलेदार कहा जाता था। उसके पास दुर्ग के प्रवेशद्वारो

---

१ विगत०, १, पृ० ३६० ।

२. विगत० मे कुछ स्थानो पर फौजदार के उल्लेख मिलते हैं। परन्तु उससे यह स्पष्ट संकेत नही मिलता कि परगने में स्थायी रूप से फौजदार का कोई पद रहा हो। यह संकेत अवश्य मिलता है कि किन्हीं परगनों में विशेष परिस्थितिवश सैनिक और प्रशासनिक सेवा हेतु यदा-कदा फौजदार की कुछ काल के लिए नियुक्ति कर दी जाती थी। परन्तु मारवाड मे शासक द्वारा ही नियुक्त ये फौजदार, मुगल सूबो मे नियुक्त फौजदार से भिन्न होते थे। क्योंकि मुगल शासन व्यवस्थानुसार सूबे के प्रादेशिक शासन में फौजदार का अपना एक विशिष्ट स्थान होता था, जिसकी नियुक्ति आदि का अलग ही तरीका होता था, जो इन राजपूत राज्यों के संदर्भ मे नहीं बरता जाता था।

३. विगत०, १, पृ० ४६, ६५; २, पृ० ७, ८ ।

४ विगत०, १, पृ० ११६

५. विगत०, १, पृ० ४८, ११६ ।

६ विगत०, १, पृ० ४८ ।

की चाबियाँ रहती थी। उसकी स्वीकृति के बिना कोई भी व्यक्ति दुर्ग में प्रवेश नही कर सकता था। दुर्ग या किले की सुरक्षा का पूर्ण दायित्व किलेदार पर रहता था।[1] बाहरी आक्रमण के समय दुर्ग की रक्षा का पूरा भार किलेदार पर ही होता था। किलेदार की आधीनता में एक सैनिक टुकड़ी रहती थी। पोहकरण में १६५० ई० में किलेदार रा० मनोहरदास जसवन्तोत के आधीन उसके अपने दस घुड़सवार सैनिक थे।[2] किले में स्थान स्थान पर बुर्जें होती थी। जिनकी सुरक्षा और शत्रु के बाहरी आक्रमण पर नजर रखने के लिए वहाँ सैनिकों की विशेष चौकियाँ रखी जाती थीं।[3] ये सब चौकियाँ भी किलेदार के आधीन रहती थीं। किलेदार के कार्यों सम्बन्धी नैणसी के ग्रन्थों में इसके अतिरिक्त कोई जानकारी नही मिलती है।

कानूनगो—परगना का अन्य महत्त्वपूर्ण अधिकारी कानूनगो[4] होता था। राजस्व सम्बन्धी मामलों में वह परगना दीवान का सहयोगी होता था। प्रत्येक परगना में एक या अधिक कानूनगो होते थे।[5] कानूनगो का पद वंशानुगत होता था।[6] राज्य की ओर से निर्धारित लाग बाग को न तो रैयत कम दे सके और न ही अधिकारी, जागीरदार उनसे ज्यादा ले सके इसीलिए कानूनगो की नियुक्ति की जाती थी। राज्य के आदेशों का क्रियान्वयन कानूनगो के मार्फत होता था और रैयत के शासकीय कार्यों का निपटारा भी कानूनगो के द्वारा होता था। यों कानूनगो राज्य और प्रजा के मध्य मध्यस्थ (वकील) का कार्य करता था। अतः न तो राज्य के अधिकारी, जागीरदार प्रजा पर नयी लाग बाग लगा सकते थे और न ही रैयत निर्धारित लाग बाग देने में आनाकानी कर सकती थी।[7] वही परगने सम्बन्धी विविध प्रकार की विस्तृत जानकारी रखता था।

उसके कार्यालय में प्रत्येक गाँव के राजस्व सम्बन्धी सारा विवरण लिखा जाता था। जालोर परगने के कानूनगो घराने से प्राप्त 'जालोर परगना री

---

१ विगत०, १, पृ० ३०६।
२ विगत०, २, पृ० ३०६।
३ विगत०, २ पृ० ३०६, ३०७ ८।
४ विगत०, २, पृ० ७७।
५ विगत०, २ पृ० ८६-८८।
६ महेशदास दलपतोत राठोड़ ने गुरुवार, अगस्त ८, १६४४ ई० को मुहता तिलोकसी को कानूनगो का पद प्रदान किया था। उसके वंशज स्वाधीनता प्राप्ति के बाद तक भी उक्त पद पर बने रहे थे। (परवाना सं० १७०१ श्रावण सुदि १५, 'श्री रघुबीर लायब्रेरी सीतामऊ, संग्रह)।
७ जोधपुर अपुरालेखीय बस्ता नं० ५३ ग्रंथांक नं० ७, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर।

विगत' विषयक दो बहियों[1] से स्पष्ट ज्ञात होता है कि कानूनगो के कार्यालय म प्रत्येक गांव की परगना केन्द्र से दूरी, गांव की रेख, गांव की वार्षिक आय, गांव मे सिंचाई के साधन, गांव म निवास करने वाली जातियाँ, सासण-भूमि आदि का पूर्ण विवरण रखा जाता था। इसी कारण ग्रामों की सीमा सम्बन्धी अथवा अन्य किसी प्रकार के मामलों म कानूनगो के पास की विगत की बहियों म दर्ज जानकारी का विशेष महत्त्व होता था। कानूनगो के कार्यालय म परगने का कुल क्षेत्रफल पैदावार योग्य जमीन का रकबा, पहाड़, जगल, नदी और नाला आदि के कुल रकबे की ब्योरेवार जानकारी भी रहती थी।[2] कानूनगो का कार्यालय सहायक दफ्तरी (लिपिक) होता था। गांव की सीमा विवाद को निपटान का कार्य कानूनगो और दफ्तरी करत थ।[3]

इस प्रकार कानूनगो शासन और प्रजा दोनो के वकील का कार्य करता था। न राज्य के अधिकारी और जागीरदार रैयत स अधिक कर वसूल कर सकते थे और न ही रैयत वाजिब राशि देने का विरोध कर सकती थी।

परगना म पोतदार[4] (कोषाध्यक्ष) होता था, जिसके नाम से पोतदारी कर भी वसूल किया जाता था। परगने मे चौधरी[5] सिक्दार[6] आदि अन्य कर्मचारी भी होते थे जिनके उल्लेख तो नैणसी के ग्रन्थो मे अवश्य ही मिलते है, परन्तु उनके कर्त्तव्यो आदि की उनम जानकारी नही है।

राज्य का प्रत्येक परगना प्रशासनिक सुविधा के लिए विभिन्न तफो (टप्पा) मे विभाजित था और प्रत्यक तफा के अन्तर्गत अनेक गांव होते थे।[7] परगना जोधपुर १६६२ ई० मे १६ तफो मे विभाजित था।[8] परगना मेडता मे कुल ६ तफे थे।[9] यो परगने मे तफो की सख्या कोई निश्चित् नही थी। इसी

---

१ पोलिटिकल एजण्ट मेजर इ०मी० इम्पे ने १८७१ ई० मे जालोर के कानूनगो से बहियाँ मँगवाई थीं। 'चपरासी घुमीलाल ने जालोर मेल कानुगो री वेहीयां मगाई'। जालोर विगत० (बडी) पृ० २ क।

२ विगत०, १, पृ० ७७, मारवाड में भी कानूनगो मुगल परम्परा के अनुसार ही कार्य करता था। लैण्ड रेवेन्यू०, पृ० ८८ ८६।

३ जालोर विगत० (बडी), पृ० ७८ क ७८ ख।

४ विगत०, २ पृ० ६३।

५ जालोर विगत० (बडी), पृ १०० क।

६ विगत०, १ पृ० १६०, सवत् १६६८ वि० म जोधपुर मे सोभा, मेडता म कोका, भाजन में मेघराज और सीवाणा में जालव का भाई सिक्दार थे। पोथी० (ग्रन्थ १११), पृ० ४१० ख।

७ विगत०, १ पृ० १६४, १६५, १६८, २, पृ० ७८।

८ विगत०, १, पृ० १६४ ६५।

६. विगत०, २, पृ० ७८।

प्रकार से प्रत्येक तफे मे जो गाँव होते थे उनकी सख्या भी निश्चित् नही थी। क्षेत्रीय परिस्थितियो, शासकीय आवश्यक्ताओं, तथा जनसाधारण की सुविधाओ को ही ध्यान मे रखकर प्रत्येक तफे की सीमाएँ निर्धारित की जाती थी। यों हवेली (परगना जोधपुर) मे २६६ गाँव तो तफा देछु मे केवल नौ गाँव ही थे।[1] अत इससे स्पष्ट हो जाता है कि परगना मे तफो की सख्या और गाँवो की सख्या प्रशासनिक सुविधानुसार तथा अन्य कारणो को देखते हुए ही निश्चित की जाती थी। विगत० से पता चलता है कि प्रत्येक तफा मे एक या अधिक चौधरी होते थे।[2] और प्रत्येक गाँव मे एक चौधरी होता था।[3] परन्तु तफा और गाँव के अन्य किसी सार्वजनिक या शासकीय सेवक[4] का कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है।

२ मारवाड की राजस्व व्यवस्था

मारवाड राज्य मे देश-दीवान राजस्व का प्रमुख अधिकारी होता था और परगने म वहाँ के परगना हाकिम के ही आधीन राजस्व व्यवस्था रहती थी। परगना हाकिम के सहयोग के लिए कानूनगो, पोतदार, चौधरी, कणवारी और दपतरी आदि अधिकारी और कर्मचारी होते थे। इन सबके कार्यों के बारे मे विस्तृत विवरण पूर्व मे दिया जा चुका है।

राजस्व व्यवस्था की दृष्टि से राज्य की भूमि तीन भागो मे बाँट दी गयी थी। खालसा, जागीर और सासण।

खालसा भूमि—शासक अपने राज्य के क्षेत्र मे से अधिकाश भाग राज्य की उनकी सेवाओ के बदले मे जागीरदारो के वेतन के स्थान पर जागीर के रूप मे देता था।[5] कुछ क्षेत्र सासण मे दिया जाता था।[6] शेष भाग पर राज्य का सीधा

---

१ विगत०, १ पृ० १६४-६५।

२ विगत० १, पृ० २५६।

३ वही०, पृ० २७१।

४ मुगल प्रशासनिक व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक गाँव मे पटवारी होता था अत मारवाड मे भी गाँव का अधिकारी पटवारी अवश्य होगा।

५ विगत०, २, पृ० २६५ ३३१-३२, ३३३-३४, ३३७। परगना जैतारण के १२७ गाँव मे से ८१ गाँव जागीर मे थे, २८ गाँव खालसा मे और १८ गाँव सासण मे थे। विगत०, १ पृ० ५०० १।

६ *जसवन्तसिंह के समय मे परगना जोधपुर के ११६७ गाँवो मे से १४४, परगना सोजत* के २४४ में स ३३ गाँव, परगना जैतारण के १२७ मे से १८ गाँव, परगना फलोधी के ६८ मे से ६ गाँव, परगना मेडता के ३८४ म से साढे पैतालीस गाँव, परगना सीवाणा के १४४ मे से ३० गाँव और परगना पोहकरण के ८५ मे से १५ गाँव सासण म थे। विगत०, १, पृ० १८६, ४२४, ५०० १, २, पृ १२, २१३, २३०, ३१८-१६।

नियन्त्रण होता था ।[1] उसे ही खालसा भूमि कहा जाता था । प्राय परगनो के केन्द्र नगर और ज्यादा पैदावार वाले गाँव खालसा मे ही रखे जाते थे। यो सर्वाधिक आय वाले गाँव या क्षेत्र राज्य के सीधे नियन्त्रण म रखे जाते थे । खालसा गाँवो की जो भूमि किसान हांकते थे, उस भूमि के राजस्व की वसूली उनमे ही सीधे की जाती थी । इस सारी खालसा भूमि से राजस्व का सग्रह राजकीय सेवक करते थे और खालसा भूमि से प्राप्त होने वाली यह समूची आय राजकीय खजाने मे जमा होती थी।[2]

खालसा भूमि का क्षेत्रफल समय-समय पर और विभिन्न राजाओ के शासन-काल म घटता बढता रहता था । मुगल मनसब स्वीकार करने के पूर्व राज्य पर सामन्तो (ठाकुरो) का प्रभाव अधिक था । अत तब खालसा भूमि अपेक्षाकृत कम ही थी । साथ ही खालसा भूमि का क्षेत्रफल तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों, और राजाओ के चरित्र, प्रवृत्तियो आदि पर निर्भर करता था ।

जागीर भूमि—मारवाड मे राठोड राज्य की स्थापना के समय से ही सामन्ती व्यवस्था प्रारम्भ हो गयी थी । सामन्तों के सहयोग से ही राजा अपने राज्य का विस्तार करता था तथा अपने राज्य की सुरक्षा की व्यवस्था भी करता था। उन सामन्तो को प्राय ठाकुर और सरदार कहा जाता था । सरदारो को उनकी सैनिक सेवा के बदले मे राज्य की ओर से जागीरें दी जाती थी । सामन्तो को दी गयी भूमि ही जागीर भूमि कहलाती थी । जागीर भूमि का वितरण तथा जागीर के आकार-प्रकार का निर्धारण उन राजपूत सामन्तों की सैनिक सेवाओं, उनके घराने के साथ राजा के सम्बन्धो आदि पर निर्भर करता था । जागीर अर्थात उसका पट्टा उन्हें देने के पूर्व प्राय जागीरदारो से पेशकश (भेंट अथवा नजराने) के रूप मे नकद राशि और ऊँट, घोडे आदि भी लिये जाते थे । इसके अतिरिक्त जागीरदार की ओर से राज्य को कुछ अन्य कर 'खीचडो' आदि भी देने होते थे ।

जागीरदार अपने जागीर क्षेत्र मे स्वाधीन ही होता था । साधारणतया शासक उसकी जागीर मे कोई हस्तक्षेप नही करता था । जागीरदार को अपने जागीर क्षेत्र से राजस्व सग्रह का पूरा अधिकार होता था । परन्तु उसके लिए यह आवश्यक था कि वह राज्य द्वारा निर्धारित नियमो और परम्पराओ का पालन करे ।

सासण भूमि—राजा अथवा भू-स्वामी द्वारा दान मे दी गयी भूमि सासण कहलाती थी । शासक द्वारा समय-समय पर अपने राज्याधिकार क्षेत्र म से

१ विगत०, १, पृ० ५०० १।
२ विगत०, १ पृ० ५०१ २, ५१०, ५१४ ५१५।

चारण, भाट, ब्राह्मण (ज्योतिषी, पुरोहित आदि), पुजारी और जोगी आदि को जोविकोपार्जन के लिए भूमि दान मे दी जाती थी। सासण भूमि राज्य की ओर से कर मुक्त होती थी। सासण भूमि प्राप्तकर्त्ता को अपने क्षेत्र मे उसी प्रकार के अधिकार प्राप्त हो जाते थे जैसे एक जागीरदार को अपनी जागीर भूमि मे। सासण भूमि प्राप्तकर्त्ता को अपने क्षेत्र मे राजस्व सग्रह करने का अधिकार प्राप्त होता था। सासण भूमि प्राप्तकर्त्ता अपनी भूमि रहन भी रख सकता था।[1] वह अपनी भूमि का कुछ भाग दहेज मे भी दे सकता था।[2] उत्तराधिकारियो मे सासण भूमि का बँटवारा भी होता था।[3]

राठोड राज्य की स्थापना के पूर्व मारवाड मे पडिहार राजवश का राज्य था। पडिहार राजवश ने भी अपने समय मे अनेक व्यक्तियो को भूमि सासण मे दी थी। राठोड राजवश की स्थापना और विशेष रूप से मध्यकाल मे इसका व्यवस्थित स्वरूप मिलता है। परन्तु मुगल बादशाहो की तरह मारवाड राज्य म सासण भूमि दान के सम्बन्ध मे अलग से कोई विभाग नही था। शासक कब और किसको और कितनी सासण भूमि दगा, यह उसकी इच्छा और चरित्र पर निर्भर करता था। राजा के आदेश पर देश-दीवान या परगना हाकिम सम्बन्धित व्यक्ति को सासण भूमि पर कब्जा दिलाता था।[4] शासक के अतिरिक्त अन्य किसी भी जागीरदार को सासण भूमि देन का अधिकार सामान्यतया नही होता था। अत शासक द्वारा जागीरदारो को प्रदत्त जागीर के पट्टे म यह उल्लेख होता था कि वह अपनी जागीर म गाँव या खेत किसी को सासण दे सकेगा अथवा नही।[5] जिन जागीरदारो को सासण देने का अधिकार दिया जाता था, वे ही सासण दे सकते थे।[6] कुछ विशिष्ट जागीरदारो को ही अपनी जागीर से सासण भूमि देने का अधिकार प्राप्त था। मालदेव ने अखैराज रणधीरोत सोनगरा को पाली का पट्टा दिया था। अखैराज ने अपने जागीर काल मे पाली का गाँव आकेलडी सासण मे दिया था। इसी प्रकार अखैराज के पुत्र मान ने भी पाली का गाँव रावलास सासण मे दिया था।[7] इससे स्पष्ट है कि अधिकार प्राप्त ही सासण देता था।[8] परन्तु जागीरदार की मृत्यु अथवा जागीर समाप्ति

---

१ विगत०, २, पृ० ११६।
२ विगत०, २, पृ० १८५।
३ विगत०, २, पृ० १०६, १३६, १८५, २७०, ३४६।
४ विगत०, २, पृ० ३५१।
५ वही०, पृ० ३०३।
६ विगत०, २, पृ० ५४७, ५५०, ५५१, ५५२।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५५, १६५, विगत०, १, पृ० २६७-६८।
८. विगत०, २, पृ० ५५१-५२।

पर जागीरदारों से प्राप्त सासण भूमि का नवीनीकरण और स्थायीकरण प्राप्त करना पड़ता था।[१] परन्तु यदि किसी पट्टादार को सासण भूमि देने का अधिकार नहीं होता वह भी यदि किसी को सासण देना चाहता तो राजा से अर्ज कर दिलवा सकता था।[२] परन्तु यह राजा की इच्छा पर निर्भर करता था कि उसकी सिफारिश माने या नहीं।

विगत० के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि मारवाड़ में चारणों और ब्राह्मणों को ही सर्वाधिक भूमि सासण में दी गयी थी। इनमें भी प्रथम स्थान चारणों का था। प्राय: चारणों को उनकी साहित्यिक सेवाओं के पुरस्कार में सासण भूमि दी जाती थी। यों कवि[३] और साहित्यकारों को राज्याश्रय देने के लिए शासक की ओर से सासण भूमि दी जाती थी। यही नहीं, यदि कोई चारण अपने शासक के प्रति स्वामीभक्ति का परिचय देता तो उसको भी सासण में गाँव अथवा जमीन दी जाती थी। जब राव रिणमल चित्तौड़ में मारा गया था और उसका दाह संस्कार नहीं होने दिया जा रहा था, तब चारण चादण खड़िया ने जान की बाजी लगाकर राव रिणमल का मृत शरीर प्राप्त किया और दाह-संस्कार किया। इसी उपकार के बदले में राव जोधा ने उक्त चारण को चार गाँव सासण में दिये थे।[४]

ब्राह्मणों को शासक प्राय: पुण्यार्थ ही सासण देता था। जब कोई राजा तीर्थयात्रा पर जाता तब तीर्थस्थल पर अपने अच्छे बुरे कर्मों का प्रायश्चित् करने के हेतु विभिन्न वस्तुएँ दान में देता था। उस समय ब्राह्मणों को भूमि भी दान में देता था।[५] सूर्य और चन्द्रग्रहण के अवसर पर ब्राह्मणों को गाँव या खेत पुण्यार्थ दान में दिये जाते थे।[६] कभी-कभी राजा अपने पुत्रजन्म की बधाई आने पर भी ब्राह्मणों को सासण भूमि देता था।[७] इसी प्रकार राज्य के धार्मिक कार्य करने वाले पुरोहित को भी राजा की ओर से सासण भूमि दी जाती थी।[८] सुप्रसिद्ध लोकदेवता के भोपा[९] (पुजारी) और देवी-देवताओं के पुजारियों को भी

---

१ विगत०, १, पृ० ४८८, ४८६।
२ विगत०, २, पृ० २७७।
३ विगत०, १, पृ ४८६। सम्भवत गाडण केशवदास को राजा गजसिंह ने 'गजगण रूपक' की रचना पर सोमड़ावास गाँव सासण में दिया।
४ विगत०, १, पृ० ३६-३७।
५ विगत०, १, पृ० ३३४, ३३६-३७, ४७८, ४८६, ५४४।
६ विगत०, १, पृ० ४८२, ५४७।
७ विगत०, १, पृ० ४७६।
८ विगत०, १, पृ० २३८।
६. विगत०, १, पृ० २६०।

शासक सासण भूमि देता था ।[1] साथ ही मन्दिर को भी सासण भूमि अर्पित की जाती थी। यो साहित्यिक सेवा, मन्दिर व्यय और मन्दिर के पूजा और धार्मिक सेवा के लिए तथा तीर्थ-यात्रा, सूर्य और चन्द्रग्रहण के अवसर पर चारणो, भाटो, ब्राह्मणो, पुजारियो, जोगियो और पीरजादो को शासक की ओर से सासण भूमि प्राप्त होती थी।

विगत० मे दिये गये सासण गांवो के विवरण से स्पष्ट पता चलता है कि सासण भूमि स्थायी रूप से दी जाती रही। परन्तु उसमे सासण भूमि पर अधिकार के लिए पट्टा[2] और ताम्रपत्र[3] दोनो का उल्लेख आया है, जिनका अर्थ स्पष्ट कर देना भी आवश्यक प्रतीत होता है। पट्टा द्वारा दी गयी सासण भूमि के नवीनीकरण और स्थायीकरण की आवश्यकता हो सकती थी। शासक यदि ताम्रपत्र द्वारा कोई सासण भूमि देता था तो उसके लिए इनकी आवश्यकता नही होती थी।

सासण भूमि को जब्त कर लेने के सम्बन्ध मे कोई निश्चित् नियम नही था। शासक की इच्छा ही सर्वोपरि होती थी। राव मालदेव और मोटा राजा उदयसिह ने अनेक गांव जब्त कर लिये थे।[4] परन्तु परम्परानुसार साधारणतया सासण भूमि जब्त नही की जाती थी। यह पुण्यार्थ दिया हुआ दान माना जाता था। अत. ऐसी मान्यता थी कि उक्त भूमि को जब्त करने वाला नर्क का भागी बनता है। इसी प्रकार परम्परानुसार एक बार सासण दी हुई भूमि को पुनः सासण मे नही दिया जाता था। परन्तु कभी-कभी कोई शासक पूर्व के शासको द्वारा दिये गये सासण को मान्य नही कर वही भूमि उसे ही अथवा किसी दूसरे को पुन सासण मे दे देता था।[5] यदि सासण भूमि प्राप्तकर्त्ता नि सन्तान मर जाता तो वह भूमि उसके भाई अथवा भाई के पुत्रो के अधिकार मे रह सकती थी।[6] परन्तु उक्त भूमि प्राप्तकर्त्ता के कोई वशज ही शेष नही रहता तो उक्तभूमि को खालसे कर ली जाती थी।[7] कभी-कभी शासक पूर्व के सासण प्राप्तकर्त्ता से भूमि छीनकर अन्य व्यक्ति को भी दे देता था।[8] कभी कभी शासक किसी

---

१ विगत०, १, पृ० २६०, २६८, ३०४-५, ३३५, ३३६।

२. विगत०, १, पृ० ४८१, ५४८।

३ विगत०, १, पृ० ४८१।

४. विगत०, १, पृ० ४७८, ४८०, ४८४।

५ विगत०, १, पृ० ३४६, ३५०, ४७८, ४८७, ४८८, ५४८, २, पृ० १३६, २७१, २७३, २७४, २७६।

६ विगत०, १, पृ० ४८३।

७. विगत०, १, पृ० २४३, ५२०, ५४६।

८. विगत०, २, पृ० १८५।

कारणवश कुछ समय के लिए सासण भूमि छीन लेता था और कुछ समय बाद उसी को पुन प्रदान कर देता था।[1] यदि सासण भूमि प्राप्तकर्त्ता आपस मे झगडते रहते तो राज्य द्वारा वह भूमि खालसे कर ली जाती थी।[2] यदि कोई पुजारी किसी व्यक्ति की हत्या कर देता तो उसको उक्त पद से हटा दिया जाता था और उसके अधिकार की सासण भूमि भी छीन ली जाती थी।[3]

यदि कोई सासण भूमि प्राप्तकर्त्ता प्राप्त भूमि मे कोई फेरबदल करवाना चाहता ता शासक से निवेदन कर उक्त भूमि के बदले मे अन्य भूमि प्राप्त कर सकता था।[4]

भू राजस्व निर्धारण की पद्धति—विगत० मे दिये गये विवरणो से ज्ञात होता है कि तब मारवाड मे भूमि का भूमि-कर निर्धारण की अनेक पद्धतियाँ प्रचलित थी, जिनका विवरण क्रमश दिया जाता है—

लाटा[5]—फसल के पूर्णतया तैयार हो जाने के बाद उसे काटकर एक निश्चित् स्थान पर एकत्रित कर लिया जाता था, और तब उसमे का भूसा और अनाज अलग-अलग कर लिया जाता था। तदनन्तर अनाज तोलकर राज्य का हिस्सा प्राप्त किया जाता था।

बटाई[6]—इसके अनुसार तैयार अनाज को तोला नही जाता था। अनुमान के आधार पर अनाज के ढेर के बराबर के हिस्से कर दिये जाते थे, जिसमे से राज्य का हिस्सा ले लिया जाता था।

मुकाता—इसमे पैदावार के आधार पर भूमि-कर नही लिया जाता था। इसम कृपक को जमीन या खेत देते समय उसकी पैदावार की सभावित राशि निश्चित् कर दी जाती थी। पोहकरण मे मुकाता के रूप मे प्रति ५० बीघा पर तीन अथवा साढे तीन रुपये लिये जाते थे।[7]

गूघरी—यह पद्धति मुकाता की तरह ही थी। अन्तर सिर्फ इतना ही था कि मुकाता मे भूमि-कर नकद लिया जाता था और इसम अनाज के रूप मे लिया जाता था।[8]

जब्ती—कपास, अफीम, सब्जी, खरबूजा और काचरे आदि वाणिज्य फसलो

---

१ विगत०, २, पृ० २६६।

२ विगत०, २, पृ० २४३।

३ विगत०, १, पृ० ३३५।

४ विगत०, १ पृ० १०७, ४८८।

५ विगत०, १, पृ० ३६६, २, पृ० ६३ ३२७, जालोर विगत० प० १३ ख।

६ विगत०, २, पृ० ८६, ६६। विगत०, में इस पद्धति को परिभाषित करने के लिए कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

७ विगत०, २, पृ० ३२६, ३३०, ३३४, ३३५, ३३६, ३३६, ३४०।

८ विगत०, २ पृ० २४८, ३५५।

पर प्रति बीघा के हिसाब से भूमि-कर निश्चित नकद रकम के रूप मे लिया जाता था।[1] पोहकरण मे इन फसलो का उपज का चौथाई हिस्सा कर के रूप मे लिया जाता था।[2]

भूमि कर मे प्राप्त अनाज को राज्य के परगना मुख्यालय तक पहुँचाने का दायित्व भी किसानो का ही माना जाता था। अत जो किसान अनाज आदि को स्वय मुख्यालय पहुँचा देता उससे कुछ भी वसूल नही किया जाता था। अन्यथा उस अनाज को पहुँचाने मे जो भी सरकारी व्यय हो सकता था वह भी किसानो से परगना मुख्यालय से गाँव की दूरी के हिसाब स लिया जाता था। परगना मेडता मे मेडता से यदि कोई गाँव चार कोस दूर था तो प्रति किसान आधी दुगाणी और दस कोस की दूरी पर प्रति किसान एक दुगाणी ली जाती थी।[3] साथ ही वहाँ के भू-राजस्व सग्रहकर्त्ता कणवारी अथवा कामदार का व्यय भी किसानो को ही वहन करना पडता था।[4]

३. अन्य राजकीय कर तथा राज्य की आमदनी के अतिरिक्त स्रोत

मुहणोत नैणसी के ग्रन्थो मे, मुख्यतया विगत० मे, मारवाड राज्य के कर तथा राजकीय आय के विभिन्न स्रोतो की ब्योरेवार जानकारी मिलती है। अत यहाँ मूलत मारवाड के सम्बन्ध मे ही वर्णन दिया जा रहा है।

राजकीय कर—राज्य की आमदनी का मूल स्रोत भू-राजस्व ही था। इसी से राज्य को सर्वाधिक आय होती थी। भू-राजस्व कर को तब 'खेता रा भोग' भी कहा जाता था।[5]

भोग—विगत० म सात परगनो का विवरण दिया गया है, उनमे से केवल दो परगनो मेडता और पोहकरण म ही पैदावार पर शासन के हिस्से का उल्लेख मिलता है। भोग वर्ष म दो बार खरीफ और रबी की फसल पर अलग-अलग वसूल किया जाता था।[6] पोहकरण म खरीफ की फसल पर महाजनो से पैदावार का साढे चारवाँ अथवा पाँचवाँ हिस्सा और किसानो से पैदावार का चौथा अथवा साढे चारवाँ हिस्सा लिया जाता था। साथ ही प्रति मण पर छ. अथवा सात सेर अनाज लिया जाता था।[7] ब्राह्मणो से उपज का पाँचवाँ हिस्सा और

१ विगत०, २, पृ० ९६, ९७।
२ विगत०, २, पृ० ३२६।
३ विगत०, २, पृ० ९२।
४ विगत०, २, पृ० ९०, ९१।
५ विगत०, २, पृ० ३२६।
६ विगत०, २, पृ० ८६, ९०, ३२६।
७ विगत०, २, पृ० ३२६।

प्रति मण पर सात सेर लिया जाता था।[१] इसके अतिरिक्त सब्जी, तम्बाकू और प्याज आदि फसलो पर उपज का चौथा भाग लिया जाता था।[२] परगना मेडता मे खरीफ की फसल की उपज का आधा भाग भोग के रूप मे लिया जाता था।[३] परगना जालोर मे राजपूतो से पैदावार का पाँचवाँ हिस्सा और किसानो से चौथा हिस्सा लिया जाता था।[४]

इसी प्रकार रबी की फसल पर परगना पोहकरण मे सिंचित फसल की उपज का तीसरा हिस्सा शेष सेंवज फसल (गेहूँ, चना, जव आदि) पर खरीफ की फसल के अनुसार ही राजकीय भाग लिया जाता था।[५] मेडता में भी सिंचित फसल की पैदावार का तीसरा हिस्सा तथा साथ मे प्रति मण पर डेढ सेर लिया जाता था, और सेंवज फसल का पाँचवाँ भाग भोग के रूप मे लिया जाता था।[६]

खरीफ और रबी की फसल पर जिन फसलों की पैदावार का राजकीय हिस्सा नकद मे लिया जाता था उसे जब्ती कहा जाता था। मेडता मे खरीफ मे धान की फसलो (ज्वार, बाजरा) की कडब का प्रति मण कडब पर भी एक दुगाणी राजकीय कर लिया जाता था। प्रति बीघा कपास पर रुपये १.१२, प्रति बीघा सब्जी[७] पर रुपये १.१२, प्रति बीघा काचरा पर रु० ०.३७ लिये जाते थे। रबी की फसल प्रति बीघा अफीम पर रु० २.५० प्रति बीघा, खरबूजा पर रु० १.०० और प्रति बीघा सब्जी पर रु० १.३७ लिए जाते थे। साथ ही उक्त राशि को एकत्रित करने के व्यय की पूर्ति के लिए प्रति सौ रुपय पर रु० ५.५० अतिरिक्त लिए जाते थे।[८]

उपर्युक्त वर्णन से यह तो स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि सम्पूर्ण मारवाड राज्य मे लगान वसूली मे कहीं कोई समानता नहीं थी। साथ ही लगान वसूली मे भी जातीयता के आधार पर भेदभाव का वर्ताव किया जाता था। सामान्य रैयत की अपेक्षा राजपूतों और ब्राह्मणो से लगान कम लिया जाता था।

दाण—यदि कोई बाहरी व्यापारी बाहर से घोडा आदि पशु लेकर जोधपुर राज्य या परगना सीमा में प्रवेश करता था तो उससे लिया जाने वाला कर दाण कहलाता था। जो पशु वहाँ बेचा जाता था उस पर दाण कर के अतिरिक्त

---

१ विगत०, २, पृ० ३३५।
२ विगत० २, पृ० ३२६।
३. विगत०, २, पृ० ८६, ६६।
४ जालोर विगत० (बही), पृ० ६८ क।
५ विगत०, २, पृ० ३२७।
६ विगत०, २, पृ० ६०, ६७।
७. परगना सोजत में प्रति बीघा सब्जी पर रु० ०.५० लिया जाता था। विगत०, १, पृ० ३६८।
८ विगत०, २, पृ० ६६-६७।

कुछ विक्री कर (बिसवा) भी लगता था।[1] परन्तु प्रति घोडा आदि पर कितनी राशि ली जाती थी इसका कोई उल्लेख नही मिलता है।

इस प्रकार मारवाड राज्य के बाहर से आने वाली वस्तुओ पर भी दाण (चुगी) और बिसवा (बिक्री) कर लेते थे। यदि मारवाड राज्य मे निवास करने वाला व्यापारी अन्य राज्यों से वस्तुएँ लाकर अपने परगने मे बेचता तो उसे सिर्फ दाण ही लगता था। परन्तु यदि मारवाड राज्य से बाहर का व्यापारी मारवाड म अपनी वस्तुएँ बेचता तो उसे दाण और बिसवा दोनो देना होता था।[2] बाहर के व्यापारी पोहकरण मे वस्तुएं बेचते थे, उनको इस प्रकार दाण और बिसवा देना पडता था—एक मण कपडे पर आठ दुगाणी लगता था, उसमे मे चार दुगाणी दाण और चार दुगाणी बिसवा कर होता था। एक मण रेशमी वस्त्र पर बिसवा सहित १० फदीया लगते थे।[3] गुजरात से आने वाली वस्तुओ पर कर की दरें वस्तु के प्रकार पर निर्भर रहती थी। जैसे दांत, रेशम, कस्तूरी, कपूर आदि पर प्रति मण पर डेढ फीरोजी और आधी दुगाणी, ताम्बा, काँसा, पीतल, शीशा, कथीर, गरी, नारियल, मिर्चें, पीपल, मजीठ, हीग, सुखडी, तेल, मिश्री, गुली आदि पर प्रति मण पर ८ दुगाणी, शकर, सुत, सौंठ, पीपल घी आदि पर प्रति मण पर साढ़े छ दुगाणी, गुड, तेल, (रुत) रुई, लोहा, लाख आदि पर प्रति मण पर साढे पाँच दुगाणी, जीरा, अजवाइन, सोवा, धनिया, बिराली हल्दी पर प्रति मण पर साढे तीन दुगाणी, मेथी, राई, सरसो, अलसी, तिल, मुज, साजो आदि पर प्रति मण पर साढे छ दुगाणी लगता था।[4] इस प्रकार लगने वाले कर मे आधा दाण और आधा बिसवा होता था।[5] विगत० से ही ज्ञात होता है कि 'दाण' का ही पर्यायवाची 'मापो' था।[6]

सेरीणो—वस्तु विशेष के प्रति मण पर सेरों के हिसाब से लिया जाने वाला

---

१ विगत०, १, पृ० १६, ८४, २ पृ० ३०८, ३२३, ३२५।
२ विगत०, २, पृ०३२५।
३ विगत० २ पृ० ३२५।
४ विगत०, २ पृ० ३२५ २६।
५ जैसलमेर मे प्रति ऊँट रेशम के रु० ३५ रुई के रु० ५, मजीठ के रु० ५, मोम के रु० ६, घी के रु० ५, फिटकडी के रु० ४ छुहारा के रु० ५, लाख लोरडी के रु० ६, नारियल के रु० ५, और किराना के रु० ३ दाण के रूप में लिए जाते थे। ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ७।
६ विगत०, १, पृ० १६७, २ पृ० ३२३, ३२४-२५। डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४८) के अनुसार जागीर में ही वस्तुओं के विक्रय पर लिया जाने वाला कर था और लालस० (३, पृ० ३७०) के अनुसार आयात या निर्यात की जाने वाली वस्तुओं पर लिया जाने वाला कर था।

कर 'सेरीणो' कहलाता था। मारवाड़ में ही एक परगने से दूसरे परगने में ले जाकर व्यापार करने वाले मारवाड़ी व्यापारी भी यह सेरीणो कर लगता था।

पोहकरण के व्यापारी मारवाड़ क्षेत्र से घी, तेल, रुई, कपास, धान, तिल आदि सभी वस्तुएँ लाते थे, जिन पर प्रति मण पर एक सेर कर के रूप में लिया जाता था।[1]

घासमारी-चराई—पशुओं पर लिया जाने वाला यह कर घासमारी-चराई कहलाता था। राजकीय (खालसा) पड़त जमीन पर जो व्यक्ति अपने पशु चराता था और बिना पट्टा लिये अपनी झोंपड़ी भी बना लेता था, उससे निम्नलिखित हिसाब से कर लिया जाता था—

१ गाय पर—५ दुगाणी।
१ भैंसा पर—१० दुगाणी।
१ वरठो[2] (भैंस) पर—४ दुगाणी।
१ झोटी (कम उम्र भैंस) पर—४ दुगाणी।
१ भेड़, बकरी पर—१ दुगाणी, और
१ झूपी[3] पर—१५ दुगाणी।

इसके अनुसार घासमारी कर एकत्र किया जाता था। इसके साथ यो एकत्र किये गये कर की प्रत्येक रु० १०० की राशि पर साढ़े पांच रुपये खर्चे के भी

---

१ विगत०, २, पृ० ३२३, ३२५, ३, पृ० १३७। डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३ ई०, पृ० ४७, और पॉलिटी०, पृ० १०२ टि० ४२) ने सन् १८६३ ई० की किसी विवरणिका के आधार पर लिखा है कि जागीरदार कृषकों से पैदावार के प्रति मण पर छठा हिस्सा सेरीणो के रूप में वसूल करता था किन्तु जागीरदार प्रति मण का सौवाँ भाग ही राज्य में जमा कराता था। साथ ही इसी प्रकार के शब्द का उपयोग परगना पोहकरण के संदर्भ में किया गया है जिसके अनुसार प्रति मण पर एक सेर की मांग की गयी है। परन्तु डा० शर्मा ने सेरीणो का जो उपर्युक्त स्वरूप दिया है वह सही नहीं है। विगत०, (२, पृ० ३२३) के अनुसार वस्तु विशेष के प्रति मण पर सेरो के हिसाब से लिया जाने वाला कर सेरीणो कहलाता था।

२ डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३, पृ० ५८) वरेठ का अर्थ गाय का बछड़ा लिखा है जो सही नहीं है।

३ एक प्रकार का अलग कर जो बिना पट्टे की भूमि पर बने मकानों पर लगता था। डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३, पृ० ४८ और पॉलिटी० पृ० १०५) ने झूपी का अर्थ ऊँट लिखा है जो सही नहीं है। विगत०, (२, पृ० ९१, ९८) में ऊँट के लिए ऊँट (नर) माड (मादा) का प्रयोग किया गया है। और समकालीन राजस्थानी ग्रन्थों (वही० और जालोर विगत०) में भी ऊँट के अर्थ में 'झूपी' का प्रयोग कहीं नहीं मिलता है। साथ ही मेड़ता में घास चराई के रूप में प्रति ऊँट, साड रु० १५० (६० दुगाणी) तथा जाट और बिस्नाइयों से रु० ०५० (२० दुगाणी) लिया जाता था। विगत०, २, पृ० ९१, ९८।

कुछ बिक्री कर (बिसवा) भी लगता था ।[1] परन्तु प्रति घोडा आदि पर कितनी राशि ली जाती थी इसका कोई उल्लेख नही मिलता है ।

इस प्रकार मारवाड राज्य के बाहर से आने वाली वस्तुओ पर भी दाण (चुगी) और बिसवा (बिक्री) कर लेते थे । यदि मारवाड राज्य मे निवास करने वाला व्यापारी अन्य राज्यो से वस्तुएँ लाकर अपने परगने मे बेचता तो उसे सिर्फ दाण ही लगता था । परन्तु यदि मारवाड राज्य से बाहर का व्यापारी मारवाड म अपनी वस्तुएँ बेचता तो उसे दाण और बिसवा दोनो देना होता था ।[2] बाहर के व्यापारी पोहकरण मे वस्तुएँ बेचते थे, उनको इस प्रकार दाण और बिसवा देना पडता था—एक मण कपड पर आठ दुगाणी लगता था, उसमे से चार दुगाणी दाण और चार दुगाणी बिसवा कर होता था । एक मण रेशमी वस्त्र पर बिसवा सहित १० फदीया लगते थे ।[3] गुजरात से आने वाली वस्तुओ पर कर की दरें वस्तु के प्रकार पर निर्भर रहती थी । जैसे दांत, रेशम, कस्तूरी, कपूर आदि पर प्रति मण पर डेढ फीरोजी और आधी दुगाणी, ताम्बा, कांसा, पीतल, शीशा, कथीर, गरी, नारियल, मिर्च, पीपल, मजीठ, हींग, सुखडी, तेल, मिश्री, गुली आदि पर प्रति मण पर ८ दुगाणी, शकर, सुत, सोंठ, पीपल घी आदि पर प्रति मण पर साढे छ दुगाणी, गुड, तेल, (रुत) रुई, लोहा, लाख आदि पर प्रति मण पर साढे पांच दुगाणी, जीरा, अजवाइन, सोवा, धनिया, बिराली हल्दी पर प्रति मण पर साढे तीन दुगाणी, मेथी, राई, सरसो, अलसी, तिल, मुज, साजो आदि पर प्रति मण पर साढे छ दुगाणी लगता था ।[4] इस प्रकार लगने वाले कर मे आधा दाण और आधा बिसवा होता था ।[5] विगत० मे ही ज्ञात होता है कि 'दाण' का ही पर्यायवाची 'मापो' था ।[6]

सेरीणो—वस्तु विशेष के प्रति मण पर सेरो के हिसाब से लिया जाने वाला

---

१ विगत०, १, पृ० १६, ८४, २, पृ० ३०८, ३२३, ३२५ ।

२ विगत०, २, पृ०३२५ ।

३ विगत० २ पृ० ३२५ ।

४ विगत०, २ पृ० ३२५-२६ ।

५ जैसलमेर म प्रति ऊँट रेशम के रु० ३५ रुई के रु० ५, मजीठ के रु० ५, मोम के रु० ६, घी के रु० ५, फिटकडी के रु० ४, छुहारा के रु० ५, लाख लोवडी के रु० ६, नारियल के रु० ५, और किराना के रु० ३ दाण के रूप मे लिए जाते थे । ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ७ ।

६ विगत०, १, पृ० १६७, २ पृ० ३२३, ३२४-२५ । डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४८) के अनुसार जागीर में ही वस्तुओं के विक्रय पर लिया जाने वाला कर था और लालस० (३, पृ० ३७०) के अनुसार आयात या निर्यात की जाने वाली वस्तुओं पर लिया जाने वाला कर था ।

माल अथवा मिलणो—त्यौहारो पर व्यापारियों और किसानो से भेंट स्वरूप लिया जाने वाला कर 'माल' अथवा 'मिलणो' कहा जाता था। पोहकरण में महाजन व्यापारियों से वार्षिक कर के रूप मे प्रति व्यापारी से कुल १७ दुगाणी ली जाती थी।[1] उसमे से १२ दुगाणी होली-दीपावली की होती थी और ५ दुगाणी रक्षा बंधन की ली जाती थी। अन्य लोगो और किसानो से उनकी स्थिति के अनुसार ले लेते थे। उनके लिये कोई निश्चित् नियम नही था। इस प्रकार महाजन, कसरा, सुनार, भटियारा, जटिया, ढेढ, कलाल, मोची, तेली, माली, सीरवी आदि से त्यौहारों पर लिया जाने वाला कर माल कहलाता था।[2]

खरच भोग—भू-राजस्व संग्रह पर होने वाले व्यय के निमित्त लिया जान वाला कर था।[3] इसमे प्रति बड़े गाँव से रु० १० और छोटे गाँव रु० ५[4] बल[5] के, रु० ५ दवात पूजा के, रु० ५ कागज के, रु० ५ खरडा के, रु० ५ सुत अघोडी के, रु० १ फड उठावणी का और रु० १ पोतदारी[6] आदि के खरच भोग

उतना ही लगान के रूप में पुन दिया जाता है। डॉ० दशरथ शर्मा के अनुसार—गाँव के कुओ के पानी का उपयोग करने वाले किसानो से लिये जाने वाले कर को ही गूघरी कहते थे और वह रकम उन कुओ की देखभाल करने वाले भोमियो को दी जाती थी। (राजपूत०, पृ० १४९)।

१ जैसलमेर में महाजनों से प्रति घर ८ दुगाणी ली जाती थी। ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ७।

२ विगत०, २, पृ० ३२६, १, पृ० ३९५ ९६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ७। डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४८) के अनुसार जब हाकिम का स्थानान्तरण होता अथवा नयी नियुक्ति होती उस समय नजराना के रूप में लिया जाने वाला कर था। साथ ही डॉ० दशरथ शर्मा ने मेला और मिलनो दोनों को एक ही मान लिया है, वस्तुत मेला से होने वाली आय को मेलों कहा जाता था। डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३, पृ० ४८-४९ और पॉलिटी०, पृ० १०३), के अनुसार यह प्रति घर एक रुपया हाकिम को भेंट स्वरूप दिया जाने वाला कर था।

३ विगत०, २, पृ० ८६।

४ मुहणोत नैणसी के देश-दीवान बनने के पूर्व बल कर के रूप म बड़े गाँव रु० २० तथा रु० २५ लिये जाते थे। १६५८ ई० में नैणसी ने जसवन्तसिंह से निवेदन कर उक्त कर में कमी करवाई थी। विगत०, २, पृ० ८९, ९०, ९१, ९२, ९३।

५ इसके लिए हुजदार री बल' का भी प्रयोग किया गया है। 'हुजदार' का शाब्दिक अर्थ 'प्रशासकीय उच्चाधिकारियो से है। (वही०, पृ० ३४, विगत०, १, पृ० ३९०) बल का शाब्दिक अर्थ सेना है। यो हुजदार री बल का अर्थ होगा, परगने में भू राजस्व संग्रह और गाँवो की सुरक्षा के निमित्त जो सैनिक रखे जाते थे उनके खर्चे के लिए लिया जाने वाला कर'। अत डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा ने अज्ञानवश 'हजुदार री' को हुजूर री' का ही पर्यायवाची मान कर (राजस्थान०; १९७३, पृ० ४७-४८) लिखा है कि 'राज्य की सेना के खर्चे के लिए लिया जाने वाला कर था' जो सर्वथा गलत ही है।

६ कोषाध्यक्ष के निमित्त लिया जाने वाला कर।

वसूल किये जाते थे।[1]

पान चराई—खालसा भूमि के वृक्षादि के पत्ते चरने वाले ऊंट और साँ पर लिया जाने वाला यह कर था। मेडता मे साधारणतया प्रति ऊँट-सांड प डेढ रुपया लिया जाता था। परन्तु जाट और बिस्नोई से प्रति नग आधा रुपय ही लिया जाता था।[2]

खोचडो—यह कर जागीरदारों के गावो से लिया जाता था। उस गाँ की आर्थिक स्थिति के अनुसार प्रत्येक गाँव से रु० ५ से लेकर रु० १ त लिये जाते थे। इस कर की दर के सम्बन्ध मे कोई निश्चित् नियम नही था मेडता परगना मे इस कर के कुल रु० ६०० या ७०० प्राप्त होते थे।[3]

गूघरी—भोग के निर्धारण की यह एक पद्धति थी जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त खलिहान में बटाई अथवा लाटा दे देने क कार्य पूरा हो जाने के समय अधिकारी को कुछ अनाज दिया जाता था उसे भ गूघरी कहा जाता था।[4]

---

१ विगत०, २ पृ० ८८। गजसिंह के समय में रु० १००/- पर रु० १५ लिये जाते थे गजसिंह ने स०१६६२ वि० में ८ और बाद में १७०८ वि० में जसवन्तसिंह ने ३ रुपये कम कर दिये और यो देश-दीवान नैणसी के समय मे रु० ४ खर्च के और डेढ रुपय नकद लिया जाता था।

२ विगत०, २, पृ० ९१, ९४।

३ विगत०, २, पृ० ९१। डॉ० नारायणसिंह भाटी (विगत०, ३, पृ० १३०) के अनुसार यह मृत्युभोज पर लिया जाने वाला कर था। डॉ० दशरथ शर्मा के अनुसार खोचडो मूलत सेना के भोजन की व्यवस्था के लिए राज्य द्वारा किसानो से लिया जाने वाला कर था। (राजपूत०, पृ० १४७)।

४ विगत०, २, पृ० ८६, ९७। डॉ० धनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३ ई०, पृ०४९ और पालिटी० पृ० १०३ टि० ४९) के अनुसार अधिकारियो के वहाँ निवास-काल के समय प्रतिदिन होने वाला व्यय किसानों द्वारा दिया जाता था जिसे कि गूघरी कहा जाता था किन्तु यह मान्यता तत्कालीन समय के उल्लेखों को देखते हुए सही नही है। क्योंकि यदि कामदार अथवा भू राजस्व संग्रह करने वाले अधिकारी को दिया जाने वाला खर्चा गूघरी कहलाता तब तो (विगत०, २, पृ०९३) में उसका वैसा स्पष्ट उल्लेख अवश्य ही होता। परन्तु ऐसे खर्चे को तब पेटिया (विगत०, २, पृ० ९०) कहा जाता था और उससे राज्य को तो कोई आय नही होती थी, प्रत्युत विगत० (२, पृ० ९३) में यह स्पष्ट उल्लेख है कि कामदार आदि को आटा, घी, दाणा देते थे, परन्तु उसे नकद कुछ भी नहीं दिया जाता था। डॉ० नारायणसिंह भाटी (विगत०, ३, पृ० १३१) के अनु सार गूघरी कुओं पर बंधे हुए रूप में निश्चित् माप में लिया जाने वाला लगान और फसल में से (कर के तौर पर) लिया जाने वाला विशेष हिस्सा था। लालस (लालस०, १, पृ० ७५६) के अनुसार यह एक निश्चित लगान या कर था जो अनाज के रूप में कृषक भूमि के मालिक को देता है। इसके अनुसार जितना धान भूमि में बोया जाता है,

सिकदारी—सिकदार (विश्वस्त रक्षक) के निमित्त लिया जाने वाला कर था।[1]

भरोती—भरोती का अर्थ रसीद है।[2] अत स्पष्टतया चुकारे की पक्की रसीद देते समय प्रत्येक व्यक्ति से एक रुपया लिया जाता था।[3]

लिखावणी—लिखित हिसाब रखने के निमित्त लिया जाने वाला कर।[4]

सांडीया री गिणती—इसका शाब्दिक अर्थ ऊँटो-सांडियो की गणना से है।[5]

व्यवसायिक कर—मारवाड में प्राय सब ही प्रकार के तत्कालीन विभिन्न व्यवसायो पर भी कर लिया जाता था। अनार और इमली का व्यवसाय करने वालो से, मालियों[6] से, सब्जी[7] पर, छीपा और पींजारों[8] से, भांभी[9] से, सावणगर[10] से, क्लाल[11] से, खटीकों[12] से, तेलियों[13] आदि से वार्षिक कर लिया जाता था।[14]

घुमाळो[15] (दुमालो)—को परिभाषित करने के लिए नैणसी के ग्रन्थो और

---

१ विगत० १, पृ० १६०, ३६८। राजस्थान०, १९७३, पृ० ४६ के अनुसार उसे केवल खरीफ की फसल पर लगाया जाता था, परन्तु विगत० में ऐसा उल्लेख नही है।

२ राजपूत०, पृ० ४६।

३ विगत०, २, पृ० ६०, ६१, ६७। डॉ० नारायणसिंह भाटी (विगत०, ३, पृ० १३५) के अनुसार कर भरने के पश्चात् रसीद करते समय लिया जाने वाला कर भरोती कहलाता है।

४ विगत०, १, पृ० १५८, ४००, राजपूत०, पृ० १४७, विगत०, ३, पृ० १३५।

५ विगत०, १, पृ० १६०। सांड (ऊँटनी) का सही अर्थ ज्ञात नही होने से ही डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३, पृ० ४६) ने इसे परगना सीवाणा में दुधारू गाय, भैंस और बकरी पर लिया जाने वाला कर लिख दिया जान पडता है।

६ माली मेंहदी और नींबू का व्यवसाय करते थे।

७ सब्जी पर प्रति बीघा रु० १ १२ और रु० ० ५० लिया जाता था।

८ वस्त्र रगने के लिए गुली (एक विशेष प्रकार का पौधा जिससे नीला रग प्राप्त होता था। मानस०, १, पृ० ७५२) की खेती छीपा और पींजारा कभी करते थे, तब से कुछ वसूली होती आ रही थी। छीपा रंगाई में जो गुली काम में लेते थे उस पर उन्हें कर देना पडता था।

९ गाय बैल का चमडा रगने का कार्य करते थे।

१० साबुन बनाने का कार्य करते थे।

११ कलाल शराब की भट्टी निकालते थे जिसका कर होता था। विगत०, १, पृ० ३९८।

१२ खटीक मांस बेचने और चमडा रंगने का व्यवसाय करते थे। विगत०, १, पृ० ३९८।

१३ तेली तेल निकालने की घाणियां चलाते थे। अत उन घाणियों पर कर चुकाना पडता था।

१४. विगत०, १, पृ० ३९७-९८।

१५ डॉ० दशरथ शर्मा के (राजपूत०, पृ० १४७) अनुसार राजस्व संग्रहकर्ता को शाल वितरित करने के लिए लिया जाने वाला कर था। डॉ० ब्रजमोहन जावलिया के अनुसार जन्म भूमि से संग्रहीत राशि को घुमालो कहा जाता था और डॉ० *नारायणसिंह*

के रूप मे लिए जाते थे । इनके अतिरिक्त भू-राजस्व सग्रह की नकद राशि पर ४ प्रतिशत के हिसाब म खर्च कर के रूप में लिया जाता था ।[1] उक्त कर प्रति फसल अथवा वर्ष मे दो बार लिया जाता था ।[2]

कडब घास—कडब (जवार और बाजरा के डठलो) और घास पर लिया जाने वाला कर । प्रति मण कडब पर एक दुगाणी ली जाती थी ।[3] कडबी भोग के सग्रह पर होने वाले व्यय के रूप में प्रति रु० १०० पर रु० २५० लिया जाता था ।

रसद[4]—सही रूप मे तत्कालीन अर्थ मे इसको परिभाषित करने के लिए नैणसी के ग्रन्थो तथा समकालीन अन्य राजस्थानी ऐतिहासिक ग्रन्थो मे कोई स्पष्टीकरण कही नही मिलता ।

---

१ १६५१ ई० के पूर्व भू राजस्व सग्रह के खर्च के लिए रु० १०० की राशि पर रु० ७ लिये जाते थे । १६५१ ई० म राजा जसवतसिह ने इसमे रु०३ की कमी कर दी । अत उक्त राशि के हिसाब से ली जाने लगी थी । विगत०, २, पृ० ८६, ६१, ६२ ।

२ विगत०, २, पृ० ६१ ६२, ६३ ।

३ विगत०, १, पृ० १५८, २, पृ० ८६ । डॉ० दशरथ शर्मा के अनुसार (राजपूत०, पृ० १४७) जागीरदार को निजी उपयोग के लिये दिये गये कडब घास पर लगाया जाने वाला यह कर था, परन्तु प्राप्त विवरण में इसकी सगति नही दीख पडती है । डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १६७३, पृ० ४६) के अनुसार प्रति मण पर रु० १ ५० लिया जाता था । जिसका आधार विगत० ही है, परन्तु विगत० में ऐसा कही कोई उल्लेख नही है ।

४ सही रूप 'रसद' ही है । राजस्थानी म इसका प्रयुक्त रूप भेद रसत ही विगत० में लिखा मिलता है । (विगत०, १, पृ० १५८, १५६, १६०, ३६६) डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत० पृ० १४७) के अनुसार रसद का अर्थ भोजन सामग्री से है । यह सामग्री राजस्व सग्रह के लिय जाने वाले व्यक्ति के लिये ली जाती थी । डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान० १६७३ पृ० ४६ और पालिटी० पृ० १०३ टि० ५४) के अनुसार किसानों को खलिहान मे अनाज सग्रह के समय अधिकारियो को कर देना पडता था उसे रसद कहा जाता था । यह दवात पूजा के ५ दुगाणी, कागज पाठा के ५ दुगाणी, मुन अघोडी के ५ दुगाणी फड उठावणी और पोनदारी की एक एक दुगाणी, और खरडा की दो दुगाणी वसूल की जाती थी । लेकिन यह कथन कदापि सही नहीं है क्याकि ये सभी रकमें खरच भोग में ली जाती था, जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है । डॉ० शर्मा ने उक्त कथन का आधार भी विगत० (२ पृ० ८६, ६२-६३) दिया है । पर तु विगत० में उक्त मदो का रसद में होने का कोई सकेत नहीं मिलता है । बल्कि खलिहान में गूघरी और कणवार की लाग देने का अवश्य उल्लेख मिलता है । (विगत०, २ पृ० ८६, ६६ ६७) । डॉ० नारायणसिंह भाटी (विगत०, ३, पृ० १३५) के अनुसार फौज की खुराक के लिये लिया जाने वाला लगान रसद कहलाता था । परन्तु यह पश्चात्कालीन सीमित अर्थ यहाँ सर्वथा अनुपयुक्त है ।

घीग्राई'—इसकी दर अथवा स्वरूप के सम्बन्ध मे भी नैणसी अथवा अन्य समकालीन ग्रन्थों में जानकारी नही मिलती है, यद्यपि उसके नाम से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसका सम्बन्ध घी से ही है परन्तु इस कर की वसूली से होने वाली आय का उल्लेख केवल परगना सीवाणा के ही सदर्भ मे मिलता है। सेवण घास जो प्राय. बाडमेर-सीवाणा क्षेत्र मे ही होती है। उस घास को चरने वाले पशुओं का घी आज भी श्रेष्ठ माना जाता है। सभवत इसी से यह कर तब सीवाणा परगना मे ही लागू रहा हो।

घोड़ा कावल'—इसके सही उद्देश्य के बारे में भी नैणसी के और अन्य समकालीन ग्रन्थो मे स्पष्टीकरण नहीं मिलता है।

इन नियमित करो के अतिरिक्त राज्य की आय के निम्नलिखित अन्य साधनो की भी जानकारी नैणसी के ग्रन्थों मे मिलती है।

नमक—नमक से भी राज्य की आय होती थी। परगना सीवाणा, फलोधी और पोहकरण मे खारे पानी से नमक बनाया जाता था। नमक की पैदावार का आधा और एक तिहाई भाग कर के रूप मे लिया जाता था।[3]

---

३६६) अरहट माडली का उल्लेख मिलता है, वहां उसी परगने (विगत०, १, पृ० ३६७) मे चाच (एक प्रकार का साधारण कुआ) का भी उल्लेख मिलता है। यों परगना सोजत की वार्षिक आय मे चाच (कुआ) से होने वाली आय के आंकडे देखने से उपरोक्त विद्वानो द्वारा दिये गये स्वरूप को मान्य करने में सदेह होता है। अरहट के साथ ही माडली' अथवा 'मडली' लिखा मिलता है। इससे उलझन और भी बढ़ जाती है। सालम० (३-३, पृ० ३५२७) के अनुसार 'मडली' का अर्थ मडी दिया है। परन्तु उसको 'अरहट' में जोड सकना किसी प्रकार सगत नहीं जान पडता।

१ विगत०, १, पृ० १६०। डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४८) के अनुसार घी का एक गाँव से दूसरे गाँव में निर्यात करने पर और डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३ ई०, पृ० ४६ और पॉलिटी०, पृ० १०४) के अनुसार घी के व्यापार पर लिया जाने वाला कर था। सालस०, (१, पृ० ८१६) के अनुसार जागीरदार द्वारा घी की उत्पत्ति पर कुछ मात्रा में घी लिया जाता था उसे घीग्राई कहा जाता था।

२ विगत०, १, पृ० १५६। डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४८) के अनुसार राजकीय घोडों को कम्बल वितरण के लिये लिया जाता था। परन्तु सन् १९१५ ई० में मेडता के तत्कालीन कानूनगो द्वारा मेडता का विवरण तैयार किया गया था। उसमें लिखा है कि गांवों की सुरक्षार्थ जो घुडसवार (जमीयत) रखे जाते थे उन घोड़ों को घास गांव से मिलती थी। कई वर्षो बाद नकद राशि निश्चित कर दी गयी। सो पूर्व नाम तो 'घोडा की घास' है परन्तु कई वर्षो से 'घोडा कावल' कहते हैं और उसी नाम से ही रकम जमा होती है। 'जोधपुर मुत्सद्दी नैणसी बस्ता न० ५३ ग्रंथांक ७, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर।'

३. विगत०, २, पृ० ३६, २०८।

अन्य समकालीन ऐतिहासिक ग्रन्थो मे कोई उल्लेख नही मिलना है।

तलबानो[1]— सभवत. राजस्व की बकाया राशि के सग्रह के लिए बुलाने भेजे जाने वाले व्यक्ति पर खर्च की पूर्ति के वास्ते लिया जाने वाला कर।

फरोही[2]— नैणसी के ग्रन्थो मे इसके अर्थ और स्वरूप के सम्बन्ध मे कोई सकेत नही मिलता है। परन्तु शब्दावली से ऐसा अनुमान होता है कि 'फरणो' (इधर-उधर चलना या चक्कर लगाना) क्रिया से यह शब्द बना है। यो स्पष्टतया चरने वाले पशुओ से *सम्बन्धित कर होगा।*

कणवार—कृषकों के खेतो की देख-रेख और सुरक्षा करने वाले को कणवारी कहा जाता था, जिसका व्यय किसानों को वहन करना पड़ता था। कणवारी के निमित्त किसानो से लिया जाने वाला कर कणवार कहलाता था।[3]

अरहट माडली (मडली)[4]—नैणसी के ग्रन्थो मे इसके स्वरूप के बारे मे कोई उल्लेख नही मिलता है।

भाटी के अनुसार यह गाँव के लोगो से चौधरी वसूल करता था। (राजपूत०, पृ०१४७ पा० टि०)। डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (पॉलिटी०, पृ०१०३, पा० टि० ४६) के अनुसार यह गाँव के प्रत्येक घर से परिवार की आर्थिक स्थिति के अनुसार नकद वसूल किया जाता था, जो स्पष्टतया नैणसी द्वारा अंकित करके पश्चात्कालीन परिवर्तित स्वरूप का ही विवरण है।

१ विगत०, १, पृ० १५८, ४००। डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४७) के अनुसार बुलावा के लिए लिया जाने वाला कर था।

२ विगत०, १, पृ० १५८, ३९९। डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४८) के अनुसार यह पान चराई की तरह ही था, और भूमि क्षेत्र में पशुओ को चराई पर लिया जाता था। लालस०, (३-१), पृ० २७२३ भी इसी मत का समर्थन करता है। तथापि डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३ ई०, पृ० ४६ और पॉलिटी०, पृ० १०३) के अनुसार किसानों को उनके खेतो की देख-रेख और सुरक्षा करने वाले कणवारी को कर देना पड़ता था उसे ही फरोही कहा जाता था। परन्तु डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा का यह कथन कदापि सही प्रतीत नही होता है। विगत० पृ० ३९९-४००) में परगना सोजत में करो की जो सूची दी गयी है, उसमें फरोही और कणवार दोनों का उल्लेख है, जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि फरोही और कणवार दोनो ही भिन्न-भिन्न कर थे और किसानों द्वारा कणवारी को दिया जाने वाला कर कणवार कहलाता था। साथ ही यदि कणवारी को दी गयी इस अतिरिक्त लाग को यदि फरोही कहा जाता तो परगना मेडता (विगत०, २, पृ० ९०, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६ ९७) में भी उसका उल्लेख अवश्य होता।

३. विगत०, १, पृ० ४००, २, पृ० ९०, ९१, ९३, ९५, ९६ ९७।

४ विगत०, १, १५९ ३९९। डॉ० दशरथ शर्मा (राजपूत०, पृ० १४८) और डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (राजस्थान०, १९७३ ई०, पृ० ४६) के अनुसार सिंचाई के पानी के उपयोग के लिए दिया जाने वाला कर था। परन्तु दोनों ने ही अपने आधार के बारे मे कोई सकेत नही दिया है। साथ ही परगना सोजत मे भी (विगत०, १, पृ० १५९,

पेशकशी और नालबधी—जो भोमिये राज्य की कोई भी सेवा नही करते थे उनसे ही पेशकशी और नालबधी के रूप म कुछ राशि ली जाती थी।[1] यो उर्युपक्त वर्णन से स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि राज्य की आय के लिए अनेक प्रकार के राजकीय कर और अन्य साधन थे। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रैयत ही राज्य के इस सम्पूर्ण खर्चे का भार वहन करती थी। यदि तत्कालीन परिस्थितियों को दृष्टिगत रखकर विचार करें तो वास्तव मे जनता पर करो आदि का अत्यधिक भार था और विवश होकर सामान्य व्यक्ति निर्धनता में ही जीवन बिता रहा था। यही कारण था कि महाराजा जसवतसिंह के समय मे जब मुहणोत नैणसी देश-दीवान नियुक्त हुआ तब उसने जसवन्तसिंह से निवेदन कर 'हुजदार री बल' की राशि प्रति बडे गांव रु० २० तथा २५ के स्थान पर बडे गांव रु० १० और छोटे गांव रु० ५ करवाये। फिर भी सन् १६६१ और १६६२ ई० में दो बार मेडता के जाट कर भार की शिकायत करने शाही दरबार मे पहुँचे थे।[2] परन्तु शाही दृष्टिकोण भी पूर्व के निर्धारित नियमो मे फेर-बदल करने के पक्ष मे नहीं था, अत उनको कोई लाभ नही हुआ।

है क्योंकि यह सामूहिक रूपेण ग्राम से लिया जाता था, यथा किन्हीं विशिष्ट जानवरों पर ही सीमित नहीं था।

१ विगत०, २ पृ० २४०, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६६।

२ विग्नु०, १, पृ० ६२ ८३ ६४ ६५।

मेला[1]—मेला से भी राज्य को आय होती थी। मेला क्षेत्र में व्यापारी अपनी दुकानें लगाते थे, राज्य उनसे कर के रूप में कुछ राशि लेता था।[2]

ब्याज—ब्याज से भी राज्य को आय होती थी। कई व्यापारी लोगों को ऋण देने का धन्धा करते थे। ऋण के रूप में दी गयी राशि पर ऋणदाता से ब्याज लिया जाता था। यदि मूल रकम से ब्याज की राशि दुगुनी हो जाती तो उस राशि का आठवां हिस्सा राज्य को देना पड़ता था।[3]

विवाह—विवाह से भी राज्य को आय होती थी। विवाह के अवसर पर विवाह पक्ष को रु० ० ३७ देने होते थे।[4]

घाणी—तेली घाणी से तेल निकालने का धन्धा करते थे। उनसे प्रति घाणी के रूप में रु० १ ६४ लिए जाते थे।[5]

तागीरात बल—यदि किसी जागीरदार का गाँव खालसे (जब्त) कर लिया जाता था, तब उस जागीरदार से तागीरात बल कर के रूप में कुछ राशि ली जाती थी,[6] जो स्पष्टतया जब्ती के लिए भेजे गये शासकीय अधिकारी के साथ की सैनिक टुकडी के व्यय की रकम होगी। यह रकम उस जागीरदार से ही वसूल की जाती थी।

पालेज दूध रा—जिस गाँव में दूध देने वाले पशु होते थे, ऐसे प्रत्येक बड़े गाँव से रु० ६ और छोटे गाँव की स्थिति के अनुसार लेते थे। अत: यह दुधारू पशु पर लिया जाने वाला कर था।[7]

---

१ डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा (पॉलिटी०, पृ० १०७) ने विगत० के ही आधार पर 'मेला-मापा' शब्द का प्रयोग किया है परन्तु विगत० (१, पृ० १६७) में सवत् १७१९ (१६६२ ई०) के ब्यौरे से स्पष्ट है कि 'मापो' और 'मेलो' दोनों ही भिन्न हैं। साथ ही विगत०, (१, पृ० १६१, २, पृ० ३०८, ३२४, ३५७) में अन्यत्र कहीं भी 'मेलो' के साथ 'मापो' का उल्लेख नहीं है।

२. विगत०, १, पृ० १६७; २, पृ० ३०८, ३२३, ३२४, ३५७।

३ विगत०, २, पृ० ३२६।

४. विगत०, २, पृ० ६०, जालोर विगत० (बडी बही) पृ०१०४ क। जालोर में रु० ०.५३ देने होता था।

५ विगत०, २, पृ० ६०।

६ विगत०, २, पृ० ६१। डॉ० दशरथ शर्मा के अनुसार जागीर मुक्त होने पर जागीरदार को नकद राशि दी जाती थी उसे तागीरात बल कहा जाता है। (राजपूत०, पृ० १४६) परन्तु यह परिभाषा सही नहीं है क्योंकि विगत० में यह रकम लेने की लिखी है, उसके दिये जाने के बारे में कहीं कोई संकेत भी नहीं है।

७. विगत०, २, पृ०६१। डॉ० नारायणसिंह भाटी (विगत०, ३, पृ० १३३) के अनुसार यह दूध पर नकद राशि में लिया जाने वाला कर और मुफ्त में आये हुए जानवरों पर लिया जाने वाला कर था। परन्तु ये दोनों ही अर्थ युक्तियुक्त अथवा पूर्णतया सही नहीं

पेशकशी और नालबधी—जो भोमिये राज्य की कोई भी सेवा नही करते थे उनसे ही पेशकशी और नालबधी के रूप मे कुछ राशि ली जाती थी।[1] यो उर्युपक्त वर्णन से स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि राज्य की आय के लिए अनेक प्रकार के राजकीय कर और अन्य साधन थे। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रैयत ही राज्य के इस सम्पूर्ण खर्चे का भार वहन करती थी। यदि तत्कालीन परिस्थितियो को दृष्टिगत रखकर विचार करें तो वास्तव मे जनता पर करो आदि का अत्यधिक भार था और विवश होकर सामान्य व्यक्ति निर्धनता मे ही जीवन बिता रहा था। यही कारण था कि महाराजा जसवतसिंह के समय मे जब मुहणोत नैणसी देश-दीवान नियुक्त हुआ तब उसने जसवन्तसिंह से निवेदन कर 'हुजदार री बल' की राशि प्रति वडे गांव रु० २० तथा २५ के स्थान पर वडे गांव रु० १० और छोटे गांव रु० ५ करवाये। फिर भी सन् १६६१ और १६६२ ई० मे दो बार मेडता के जाट कर भार की शिकायत करने शाही दरबार मे पहुँचे थे।[2] परन्तु शाही दृष्टिकोण भी पूर्व के निर्धारित नियमो मे फेरबदल करने के पक्ष मे नही था, अत उनको कोई लाभ नही हुआ।

है क्योंकि यह सामूहिक रूपेण ग्राम से लिया जाता था, तथा किन्हीं विशिष्ट जानवरों पर ही सीमित नहीं था।

१. विगत०, २, पृ० ३४०, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६६।
२ विगत०, १, पृ० ६२-६३, ६४-६५।

अध्याय : ११

नैणसी के ग्रन्थों में प्रतिबिम्बित मध्यकालीन राजपूत समाज

१ राजपूतो का जोवन-दर्शन

मध्यकालीन राजन्य वर्ग, जिनमे स कई एक राजघराने पुरातन कालीन क्षत्रियो अथवा शासक घरानो से अपने वशो को जोडते थे, कालान्तर मे वे तथा उनके सार मजातीय एक सुगठित शासक वर्गीय योद्धा जाति के रूप मे उभरे, जिनको तब दसवी शती के लगभग विभिन्न छत्तीस कुलो मे समाविष्ट कर लिया गया। हर्पोत्तरकाल मे इनमे कई एक राजघरानो का भारत के विभिन्न भागो मे शासन स्थापित हो गया था, तथा भारतीय इतिहास म उनका तब विशेष राजनैतिक और सामाजिक महत्त्व था। मुसलमानो ने जब भारत पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया तब इन्ही राजघरानो स पराजित होकर उत्तरी भारत के सिधु-गगा के काँठे के ही नही क्रमश अन्य क्षेत्रो के भी स्वाधीन राज्यो का अन्त हो गया तथा वहाँ के शासको के मूल घरानो का सर्वनाश हुआ। परन्तु इन विभिन्न राजवशो के वशजो ने अन्यत्र स्थानातरित होकर अनेको छोटे बडे राज्य या जमीदारियाँ स्थापित की। प्राय उनमें से अधिकाश मुगलकाल मे 'राजपूत' कहलाने लगे। यो इस मुगलकालीन उनके नये वर्गीय नाम को ही लेकर अधिकाश आधुनिक इतिहासकार हर्पोत्तर काल को ही भारतीय इतिहास का 'राजपूत काल' कहते है जो काल-दोष ही नही है, परन्तु अनैतिहासिक स्थापना भी है।

परन्तु यह राजन्य वर्ग तथा उन सब ही घरानो के सभी वशज अनेक शताब्दियो तक सघर्परत रहे जिसके फलस्वरूप इस राजपूत जाति मे उसका एक अलग ही अनोखा जीवन-दर्शन तब मान्य हो गया था, जिसकी कई विशेपताओ को उसके अनन्य विरोधियो ने भी बहुत सराहा और जिनके अनेका उदाहरणा ने

टाड जैसे अनेको विदेशी लेखको और वीरो को मन्त्रमुग्ध कर दिया था। नैणसी की ख्यात० मे प्रसगवश इसी राजपूत जीवन-दर्शन के अनेको उल्लेख यत्र-तत्र मिलते है, जिनके आधार पर उसकी कुछ प्रमुख विशेषताओ और मान्यताओ की चर्चा की जा सकती है।

युद्ध ही राजपूत जातीय-जीवन का प्रमुख काम-धन्धा था, एव किसी प्रकार की सैनिक सेवा को ही सर्वोच्च महत्त्व और प्राथमिकता दी जाती थी। खेती-वाडी या अन्य उद्योग-धन्धो को सर्वथा हीन और त्याज्य ही समझा जाता था। यही कारण था कि बाल्यावस्था मे ही राजपूतो को घुडसवारी तथा अस्त्र-शस्त्रो सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाता था। तथा साहसिक कार्यों की ओर उन्हे प्रवृत्त किया जाता था। ऐसे होनहार नवयुवको की ख्याति उस क्षेत्र से भी बाहर दूर-दूर तक फैलने लगती थी।[1] राजपूत युवनियाँ तो ऐसे नवयुवको को वरने को अपना परम सौभाग्य मानती थी और उन नवयुवनियो के पिता उन्हे अपना जामाता बनाने को लालायित रहते थे।[2]

अतएव राजपूत मरने से कभी भी भय नही खाता था। वह मृत्यु को सहज स्वीकार करता था। तलवार आदि का घाव लगने पर किसी प्रकार का दुख-दर्द व्यक्त करना कायरता मानता था।[3] यह जानते हुए भी कि लडाई मे उसे मृत्यु का सामना करना होगा, माँ अपने पुत्र को प्रेरित करती थी कि शस्त्र बाधकर वह रणक्षेत्र मे जावे।[4] युद्ध के मैदान मे आगे रहना और वीरता से लडते हुए मारे जाना जीवन की चरम उपलब्धि मानी जाती थी।[5] अपनी वीरता पर ही उन्हें परम गर्व होता था। वे कूटनीति म विश्वास नही करते थे, प्रत्युत उसे त्याज्य मानते थे। युद्ध मे सामने-सामने लडकर मर जाना वही अधिक अच्छा समझते थे।[6] यो वीर को ही सच्चा राजपूत माना जाना चाहिए इस सिद्धान्त मे वे विश्वास करते थे।[7] कुभा द्वारा हेमा को मारने का बीडा उठाने पर ठाकुरो ने व्यग्य किया था कि 'कुभा ननिहाल मे जाकर मैढो पर कटार चलावेगा' अत हेमा को कटार से ही मारने के बाद कुभा ने कहा था, 'मालाणी के सरदारो को बता देना कि कुभा की कटार हेमा की छाती मे टूटी है, मैढा पर नही'। यही नही, हेमा के बोल की चुनौती को स्वीकार कर कुभा ने हेमा को मारने के लिए अपने

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६२, २६४-६५।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६२।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २६८।
४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २७१।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३२५-२६।
६. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६६।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६१, २६२, २६६।

साथियो का सहयोग नही लिया। उसने स्वय ने ही वीरता का प्रदर्शन करते हुए और अपने पद की मर्यादा के अनुरूप उसने अनुभवी वयस्क हेमा को भी छोटा मानकर उसे ही पहला वार करने के लिए बाध्य किया था।[1]

किसी के भी सबल परन्तु अनुचित दबाव को राजपूत कदापि स्वीकार नही करता था। प्रत्युत उसका विरोध करने को तत्पर हो जाता था। वह हर प्रकार की चुनौती का सामना करने को सदैव तैयार रहता था। यही कारण था कि जब दूदा ने हमीर दहिया स एक लाख रुपये की मांग की तब उसने सोचा कि अगर यह द्रव्य दे दूंगा तो जाट-गूजर कहलाऊँगा और हाडौती मे बदनाम होऊँगा और नही देने पर मारा जाऊँगा।[2] इसी प्रकार जबरदस्ती मांगा गया अवैधानिक दण्ड चुकाना राजपूत जाति अपने सम्मान के विरुद्ध मानती थी, क्योकि जब भेड भी अपनी ऊन स्वेच्छापूर्वक किसी को काटने नही देती है—उसे तो नीचे गिराकर गुद्दी पर पांव रखकर ही मूंडा जा सकता है, तब राजपूत उससे भी गया-बीता कैसे हो जाता।[3]

राजपूत अपने वचन के पक्के होते थे। एक बार हां करने पर ना कहना सर्वथा असम्भव था।[4] इसी प्रकार राजपूत स्वामीभक्त होते थे और स्वामी के वशजो के सन्दर्भ मे भी उसे यथासम्भव निबाहते थे।[5]

राजपूत वैर परम्परा को निबाहना अपना कर्तव्य मानते थे। उसको दूर करने के लिए वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना ही एकमात्र सम्भावित उपाय हो सकता था।[6]

अपने सगोत्रीय सगे-सम्बन्धियो को छल से मारना राजपूत कदापि अच्छा नही मानते थे।[7] शरणार्थी की रक्षा करना और कुशलतापूर्वक उसे उसके घर पहुँचा देना वे अपना कर्तव्य समझते थे।[8]

धरती का उनकी दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्व था, और उसकी प्राप्ति के लिए सब ही प्रकार का छल कपट करने को उद्यत रहते थे।[9] इसी प्रकार उन दिनो अच्छे घोडे का विशेष महत्त्व था और कोई भी राजपूत अपने चढने का घोडा-

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६१, २६५-६६।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २६६।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २७१।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८१।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २७२। 'हम तेरे बाप के राजपूत हैं इसलिए तुझे नहीं मारते'।
६ देखिये अध्याय ६ 'वैर की परम्परा'।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २६६।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० २६६ ३००।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० १८१ ८३, २४६।

घाडी सहज दे देने को तैयार नहीं होता था। घोडो को लेकर अनेक बार वैर बँधा और उसके भयकर परिणाम हुए।[1]

चारणो का राजपूतो के साथ बहुत निकट का सम्बन्ध था। वे उन्हे सम्माननीय और अवध्य मानते थे।[2] वे राजपूतो के सलाहकार और सहायक होते थे। उनकी ओर स युद्धा मे भाग लेते थे और काम आते थे।[3] वे राजपूतो की कीर्तिगाथा पर काव्य रचना कर उनकी कीर्ति का प्रसार करते थे।[4]

राजपूतो के उपर्युक्त जीवन दर्शन के अनेको उदाहरण मिलते हैं परन्तु यहाँ केवल कुछ विशिष्ट बाता की ही चर्चा की गयी है और उनके दृष्टान्ता के रूप मे कुछ का निर्देश पाद-टिप्पणिया मे किया गया है।

२ राजपूत समाज की उल्लेखनीय विशेषताएँ

नैणसी ने अपनी ख्यात० मे राजपूत राज्यो के मध्यकालीन इतिहास सम्बन्धी अनेकानेक घटनाओ का जो विवरण दिया है और तद्विषयक जो भी बातें उसम सग्रहीत की हैं, उनमे तत्कालीन राजपूत समाज की बहुविध जानकारी सुलभ हो जाती है तथा उसकी अनेकानेक उल्लेखनीय विशेषताओ पर बहुत-कुछ प्रकाश पडता है। उनमे से कुछ प्रमुख सामाजिक मान्यताओ तथा प्रचलित परम्पराओ का विवेचन किया जाता है।

राजपूत-विवाह—अन्य उच्च वर्णीय हिन्दुओ की ही तरह राजपूतो म भी विवाह मूलत एक धार्मिक सस्कार ही माना जाता था, परन्तु अधिकतर युद्धरत रहने के साथ ही कालान्तर मे मुसलमानी आधिपत्य स्थापना का भी परोक्ष रूपेण प्रभाव पडा था। या व्यवहार मे भी कई एक छोटी-मोटी विभिन्नतायें मान्य होती गयी थी, जिससे वैवाहिक सम्बन्धो को लेकर कई बातें सामने आती गयी। राजस्थान अथवा राजपूतो के इतिहास मे तत्सम्बन्धी विस्तृत विवरण मिलते हैं, परन्तु इस सन्दर्भ म यहाँ जो जानकारी दी जा रही है वह मूलत. नैणसी के ग्रन्था मे ही सकलित की गयी है।

हिन्दू सस्कारो मे विवाह एक महत्त्वपूर्ण सस्कार है। इस सस्कार के द्वारा समाज स्त्री-पुरुषो के यौन सम्बन्धो को धार्मिक तथा सामाजिक मान्यता प्रदान करता है। इस सस्कार के बिना स्त्री-पुरुषो का सहवास निषिद्ध और धर्मविरुद्ध माना जाता है।[5] यदि कोई स्त्री पाणिग्रहण सस्कार के बिना किसी पुरुष के साथ

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २४८ ५०, २, पृ० २६०।
२. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २७०।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२० २१, १५२, १८१ ८२, २, पृ० ६२ ६३।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १७०-७१।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २२३।

रहने लग जाती तो उच्च जातीय समाज मे निंदनीय समझा जाता था और उच्च समाज से उसे निष्कासित कर देते थे।[1] ये सब मान्यताएँ मध्यकालीन सामाजिक जीवन मे भी यथावत मिलती हैं। नैणसी की ख्यात० मे तत्कालीन हिन्दू विवाह सस्था के साथ-साथ तत्सम्बन्धी राजपूतो की मान्यताओ पर भी पूर्ण प्रकाश पडता है।

साधारणतया लडकी और लडके के माता-पिता ही विवाह सम्बन्ध तय करते थे।[2] कभी-कभी युवा ही किसी सम्बन्ध से स्वय सन्तुष्ट होकर उसके लिए अपने पिता को सहमत करवा लेता था।[3] विवाह सम्बन्ध तय करते समय वश, कुल और सामाजिक स्तर का पूरा ध्यान रखा जाता था।[4] विवाह के पूर्व लडकी का पिता लडके के गुण-दोषो की ओर भी पूरा ध्यान देता था। यदि लडके मे कोई अवगुण होता तो वह उससे अपनी लडकी का विवाह नही करता था, और ऐसी अस्वीकृति से आपसी विरोध और दुश्मनी भी हो जाती थी, जिसके भयकर दुष्परिणाम भुगतने पडते थे।[5] परन्तु राजनैतिक विवाहो मे स्तर आदि की ओर ध्यान नही दिया जाता था।[6] सामान्यत लूली-लॅगडी आदि लडकियो का विवाह नही हो पाता था और यदि धोखे से किसी के साथ ऐसी लडकियो का विवाह हो जाता तो उनको पति की ओर से किसी प्रकार का सुख नही मिल पाता था। केवल अपवाद स्वरूप ही उसे कोई अपना लेता था। विवाह मे ऐसी ही बाधाएँ वर की थी। अन्धे को लडकी ब्याहने मे हिचक होती थी।[7] इसी प्रकार मूल नक्षत्र मे जन्मी लडकियो का विवाह भी नही हो पाता था। अनजाने मे हो सकता था। इस कारण इस नक्षत्र मे जन्मी लडकियो को जन्म समय या बाद मे मार दिया जाता था या फेंक देते थे।[8] सभी बातो को देखते हुए पता चलता है कि चारण, ब्राह्मण (पुरोहित), भाट आदि को भेजकर विवाह सम्बन्धी बातचीत की जाती थी।[9] प्रारम्भिक बातचीत होने के बाद वर पक्ष के पास नारियल[10] भेजे जाते थे,

---

१. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ४१, २२७ २८।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३२४; ३, पृ० ७२।
३. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३२४-२५।
४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८१-८२, २६४, २, पृ० २८६ ८७, ३, पृ० ४१।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८६-८७, २९२, ३, पृ० ८।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २५३, २६४, ३४६, ३, पृ० १४१-४३।
८. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १०३।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८१।
१० विगत०, १, पृ० १२। ब्राह्मण द्वारा लाये गये नारियल को बिना किसी विशेष कारण के लौटा देने पर अपयश व लोकनिन्दा का भागी ही नही होना पड़ता था, परन्तु कई बार उत्कट वैमनस्य का भी प्रारम्भ हो जाता था। विवाह प्रस्ताव का नारियल लाने

शुभ मुहूर्त के दिन ब्राह्मण वर के तिलक करता था और तब वर को नारियल अर्पित किया जाता था, जिसे टीका[1] रस्म कहा जाता था। यह रस्म[2] पूर्ण होने के बाद ही विवाह सम्बन्ध तय माना जाता था। तथा उस कन्या की वर के साथ सगाई (मँगनी) हो जाती थी। मँगनी[3] हो जाने के उपरान्त विवाह के लिए तिथि और समय निश्चित किया जाता है, जिसे लग्न कहा जाता है।[4] लग्न दिन के कुछ दिनो पूर्व पीसी हुई हल्दी मे तेल डालकर उसको दूल्हा दुलहिन के शरीर पर तब भी मला जाता था जिसे तेल चढाना कहा जाता था। यह कार्य प्रारम्भ हो जाने के बाद विवाह तिथि स्थगित नही की जा सकती थी।[5]

लग्न के दिन दूल्हा बारात के साथ कन्या पक्ष के यहाँ आता था। कन्या पक्ष की ओर से साम्हेला (अगवानी) किया जाता था।[6] उसके बाद बारात को जानीवासा मे ठहरा दिया जाता था।[7] तब कन्या पक्ष की ओर से बारातियो की मेहमानदारी की जाती थी। कन्या पक्ष की ओर से बारातियो के सुख-सुविधा आदि का पूरा पूरा ध्यान रखा जाता था और उन्हें अच्छा-से-अच्छा खानपान प्रस्तुत किया जाता था। राजपूतो मे मास, मदिरा के खानपान का बहुत प्रचलन था। अफीम और भाँग भी पर्याप्त मात्रा मे काम मे आती थी।[8] अत बारातियो के लिए प्रस्तुत की जाती थी। लग्न समय के पूर्व जानीवास मे दूल्हा तोरण के लिए बुलाया जाता था।[9] दूल्हा और साथ के सब बाराती तोरण तक जाते थे। तोरणद्वार के अन्दर बारातियों का प्रवेश निषेध था। तोरण मारने की यह रस्म इस बात का प्रतीक थी कि वर ने कन्या पक्ष के गढ के तोरणद्वार को जीतकर ही विजयी के रूप मे उसमे प्रवेश किया है। तोरण की रस्म हो जाने पर वर को विवाह मडप मे ले जाने के लिए जनानी ड्योढी पर ले जाते थे। जनानी ड्योढी के अन्दर केवल दूल्हा ही जाता था। पर्दा प्रथा के कारण अन्य बारातियो को

वाले ब्राह्मण को विदाई के समय वर पक्ष की ओर से अपनी इच्छा और सामर्थ्यानुसार द्रव्यादि दिया जाता था। ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३२४ २५।

१ टीका में वर को द्रव्य घोड़ा आदि दिये जाते थे। ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २८५।
२ सगाई (वाग्दान) कहते है।
३ जिस वर के साथ किसी कन्या की मँगनी हो जाती थी तब उस कन्या को उस वर की माँग कहा जाता है। उस समय किसी तरह से मँगनी हो जाने के बाद उसी कन्या की मँगनी किसी दूसरे से भी कर देने पर युद्ध हो जाता था।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७२, ३, पृ० ४१ १०४, विगत०, १, पृ० १२।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ७५।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८२, ३, पृ० ४०, ३, पृ० ४५।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८३।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८३, १८२।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० १८२।

वहाँ नही जाने दिया जाता था ।[1] ड्योढी पर ही तब दूल्हा की आरती की जाती थी ।[2] इस समय दूल्हा के ललाट पर दही का तिलक किया जाता था ।[3] तदनन्तर ही दूल्हा को विवाह मण्डप मे ले जाया जाता था[4] जो प्राय बाँसो और केलो के पत्तों से बनाया तथा सजाया जाता था ।[5]

उधर तब दुलहिन को भी नववस्त्रों और आभूषणो से सुसज्जित कर विवाह-मण्डप मे लाया जाता था ।[6] दोनो को साथ-साथ बैठाकर ब्राह्मण हथलेवा जोडता था और तब अग्नि की परिक्रमा दिलाकर पाणिग्रहण संस्कार सम्पन्न करवाता था ।[7]

इस संस्कार के तुरन्त बाद वधू के सगे-सम्बन्धी अपनी-अपनी इच्छानुसार कन्यादान करते थे । कन्यादान मे रुपये, आभूषण, पशु (पशुओ मे गाय का दान सर्वश्रेष्ठ माना जाता था), जमीन आदि देते थे। कन्यादान पाणिग्रहण संस्कार का अन्तिम चरण माना जाता था ।[8] विवाहोत्तर कन्या के पिता के यहाँ ही वर-वधू रात्रि मे सहवास करते थे और उसी दिन मुँहदिखाई की रस्म भी की जाती थी। दूसरे दिन साला कटारी[9] की रस्म की जाती थी। बारात कम-से-कम दो-चार दिन कन्या पक्ष के यहाँ ठहरती थी और इसी समयान्तर कन्या का पिता अपने सामर्थ्यानुसार हर तरह से सेवा करता था । इस विवाहोत्सव मे नाच-गाना भी होता था ।[10] सभी रस्मे पूर्ण हो जाने के बाद कन्या का पिता दहेज देकर *बारात को विदा कर देता था।* दहेज मे धन-दौलत, *आभूषण*, *दासियाँ*, वस्त्र, पशु, आवश्यक वस्तुएँ, सेवक और जागीर अपने-अपने सामर्थ्यानुसार दी जाती थी ।[11] विदाई के पूर्व दूल्हा अपनी ओर से लाग-दापा की रस्म भी पूरी करता था। इसी रस्म के अनुसार विवाह से सम्बन्धित जितने सेवक होते थे उनको वर पक्ष की ओर से रुपये आदि दिये जाते थे ।[12] त्याग बाँटने की रस्म

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८२ ।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १४३ ।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १२४-२५, १२७ ।
४ इसको मास आरती कहा जाता है ।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८७ ।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८२ ।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८२ ८३ ।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ६२ ।
९ साला कटारी मे नव विवाहित बहनोई की तरफ से साले को शस्त्र, द्रव्य अथवा भूमि आदि दिये जाते थे । विगत०, १, प० ४० ।
१० ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६५, ३१८, ३, पृ० ७५-७६ ।
११ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १२४, ३, पृ० २०२, २८२, विगत०, १, पृ० ८, ६६ ।
१२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २३२ ।

भी होती थी। त्याग बाँटने[१] के बाद ढोल बजवाया जाता था और तब बारात की विदाई होती थी।[२] वधू को साथ लेकर बारात वर पक्ष के अपने घर को वापस लौट जाती। उसके बाद वर-वधू के कांकन-डोरडे खोले जाते थे।[३] विवाह में ढाढी भी साथ होता था।[४] यह गायन करता था।

बहुपत्नी विवाह—जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, राजपूत समाज में भी विवाह मूलत धार्मिक संस्कार था, परन्तु जब उत्तरी भारत के अधिकांश क्षेत्रों में राजपूत राजघरानों का आधिपत्य स्थापित हो गया, तब राजपूत शासकों और उनके आधीन सब ही स्तरों के राजपूत घरानों में वैवाहिक सम्बन्धों के साथ राजनैतिक, सामरिक, सामाजिक अथवा व्यक्तिगत कारण भी जुड़ गये, जिससे राजपूत समाज में बहुपत्नी विवाह प्रथा चल निकली।

राजपूत समाज के साधारण परिवारों में सम्भवत आर्थिक कारणवश ही अधिकतर बहुपत्नी विवाह नहीं होता था। परन्तु धन-सम्पन्न राजपूत परिवारों, ठाकुरों, जागीरदारों और शासकों में बहुपत्नी विवाह का विशेष प्रचलन था।[५] किसी पुरुष के कितनी पत्नियाँ होंगी, इसकी कोई सीमा नहीं होती थी।[६] बहुपत्नी विवाह बुरा नहीं समझा जाता था, प्रत्युत अधिकांश उच्च स्तरीय व्यक्ति इसे मान-मर्यादा का द्योतक मानते थे।[७] परन्तु ऐसा भी उदाहरण मिलता है कि प्रथम पत्नी उसका विरोध करती थी।[८]

बहुविवाह के कारण—बहुपत्नी विवाह प्रथा के प्रचलन के कई एक ऐसे कारण थे, जिससे व्यक्तिगत, कौटुम्बिक या अन्य प्रकार के विरोधों के होते हुए भी मध्यकाल में इसका बहुत अधिक प्रचलन हो गया था और यह एक साधारण-सी बात हो गयी थी। नैणसी के ग्रन्थों के अध्ययन से इस प्रथा के प्रचलन के कई एक कारण स्पष्ट होते हैं। एक राजा दूसरे राजा से पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने अथवा सैनिक सहायता प्राप्त करने के लिए राजनैतिक विवाह करते थे। इसी प्रकार जागीरदार भी।[९] पुराने वैर-भाव समाप्त करने के लिए

---

१ रण चढण कंकण बंधण, पुत्र बधाई चाव।
सीन दिहाडा त्याग रा, कहाँ रंक कहाँ राव॥

२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ५४, ३२७।

३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७३, २, पृ० ३१८।

४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २ पृ० ३२७।

५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५४, २७६, २, पृ० ७५-७६, १६०, २३४।

६. विगत०, १, पृ० ५५-५६, ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८१।

७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३६-४०।

८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ३।

९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३१२, ३, पृ० ८।

भी विवाह सम्बन्ध स्थापित किये जाते थे।[1] कई बार किसी युवा योद्धा की वीरता से प्रभावित होकर कई राजपूत उसके साथ विवाह सम्बन्ध स्थापित करने को समुत्सुक हो उठते थे।[2] सम्पन्नता के कारण अय्याशी की भावना जागरूक हो गयी और व्यक्तियों ने एक से अधिक पत्नियाँ रखना प्रारम्भ कर दिया।[3]

बहुविवाह के दुष्परिणाम—जहाँ बहुपत्नी विवाह से अनेको बार राजनैतिक, कौटुम्बिक या व्यक्तिगत लाभ उठाये जाते थे, इसी प्रथा के फलस्वरूप अधिकतर सब ही प्रकार की अनेको ऐसी समस्याएँ या उलझनें उठ खडी होती थी कि अन्तत उनके विषम हानिकारक परिणाम होते थे, जिनके अनेको उल्लेख नैणसी के ग्रन्थो मे यत्र-तत्र पाये जाते हैं।

बहुविवाह के कारण पति अपनी पत्नी की इज्जत नही करता था, यदि किसी पत्नी ने उसकी आज्ञा के अनुसार चलने मे जरा-सी भी आना-कानी की या किसी कारणवश बाध्य होकर उसकी आज्ञा का उल्लघन किया तो पति उस पत्नी को बुरा-भला कहता, उसे पीटता भी था और यहाँ तक कि कभी-कभी तो कोई पति उसके सामने ही उसकी सौत (दूसरी पत्नी) को पलग पर ले लेता—जो स्थिति किसी भी स्त्री को स्वीकार्य नहीं हो सकती थी और वह उस पति को हमेशा के लिए छोडकर चले जाने का निश्चय कर लेती थी। बहुविवाह जन्य असन्तोष, विरोध तथा वैमनस्य के कारण पति को बहुविध हानि भी होती थी। इन्ही कारणो से कई बार दोनो पक्षो मे युद्ध भी ठन जाता था, जिससे दोनो ही पक्ष शक्तिहीन हो जाते थे।[4]

बहुविवाह के कारण पति अपनी पहले वाली पत्नियो को भूलकर सबसे बाद वाली या किसी अन्य एक रानी को ही प्यार करने लग जाता था। तब अन्य सब ही स-पत्नियाँ पति से मिल सकने वाले सब ही सुखो से वचित रह जाती थीं।[5] कृपापात्र पत्नी के अतिरिक्त अन्य दुहागन हो जाती थी।[6]

कभी कभी ऐसी सौत विशेष के कारण ही दूसरी स-पत्नियो के लडको की उपेक्षा होती थी और उनके हितो पर आघात भी होता रहता था। सौतो के आपसी झगडे के कारण जो पति अपनी जिस पत्नी पर विशेष कृपा रखता था,

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ५६-६०, १००, २०६ २, पृ० ३३६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २०० ७।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २८६ ८८, ३, पृ० १६६-२००, विगत०, १, पृ० ४७ ४८।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १४४ ४८, २, पृ० ४१ ४२।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६४-६५।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १२४, २, पृ० २२८ २६।

उसका कहना मानकर अपने पुत्र का विवाह अन्धी लडकी से भी कर देता था।[1]

प्रिय रानी अथवा पत्नी के कहने पर कभी-कभी ज्येष्ठ एवं उत्तराधिकारी पुत्र को भी देशनिकाला दे देता था।[2] अत उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर भयकर गृहकलह भी हो जाता था जो कई बार राज्य और ठिकाने तथा उनके घरानो के लिए घातक प्रमाणित होता था। यो उत्तराधिकार हेतु सघर्ष प्रारम्भ हो जाना स्वाभाविक ही था।

ऐसे बहुविवाहो के कारण ही सौतें अधिकाशतया किसी न-किसी बात को लेकर आपस मे लडा करती थी और गृहकलह चलता रहता था। कोई पत्नी सम्पन्न परिवार की होती तो कोई गरीब। अत स्वाभाविक ही था कि धनी परिवार की पत्नी के पास आभूषण आदि अधिक होते और गरीब के पास कम, जिससे ईर्ष्या भावना बढती और स्त्रियाँ आपस मे लडती रहती। कभी-कभी ऐसा व्यक्तिगत झगडा न केवल पूरे घर मे फैल जाता, बल्कि दो विभिन्न राजपूत खाँपो का झगडा बन जाता था।[3]

यदि कभी किसी पत्नी के पिता पर बाह्य शत्रु आक्रमण करता तो विवाह के कारण ही उसके पति को भी कभी कभी श्वसुर को सहयोग देना पडता था जिस स उसकी सैनिक शक्ति क्षीण होती थी। विभिन्न घरानो की पत्नियो के कारण भी अनेक बार उनके पति के लिए तब कई विचित्र उलझनें खडी हो जाती थी जब उसके दो ससुरालो में आपसी वैर हो जाता था।[4] अनेक बार विभिन्न घरानो मे ही नही विभिन्न राज्यो मे भी झगडा हो जाता था।[5]

बाल विवाह—विवाह के समय वर-वधू की क्या आयु होनी चाहिए यह चिरकाल से विवाद का विषय रहा है। यो तो वयस्क होने पर ही विवाह किया जाना समीचीन होता है, परन्तु अनेको कारणो से बाल विवाह भी होते आये हैं। मध्यकालीन राजस्थान म राजपूतो मे भी बाल विवाह का बहुत अधिक प्रचलन था।[6] नैणसी मे उल्लेख मिलता है कि १२ वर्ष की अवस्था के लडके का भी विवाह कर देते थे।[7] कन्या के रजस्वला हो जाने के बाद तो पिता को उसके विवाह की अत्यधिक चिन्ता होने लगती थी।[8] १० से १५ वर्ष की अवस्था मे तो लडकियो

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३४६।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३१२-१३।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ६२-६३।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १२६-२८।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ४७-४८।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७५।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ७५।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८२-८३।

का विवाह अवश्य ही कर दिया जाता था।[1] इस प्रकार नाबालिग अवस्था मे ही लडकियो के विवाह हो जाते थे।

बाल विवाह प्रथा का प्रमुख कारण राजपूत घरानो की गरीबी होती थी।[2] इसी कारण व्यय बचाने हेतु अलग-अलग आयु के लडके-लडकियो का विवाह एक साथ कर दिया जाता था।[3] ज्यादा पुत्रियाँ होने पर भी सबका (तीन-चार का भी) एक साथ विवाह कर दिया जाता था। यो आर्थिक कठिनाइयो से वाध्य होकर ही बाल विवाह होने लगे होगे।[4]

सती प्रथा—राजपूत घरानो मे सती प्रथा कितनी पुरानी है यह कहना सम्भव नही है। मारवाड के राठाड राज्य के आदिसस्थापक की देवली पर सन् १२७३ ई० के लेख से यह स्पष्ट है कि वह देवली सीहा की सोलकिणी पत्नी पार्वती ने बनवायी थी।[5] जिसमे यह स्पष्ट है कि तब सीहा की पत्नी अपने पति के साथ सती नही हुई थी। परन्तु कालातर मे अवश्य ही सती प्रथा राजपूत समाज की एक उल्लेखनीय विशेषता ही नही गौरव और प्रतिष्ठा की भी बात बन गयी थी। अत जहाँ अकबर ने भी सती प्रथा को रोकने के प्रयत्न किये थे, वही जोधपुर के मोटा राजा उदयसिह का लाहौर मे देहान्त हो जाने पर जब उसकी चिता पर उसकी रानियाँ आदि सती हुईं तब उस दृश्य को देखने हेतु वह स्वय वहाँ गया था।[6]

अत सती प्रथा सम्बन्धी अनेको उल्लेख नैणसी के ग्रन्थो मे मिलना स्वाभाविक ही है, उन्ही के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पति के मरणोपरात पत्नी भी अपने पति के साथ आग मे जल जाती थी। उसे ही सती कहा जाता था। प्राय पत्नी पति का मस्तक अपनी गोद मे लेकर चिता मे बैठती थी।[7] कभी-कभी स्वय साथ मे न जलकर अपने शरीर का एक अग काटकर साथ म जला देती थी और स्वय कुछ समय बाद जलती थी।[8] यदि कभी कभी पति दूरस्थ स्थान पर मर जाता तो उसके मरने की सूचना आने पर पत्नी चिता मे जलकर सती होती थी।[9] परन्तु कोई भी स्त्री गर्भावस्था मे सती नही हो सकती थी,

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६७।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८२।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८२।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ८२ ८३।
५ इण्डियन ऐण्टिक्वेरी, ४०, पृ० ३०१।
६ अकबरनामा० (अ० अ०), ३, पृ० ५६४-६६, १०२७-२८।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० ११३।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३२८।
९ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २।

क्योंकि वह स्वय चिता मे प्रवेश कर सकती थी, परन्तु अपने साथ किसी अन्य जीव की हत्या करने का उसे कोई अधिकार नहीं था। अतएव सन्तान के जन्म के कुछ दिन बाद ही सती हो सकती थी।[1] सती होने के पूर्व सम्पूर्ण आभूषण उतार दिये जाते थे, और वे तब दान मे दे दिये जाते थे।[2]

सती प्रथा के पीछे पवित्र उद्देश्य था। स्त्री अपने को पुरुष की अर्धांगिनी समझती थी। वह सदासर्वदा के लिये पति के साथ रहना चाहती थी। उसकी धारणा थी कि वह जिस प्रकार इस लोक मे पति के साथ रह रही है उसी प्रकार सती होकर परलोक मे भी पति के साथ रहे। अत अधिक समय तक वह मृत पति से विलग नहीं रहना चाहती थी।[3] इसके उद्देश्य पर नैणसी की ख्यात० मे अच्छा उदाहरण उपलब्ध है। राव वीरमदेव के मारे जाने के बाद उसके अन्य साथी लोग उसकी पत्नी और पुत्र चूण्डा को लेकर भाग निकले। कुछ दूरी तय करने के बाद वीरम की पत्नी ने कहा, 'मुझे तो अपने पति से ही काम है। मेरा उससे अन्तर बढ रहा है। इसलिए सती होऊँगी।'[4] यों अपने पति के मरने के बाद पत्नी इसी उद्देश्य से सती होती थी, और तब तक वह प्रथा एक प्रतिष्ठादायक सामाजिक परम्परा बन चुकी थी, प्राय स्त्रियाँ स्वेच्छा मे ही सती होती थी।[5] परन्तु ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जिसमे स्त्रियों को सती होने के लिए बाध्य किया जाता था।[6]

३. धार्मिक मान्यताएँ, अलौकिक मे श्रद्धा तथा सार्वजनिक अन्धविश्वास

भारत सदैव मे धर्म प्रधान देश रहा है। परन्तु धार्मिक आस्था के साथ ही यहाँ नास्तिक हिन्दू भी रहे हैं। पुन विभिन्न क्षेत्रों या वर्गों के उपास्य देवी-

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २, ३, पृ० ७१।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६६, २, पृ० ३०४।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३०४।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २६६।
६ सती होने के लिए बलपूर्वक बाध्य करने के प्रयत्न का एक उदाहरण अबुल फजल ने 'अकबरनामा' में दिया है। मोटा राजा उदयसिंह की पुत्री दमेती (दमयन्ती) कछवाहा जयमल रूपसीहोत को ब्याही गयी थी। मई, १५८३ ई० में जयमल का चौसा में देहान्त हो जाने पर जब यह सूचना आगरा पहुँची तब दमेती के सती होने का आयोजन होने लगा। परन्तु दमेती उसके लिए तत्पर नहीं थी। अन्त मे स्वय अकबर ने आदेश देकर सती को रोक दिया। तदनन्तर दमेती वृन्दावन में ही रहने लगी जहाँ सन् १६२७ ई० में उसका स्वर्गवास हुआ था। अकबरनामा० (अं० अ०), ३, पृ० ५९४-९६, जोधपुर की ख्यात०, १, पृ० १०२।

देवता भी भिन्न होते थे। राजस्थान के शासकों में जहाँ राठोड शासकों की कुल-देवी चक्रेश्वरी (नागणेची) थी[1] वहाँ मेवाड का महाराणा श्री एकलिंगजी को ही राज्य प्रदान करने वाला मानता था।[2] इसी प्रकार सब ही विभिन्न राजपूत खांपों की अपनी-अपनी उपास्य देवी होती थी। इसके अतिरिक्त अपनी-अपनी भावना और विश्वासों में आस्थावैचित्र्य सर्वत्र विद्यमान था, जो तत्कालीन जीवन में स्पष्ट पाये जाते रहे।

राजपूतों में मृत्यु के बाद आत्मा के पुनर्जन्म में पूर्ण विश्वास था। अनेक प्रथाओं में पिछले जन्म की कथाओं का उल्लेख मिलता है।[3] मृत्युपरान्त जीवन में भी पति के साथ रहने की इच्छा से ही वीरांगनाएँ सती होने को समुत्सुक रहती थीं। युद्ध के पहले भी योद्धागण अगले जन्म में पुनः मिलने की बात सोचते और कहते थे।[4]

मुहणोत नैणसी के ग्रन्थों में इतिहास के साथ ही तत्कालीन राजपूत समाज और जीवन की कई झाँकियाँ देखने को मिलती हैं। अतः उसके ग्रन्थों में जो विवरण तथा उल्लेख मिलते हैं उनसे तत्कालीन धार्मिक मान्यताओं और विश्वासों पर पर्याप्त प्रकाश पडता है। हिन्दू बहुदेववादी रहे हैं। मूर्तिपूजा में पूर्ण विश्वास प्रगट होता है। विभिन्न देवी देवताओं की मूर्तियाँ मन्दिर में स्थापित की जाकर उनकी पूजा की व्यवस्था होती थी। इस समय तक पुजारी परम्परा सुदृढ रूपेण स्थापित हो चुकी थी। प्रत्येक मन्दिर का एक या अधिक पुजारी होते थे। मन्दिर में स्थापित मूर्ति की पूजा आदि ही उनका मुख्य धार्मिक कर्तव्य होता था। उनकी जीविकोपार्जन के लिए राज्य अथवा समाज की ओर से व्यवस्था की जाती थी। यद्यपि मुसलमानों द्वारा अनेक बार मन्दिरों को ध्वस किया जाता रहा,[5] फिर भी हिन्दुओं का मूर्तिपूजा में अटूट विश्वास बना रहा।

देवी-देवताओं की शक्ति सम्बन्धी मान्यतानुसार उन्हें विभिन्न श्रेणियों में विभक्त किया जाता था। उदाहरणार्थ—महादेवी से कुलदेवी निर्बल और कुलदेवी में क्षेत्रपाल निर्बल माना जाता था।[6] ग्रह, पशु, उरग आदि भी देवता स्वरूप माने जाते थे। सूर्य इच्छापूर्ति के लिए मार्ग प्रशस्त करने वाला देवता और युद्ध का देवता भी माना जाता था।[7] महाराणा प्रताप के भाई सगर

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ११, ३४, अभिलेख०, पृ० १०२।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ७, २२।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १५७।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २१५-१६, २२४।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २७३।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २६७, २७२।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १।

ने पुष्कर में वाराह के मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया था।[1]

हिन्दू अवतारवाद में पूर्णतया विश्वास करते थे। पुनः अपने विश्वासानुसार विभिन्न देवी-देवताओं की साधना करते थे। मानव में दैवी-शक्ति का प्रस्फुटन अथवा आवेश पर भी पूरा विश्वास था, जिसमें जनसाधारण के लिए बलि हो जाने वाले अथवा उनकी रक्षार्थ निरन्तर प्रयत्नशील रहने वाले नर-पुंगवों को लोकदेवता के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया जाता था।[2] जो व्यक्ति विशेष मानव समाज के जनहित अथवा निर्बल और पूज्य के रक्षणार्थ या अपने वचनों को निबाहने के लिए चमत्कारिक कार्य कर दिखाता हुआ अपने जीवन की बलि देता था, उसके मरणोपरान्त उसको देवता के रूप में मान्य कर उसकी पूजा आरम्भ हो जाती थी। राजस्थान आदि क्षेत्रों में रामदेव हरभू साँखला और पाबू राठौड आदि कुछ व्यक्तियों की गणना बाद में लोकदेवता के रूप में की जाने लगी।[3] लोकदेवताओं के अतिरिक्त ऋषियों, जोगियों अथवा सत-साधुओं में भी हिन्दू जनता का विश्वास था। देवी-देवताओं के प्रमुख भक्त के रूप में मानकर उनकी भी सेवा की जाती थी।[4] जो व्यक्ति कठोर तपस्या आदि नहीं कर सकते अर्थात साधारण गृहस्थी-जन भी ईश्वर के इन भक्तों की सेवा कर ईश्वर तक पहुँचने की कामना करते थे। इच्छापूर्ति के लिए देवी-देवताओं की, पीरों और लोकदेवताओं तक की मनौती ली जाकर वहाँ भेंट, पूजा चढ़ाई जाती थी। कहीं-कहीं पर पशु-बलि भी दी जाती थी।[5] यही नहीं, तदर्थ कई एक कँवल पूजा भी करते थे।[6] अथवा उसके स्थान पर सोने का सिर भेंट में चढ़ाया जाता था।[7]

मुसलमानों के भारत आगमन और यहाँ उनके आधिपत्य की स्थापना के बाद भी हिन्दू यथावत् मूर्तिपूजक बने रहे थे। यों राजनैतिक दबाव, निजी स्वार्थ अथवा परिस्थितियों की विवशता के कारण यदा-कदा उच्चवर्गीय और कई एक निम्नवर्गीय हिन्दुओं ने इस्लाम धर्म अंगीकार किया। अपने व्यवसाय आदि के हेतु कई व्यवसाय वालों को भी विजेताओं और शासक वर्ग का धर्म स्वीकार करना पड़ा। परन्तु उनकी मनोवृत्तियाँ तथा विचार-परम्परा अपरिवर्तित ही

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० २४।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३५० ५१, विगत०, २, पृ० ३६।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३४८, ३५०-५१, ३, पृ० ५८-७६, विगत०, २, पृ० २६।
४. ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० ३०, २३, २०६ ११ २१४, ३३०, ३, पृ० २६-२७।
५. ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० १७।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३६, २, पृ० १३, १७, २२।
७. ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३३६।

रही, जिससे इस्लाम धर्मावलम्बियों में भी आन्तरिक जातिवाद अनेक रूपों में उभरा था। जैसे पीजारा, भडभूंजा, नालबन्द, कुजडा, जुलाहा बणगर, लखारा, हलालखोर (मेहतर)।[१] पुन जहाँ से वे मूलत: आये थे आदि के आधार पर भी 'मुलतानी', तुरक आदि वर्गों में बट ही नहीं गये थे, समाज में भी उसी नाम से जाने जाते थे।[२] प्रारम्भ मे लेकर नैणसी के समय तक भी समय-समय पर मन्दिरों का ध्वस भी किया जाता रहा था। फिर भी हिन्दू विचारधारा यथावत् बनी रही। सदियों तक हिन्दू-मुस्लिम दोनों जातियाँ साथ-साथ रही इसी कारण कालान्तर मे दोनों धर्मों की कट्टरता कम होती गयी। हिन्दू धर्म मे भी जागृति आयी। परिणामस्वरूप दोनो जातियाँ एक-दूसरे के निकट आयी। एक-दूसरे को जाना-पहिचाना। हिन्दू भी मुस्लिम सन्तों मे विश्वास करने लगे।[३] राजपूत शासकों ने राजनैतिक आवश्यकता को समझकर मुस्लिम सूबेदारों और शासकों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध भी स्थापित किये।[४] यो प्रारम्भ में द्वेष और घृणा की दृष्टि से देखी जाने वाली विदेशी जाति के प्रति भी हिन्दुओं में विश्वास और सहानुभूतिपूर्ण विचार उठने लगे थे।

तथापि कई एक धार्मिक मामलों में हिन्दू मुसलमानों का उत्कट विरोध करते थे। यह एक कठोर सत्य है। उदाहरणस्वरूप हिन्दू गाय को पूज्य मानते रहे हैं। अत मुसलमानों द्वारा की जाने वाली गौहत्या का हिन्दू तब भी यथाशक्य विरोध करते थे।[५] पुन खान-पान आदि में मुसलमानों के साथ पूरी छूत-छात बरती जाती थी। मुसलमान शासकों अथवा मुगल सम्राटों के साथ राजपूत राजघरानों की कन्याओं के विवाह तो अपवाद ही समझे जाने चाहिए। राजपूत के अन्य किन्ही स्तरों में ऐसे वैवाहिक सम्बन्ध होने के कोई उल्लेख नही मिलते हैं। राजपूत समाज के भी सामान्यजन ऐसे वैवाहिक सम्बन्धों के तो विरोधी ही रहे थे।[६]

नैणसी के समय मे राजस्थान मे सर्वत्र प्राय सभी लोगों की अन्धविश्वासो मे पूर्ण आस्था थी। वे जोगियों के चमत्कार,[७] ज्योतिषियों की भविष्यवाणी,[८]

१ विगत०, १, पृ० ४६७, २, पृ० ८५ २२४, ३१० छीपा-खत्री लिखा है।
२ विगत०, १, पृ० ४६७, २, पृ० ८५, २२४।
३ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ३१८।
४ विगत०, १, पृ० ५२, २६८। मनभावती, मोटा राजा उदयसिंह, जोधपुर, की पुत्री थी और उसका विवाह जहाँगीर के साथ हुआ था। जोधपुर ख्यात०, १, पृ० १०३, अकबरनामा० (अ० अ०), ३, पृ० ८८०, जहाँगीर०, पृ० ३२।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), २, पृ० २०४।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२१-२४।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), ३, पृ० २६-२७।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० १८०।

मन्त्र-तन्त्र,[1] शकुनों और स्वप्नों में बहुत विश्वास करते थे। उदाहरणार्थ—राजा सिद्धराव जब रात्रि में सोने पर स्वप्न देखता है कि पृथ्वी स्त्री का रूप ग्रहण कर राजा के पास आती है और कहती है कि मुझे अच्छा गहना देना। राजा हमेशा यही स्वप्न देखता था। तब एक दिन राजा ने पण्डितों और स्वप्न पाठकों से पूछा कि पृथ्वी स्त्री का रूप धारण कर गहना माँगती है। अत क्या करना चाहिए ? तब पण्डित ने कहा, 'पृथ्वी का गहना तो प्रासाद है। अत आप मन्दिर बनवाइये'।[2]

शकुन-शास्त्र में तो बहुत अधिक विश्वास किया जाता था। युद्धाभियान में हर समय शकुन-शास्त्री साथ रहते थे। यदि युद्धाभियान मार्ग में अपशकुन हो जाता तो पुन अच्छे शकुन होने तक आगे नहीं बढ़ा जाता था। ऐसे समय में सामरिक-शास्त्र द्वारा इंगित रणनीति या व्यूह-रचना की आवश्यकताओं की भी उपेक्षा की जाती थी।[3] इसी प्रकार प्रत्येक नवीन कार्य करने से पूर्व और किसी काम से बाहर जाने से पूर्व शकुन देखा जाता था।

असाधारण शक्ति या वर प्राप्त कई एक व्यक्तियों की पशु-पक्षियों की बोली समझ सकने की क्षमता पर भी पूरा विश्वास किया जाता था और उनकी कही बात या सुझाव को सदैव मान्य कर तदनुसार आगे कार्यवाही की जाती थी।[4]

इसी प्रकार पुराणों में कही बातों को भी यथासंभव आचरण में क्रियान्वित कर पुण्य-लाभ करने को हर कोई प्रयत्नशील रहता था।[5]

जीवन में अलौकिक घटनाओं पर पूरा विश्वास था, और यही कारण था कि अनेकानेक बातों में भी उनका उल्लेख मिलता है। जैसे मृत व्यक्ति का स्वयं मुँह फेर लेना या कही बात को सुनकर समझ लेना,[6] साँप का प्रतिदिन एक मोहर देना और साँप का मनुष्य की बोली बोलना आदि।[7]

४ हिन्दुओं के जातीय उत्सव और सार्वजनिक आमोद-प्रमोद के साधन

सत्रहवीं शताब्दी में राजस्थान में जातीय उत्सव और आमोद-प्रमोद के साधनों का विशेष महत्त्व था। नैणसी के ग्रन्थों में उल्लेखित उदाहरणों का यहाँ विवरण दिया जा रहा है। होली, दीवाली, रक्षाबन्धन, दशहरा, देवझूलनी एका-

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २७२।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २७३।
३ विगत०, १, पृ० १२०।
४ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० ६६।
५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २३०।
६ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२४, २, पृ० ६१ ६३।
७ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २२४, २२५।

दशी और मकर सक्रान्ति, अक्षय तृतीया आदि प्रमुख त्योहार थे।[1] होली फाल्गुन सुदि १५ (पूर्णिमा),[2] दीपावली कार्तिक वदि १५[3] रक्षाबन्धन श्रावण सुदि १५[4] अक्षय तृतीया वैशाख सुदि ३[5] दशहरा आश्विन सुदि १० और चैत्र सुदि १०[6] को मनाया जाता था। होली, दीपावली और रक्षाबन्धन सार्वजनिक उत्सव थे। दशहरा राजपूतों का जातीय उत्सव था।[7] होली के दिन गेहर (डांडिया गैर) खेला जाता था[8] तथा इस अवसर पर सामूहिक रूप में एकत्रित होकर एक-दूसरे पर गुलाल आदि डालकर त्योहार मनाते थे।[9] दीपावली के अवसर पर लोग जुआ भी खेलते थे।[10] होली दीपावली और रक्षाबन्धन तीनों ही अवसरों पर रैयत को अपने शासकों को निश्चित् रूप में कुछ राशि भेंट देनी पड़ती थी।[11]

राजपूत शासकों और जागीरदारों के आमोद प्रमोद का प्रमुख साधन शिकार करना था।[12] सामान्यतया शेर का आखेट करने में विशेष रुचि लेते थे। परन्तु सूअर की शिकार भी राजपूतों के लिए एक विशिष्ट आकर्षण होता था।[13] इसके अतिरिक्त चौपड़[14] भी मनोरंजन का प्रमुख साधन था। राजपूत और अन्य उच्च वर्गीय लोगों के लिए नाच गाने और वाद्य भी मनोरंजन के साधन होते थे। ये लोग अपने मनोरंजन के लिए वैश्याएँ और नर्तकियाँ रखते थे। अथवा प्रत्येक परगना केन्द्र नगर में वैश्याएँ और नर्तकियाँ भी निवास करती थी।[15] डूम जाति भी गायन और वादन से लोगों का मनोरंजन किया करते थे।[16] सार्वजनिक मनो

---

१ विगत० १, पृ० ४, ५ १३ ६४ १०१, ११७ १३० १३५ २ पृ० ३०५ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १ पृ० २७२ २, पृ० २४।
२ विगत० १ पृ० १३६, वही० पृ० ६३ मार्इन०, ३ पृ० ३५३ ५४।
३ विगत० १ पृ० १०१, २ पृ० ३०५, मार्इन०, ३ पृ० ३५३ (यह वैश्यों का प्रमुख त्योहार था)
४ विगत० १ पृ० ६४ मार्इन० ३ पृ० ३५१।
५ वही० पृ० २६ ४८, मार्इन० ३ पृ० ३५१।
६ विगत० १ पृ० ८६ ११७ वही० पृ० ३८ ६६।
७ मार्इन० ३ पृ० ३५२।
८ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० १४७।
९ विगत० २ पृ० ४।
१० ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० २७२।
११ विगत० २ पृ० ३२६।
१२ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ४० २ पृ० २८१ २८५ ३२६ ३३० ३३१ ३३२ ३ पृ० २६ विगत० २ पृ० ३७ ६६ ७१ २१७।
१३ विगत० १ पृ० ५।
१४ ख्यात०, (प्रतिष्ठान) २ पृ० ४६ ४७ २४४।
१५ विगत० १ पृ० ३६१ ४६७ २ पृ० ६ ८६ ३१०।
१६ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० ८० ८१ विगत० १ पृ० ३६१ ४६७ २ पृ० ६ ३११।

रजन के माधनो के वारे मे नैणमी के ग्रन्थो मे कोई विशेप उल्लेख नही मिलता है। विगन० मे नटखुट[1] जाति का उल्लेख मिलता है। जो तब भी यह जाति सार्वजनिक मनोरजन का माधन रही होगी। क्योकि राजस्थान के गाँवो मे अपने खेल-कूद तमाशे दिखाना ही इस जाति का जीविकोपार्जन का प्रमुख साधन आज भी है। नाटक[2] भी मार्वजनिक मनोरजन के माधन थे।

---

१ विगत०, १ पृ० ३६०।
२ ख्यात० (प्रतिष्ठान) १ पृ० २७३।

अध्याय · १२

उपसंहार

इतिहासकार मुहणोत नैणसी ने अपने जीवन के साठ वर्ष भी पूरे नही किये थे कि आत्मघात कर उसने अपने जीवन का अन्त कर दिया। दिसम्बर, १६६६ ई० मे राजकीय पद से पदच्युत कर दिये जाने के बाद तो उसका लेखन-कार्य लगभग बन्द ही हो गया था। उसके जीवन के पिछले पौने चार वर्ष निष्क्रियता, कैद और शासकीय सख्तियो के त्रास मे ही बीते थे। नैणसी की विस्तृत ब्यौरेवार प्रामाणिक जीवनी पहले दी जा चुकी है, जिससे यह स्पष्ट है कि पदच्युत होने से पूर्व के कोई तेईस वर्षों मे और विशेषतया देश-दीवान (१६५८-१६६६ ई०) के पद पर के साढे आठ वर्ष के कार्यकाल मे ही उसने अपने सुविख्यात ग्रन्थो की सामग्री एकत्र की थी अथवा उनको लिखकर तैयार किया था।

मानव जाति के अथवा राष्ट्र के इतिहास की ही तरह क्षेत्रीय और प्रादेशिक इतिहास भी अबाध परम्परा मे चलता जाता है। भूतकाल से ही वर्तमान का उद्भव होता है और वर्तमान भविष्य को दिशा देता है। अत नैणसी द्वारा रचित इतिहास-ग्रन्थो मे वर्णित इतिहास और उसको प्रस्तुत करने की इतिहासकार के आयोजन और शैली को भी ठीक तरह से समझ सकने मे सुविधा के हेतु ही पूर्व मे मारवाड के पूर्वकालीन इतिहास की ही नही, मारवाड मे क्षेत्रीय अथवा राज-घराने के इतिहास-लेखन की भी पूर्ववर्ती परम्पराओ आदि की पृष्ठभूमि की विवेचना की जा चुकी है, क्योकि उनको समझे बिना इतिहास-लेखन मे नैणसी के योगदान तथा उसके इतिहास-ग्रन्थो का सही विश्लेषण और समुचित मूल्याकन सम्भव नही हो सकता था।

सुयोग्य प्रबुद्ध इतिहासकार के अनुरूप ही नैणसी का अपना विशिष्ट सुस्पष्ट इतिहास-दर्शन था, और एक दृढनिष्ठ समर्पित इतिहासकार की तत्परता, लगन और धैर्य के साथ नैणसी अपने इतिहास-ग्रन्थो की रचना मे बरसो तक लगा रहा, तथा बडी मेहनत से उसने अपनी अभिरुचि के अनुसार उन्हे लिखा था। स्वय

राजपूत नहीं होने हुए भी उसका घराना सदियों से मारवाड़ के राजघराने से सम्बद्ध/सेवारत था, जिससे तब विकसित हो रहे राजपूती तन्त्रों से सम्बद्ध ही नहीं था, परन्तु उसने स्वयं भी उसमें योगदान भी दिया था, एवं उसके ग्रन्थों में उसकी जानकारी और अंकन होना स्वाभाविक ही था।

राज्य-शासन से सम्बद्ध और उसमें उच्च पदों पर सेवारत होने के कारण भी उसे यदा-कदा युद्धों में भाग लेना पड़ता था, तथापि स्वयं जैन धर्मावलम्बी था, जिस कारण प्रारम्भ से ही उसमें मानवता और दयाधर्म विकसित होने लगे थे। अतः अपने इतिहास-ग्रन्थों में उसने राजघरानों, उनके राज्यों, युद्धों आदि के साथ सम्बन्धित क्षेत्रों के जनसाधारण और उनकी समस्याओं तथा उनके जन-जीवन की भी यत्र-तत्र चर्चा की है। इन इतिहास ग्रन्थों में भी मानव-भूगोल और जनजीवन से सम्बद्ध आर्थिक मामलों पर भी उसने बहुत-कुछ नया प्रकाश डाला है।

यह सही है कि ख्यात० को वह उसका सही अन्तिम रूप नहीं दे पाया था, और विगत०कुछ युगों पहले तक अज्ञात ही रही है। परन्तु अब वे सुलभ हैं और उनका अध्ययन तथा उपयोग किया जाने लगा है। तब उनके बहुविध विवेचन के साथ ही उनका वास्तविक समालोचनात्मक मूल्यांकन भी हो जाना चाहिए कि इतिहास के भावी सशोधक तथा इतिहासकार सही रूप में उनका समुचित उपयोग कर सम्बन्धित इतिहास को समृद्ध और परिपूर्ण बना सकें।

१ नैणसी के ग्रन्थों का समालोचनात्मक मूल्यांकन

नैणसी के इन दोनों ग्रन्थों का यह मूल्यांकन दो अलग-अलग दृष्टियों से किया जाना चाहिए। प्रथमतः उनमें वर्णित इतिहास का ऐतिहासिक तथ्यों के रूप में महत्त्व, प्रामाणिकता और उसकी उपयोगिता, तथा दूसरे उनमें यत्र-तत्र प्रसंगवश दी गयी स्फुट जानकारी अथवा अन्य विवेचनों द्वारा प्रस्तुत तथ्यों की अन्य प्रकार की सम्बन्धित शोध या विवेचनों के सन्दर्भ में उपयोगिता। अतः प्रत्येक ग्रन्थ के समालोचनात्मक मूल्यांकन इन दोनों ही विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में अलग-अलग करना आवश्यक और उचित होगा।

(अ) इतिहास-ग्रन्थों के रूप में

मुहणोत नैणसी के दोनों ही ग्रन्थ 'मारवाड रा परगना री विगत' और 'मुँहता नैणसी री ख्यात' मूलतः इतिहास-ग्रन्थ के ही रूप में लिखे गये थे। मारवाड़ तथा अन्य राजपूत राज्यों के पूर्ववर्ती इतिहास सम्बन्धी ऐसा विस्तृत ग्रन्थ कोई और उस समय उपलब्ध नहीं था। 'उदेभाण चापावत री ख्यात' (कवि-राजा की ख्यात), 'जोधपुर हुकूमत री बही', 'जालोर परगना री विगत' आदि

इतिहास-विषयक सग्रह-ग्रन्थ नैणसी के समकालीन अथवा उसके तत्काल बाद मे लिखे गये थे, परन्तु ये सब ग्रन्थ अधिकाश रूप मे मारवाड के राठोडो से सम्बन्धित ही जानकारी देने वाले हैं, अथवा क्षेत्र या काल की दृष्टि मे सर्वथा सीमित या एकागीय ही हैं।

विगत० मुख्य रूप मे इतिहास-ग्रन्थ है। इसमे मारवाड का प्रारम्भ से महाराजा जसवन्तसिंह के शासनकाल मे १६६४ ई० तक का राजनैतिक इतिहास दिया गया है। 'वात परगने जोधपुर री' मे मण्डोवर पर राठोडो के पूर्व के शासको का सक्षिप्त विवरण तथा राव सीहा से महाराजा जसवन्तसिंह तक राठोडो का विस्तृत विवरण दिया है। साथ ही परगना सोजत, जैतारण, फलोधी, मेडता, सीवाणा और पोहकरण का भी क्षेत्रीय इतिहास दिया है जो मारवाड राज्य के इतिहास का सागोपाग अध्ययन करने के लिए महत्वपूर्ण है। जालोर और साचोर को छोडकर बाकी रहे समूचे मारवाड के इतिहास को प्रस्तुत करने का नैणसी ने यथाशक्य पूरा प्रयत्न किया है।

विगत० मे दिया गया राठोडो के पूर्व का मारवाड का इतिहास प्रामाणिकता से परे ही है। इसी प्रकार राठोडो का प्रारम्भिक इतिहास भी नैणसी ने तब प्रचलित अनैतिहासिक प्रवादो के ही आधार पर लिखा है। सीहा सेतरामोत की द्वारका यात्रा, मूलराज और लाखा फूलाणी मे आपसी युद्ध और सीहा से सहायता प्राप्त करना आदि विवरण अनैतिहासिक और काल्पनिक ही है। परन्तु इनमे दिये गये विवरणो में यत्र-तत्र वहाँ के इतिहास या ऐतिहासिक घटनावलियो के कुछ तथ्यो को खोजा जा सकता है जिनकी सहायता से मोटे तौर पर उस पूर्ववर्ती इतिहास की रेखाएँ अकित की जा सकें। जैसे इन क्षेत्रो से सम्बन्धित प्रागैतिहासिक कालीन व्यक्तियो के प्रवाद या वहाँ पर पूर्ववर्ती परमारो या प्रतिहारो के आधिपत्य के उल्लेख विचारणीय है। कुछ घरानो के शासको की नामावलियाँ या उस समय के विदेशी आक्रमणकारियो के उल्लेख भी मिलते है जिनके सही क्रम, काल आदि की खोज का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

सीहा की मृत्यु पाली जिले मे ही हुई थी। इसी के फलस्वरूप बाद मे पाली और आसपास के क्षेत्र पर सीहा के पुत्र आस्थान का प्रभाव स्थापित हो गया था। *आस्थान ने ही खेड पर अधिकार किया था। परन्तु विगत० म बाद के* इतिहास सम्बन्धी अधिकाश विवरण अनैतिहासिक और कल्पनापूर्ण ही है। उन परिवर्तनपूर्ण शताब्दियो का सही इतिहास अस्पष्ट या अधिकतर अज्ञात ही था जिससे तत्कालीन इतिहास सम्बन्धी प्रचलित प्रवादो मे ऐतिहासिक भ्रान्तियाँ या भूलें बहुत हैं। जैसे आस्थान के पौत्र रायपाल द्वारा पंवारो से बाडमेर लेना, छाडा का सोनगरो से युद्ध, तीडा द्वारा सोनगरो से भीनमाल लेना और सीवाणा पर अलाउद्दीन के आक्रमण के समय तीडा का युद्ध मे मारा जाना, कीरम की

मृत्यु के बाद चूण्डा का आल्हा चारण के पास जाने और देवी-दर्शन सम्बन्धी विवरण मे कल्पना और अलौकिक का सम्मिश्रण ही ज्ञात होता है। इसी प्रकार राव जोधा के पूर्व के मारवाड का इतिहास, अनेक घटनाओ का विवरण तब प्रचलित अनैतिहासिक और काल्पनिक प्रवादो के आधार पर लिखा गया है। अत राव जोधा के पूर्व का जो ऐतिहासिक विवरण विगत० मे दिया गया है समकालीन प्रामाणिक ऐतिहासिक अन्य आधार-सामग्री की सहायता स उसकी जाँच करना नितान्त आवश्यक है।

राव जोधा के काल से लेकर आगे के ऐतिहासिक वृतान्त अधिकतर सही हैं, जिनकी प्रामाणिकता की अन्य ऐतिहासिक आधार ग्रन्थो स भी पुष्टि की जा सकती है। विगत० मे राव जोधा द्वारा जोधपुर किले का निर्माण, राठोड राज्य की नयी राजधानी जोधपुर नगर की स्थापना और विस्तार, मारवाड के राठोड शासको द्वारा पूर्वकालीन मुस्लिम आक्रमणकारियो तथा पडोसी राज्यो के साथ सघर्ष, राव मालदेव का उत्कर्ष और अन्त, मोटा राजा उदयसिंह तथा बाद के शासको द्वारा मुगल शासको की आधीनता स्वीकार करना और उसके बाद मारवाड मे राजनैतिक शान्ति और प्रशासनिक सुधार आदि सम्बन्धी मारवाड के इतिहास का विस्तृत विवरण मिलता है।

विगत० म वर्णित मारवाड राज्य के ऐतिहासिक इतिवृत्त म सर्वप्रथम राव चूण्डा की मृत्युतिथि और सम्वत् दिया गया है। उसके बाद की अधिकाश महत्त्वपूर्ण घटनाओ के सम्वत् दिये हैं। राव गागा के शासनकाल क बाद तो नैणसी निरन्तर निश्चित तिथि, माह और सम्वत् देता गया है और अनेको बार तो घटना के दिन का वार भी दिया है। यो चूण्डा के बाद का और विशेषकर राव गागा से लेकर बाद का सारा विवरण इतना तथ्यात्मक है कि वह फारसी मे लिखे विवरणो को कही अधिक स्पष्ट करता है या उनमे दी गयी तारीखो को ठीक कर उनकी पुष्टि करता है।

ख्यात० मे नैणसी न विभिन्न राज्यो तथा राजपूत जातियो की अनेक खापो का इतिहास लिखा है। ख्यात० मे मेवाड म गुहिलोत वश के आधिपत्य की स्थापना से लेकर महाराणा राजसिंह तक का सक्षिप्त इतिहास दिया गया है। मेवाड की प्रारम्भिक पीढियो और रावल रतनसिंह तक का जो सक्षिप्त इतिवृत्त दिया वह तब प्रचलित मान्य दन्त-कथाओ पर ही आधारित है एव विश्वसनीय नही है। ख्यात० मे राणा हमीर से राणा मोकल तक का विवरण अति सक्षिप्त है। सागा का वृत्तान्त कुछ अधिक विस्तार मे दिया है। सागा या बाघवराड मे युद्ध का वर्णन केवल ख्यात० मे ही मिलता है जिसकी पुष्टि अब तक नही हो सकी है। साथ ही चूडावत-शक्तावत खापो की विस्तृत वशावलियाँ दी गयी है। अत मेवाड का इतिहास सक्षिप्त होते हुए भी बहुत महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है।

ख्यात० मे मेवाड के अतिरिक्त डूंगरपुर, बांसवाडा, देवलिया (प्रतापगढ) और रामपुरा आदि गुहिलोत-सीसोदिया राज्यो का भी सक्षिप्त इतिवृत्त दिया है। इन राज्यो के इतिहास मे भी १४वी शताब्दी के बाद की घटनाओ का विवरण ही अधिक विश्वसनीय है।

ख्यात० मे राजस्थान की प्रमुख चौहान राजवशीय खांपो का विस्तृत विवरण दिया है। हाडा देवा द्वारा बूंदी लेने सम्बन्धी तब प्रचलित तीन विभिन्न वृत्तान्त दिये हैं। हाडा सूरजमल और महाराणा रतनसिंह के मध्य मनमुटाव और झगडे सम्बन्धी विवरण विस्तार से लिखा है। यह बात विचारणीय है कि सुर्जन हाडा और मुगल बादशाह अक्बर के मध्य हुई तथाकथित सन्धि का ख्यात० मे कोई उल्लेख नही है। सिरोही राज्य का भी विस्तृत विवरण दिया है। सिरोही पर चौहानो की देवडा शाखा का राज्य था। नैणसी ने इस राजवश के देवडा नामकरण का जो कारण दिया है वह स्पष्टतया कदापि विश्वसनीय नही है। साथ ही नाडोल, जालोर के शासको और सिरोही राजवश के प्रारम्भिक पूर्वजो की जो नामावलियाँ दी है वे अपूर्ण है और उनमे कई क्रम भी सही नही है। यो प्रारम्भिक विवरण बडवो की पोथियो के आधार पर ही लिखे गये थे जो प्रामाणिक नही कहा जा सकता है, साथ ही इन विवरणो मे दिये गये प्राय सब ही पूर्ववर्ती सवत् गलत है। जालोर के सोनगरा शासक कान्हडदेव का कुछ विस्तार मे उल्लेख किया है। कान्हडदेव और अलाउद्दीन खिलजी के मध्य हुए युद्ध के कारणो मे शिवलिंग, सोमनाथ के पुजारी और शाहजादी का वीरमदेव पर आसक्त होने आदि का विवरण मूलत तब प्रचलित लोककथा का ही समावेश जान पडता है। ख्यात० मे कांपलिया, बोडा, मोहिल, खीची आदि चौहानो की कई अन्य शाखाओं का भी विवरण दिया गया है जो अन्यत्र उपलब्ध नही होता है।

ख्यात० मे इतर अग्निवशी राजपूत राजघरानो सोलकी, पडिहार और परमारो के भी इतिवृत्त दिये हैं, परन्तु ये सारे विवरण सर्वथा सीमित और कुछ विशेष वृत्तो या किन्ही इनीगिनी खांपो तक ही सीमित हैं। सोलकियों के विवरण मे मूलराज द्वारा पाटण पर अधिकार करने और सिद्धराज सोलकी द्वारा रुद्रमाल मन्दिर बनवाने सम्बन्धी कहानियो का भी समावेश कर दिया है। पडिहारो का भी अधिकाश विवरण दन्त-कथाओ पर ही आधारित है।

नैणसी ने ख्यात० मे आम्बेर के कछवाहा राजवश की प्रारम्भ से राजा जयसिंह तक तीन अलग-थलग वशावलियां दी हैं। साथ ही राजाओ के पुत्रो आदि से जो अनेक प्रमुख खांपें निकली उनका भी विस्तार से उल्लेख किया है और कई जागीरदारो सम्बन्धी प्रमुख घटनाओं का उल्लेख भी कर दिया है। कछवाहा राजवश का अधिकाश प्रारम्भिक विवरण और पृथ्वीराज कछवाहा की द्वारका यात्रा सम्बन्धी वृत्तान्त अविश्वसनीय ही है। नैणसी ने राजा

भगवन्तदास के भाई राजा भगवानदास को 'आम्बेर टीकाई' लिखने में भूल की है।[1]

ख्यात० में नैणसी ने जैसलमेर के भाटियों के बारे में बहुत विस्तृत ब्यौरेवार जानकारी दी है। परन्तु ओझा का यह मत सही है कि 'भाटियों का स० १४०० के पूर्व का इतिहास संदिग्ध मान लेने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।' तथापि नैणसी ने भाटियों की उपखांपों की अलग-अलग जो लम्बी वंशावलियाँ दी है और उनके साथ जो व्यक्तिगत टिप्पणियाँ जोड़ दी है, वे प्रामाणिक ही नहीं ऐतिहासिक दृष्टि से जानकारीपूर्ण और विशेष उपयोगी भी हैं।

इस प्रकार ख्यात० में नैणसी ने मेवाड़, मारवाड़, आम्बेर, जैसलमेर, बूँदी, सिरोही, डूँगरपुर, बाँसवाडा, देवलिया (प्रतापगढ) आदि विभिन्न राज्यो के राजपूत राजवंशो तथा उनकी विभिन्न खांपो मे कई एक का संक्षिप्त और कुछ का विस्तृत इतिवृत्त दिया है। परन्तु १४वी शताब्दी के पूर्व के इतिहास की प्रामाणिकता संदिग्ध होने के कारण उसे यत्किंचित् भी मान्य करने से पहले उसका पूर्ण परीक्षण करना अत्यावश्यक है। साथ ही बाद के विवरण मे भी अनेक स्थानो पर भ्रान्तिवश अथवा प्रामाणिक सामग्री के अभाव मे भूलें हुई है। अत उनमे दी गयी जानकारी की भी अन्य मान्य प्रामाणिक स्रोतो से पुष्टि कर ली जानी चाहिए।

(ब) प्राथमिक महत्व की समकालीन आधार-सामग्री संग्रहों के रूप मे

मुहणोत नैणसी कृत विगत० और ख्यात० दोनो ही ग्रथो म महत्त्वपूर्ण समकालीन आधार सामग्री बहुतायत से मिलती है। विगत० की रचना करने मे नैणसी का मूल उद्देश्य मारवाड के विभिन्न परगनो का महाराजा जसवंतसिंह के काल तक का राजनैतिक इतिहास और राज्य-शासन विषयक जानकारी को समग्र रूप मे प्रस्तुत करने का ही रहा था। परन्तु उसके ऐसे राजकीय विवरणो मे अनेक स्थानों पर प्रसगवश मारवाड राज्य के विभिन्न अधिकारियों, उनके कार्य और कर्तव्य पर स्वत प्रकाश पडता गया है जिससे मारवाड की प्रशासकीय व्यवस्था की विस्तृत जानकारी उसमे मिलती है। इसी प्रकार नैणसी ने विगत० मे कई परगनो के 'अमल दस्तूर' का उल्लेख कर दिया जो राज्य की आय के स्रोतो पर प्रकाश डालते है। विगत० मे दिये गये गाँवों के विवरण मे गाँवों की रेख तथा उनसे होने वाली पिछली पचवर्षीय वास्तविक आय के आँकडे दे दिये है। साथ ही गाँव म पानी की व्यवस्था तथा सिंचाई के साधनों का भी उल्लेख कर दिया है। इसमे मारवाड राज्य मे तत्कालीन कृषि-साधनों और वहाँ की

---

१ ख्यात० (प्रतिष्ठान), १, पृ० २९७।

आर्थिक स्थिति की जानकारी मिलती है।

१७वीं शताब्दी के मारवाड़ की प्रशासकीय व्यवस्था और आर्थिक इतिहास के लिए विगत० से अधिक प्रामाणिक महत्त्व का कोई दूसरा समकालीन आधार-ग्रन्थ कहीं भी उपलब्ध नहीं है, और तद्विषयक कोई अन्य सामग्री भी सुलभ नहीं है। उसके अतिरिक्त मानव-भूगोल, जागीर व्यवस्था और राज्य-व्यय अथवा परगनों की सीमासम्बन्धी जानकारी के लिए भी यह ग्रन्थ कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

जैसा कि पूर्व में ही लिखा जा चुका है कि ख्यात० में विभिन्न राजपूत राज्यों तथा खांपों का विस्तृत इतिहास है। परन्तु उसमें से १४वीं शताब्दी के बाद का ही इतिवृत्त अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय है। ख्यात० में विभिन्न खांपों की जो वंशावलियाँ दी गयी हैं उनमें विशिष्ट व्यक्तियों से सम्बन्धित विशेष घटनाओं अथवा अन्य महत्त्वपूर्ण जानकारियों का भी साथ में उल्लेख भी कर दिया गया है जैसे किसको कब कौन-से गाँव का पट्टा (जागीर) मिला, उसने उस कब छोड़ा अथवा कब वह जागीर किया गया, गाँव की रेख क्या थी? वह किसकी ओर से कब कौन-से युद्ध में आहत हुआ या मारा गया आदि। इस प्रकार के दिये गये विवरणों से तत्कालीन राजपूत सामन्ती व्यवस्था पर पर्याप्त नया प्रकाश पड़ता है। इतिहास की कई एक अज्ञात घटनाओं की भी जानकारी मिलती है जो सम्बन्धित इतिहास की लुप्त कड़ियाँ जोड़ती है। ख्यात० में विभिन्न शासकों, जागीरदारों अथवा विशिष्ट व्यक्तियों से सम्बन्धित तब सर्वसाधारण में सुज्ञात अनेक बातों का संग्रह है। उसमें प्रसंगवश आये कई वीरों आदि के नामों से कई एक क्षेत्रीय या कौटुम्बिक इतिहासों की अज्ञात या विस्मृत कड़ियों को जोड़ने में बहुत सहायता मिल सकेगी। यही नहीं, इसी प्रकार ख्यात० में यत्र-तत्र विभिन्न युद्धों सम्बन्धी अथवा अन्य ऐतिहासिक घटनाओं आदि के अनेकों उल्लेख मिलते हैं जिनमें तब विभिन्न राजघरानों के पारस्परिक सम्बन्धों अथवा तत्कालीन राजपूत सैन्य-व्यवस्था और युद्ध-प्रणाली की जानकारी मिलती है। ख्यात० में वर्णित वृत्तान्तों से राजपूत विवाहों की रस्मों, बहुपत्नी विवाह प्रथा, बाल विवाह और उनसे होने वाले दुष्परिणामों तथा सती प्रथा की विस्तृत जानकारी मिलती है। ख्यात० में राजपूत 'वैर परम्परा' और उसके दुष्परिणामों के तो अनेक उदाहरण मिलते ही है। इसी प्रकार ख्यात० में वर्णित बातों से प्रसंगवश ही तत्कालीन राजस्थान के जनसाधारण में व्याप्त अंधविश्वासों, तब प्रचलित शकुन-शास्त्र, विभिन्न देवी देवताओं में विश्वास आदि हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं की जानकारी मिलती है। राजपूतों के तत्कालीन जातीय और सामाजिक तन्त्र के साथ ही ख्यात० के विवरणों से उस काल के जनसाधारण के जनजीवन की भी पर्याप्त जानकारी मिलती है। आदिवासी शासक भी किस प्रकार समाज के ब्राह्मणों या वणिकों के साथ ही निम्नस्तरीय शूद्र वर्ग के प्रति भी क्या अत्याचार करते थे

या किस प्रकार उनका शोषण करते थे, इसके भी कई उदाहरण मिलते हैं। ऐसे अवसरों पर तथा अन्य विपरीत परिस्थितियों में भी यों प्रताड़ित या शोषित वर्ग का साथ देकर राजपूत वीरों ने वहाँ अपना आधिपत्य स्थापित किया इसके भी अनेकों उदाहरण मिलते है।

यों १४वीं शताब्दी के बाद के राजस्थान अथवा यत्र-तत्र के कुछ अन्य क्षेत्रों या राजघरानों के राजनैतिक इतिहास और १७वीं शताब्दी के सामाजिक-धार्मिक इतिहास के लिए मुहणोत नैणसी की ख्यात० को प्राथमिक महत्त्व की समकालीन आधार-सामग्री का अनूठा संग्रह-ग्रन्थ मान लेने में कोई भी आपत्ति नहीं होनी चाहिए। उपर्युक्त इतिहास की जानकारी देने वाला वर्तमान में ऐसा कोई दूसरा तत्कालीन आधार-ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। इसके अतिरिक्त ख्यात० से १७वीं शताब्दी कालीन राजपूतों की सामन्ती व्यवस्था, सैनिक संगठन, राजकीय तन्त्र और आर्थिक ढाँचे आदि की भी जानकारी मिलती है।

२ राजस्थान के पश्चात्कालीन इतिहास-लेखन पर नैणसी के ग्रन्थों का सम्भावित प्रभाव

मारवाड़ ही नहीं वल्कि राजस्थान में क्रमबद्ध इतिहास-लेखन की परम्परा में मुहणोत नैणसी ही प्रथम इतिहासकार है। परन्तु नैणसी की ख्यात० सर्वप्रथम सन् १८४३ ई० के बाद ही अपने वर्तमान सुव्यवस्थित स्वरूप में सुलभ हो सकी थी। विगत० की प्रतियाँ तब सहज सुलभ नहीं थी और नैणसी के इस ग्रन्थ विशेष की जानकारी भी सम्भवतः तब बहुतों को नहीं थी। अतः नैणसी के समकालीन या उसके बाद की डेढ़-दो शताब्दियों के काल में तो किन्हीं इतिहासकारों पर नैणसी के ग्रन्थ-लेखन का सीधा कोई प्रभाव पड़ना सम्भव नहीं था।

परन्तु अकबर के शासनकाल में जब अबुल फज़ल ने विभिन्न राजाओं आदि से उनके घरानों की वंशावलियाँ और इतिवृत्तों की माँग की तब से ही राजस्थान में वंशावली लेखन अथवा सकलन आदि की परम्परा चल निकली थी। अतः स्पष्टतया उसी परम्परा के अन्तर्गत ही १७वीं सदी में मारवाड़ या अन्य क्षेत्रों में कई एक वंशावलियाँ या संक्षिप्त ख्यातें लिखी जाने लगी थीं। नैणसी की ही समकालीन 'उदेभाण चांपावत री ख्यात'[1] है। उक्त ख्यात में मारवाड़ के राठोड़ों का सीहा से महाराजा जसवन्तसिंह के शासनकाल का १६५८ ई० तक का संक्षिप्त राजनैतिक इतिहास और राठोड़ो की विभिन्न खांपों की १६७८ ई० तक की विस्तृत वंशावलियाँ हैं। 'पीढियाँ फुटकर'[2] भी १७वीं शताब्दी के मध्य की रचना

---

१ कविराजा संग्रह ग्रन्थ सं० १००, ७५ और ७६।
२ कविराजा संग्रह ग्रन्थ सं० २११।

जाता।[1] नैणसी की ख्यात० की बीठू पना द्वारा लिखी गयी यह प्रतिलिपि तैयार होने के कोई आठ वर्ष बाद ही १८५१ ई० में बीकानेर में दयालदास ने 'दयालदास री ख्यात' (बीकानेर के राठोड़ों का इतिहास) की रचना की थी। अतः दयालदास ने तब अपनी ख्यात लिखते समय नैणसी की ख्यात० का अवश्य ही उपयोग किया होगा।[2]

बीकानेर में १८४३ ई० में बीठू पना द्वारा तैयार की गयी 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' की एक प्रति १९वीं सदी के अन्तिम युगों में उदयपुर राज्य में भी पहुँची थी। उसी प्रति का उपयोग कविराजा श्यामलदास ने 'वीर विनोद' की रचना करते समय किया था। जिसका उल्लेख 'वीर विनोद' की कई पाद-टिप्पणियों में मिलता है।[3]

जब 'वीर विनोद' लिखा जा रहा था तब गौरीशंकर हीराचन्द ओझा उस कार्यालय में नियुक्त हुए और वहीं उसे प्रथम बार 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' के सम्बन्ध में जानकारी ही नहीं मिली अपितु उसके महत्त्व को भी पूरी तरह से समझा था। अतः वह उसकी प्रतिलिपि प्राप्त करने को समुत्सुक हो गया था, जो उसे जोधपुर राज्य के कविराजा मुरारदान से प्राप्त हुई। जोधपुर-बीकानेर एजेन्सी के भूतपूर्व रेजिडेण्ट, कर्नल पाउलेट से प्राप्त 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' की प्रतिलिपि करवाकर मुरारदान ने उसे ओझा को भेंट कर दिया था।[4] तब से ही 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' सम्बन्धी प्रचार तथा इतिहास-लेखन में उसका उपयोग निरन्तर बढ़ता ही गया।

राजपूताना तथा वहाँ के विभिन्न राज्यों के इतिहास लिखते समय ओझा ने स्वयं 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' का उपयोग किया है। मुंशी देवीप्रसाद ने इसी ख्यात के कुछ अंश का उर्दू में खुलासा किया था और इसके बारे में लेख लिखे थे। ओझा की उक्त प्रति की प्रतिलिपियाँ उनके मित्रों ने करवायी और रामनारायण दूगड़ ने तब उसका हिन्दी अनुवाद कर उसे काशी नागरी प्रचारिणी सभा की 'देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला' में दो भागों में प्रकाशित करवाया। तब से ही ऐतिहासिक शोध और इतिहास-लेखन में इस ख्यात० का अधिकाधिक उपयोग किया जाने लगा है। उसका महत्त्व यों निरन्तर बढ़ता देखकर ही बदरीप्रसाद साकरिया ने मूल ग्रन्थ का सम्पादन किया, जिसे राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान,

---

१ दूगड़०, १, मुहणोत नैणसी (भूमिका), पृ० ८।
२ गजेटियर बीकानेर०, इण्ट्रोडक्शन, पृ० ३-४।
३ वीर विनोद०, २, पृ० ६८; पा० टि०, २, पृ० ६६, पा० टि०, १, पृ० १५१; पा० टि०, २, पृ० १६१, पा० टि०, १, पृ० १०५६; पा० टि०, १, पृ० १०६६, पा० टि०, २।
४ दूगड़०, १, भूमिका, पृ० ८ ९।

जोधपुर, ने चार जिल्दो मे प्रकाशित किया।

नैणसी के दूसरे ग्रन्थ 'मारवाड रा परगना री विगत' का सर्वप्रथम महत्त्व तैस्सीतोरी ने समझा और अपने 'डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑफ बार्डिक एण्ड हिस्टारिकल मेन्यूस्क्रिप्ट्स' (जोधपुर स्टेट) मे उसने उसका विस्तृत विवरण दिया। परन्तु डॉ० नारायणसिंह भाटी द्वारा सम्पादित उसके मूल पाठ को राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, द्वारा तीन जिल्दो मे प्रकाशित किये जाने से पूर्व आधुनिक इतिहासकार इसका उपयोग नही कर पाये थे। आज तो १६वी और १७वी शताब्दी के मारवाड के राजनैतिक ही नही प्रशासनिक और आर्थिक इतिहास के लिए यह ग्रन्थ प्राथमिक महत्त्व का समझा जाकर इतिहासकार निरन्तर इसका उपयोग ही नही कर रहे हैं, परन्तु गहराई तक उसका अध्ययन कर मारवाड के तत्कालीन इतिहास के सब ही विभिन्न पहलुओ पर यथासम्भव प्रकाश डालने मे लगे हुए है।

इस प्रकार लगभग ढाई सौ वर्ष के बाद ही अब मुहणोत नैणसी की कृतियो का अध्ययन सम्भव हो सका है। समकालीन अथवा कुछ ही बाद की राजपूत पक्षीय आधार-सामग्री के रूप मे नैणसी के ग्रन्थो का उपयोग दिनो-दिन अधिकाधिक बढता जा रहा है, जो स्पष्ट ही आधुनिक काल के इतिहासकारो की नैणसी के प्रति मूक श्रद्धाजलि है।

आधार-ग्रन्थ विवरण

(१) नवीन राजस्थानी हस्तलिखित आधार-ग्रन्थ-निर्देश

श्री रघुबीर लायब्रेरी, सीतामऊ, में पहले ही कई एक महत्त्वपूर्ण राजस्थानी हिन्दी हस्तलिखित आधार-ग्रन्थ सग्रहीत थे, जैसे जोधपुर राज्य की ख्यात, कविराजा की ख्यात, राणा रासो, खुमाण रासो आदि। फरवरी, १९७४ ई० मे जालोर के वशपरम्परागत कानूनगो घराने के वर्तमान वशज कान्हराज छोगालाल मेहता, जालोर से 'जालोर परगना री विगत' की दोनों बहियाँ प्राप्त की गयी थी। श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ, की स्थापना के बाद इसी दिशा मे विशेष प्रयत्न किये गये। पहले श्री सीताराम लालस, जोधपुर, के पास से वणसूर महादान सग्रह की 'जोधपुर राज्य की ख्यात' प्राप्त की गयी और उसके बाद दिसम्बर, १९७६ ई० मे कविराजा बाँकीदास मुरारदान के वर्तमान वशज कविराजा तेजदान, जोधपुर, से समूचा 'कविराजा सग्रह' प्राप्त कर लिया गया, जिसमे सैकडो महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक आधार-ग्रन्थ सम्मिलित हैं, जिनकी ओर न तो इतिहास के सशोधको का ध्यान गया और न उनकी कोई छान-बीन ही हुई है।

अपने शोध-कार्य के सन्दर्भ मे यो प्राप्त किये गये कई एक हस्तलिखित ग्रन्थो की देख-भाल और गहराई तक जाँच-पडताल करने पर वे बहुत ही महत्त्वपूर्ण और उपयोगी जान पडे। ऐसे जिन हस्तलिखित ग्रन्थो का प्रथम बार इस शोध-ग्रन्थ मे उपयोग किया जा रहा है उनके बारे मे सक्षिप्त जानकारी दी जानी अनिवार्य प्रतीत होती है सो यहाँ क्रमवार दी जा रही है, जिससे भावी सशोधको का भी ध्यान उनकी ओर आकर्षित हो सके।

१ उदेभाण चांपावत री ख्यात—इस ख्यात की मूल प्रति (कविराजा सग्रह, ग्रन्थ २१६); उसकी प्रतिलिपि (कविराजा सग्रह ग्रन्थ १००, ७५, ७६); और पण्डित श्यामकरण दाधीच द्वारा किया गया उसका आशिक हिन्दी अनुवाद श्री रघुवीर लायब्रेरी, श्री नटनागर शोध-सस्थान, सीतामऊ, मे सग्रहीत है। हिन्दी

अनुवाद के प्रारम्भ में लिखा है कि 'राठोडो की ख्यात, पुराणी कविराजाजी श्री मुरारदानजी के यहाँ से लिखी गयी। यह ख्यात कविराजा साहब के पिता को कोटवाल भैरवरणजी के समय मे एक दीवाल मे मिली थी।' कविराजा मुरारदान स प्राप्त होने के कारण ही इस ख्यात का नाम 'कविराजा की ख्यात' रखा गया और तब से यह ख्यात इसी नाम से सुज्ञात है। परन्तु उक्त ख्यात की मूल प्रति मे एक त्रुटित पत्र मिला है, जिसम ज्ञात होता है यह ख्यात राव उदयभाण चापावत की थी। अत सस्थान मे सग्रहीत इस ख्यात का नामकरण 'उदेभाण चापावत री ख्यात' कर दिया गया है।

महाराजा जसवन्तसिह की मृत्यु (१६७८ ई०) के बाद औरगजेब ने जोधपुर दुर्ग पर आक्रमण कर दिया था। उस समय राव उदयभाण चापावत ने अपने पास की इस ख्यात की रक्षा मे स्वय को असमर्थ समझकर तत्सम्बन्धी अपनी वे वहियाँ ब्राह्मण श्री मुक्तेश्वर भट्ट को सौंप दी। परन्तु जब शाही सनाओ के आक्रमण के कारण मुक्तेश्वर को भी विपत्ति का सामना करना पडा, तब तो उसने उदयभाण की उस ख्यात को कही दीवाल म छिपाकर उस पर पत्थर जडवा दिये, यो वह लगभग २०० वर्ष तक दीवाल म ही बन्द पडी रही थी।[1]

उक्त ग्रन्थ मे राव सीहा से महाराजा जसवन्तसिह के शासनकाल मे १६५८ ई० तक का राठोड शासको का अति सक्षिप्त इतिहास प्रारम्भ म दिया गया है। तदनन्तर राठोडो की प्राय सब ही खांपो की ब्यौरेवार विस्तृत वशावलियाँ दी है, जिनमे लगभग सन् १६७० ई० तक के मुख्य वशजो की नामावली और उनके सदर्भ म उल्लेखनीय घटनाओ सम्बन्धी टिप्पणियाँ दी हैं।

इस ग्रन्थ मे वर्णित विभिन्न खांपो की तैस्सीतोरी ने विस्तृत क्रमवद्ध सूची दी है। इस मूल ग्रन्थ की प्राप्य प्रतिलिपि मे प्रतिलिपिकार ने यत्र-तत्र उन खांपो के क्रम अवश्य कुछ उलट पलट कर दिये हैं।[2] यह ख्यात जोधपुर राज्य के राजनैतिक इतिहास के साथ ही जागीरदारी व्यवस्था आदि के लिए अति महत्त्वपूर्ण है।

२ **भण्डारियां री पोथी**—(कविराजा सग्रह ग्रन्थ ७८)—यह ग्रन्थ अठा-

---

१ मूल प्रति (कविराजा सग्रह ग्रन्थ २१६) म प्राप्त त्रुटित पत्र की प्रतिलिपि यहाँ दी जा रही है—

'मे मोरी वांसावली री वहीयां नै हमारा नामावली री भटजी श्री ब्रम्ण मुक्तेश्वरजी नु सपी। राव उदेभाण चापावत सुपी। तुरकाणी की फैल जीण सु थान सुपी छां। ये मारै पीढ मापां रा गुर छो। जान राठोड थांनु वीरचे नहीं। हमारी वांसावली री रतन परापरा की छै स हमारा बेटां नु वाचव कोजो जान राठोड थोरो उपर रो री आशीवका दीदां जासी ।'

२ तस्सीतोरी जाधपुर०, भाग १, खण्ड १, क्र० १८, पृ० ५६-६३, क्र० ८, पृ० २८-२६।

रहवी शताब्दी के मध्य की प्रतिलिपि है, परन्तु मूल ग्रन्थ की रचना १६६२ ई० की है। 'सवत् १७१६ आ ख्यात नरसिघदास दीवाण रै पोथी मे लिपाणी अचलदास जी रा दादा रै' (प० ७२ क)। इस ग्रन्थ मे मुख्यतया जसवन्तसिंह कालीन मारवाड का विस्तृत विवरण दिया गया है। जसवन्तसिंह को शाही मनसब मे प्राप्त विभिन्न परगने, सवत् १७१६ और १७१७ वि० मे गुजरात के परगनो मे वास्तविक आय, धरमाट के युद्ध सम्बन्धी विवरण, आदि विषयक विस्तृत जानकारी दी गयी है। साथ ही सिरोही राज्य का भी विस्तृत विवरण इसमे दिया गया है। सिरोही के चौहानो और पारकर के सोढो का विवरण नैणसी की ख्यात० मे पूर्णतया मिलता है। नैणसी की ख्यात० के विवरण की प्रामाणिकता की जॉच करने और नैणसी कालीन मारवाड की प्रशासकीय व्यवस्था और आर्थिक स्थिति की जानकारी के लिए यह पोथी बहुत ही उपयोगी है। इस ग्रन्थ मे नैणसी की ख्यात० की ही भाँति आधार-स्रोतो का भी उल्लेख किया गया है। यथा—'आ माचोर रा सॉमणॉ री ख्यात लूणीयाहण रै मीसण जगमालजी चीनलवाणॉ री पीढीयॉ सहित मडाई छै'(प० ७ ख), 'थॉवलारा परगनॉ सूँ चारण घघवाडियो हरीदास आया तिण आ वात कही' (प० ८ क), 'प्रोयत तुलछीदास भण्डारियाँ री पोथी मे उतराई' (प० २६ क), 'सीघलॉ री पीढीयॉ आसियँ जसै मडाई' (प० ३६ ख), 'पारकर री वात रतनू जीवाजी रे लिषाई' (प० ३६ क)आदि। इसी प्रकार उसमे कई एक समकालीन पट्टो, परवानो और कागज-पत्रो की प्रतिलिपियाँ भी दी है। अत मारवाड और सिरोही का विस्तृत और प्रामाणिक विवरण है। साथ ही जालोर, साचोर परगनो तथा सीघल और सोढा खाँपो का भी सक्षिप्त विवरण दिया गया है। इसमे प्रतिलिपिकर्ता ने बाद मे अनेक स्फुट वातें भी जोड दी जिन पर प्रतिलिपिकर्ता के ही शब्दो मे उसकी व्यक्तिगत टिप्पणियाँ भी पठनीय हैं, जैसे 'आ वातॉ री ख्यात है। साच थोडो ने भूट घणो है वातॉ मे' (प० ५३ क)।

३ राठोडॉ री ख्यात—(कविराजा सग्रह ग्रन्थ ७२)—ग्रन्थ मे प्राप्य विवरण के आधार पर यह निश्चित रूप म कहा जा सकता है कि इसकी रचना अथवा सकलन १६८० ई० मे पूर्ण हो गया था, परन्तु बाद मे १७१० ई० तक का विवरण भी उसम जोड दिया गया जान पडता है क्योकि १६८० ई० के बाद की जानकारी बहुत सक्षिप्त ही दी है। उक्त ग्रन्थ मे राव सीहा से राव रिणमल तक का विवरण सक्षिप्त ही है और राव जोधा से जसवन्तसिंह की मृत्यु तथा बाद की, १६८०ई० तक, घटनाओ का विस्तृत विवरण दिया गया है। जोधपुर के विभिन्न शासको की रानियो तथा उनकी सन्तानो और उनके द्वारा सासण मे दिये गये गावो आदि का भी विस्तार से वर्णन दिया है। महाराजा जसवन्तसिंह कालीन विभिन्न प्रशासनिक अधिकारियो का विवरण दिया है जिससे तत्कालीन

प्रशासनिक व्यवस्था पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इसके अतिरिक्त इस ख्यात में राठोड़ों की वंशावली प्रारम्भ से जसवन्तसिंह तक, बीकानेर के शासकों की वंशावली प्रारम्भ से अनोपसिंह तक, मेवाड़ के राजाओं की वंशावली महाराणा जयसिंह तक, कछवाहों की वंशावली राजा विशनसिंह तक, भाटियों की वंशावली सबलसिंह तक तथा साथ में बाघेला, जाड़ेचों और हाड़ों की वंशावलियाँ भी दी हुई हैं। अन्त में रामपुरा के चन्द्रावतों, देवलिया के सीसोदियों और ईडर के राठोड़ों का संक्षिप्त विवरण भी दे दिया गया है। यह ख्यात न केवल मारवाड़ बल्कि राजस्थान के इतिहास के लिए भी एक महत्त्वपूर्ण और उपयोगी ग्रन्थ है, जिसका अब तक कोई इतिहासकार उपयोग नहीं कर पाया है।

४ **राठोड़ां री ख्यात व वंशावली**[1]—(कविराजा संग्रह ग्रन्थ ७४)—ग्रन्थ के प्रारम्भ में रायसिंह (बीकानेर) की प्रशंसा के गीत, तदनन्तर गुण जोधायण के कवित्त और राव जोधा सम्बन्धी विवरण दिया गया है। उसके बाद राठोड़ों की वंशावली आदिनारायण से सीहा सेतरामोत तक दी है। सीहा सेतरामोत से महाराजा जसवन्तसिंह के समय में १६७६ ई० तक के मारवाड़ के शासकों का विस्तृत विवरण दिया गया है। राव गांगा के बाद के विवरण में सही क्रम टूट गया है, जो संभवतः प्रतिलिपिकार की असावधानी के ही कारण हुआ होगा। राठोड़ों की विभिन्न खांपों की पीढ़ियाँ भी दी गयी है और साथ ही विशिष्ट व्यक्तियों की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख कर दिया गया है जिससे तत्कालीन जागीरदारी व्यवस्था पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। उक्त ग्रन्थ में बीका से राव करणसिंह सूरसिंहोत तक के बीकानेर के शासकों का भी संक्षिप्त विवरण दिया गया है, इसमें प्रसंगवश उल्लेख है कि 'पटा वालां नूं पटौ दियो दूजा नूं रोकड़ दैणी सरु कीवी रोज रु० २) सिरदार नै अर ॥) घोड़ा रा सवार नै अर।) पाला नै दैण लागा।' (पृ० ५८ क) इस उल्लेख से उस समय की राजकीय सैनिक व्यवस्था पर नवीन प्रकाश पड़ता है।

इस ग्रन्थ के अन्त में उमरावों की ख्यात दी गयी है जिसमें चांपावतों का संवत् १९२५ वि० (१८६८ ई०) तक का संक्षिप्त विवरण दिया गया है। स्पष्टतः यह विवरण प्रतिलिपिकार ने ही जोड़ा है, जिससे ज्ञात हो जाता है कि इस ख्यात की यह प्रतिलिपि १९वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में तैयार हुई थी। परन्तु मूल ख्यात की रचना १६७६ ई० में ही पूर्ण हो चुकी थी।

इस ग्रन्थ में मारवाड़ के राठोड़ शासकों का विवरण अन्य सभी समकालीन ख्यातों से अधिक विस्तार से दिया गया है। जोधा के पूर्व का विवरण तब प्रचलित कथानकों के आधार पर ही लिखा गया है, परन्तु जोधा के बाद का सारा विवरण

---

१ तैस्सीतोरी जोधपुर०, भाग १, खण्ड १, क्र० ६, पृ० २९-३३।

अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय है। अत नैणसी की ख्यात० और विगत० मे वर्णित राठोडो के इतिहास की प्रामाणिकता की जाँच के लिए यह ग्रन्थ उपयोगी है। साथ ही इसमे नैणसी की पोहकरण पर चढाई सम्बन्धी विवरण भी दिया गया है। इस ग्रन्थ से राजपूतो मे बहुपत्नी विवाह प्रथा, सती प्रथा और जनानी ड्योढी परम्परा सम्बन्धी उपयोगी जानकारी मिलती है।

५ पीढियाँ फुटकर—(कविराजा सग्रह ग्रन्थ २१७)—तैस्सीतोरी के अतिरिक्त अन्य किसी ने अब तक इस ग्रन्थ की देख-भाल भी नही की है।[1] इस ग्रन्थ की रचना १७वी शताब्दी के मध्य मे हुई। यह ग्रन्थ नैणसी के समय मे ही तैयार किया गया।

वर्तमान मे इस ग्रन्थ के प्रारम्भिक ९८ पत्र अप्राप्य हैं और प्राप्य पत्रो म से कुछ पत्र त्रुटित भी हैं। इस ग्रन्थ मे मेवाड के राणा मोकल (मोकल के पूर्व का विवरण अप्राप्य) से राणा जगतसिह तक का तथा डूंगरपुर, बाँसवाडा और रामपुरा ससरमी और राव दुर्गा तक का विवरण सक्षेप मे दिया गया है। जैसलमेर के भाटियो का विवरण कुछ विस्तार से दिया है। इसके अतिरिक्त हूल (गुहिलोत), भायलो (पँवार), चीवो और निरवाणो (चौहानो) का भी सक्षिप्त विवरण है। इसमे दिये गये प्रारम्भिक विवरण को छोडकर बाकी सारा विवरण प्रामाणिक है। सक्षिप्त होते हुए भी यह ग्रन्थ नैणसी की ख्यात० मे प्रस्तुत विवरण की जाँच के लिए उपयोगी है।

६ राठोडाँ री ख्यात—(कविराजा सग्रह ग्रन्थ १११)—इस ग्रन्थ मे राव सीहा से महाराजा जसवन्तसिह के शासनकाल मे १६५८-५९ ई० तक का मारवाड राज्य का सक्षिप्त इतिहास दिया है (प० ३८७ क-४०४ क)। नैणसी का पोहकरण पर आक्रमण और अन्य जानकारी भी मिलती है। यह ग्रन्थ मारवाड राज्य के इतिहास के साथ ही राजपूत समाज की कुछ विशेषताओ पर भी कुछ प्रकाश डालता है।

इस ख्यात मे १६५८-५९ ई० के बाद की किसी घटना का उल्लेख नही मिलता है। अत यह नि सकोच कहा जा सकता है कि उक्त समय तक इसका लेखन-कार्य पूरा हो गया था। प्रतिलिपिकर्ता स्वय ने लिखा है कि 'आ ख्यात कितीक तो ठाह बँध लिपाणी है ने कितीक इस्तविस्त वेठाह लिपाणी है। पोथी रा जूनां पाना था सो आधा पाधा होय गया, जिण सूँ वेठाह घणी लिपाणी है' (प० ३९४ क)। वर्तमान मे उपलब्ध प्रतिलिपि महाराजा मानसिंह, जोधपुर के शासनकाल के अन्तिम समय की है। कविराजा सग्रह ग्रन्थ स० १११ मे एकाधिक ख्यातो तथा फुटकर बातो और काव्य की प्रतिलिपियाँ है उनमे से एक यह

१ तैस्सीतोरी जोधपुर०, भाग १, खण्ड १, क्र० २०, पृ० ६६ ६६।

ख्यात है।

७ गुरां मोतीचन्दजी री पोथी—(कविराजा संग्रह ग्रन्थ सं० १११, प० ४०५ क-४१६ ख, १२० क-१३४ ख) इस पोथी में राजा धरमविम्ब से महाराजा अजीतसिंह १७०८ ई० तक के मारवाड़ राज्य का ऐतिहासिक विवरण है। सीहा तथा उसके पूर्व का विवरण पूर्णतया काल्पनिक ही है। सीहा से गांगा तक अति संक्षिप्त उल्लेख है। राव मालदेव से अजीतसिंह तक का विवरण विस्तार से दिया है, उसमें भी राव मालदेव, महाराजा जसवन्तसिंह और अजीतसिंह का वर्णन अधिक विस्तार से दिया गया है। इस ग्रन्थ में नैणसी के विभिन्न सैनिक अभियानों, प्रशासनिक सेवाओं, पदच्युत किया जाना और बन्दी बनाया जाना और अन्त में आत्महत्या सम्बन्धी जानकारी मिलती है। यह ग्रन्थ मारवाड़ की १७वीं सदी की प्रशासकीय व्यवस्था और आर्थिक स्थिति पर भी प्रकाश डालता है।

१७०८ ई० में इस ग्रन्थ का लेखन बन्द हो गया। अतः उस समय ही यह तैयार किया गया होगा। उपलब्ध प्रतिलिपि महाराजा मानसिंह के शासनकाल के अन्तिम वर्षों की है।

८ राठोड़ां री वंशावली—(कविराजा संग्रह ग्रन्थ सं० ३६)— प्रारम्भ में कुछ पौराणिक विवरण दिया गया है। तदनन्तर मारवाड़ के शासक राव सीहा से रामसिंह तक की वंशावली दी गयी है। राव सीहा से अजीतसिंह तक मारवाड़ के शासकों का संक्षिप्त इतिहास और उनके पुत्रों का विस्तृत विवरण दिया है। अजीतसिंह से विजयसिंह तक का भी संक्षेप में उल्लेख कर दिया गया है। साथ ही राठोड़ों की विभिन्न खांपों की पीढ़ियाँ १८३६ ई० तक दी हुई हैं। बीकानेर के राव बीका से अनोपसिंह तक का संक्षिप्त विवरण दिया गया है। इस ग्रन्थ में जाड़ेचा का भी विवरण है। जालोर परगने का १६५६ ई० से १६७३ ई० तक का विस्तृत विवरण दिया गया है। प्रत्येक गाँव की रेख, पट्टेदारों के गाँव तथा सासण गाँवों का विवरण दिया है। परगना में निवास करने वाली जातियों तथा प्रजा से लिये जाने वाले करों का उल्लेख है।

इस ग्रन्थ के जालोर परगने के विवरण में लिखा है कि 'कसबे जालोर महलयान री गढ़ री हकीकत संवत् १७१५ रा असाढ़ सुद १३ दिन लिखी' (प० १७ ख)। इससे अनुमान होता है कि ग्रन्थ की सामग्री संकलन का कार्य १६५६ से १६७३ ई० तक होता रहा। यों मूल ग्रन्थ १७वीं सदी में ही तैयार किया गया था। १८वीं शताब्दी के मध्य में जब प्रतिलिपि तैयार की गयी तब प्रतिलिपिकर्ता ने मूल पाठ के साथ कुछ अन्य विवरण भी जोड़ दिया है। परन्तु इससे ग्रन्थ की प्रामाणिकता और महत्व कम नहीं होता है।

६ 'जोधपुर राज्य की ख्यात'—वणसूर महादान संग्रह—इस ग्रन्थ का

उल्लेख तैस्सीतोरी ने किया है।[1] तब यह ग्रन्थ वणसूर महादान के संग्रह में उपलब्ध था। इस ख्यात में मारवाड़ राज्य के राव सीहा से महाराजा तखतसिंह (१८८३ ई०) तक का इतिहास दिया गया है। तखतसिंह के विवरण में केवल उनकी सन्तानों का ही उल्लेख है। साथ ही जोधपुर के राजाओं की जन्म-पत्रियाँ, परीतों, परवानों और पत्रों की प्रतिलिपियाँ भी दी गयी हैं। विभिन्न शहरों की स्थापना सम्बन्धी उल्लेख और मारवाड़ में सासण गाँवों का विवरण दिया गया है। यद्यपि यह ग्रन्थ १९वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में तैयार किया गया था, परन्तु इसमें विभिन्न प्राचीन आधार-सामग्री का उपयोग किया गया है। जैसे राव अमरसिंह के विवरण के अन्त में लिखा है 'ओ साखो मुता भेरवदास री पोथी परमाणे लीपीयो छे १७०३ रा पा० री लीपी थी लीण परमाणे तीलोकमलजी री पोथी सु लीपी' (प० ६ ख)। अतः राव जोधा तथा उसके बाद का विवरण प्रामाणिक और विश्वसनीय ही है। जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह विषयक किसी अज्ञात लेखक द्वारा विशेष रूपेण रचित 'अजीत विलास' अथवा 'महाराजा अजीतसिंह जी री ख्यात' का सम्पूर्ण मूल पाठ (प० ७७ क-१२१ क) भी इसी हस्तलिखित ग्रन्थ में प्राप्य है। नैणसी के जीवन कार्यों के बारे में भी कुछ विशेष जानकारी मिलती है। साथ ही मारवाड़ के राजनैतिक इतिहास के अतिरिक्त प्रशासकीय और सामाजिक जीवन सम्बन्धी भी पर्याप्त जानकारी मिलती है।

१० जालोर परगना री विगत (छोटी और बड़ी)---जालोर परगने के वंश परम्परागत कानूनगो कान्हराज छोगालाल मेहता से ये दोनों बहियाँ, एक छोटी और दूसरी बड़ी, १९७४ ई० में डॉ० रघुवीर ने प्राप्त की थी। वर्तमान में ये दोनों बहियाँ, श्री नटनागर शोध-संस्थान में संग्रहीत हैं। 'इण्डियन काउंसिल ऑफ हिस्टारिकल रिसर्च, नयी दिल्ली, के लिए डॉ० रघुबीरसिंह के निर्देशन में 'जालोर परगना री विगत' के शीर्षक से उनका सम्पादन किया जा चुका है।

ये दोनों बहियाँ १६३६-३७ ई० के बाद उपलब्ध सामग्री के आधार पर १६६२ ई० में तैयार की गयी थी। तब वहाँ का हाकिम मियाँ फरासत था। मूल बहियों की प्रतिलिपियाँ सन् १७११-१२ ई० में तैयार की गयी थी, तब मूल पाठ के साथ कुछ और विवरण भी जोड़ दिये गये थे। वर्तमान में उपलब्ध बहियाँ १८७२ ई० की प्रतिलिपियाँ हैं।

जालोर परगने की ये दोनों विगतें (बहियाँ) भी 'मारवाड़ रा परगना री विगत' में संग्रहीत अन्य परगनों की विगतों के समान ही है। जालोर परगने का संक्षिप्त इतिहास, १६४७ ई० से १६७७ ई० तक के काल में जालोर परगने के प्रत्येक गाँव से प्राप्त राजस्व के आँकड़े तथा जालोर परगना के गाँवों का

---

१ तैस्सीतोरी जोधपुर०, भाग १, खण्ड १, क्र० ५, पृ० १९-२१।

ब्योरेवार वर्णन दोनों ही विगतों में दिया गया है। जालोर नगर में प्रत्येक गाँव की दूरी और दिशा, गाँव में निवास करने वाली प्रमुख जातियों के नाम, गाँव के पट्टेदार, गाँव में सिंचाई के साधन आदि की जानकारी भी यथासम्भव दे दी गयी है। तत्कालीन जालोर नगर का विस्तृत विवरण भी दिया गया है। जालोर परगना में लगने वाले विभिन्न करों का भी उल्लेख किया गया है। उक्त दोनों विगतें मारवाड राज्य के १७वीं शताब्दी में राजनैतिक, सामाजिक, प्रशासकीय तथा आर्थिक इतिहास के लिए एक पूरक आधार-ग्रन्थ के रूप में विशेष महत्त्वपूर्ण और उपयोगी हैं।

(२) आधार-ग्रन्थ सूची

१. समकालीन तथा अन्य प्राथमिक ग्रन्थ

(अ) पुरालेखीय सामग्री—राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर

१ 'तवारीख हकूमत मेडता', जोधपुर अपुरालेखीय बस्ता न० ५३ ग्रन्थांक ७ में सन् १६१५ में मेडता के तत्कालीन कानूनगो द्वारा मेडता का तैयार किया गया ऐतिहासिक विवरण।

(ब) राजस्थानी-हस्तलिखित ग्रन्थ

(ये सब ही ग्रन्थ श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ, के आधीन श्री रघुबीर लायब्रेरी में संग्रहीत हैं)

१ 'उदेभाण चापावत री ख्यात', कविराजा संग्रह ग्रन्थ संख्या १००, ७५, ७६।

२ 'गुराँ मोतीचन्द री पोथी', कविराजा संग्रह ग्रन्थ संख्या १११।

३ जयपुर के कछवाहों की वंशावली।

४ 'जोधपुर राज्य की ख्यात', भाग १-४, इस ख्यात के प्रथम भाग में प्रारम्भ से महाराजा जसवन्तसिंह (१६७८ ई०) तक का जोधपुर के राठोडों का विस्तृत इतिहास दिया गया है, जिसका सम्पादन इण्डियन काउंसिल ऑफ हिस्टॉरिकल रिसर्च, नयी दिल्ली, के लिए डॉ० रघुवीरसिंह के निर्देशन में मैंने किया है।

५ 'जोधपुर राज्य की ख्यात' (वही)—मूलत वणसूर महादान संग्रह की प्रति।

६ 'जोधपुर हुकूमत री वही', ठाकुर केशरीसिंह, खीवसर, की प्रति की प्रतिलिपि (१९६० ई०)। प्रकाशित ग्रन्थ में पायी जाने वाली

सम्पादकों की भूलों और छापाखाने की अशुद्धिया के लिए इस मूल प्रति को भी देखना आवश्यक है ।

७ 'जालोर परगना री विगत' (छोटी वही) ।
८ 'जालोर परगना री विगत' (बडी वही) ।
९ 'दयालदास री ख्यात', भाग १-२, दयालदास सिढायच कृत ।
१० 'फुटकर ख्यात', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या ६ ।
११ 'फुटकर पीढियाँ', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या २१७ ।
१२ 'बुन्देलो की वशावली' (टकित प्रति) ।
१३ 'मडारियाँ री पोथी', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या ७८ ।
१४ 'मुदियाड री ख्यात', प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर मे सग्रहीत प्रति की प्रतिलिपि ।
१५ 'मुंहता नैणसी री ख्यात', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या १४० । यह प्रति भी बीठू पना की लिखी हुई प्रतिलिपि है ।
१६ 'राठोडाँ री ख्यात', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या १११ ।
१७ 'राठोडाँ री ख्यात', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या ७२ ।
१८ 'राठोडाँ री ख्यात व वशावली', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या ७४ ।
१९ 'राठोडाँ री वशावली', कविराजा सग्रह ग्रन्थ सख्या ३६ ।
२० 'राठोडाँ री वशावली', उक्त ग्रन्थ म राव सीहा न महाराजा मानसिह तक का राठोडो का इतिहास है । बालमुकुन्द खीची, जोधपुर, स प्राप्त प्रति की टकित प्रति जिसमें प्रारम्भ म अजीतसिह तक का ही इतिहास है ।

(स) प्रकाशित सस्कृत-राजस्थानी-हिन्दी ग्रन्थ

१ 'कविप्रिया' श्री केशवदास कृत, टीकाकार—सरदार कवीश्वर, लखनऊ, १८८६ ई० ।
२ 'कवि बाहादर और उसकी रचनाएँ', सम्पादक—भूरसिह राठोड, १९७६ ई० ।
३ 'गजगुण रूपक बन्ध', केसोदास गाडण कृत, सम्पादक—सीताराम लालस ।
४ 'जोधपुर हुकूमत री वही' (मारवाड अडर जसवन्तसिह), सम्पादक —सतीशचन्द्र, रघुबीरसिह जी० डी० शर्मा, मेरठ, १९७६ ई० ।
५ 'प्रबन्ध चिन्तामणि', श्री मेरुतुगाचार्य विरचित सम्पादक—जिनविजय मुनि, भाग १, बगाल, १९८७ वि० ।
६ 'बाँकीदास री ख्यात', सम्पादक—नरोत्तम स्वामी, राजस्थान पुरा-

तत्वान्वेषण मन्दिर, जयपुर।
७ 'मारवाड के अभिलेख', डॉ० माँगीलाल व्यास कृत।
८ 'मारवाड रा परगना री विगत', सम्पादक—डॉ० नारायणसिंह भाटी, भाग १-३, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
९ 'मुहणोत नैणसी की ख्यात', रामनारायण दूगड कृत हिन्दी अनुवाद, भाग १-२, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
१० 'मुँहता नैणसी री ख्यात', स० बदरीप्रसाद साकरिया, भाग १-४, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
११ 'राठौड़ वश री विगत एव राठोडां री वशावली', राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, १९६८ ई०।
१२ 'श्री यतीन्द्र विहार-दिग्दर्शन', श्री यतीन्द्र विजय रचित, भाग १ (१९२९ ई०) में उद्धृत जालोर के लेख।

(द) फारसी-ग्रन्थ तथा उनके अनुवाद

१ 'अकबरनामा', अबुल फज़ल कृत, वेवरीज कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-३, (बिब० इण्डिका), कलकत्ता।
२ 'आईन-इ-अकबरी', अबुल फज़ल कृत, ब्लाक्मन और जेरेट कृत, अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-३ (द्वितीय सस्करण), (बिब० इण्डिका), कलकत्ता।
३ 'आलमगीरनामा', मुहम्मद काजिम कृत (बिब० इण्डिका)।
४ 'खजाइनुल फुतुह', अमीर खुसरो कृत, मुहम्मद हबीब कृत अंग्रेजी अनुवाद, बम्बई, १९३१ ई०।
५ 'खलजी कालीन भारत', सैयद अतहर अब्बास रिजवी कृत हिन्दी अनुवाद, अलीगढ, १९५५ ई०।
६ 'जहाँगीर का आत्मचरित (जहाँगीरनामा)', हिन्दी अनुवादक—ब्रजरत्नदास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
७ 'तबकात इ अकबरी', निजामुद्दीन अहमद कृत, अंग्रेजी अनुवाद बी० डे० कृत, भाग १-३ (बिब० इण्डिका), कलकत्ता।
८ 'तारीख-इ-दिलकशा', भीमसेन कृत, अंग्रेजी अनुवादक—सर यदुनाथ सरकार आदि, सम्पादक—वी० जी० खोब्रेकर, १९७२ ई०।
९ 'तारीख इ-फरिश्ता', फरिश्ता कृत, जान ब्रिग्ज कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-४, १८२९ ई०।
१० 'तारीख-इ शेरशाही', अब्बास खाँ सरवानी कृत ब्रह्मदेव प्रसाद अम्बष्ठ कृत अंग्रेजी अनुवाद, पटना, १९७४ ई०।

११ 'तुजुक-ई-जहाँगीरी', जहाँगीर कृत, रोजर्स और बेवरिज कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-२ (द्वितीय संस्करण), १६६८ ई० ।
१२ 'पादशाहनामा', अब्दुल हामिद लाहोरी कृत, भाग १-२ (बिब० इण्डिका), कलकत्ता ।
१३ 'पादशाहनामा', मुहम्मद वारिस कृत (हस्तलिखित), श्री रघुबीर लायब्रेरी, श्री नटनागर शोध-संस्थान, मे संग्रहीत ।
१४ 'फुतूहात-ए-आलमगीरी', ईश्वरदास नागर कृत (हस्तलिखित प्रति), श्री रघुबीर लायब्रेरी, श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ, मे संग्रहीत ।
१५ 'मआसीर-इ-आलमगीरी', मुस्तैदखान कृत, सर यदुनाथ सरकार कृत अंग्रेजी अनुवाद, कलकत्ता, १६४७ ई० ।
१६ 'मआसिरुल-उमरा', शाहनवाज खाँ कृत, हिन्दी अनुवादक—ब्रज-रत्नदास, भाग १-५, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।
१७ 'मीरात-ए-अहमदी', अली मुहम्मदखान कृत, अंग्रेजी अनुवादक—एम० एफ० लोखण्डवाला, १६६५ ई० ।
१८ 'मीरात-इ-सिकन्दरी', मंजु कृत, अंग्रेजी अनुवादक—फजलुल्लाह लुत्फुल्लाह फरीदी ।
१६. 'मुन्तखबुत-तवारीख', अब्दुल कादिर इब्न मुलुक शाह (अलबदायूनी) कृत, रेंकिंग, लो और हेग कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-३ (बिब० इण्डिका), कलकत्ता ।
२० 'शाहजहाँनामा', सम्पादक—डॉ० रघुबीरसिंह और मनोहरसिंह राणावत, मैकमिलन कम्पनी लि०, नयी दिल्ली, १६७५ ई० ।
२१. 'सूरवंश का इतिहास', डॉ० शिव बिन्देश्वरीप्रसाद निगम कृत हिन्दी अनुवाद, भाग १ ।
२२. स्टडीज इन इण्डो-मुस्लिम हिस्ट्री', एस० एस० होडीवाला कृत, भाग १-२ ।
२३ हिस्ट्री ऑफ इण्डिया इज टोल्ड बाई इट्स आन हिस्टोरियन', इलियट और डासन कृत, भाग ३-७ ।

२. आधुनिक ग्रन्थ

(अ) हिन्दी

१. 'उदयपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-२ ।

२ 'ओझा निबन्ध संग्रह', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-४।
३ 'ओसवाल जाति का इतिहास', सुखसम्पत राय भण्डारी, चन्द्रराज भण्डारी, कृष्णलाल गुप्त आदि कृत।
४ 'कूंपावत राठौड़ों का इतिहास', राव शिवनाथसिंह कृत।
५ 'कोटा राज्य का इतिहास', मथुरालाल शर्मा कृत, भाग १-२।
६ 'चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास', गोविन्द अग्रवाल कृत।
७ 'जोधपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-२।
८ 'जोधपुर राज्य का इतिहास', डॉ० मांगीलाल व्यास कृत, १९७५ ई०।
९ 'डूंगरपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत।
१० 'तवारीख जैसलमेर', नथमल मेहता कृत।
११ 'प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत।
१२. 'पृथ्वीराज रासो—इतिहास और काव्य' डॉ० राजमल बोरा कृत।
१३ 'पूर्व आधुनिक राजस्थान', डॉ० रघुबीरसिंह कृत।
१४ 'बीकानेर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-२।
१५ 'बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास', गोरेलाल तिवारी कृत, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
१६ 'महाराणा प्रताप', डॉ० रघुबीरसिंह कृत।
१७ 'महाराजा जसवन्तसिंह और उसका काल', डॉ० निर्मलचन्द्र राय कृत।
१८ 'मध्यकालीन भारतीय संस्कृति', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, १९२८ ई०।
१९ 'मारवाड़ का इतिहास', प० विश्वेश्वरनाथ रेऊ कृत, भाग १-२।
२०. 'मारवाड़ राज्य का इतिहास', जगदीशसिंह गहलोत कृत।
२१ 'मारवाड़ का संक्षिप्त इतिहास', प० रामकरण आसोपा कृत।
२२ 'मारवाड़ का शौर्ययुग', डॉ० साधना रस्तोगी कृत।
२३ 'राजस्थान की जातियाँ', प्रस्तुतकर्ता—बजरंगलाल लोहिया।
२४ 'राजस्थानी भाषा और साहित्य', डॉ० हीरालाल माहेश्वरी कृत, कलकत्ता, १९६० ई०।
२५ 'राजस्थानी सबद कोस', डॉ० सीताराम लालस द्वारा सम्पादित, भाग १-४।

११ 'तुजुक-ई-जहाँगीरी', जहाँगीर कृत, रोजर्स और बेवरिज कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-२ (द्वितीय सम्करण), १९६८ ई० ।
१२ 'पादशाहनामा', अब्दुल हामिद लाहोरी कृत, भाग १-२ (बिब० इण्डिका), कलकत्ता।
१३ 'पादशाहनामा', मुहम्मद वारिस कृत (हस्तलिखित), श्री रघुबीर लायब्रेरी, श्री नटनागर शोध-संस्थान, में सग्रहीत।
१४ 'फुतूहात-इ-आलमगीरी', ईश्वरदास नागर कृत (हस्तलिखित प्रति), श्री रघुवीर लायब्रेरी, श्री नटनागर शोध-संस्थान, सीतामऊ, में संग्रहीत।
१५ 'मआसीर-इ-आलमगीरी', मुस्तैदखान कृत, सर यदुनाथ सरकार कृत अंग्रेजी अनुवाद, कलकत्ता, १९४७ ई० ।
१६ 'मआसिरुल-उमरा', शाहनवाज खाँ कृत, हिन्दी अनुवादक—ब्रजरत्नदास, भाग १-५, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
१७ 'मीरात-इ-अहमदी', अली मुहम्मदखान कृत, अंग्रेजी अनुवादक—एम० एफ० लोखण्डवाला, १९६५ ई० ।
१८ 'मीरात-इ-सिकन्दरी', मजु कृत, अंग्रेजी अनुवादक—फजलुल्लाह लुत्फुल्लाह फरीदी।
१९ 'मुन्तखबुत-तवारीख', अब्दुल कादिर इब्न मुलक शाह (अलबदायूनी) कृत, रेंकिंग, लो और हेग कृत अंग्रेजी अनुवाद, भाग १-३ (बिब० इण्डिका), कलकत्ता।
२० 'शाहजहाँनामा', सम्पादक—डॉ० रघुबीरसिंह और मनोहरसिंह राणावत, मैकमिलन कम्पनी लि०, नयी दिल्ली, १९७५ ई० ।
२१ 'सूरवंश का इतिहास', डॉ० शिव बिन्देश्वरीप्रसाद निगम कृत हिन्दी अनुवाद, भाग १।
२२ 'स्टडीज इन इण्डो मुस्लिम हिस्ट्री', एस० एस० होडीवाला कृत, भाग १-२।
२३ 'हिस्ट्री ऑफ इण्डिया इज टोल्ड बाई इट्स आन हिस्टोरियन', इलियट और डासन कृत, भाग ३-७।

२ आधुनिक ग्रन्थ

(अ) हिन्दी

१ 'उदयपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-२।

२ 'ओझा निबन्ध संग्रह', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-४।

३ 'ओसवाल जाति का इतिहास', सुखसम्पत राय भण्डारी, चन्द्रराज भण्डारी, कृष्णलाल गुप्त आदि कृत।

४ 'कूपावत राठोड़ों का इतिहास', राव शिवनाथसिंह कृत।

५ 'कोटा राज्य का इतिहास', मथुरालाल शर्मा कृत, भाग १-२।

६ 'चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास', गोविन्द अग्रवाल कृत।

७ 'जोधपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-२।

८ 'जोधपुर राज्य का इतिहास', डॉ० मांगीलाल व्यास कृत, १९७५ ई०।

९ 'डूंगरपुर राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत।

१० 'तवारीख जैसलमेर', नथमल मेहता कृत।

११ 'प्रतापगढ़ राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत।

१२ 'पृथ्वीराज रासो—इतिहास और काव्य', डॉ० राजमल बोरा कृत।

१३ 'पूर्व आधुनिक राजस्थान', डॉ० रघुबीरसिंह कृत।

१४ 'बीकानेर राज्य का इतिहास', डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, भाग १-२।

१५ 'बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास', गोरेलाल तिवारी कृत, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

१६ 'महाराणा प्रताप', डॉ० रघुबीरसिंह कृत।

१७ 'महाराजा जसवन्तसिंह और उसका काल', डॉ० निर्मलचन्द्र राय कृत।

१८ 'मध्यकालीन भारतीय संस्कृति', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत, १९२८ ई०।

१९ 'मारवाड़ का इतिहास', प० विश्वेश्वरनाथ रेऊ कृत, भाग १-२।

२० 'मारवाड़ राज्य का इतिहास', जगदीशसिंह गहलोत कृत।

२१ 'मारवाड़ का संक्षिप्त इतिहास', प० रामकरण आसोपा कृत।

२२ 'मारवाड़ का शौर्ययुग', डॉ० साधना रस्तोगी कृत।

२३ 'राजस्थान की जातियाँ', प्रस्तुतकर्ता—बजरंगलाल लोहिया।

२४ 'राजस्थानी भाषा और साहित्य', डॉ० हीरालाल माहेश्वरी कृत, कलकत्ता, १९६० ई०।

२५ 'राजस्थानी सबद कोस', डॉ० सीताराम लालस द्वारा सम्पादित, भाग १-४।

२६ 'वीर विनोद', कविराजा श्यामलदास कृत, भाग १-२ ।

२७ 'शाहजहाँ के हिन्दू मनसबदार', सम्पादक—मनोहरसिंह राणावत, जोधपुर ।

२८ 'सिरोही राज्य का इतिहास', डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा कृत ।

२९ 'सोलहवीं सदी में राजस्थान', सम्पादक—मनोहरसिंह राणावत, अजमेर ।

३० 'हिन्दू राज्य तन्त्र', काशीप्रसाद जायसवाल कृत ।

३१ 'क्षत्रिय जाति की सूची', सकलनकर्ता—ठाकुर बहादुरसिंह कृत, बीदासर ।

(ब) अंग्रेजी

१ 'अकबर द ग्रेट', विसेण्ट स्मिथ कृत (द्वितीय संस्करण) ।

२ 'अर्ली चौहान डायनेस्टीज', डॉ० दशरथ शर्मा कृत ।

३ 'इण्डिया एज नोन टु पाणिनी', वासुदेवशरण अग्रवाल कृत ।

४ 'एग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुगल इण्डिया', इर्फान हबीब कृत, १९६३ ई० ।

५ 'एनल्स एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ राजस्थान', कर्नल जेम्स टाड कृत, भाग १-३ (आक्सफोर्ड संस्करण) ।

६ 'चौलुक्याज ऑफ गुजरात', अशोक मजूमदार कृत ।

७ 'दुर्गादास राठौड', डॉ० रघुबीरसिंह कृत ।

८ 'प्राविंशियल गवर्नमेण्ट ऑफ द मुगल्स', डॉ० परमात्माशरण कृत (द्वितीय संस्करण) ।

९ 'ब्रीफ फेमिली हिस्ट्री ऑफ मुहणोत्स्', (अप्रकाशित) टंकित प्रतिलिपि श्री बदरीप्रसाद साकरिया के सौजन्य से प्राप्त ।

१० 'मनसबदारी सिस्टम एण्ड द मुगल आरमी', पुनर्मुद्रित, १९७२ ई० ।

११ 'मारवाड एण्ड द मुगल इम्परर्स', विश्वस्वरूप भार्गव कृत ।

१२ 'मुगल एडमिनिस्ट्रेशन', सर यदुनाथ सरकार कृत (चौथा संस्करण), १९५२ ई० ।

१३ 'मेडीवल मालवा', उपेन्द्रनाथ डे कृत ।

१४ 'राजपूत पॉलिटी' (ए स्टडी ऑफ पॉलिटिक्स एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ द स्टेट ऑफ मारवाड, १६३८-१७४८), डॉ० घनश्यामदत्त शर्मा कृत, नयी दिल्ली, १९७७ ई० ।

१५ 'राजस्थान थ्रू द एजेज', प्रधान सम्पादक—डॉ० दशरथ शर्मा, भाग-१ ।

१६ 'लेक्चर्स आन राजपूत हिस्ट्री', डॉ० दशरथ शर्मा कृत, दिल्ली, १६७० ई० ।
१७ 'लेण्ड रेवेन्यू अण्डर द मुगल्स्', डॉ० नोमान अहमद सिद्दीकी कृत ।
१८ 'शेरशाह सूर एण्ड हिज टाइम्स्', डॉ० कालिकारजन कानूनगो कृत (द्वितीय सस्करण) ।
१६ स्टडीज इन राजपूत हिस्ट्री', डॉ० दशरथ शर्मा कृत, दिल्ली, १६७० ई० ।
२० 'सण्ट्रल स्ट्रक्चर ऑफ द मुगल एम्पायर', इब्नहसन कृत, १६३६ ई० ।
२१ 'हिस्ट्री ऑफ औरगजेब', सर यदुनाथ सरकार कृत, भाग १-३ ।
२२ 'हिस्ट्री ऑफ द खलजीज', किशोरीशरण लाल कृत, इलाहाबाद, १६५० ई० ।
२३ 'हिस्ट्री ऑफ जयपुर स्टेट', (अप्रकाशित) सर यदुनाथ सरकार कृत ।
२४ हिस्ट्री ऑफ जहाँगीर', डॉ० बेनीप्रसाद कृत ।
२५ 'हिस्ट्री ऑफ शाहजहाँ ऑफ देहली', डॉ० बनारसीप्रसाद सक्सेना कृत, इलाहाबाद, १६३२ ई० ।

(स) कैटेलॉग, गजेटियर, जर्नल और पत्रिकाएँ आदि

१ कैटेलॉग ऑफ द राजस्थानी मेन्यूस्क्रिप्ट्स इन द अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर, १६४७ ई० ।
२ डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑफ बार्डिक एण्ड हिस्टारिकल मेन्यूस्क्रिप्ट्स, डॉ० एल० पी० तैस्सीतोरी कृत, भाग १, खण्ड १ (जोधपुर स्टेट), १६१७ ई० ।
३ डिस्क्रिप्टिव कैटेलॉग ऑफ बार्डिक एण्ड हिस्टारिकल मेन्यूस्क्रिप्ट्स, डॉ० एल० पी० तैस्सीतोरी कृत, भाग २, खण्ड १ (बीकानेर स्टेट), १६१८ ई० ।
४ हिन्दी राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर ।
५ ऑरछा स्टेट गजेटियर, १६०७ ई० ।
६ गजेटियर ऑफ द बीकानेर स्टेट, कैप्टन पाउलेट कृत (१८७४ ई०), पुनर्मुद्रित, १६३७ ई० ।
७ गजेटियर ऑफ द बाम्बे प्रेसिडेन्सी, प्रधान सम्पादक—जेम्स एम० कैम्बल, (१८७७-१६०४ ई०) ।
८ राजपूताना गजेटियर भाग २ ३, इलाहाबाद, १६०६ ई० ।

९ इण्डियन एण्टिक्वेरी।
१० जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, कलकत्ता।
११ प्रोसिडिंग्स ऑफ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस।
१२ प्रोसिडिंग्स् ऑफ राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस।
१३ अहिल्या स्मारिका, खासगी ट्रस्ट, इन्दौर १९७७ ई०।
१४ जैन सत्य प्रकाश, वर्ष ५ अंक १२।
१५ परम्परा (त्रैमासिक), राजस्थानी शोध-संस्थान, च जोधपुर।
१६ वरदा (त्रैमासिक), राजस्थान साहित्य समिति बीसाऊ रा॰
१७ शोध-पत्रिका (त्रैमासिक), साहित्य संस्थान, राजस्थान उदयपुर।
१८ हिन्दुस्तानी (त्रैमासिक), हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबा

□ □